आत्म मार्ग प्रकाशन
1
अविनाशी ज्योति
आत्म मार्ग स्प्रिचुअल साइंटिफिक, एजूकेशनल चैरिटेबल ट्रस्ट

दो शब्द

जब से संसार की रचना हुई है यहाँ पर आने वाले जीव कुछ न कुछ कर्म करते ही रहते हैं जिनका फल भोगने के लिये लम्बा सफर शुरू हो जाता है, फिर कर्म करते हैं, फिर दोबारा जन्म, फिर यात्रा। इस तरह करते-करते, हम यह नहीं जान पाते कि हमने कितना सफर तय कर लिया है। केवल एक जन्म में ही हम अच्छे बुरे, प्यारे-कुप्यारे, मिलनसार तथा विमुखता वाले जो भी कर्म करते हैं, उसकी भी पूरी तरह से याद नहीं रहती। संसार में कर्म बहुत शक्तिशाली होने के कारण किये गये कर्म भोगने ही पड़ते हैं। जीव के वश की बात ही नहीं कि वह इन कर्मों से छुटकारा पा सके। परन्तु कोई न कोई महान हस्ती, आवश्यकतानुसार समय-समय पर इस संसार रूपी नाटय मंच पर आ जाती है, जिन्हें संसार के महान रचयिता ऐकंकार जी, संसार में कोई न कोई मिशन देकर भेजते हैं। उन पर कर्म फल का कोई भी सिद्धान्त लागू नहीं होता। उनकी अवस्था कुछ और हुआ करती है। वे संसार में आकर, संसारी जीवों के बन्धन काटते हैं और जब बुलावा आ जाता है तो अपने निज धाम को वापिस लौट जाया करते हैं -

घले आवहि नानका सदे उठी जाहि॥ *पृष्ठ - 1239*

बाकी सारा संसार रंग मंच है जहाँ पर कर्मों के अधीन नाटक हो रहे हैं। संसार की कथा कहानियां दुख सुख के अधीन होने के कारण, खुशी-गमी पैदा करती हैं तथा राग द्वैष मन में पैदा करके अज्ञान के अन्धकार में से निकलने नहीं देतीं। कई बार ऐसा होता है कि परमेश्वर को न भाने वाली कथाएं, अच्छे बुरे अक्षर, लिख कर जीव पर प्रभाव डालती हैं पर जो परमेश्वर ने आप भेजे हैं, वे भाए हुए होते हैं और उनकी कथाएं, सांसारिक कथाओं से बिल्कुल न्यारी होती हैं। वे जन्म मरण के चक्कर में नहीं आते, बल्कि संसार के समूह के समूह उनके वचनों का पालन करके अपना कल्याण प्राप्त कर लेते हैं।

गुरू नानक पातशाह संसार मंच पर प्रकट हुए। आपने एक अति मुश्किल सिद्धान्त का प्रकाश किया। जिसे नाम सिद्धान्त कहा जाता है, पर इस सिद्धान्त की प्राप्ति पूर्ण सतगुरू के बिना प्राप्त नहीं हुआ करती पर जब कोई पूर्ण सतगुरू के चरणों में पूरा जिज्ञासु आ जाता है तो वह उसका सांझेदार बन जाता है। आम दुनियां को तो न तो नाम का पता होता है, न ही नाम की प्राप्ति का पता है। वे तो केवल किसी खास शब्द को, बार-बार रटने में ही नाम की प्राप्ति समझते हैं। यह अन्धकार किसी पूर्ण महापुरुष के अनास्तित्व होने के कारण, मन को घेरे रखता है। यदि कोई इस शरीर रूपी घर में परमेश्वर के घर को दिखाने वाला मिल जाये तो वह इस अन्धकार को दूर कर देता है। गुरू नानक पातशाह जी ने साधु, सन्तों, ऋषियों-मुनियों, सिद्धों, साधकों, पीरों के पास जाकर स्पष्ट किया कि कलयुग में केवल नाम ही सहज है, जिसके बारे में भाई गुरदास जी अपनी रचना में फ़रमान करते हैं -

सबदि जिती सिधि मंडली कीतोसु आपणा पंथु निराला।
कलिजुगि नानक नामु सुखाला॥ *भाई गुरदास जी, वार 1/31*

आप जी ने इस सन्देश को चारों कोनों में जहाँ तक धरती थी और इससे भी ऊपर मुक्त आत्माएं जो निरंकार के दर पर किसी न किसी अस्तित्व रूप में मौजूद हैं, उन्हें भी नाम का प्रकाश बांटा। गुरू नानाक पातशाह जी के जिम्में एक बहुत बड़ा सिद्धान्त आया, जिसकी व्याख्या न होने के कारण, मनों में धुन्ध छा गई। प्रकाश का कोई अस्तित्व, किरण नज़र नहीं आई और ऐसे लगा जैसे अमर सिद्धान्त ठीक नहीं होते। गुरू नानक पातशाह जी ने फ़रमान किया कि वाहिगुरू जी स्वंय ही हैं और यहाँ पर न कोई प्रकृति है, न माया है, न कोई छाया है, न कोई गोरखनाथ है, न मच्छन्दर है, न कोई

ब्रह्म है, न विष्णु है, न शिव है, न कोई देवी है। वह अपने आप ही है –

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं।
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू॥ *पृष्ठ - 1291*

आप जी ने छोटी उम्र में ही पान्धा जी को औंकार की पहचान करवाते हुए कहा कि पान्धा जी, औंकार को पहचानो। उसकी मुहारनी रटने का कोई लाभ नहीं। उसे जानने का प्रयास करो, वह सभी के अन्दर परिपूर्ण है, तेरे अन्दर भी है, तेरे श्वासों में भी वही है, आखों से तू देखता है, यह उसी की ही ज्योति है। कानों द्वारा सुनता है, श्रवण शक्ति भी वही है। हाथ पैरों द्वारा काम करता है, इस क्रियाशील शक्ति में भी वह स्वंय ही समाये हुए हैं। पान्धा जी को बड़ा अजीब लगा क्योंकि उनका मत था कि वाहिगुरू जी कुछ नहीं करते वह प्रकृति को, माया को सत्ता देकर काम कर रहे हैं, हालांकि ये दोनों बेअन्त संशय पैदा करते हैं और किसी जीव के तर जाने का सवाल ही पैदा नहीं होता।

आप जी ने सत सिद्धान्त को प्रकट करने के लिये चार बड़ी यात्राएं करके, सत का सन्देश दिया तथा उम्र के अन्तिम पड़ाव में संगत तैयार करने के लिये आप करतारपुर में निवास रखते हैं। संगत आपके पास निर्धारित समय पर आया करती थी तथा अपनी आत्मिक भूख निवृत्त करवाया करती थी। उन्हीं दिनों में भाई लहणा जी संघर गाँव में निवास करते थे। पंजाब में उन दिनों दो लहरें बहुत जोर शोर से चल रही थीं। एक को सरवरिये कहा जाता था तथा दूसरे उन पुरुषों का संग्रह था जो निरंकार को छोड़कर, अन्य देवियों की पूजा किया करते थे। वे आम तौर पर देवियों के भवनों पर जाकर गीत भजन गाया करते थे और हर साल बहुत लोगों का इकट्ठ बनाकर, जिसे संगत कहते थे, इन देवियों के भवनों पर जाया करते थे। गुरू नानक पातशाह के सत सिद्धान्त को अभी तक जत्थे बन्दी का रूप नहीं मिल पाया था। भाई जोध जी भाई लहणा जी के नगर में ही रहते थे। जोध जी एक परवान रूह थी, अटूट विश्वास वाले प्रेमी थे। भाई लहणा जी ने भाई जोध के मुख से, गुरू नानक का नाम एवं बाणी सुनी जैसे-जैसे भाई जोध, इनके साथ बाणी के सिद्धान्त सांझे करने लगा, त्यों-त्यों भाई लहणा जी पर इस बाणी का अजीब ढंग का रंग चढ़ता गया। उस समय आपके मन में एक लहर उठी कि मैं ऐसी महान हस्ती के दर्शन जरूर करूं। जब मैं संग लेकर जाऊंगा तो करतारपुर में ठहरूंगा और आपके दर्शन करके, अपनी मानसिक तृप्ति की प्यास बुझाने का प्रयास करूंगा। इसी प्रेरणा के फलस्वरूप भाई लहणा जी जिस समय गुरू नानक पातशाह के पास पहुँचते हैं, दर्शन करते हैं, उसी समय, एक दम गुरू नानक प्यार में लीन हो जाते हैं। उन्होंने गुरसिखी के लिये जो कठिन साधना की उसके फलस्वरूप आपको सबसे शिरोमणी पदवी प्राप्त हुई। इस पुस्तक में बहुत ही विधिवत युक्ति से वह सभी कथाएं, घटनाएं लिखी गई हैं जिनके कारण भाई लहणा जी, गुरू अंगद जी के रूप में प्रकट हुए तथा दुनियां के तारक बने। यह पुस्तक, एक पुस्तक की तरह नहीं लिखी गई। यह तो हज़ारों प्रेमियों के मध्य तीन-तीन घंटे के सजाये गये 14 दीवानों में उनकी अवस्थाओं के मुताबिक जो व्याख्या की गई, उसका प्रथम भाग पहुँच रहा है, बहुत जल्द ही दूसरा भाग भी प्रकाशित होकर आपके पास पहुँच जायेगा। मेरा यह निश्चय है कि यदि कोई गुरसिख, गुरू अंगद साहिब के जीवन के बारे में जान जाये तो उसे गुरसिखी पालन करने का पूरा-पूरा ज्ञान हो जायेगा।

वरियाम सिंघ
बानी, संचालक एवं चेयरमैन
आत्म मार्ग स्पिरिच्युअल साईंटिफिक, एजूकेशनल चैरिटेबल ट्रस्ट

प्राक्कथन

जिस प्रकार दीपक में तेल लबालब भरा हो, बत्ती भी अच्छी तरह से भीगी हो, जब तक उसे कोई माचिस की चिन्गारी से जलाता नहीं है, तब तक वह दीपक उजाला नहीं फैलाता। ठीक इसी प्रकार चाहे कोई पूरा अधिकारी हो, तीव्रतम जिज्ञासु हो, शरीर रूपी दीपक में आत्मा रूपी बत्ती को जब तक कोई समरथ गुरू, ज्ञान अन्जन की माचिस से प्रकाशित नहीं करता, तब तक आत्मा प्रकाशित होकर अविनाशी ज्योति में परिवर्तित नहीं हो सकती। गुरू परमेश्वर, सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी ने भाई लहणा जी के अन्दर पटबीजने (जुगनूं) की तरह टिमटिमाती हुई ज्योति के प्रकाश को पूरी तरह से प्रज्जवलित करके, उन्हें अविनाशी ज्योति गुरू अंगद देव जी के रूप में प्रत्यक्ष रूप से प्रकट कर दिया। अविनाशी ज्योति एक ऐसी गाथा है जो प्रेमी, जिज्ञासु प्राप्ति के लिये, तीन सीढ़ियां पार कर चुके होते हैं, उन्हें आगे बढ़ने के लिये एक guide (पथ प्रदर्शक) का काम करती है, साथ ही साथ एक Light House (प्रकाश स्तम्भ) का कार्य करती है, जिससे प्रकाश पाकर नेत्रों पर पड़े अज्ञान रूपी मोतियाबिन्द का इलाज करके, ज्ञान रूपी अन्जन प्रदान करती है।

इस पुस्तक के सात अध्याय, सात सीढ़ियां हैं। गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज जी की बाणी शबद ब्रह्म है, ज्ञान का अथाह, अपार सागर है। बीच-बीच में सन्तों, भक्तों, गुरमुख प्यारों के प्रसंग, बत्ती के अन्दर वे छोटे-छोटे छिद्र हैं, जिनमें तेल अर्थात ज्ञान संचित होकर ऊधर्वागामी ऊपर की ओर बढ़ता चला जाता है और महापुरुषों के पवित्र मुखारविन्द से उच्चरित धारनाएं और व्याख्या, माचिस की तीलियां हैं जो ज्ञान की चिन्गारियों को प्रकाशित करती हैं, जिससे आत्म मार्ग का राही, आत्म ज्योति पर सवार होकर अविनाशी ज्योति में समा जाने के लिये तीव्र गति से आगे बढ़ता चला जाता है। 303 पृष्ठों में प्रकाशित इस पुस्तक में महापुरुषों की दूरदर्शिता, गहन अनुभव, गूढ़ चिन्तन, अपने अन्दर प्रज्जवलित हो रही अविनाशी अमर ज्योति का, जिसे सन्त महाराज श्री 108 सन्त ईशर सिंघ जी ने, अपनी अविनाशी ज्योति का प्रत्यक्ष रूप बनाकर, विश्व गुरमत रूहानी मिशन के बानी तथा संचालक के रूप में, प्रत्यक्ष रूप से विश्व में प्रकट कर दिखाया, का एक ऐसा झलकारा है, जिसे पढ़कर नेत्रों में पड़े अज्ञान रूपी मोतियाबिन्द को दूर करने का ज्ञान रूपी सुरमा, सच्चे जिज्ञासु अधिकारी को प्राप्त हो जाता है।

पुस्तक में प्रकाशित सामग्री का संक्षिप्त वृतान्त लिखने से पूर्व, मन में अनेक प्रकार के भ्रम, अनेक प्रश्न, जिज्ञासु को अन्दर ही अन्दर झन्झोड़ते हैं, जैसे भाई लहणा जी ने गुरू महाराज जी की ऐसी कौन सी सेवा की थी, जिससे सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी के साथ, वर्षों से सेवा करने वाले बाबा बुड्ढा जी जैसे सेवक भी पीछे रह गये और सच्चे पातशाह ने उन्हें अपना ही स्वरूप बनाकर गुरू अंगद देव जी की अविनाशी ज्योति के रूप में प्रकट कर दिया। 40 वर्षों से माता की भेंटें गाने वाला पुजारी किस तरह से गुरू नानक देव जी महाराज का संग पाकर, उन्हीं का ही बन कर रह गया? इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि महापुरुषों का संग पाकर व्यक्ति के माथे पर लिखे लेख पलट जाते हैं। दो प्रकार के संग अर्थात कुसंग और सुसंग, जिसका भी साथ मिल जाये, उसी से काल, स्वभाव और कर्म बदल जाते हैं। आइये इस पुस्तक का भरपूर आनन्द उठायें, एक सच्चे जिज्ञासु की तरह, धुर की बाणी से ज्ञान रूपी मोतियों को चुनकर, हृदय में उनकी माला पिरोकर चिन्तन, मनन, निधिआसन करते हुए, अविनाशी ज्योति में मिलने का प्रयास करें। गुरू हमारे अंग-संग हैं, वे सदा सहाई हैं।

सात अध्यायों की संक्षिप्त कथा सार रूप में इसलिये दी जा रही है ताकि प्रभु मिलन की सात

अवस्थाएं, जो महापुरुष अक्सर बताया करते हैं, उनमें लगातार सत्संग करने वाला जिज्ञासु पहली दो या तीन अवस्थाएं तो प्राप्त कर लेता है ताकि उसे आगे बढ़ने के लिये आत्म मार्ग पर चलना सुलभ हो जाये। पहले अध्याय में शारीरिक जामें में आई महान आत्मा भाई लहणा जी का जीवन परिचय कराया गया। इसके पश्चात कलयुग का निरूपण विस्तार से करने के बाद, इस युग में भव सागर तरने की सरल एवं सुगम पहली सीढ़ी, कलयुग में केवल नाम अधार पर चढ़ना सिखाया जाता है। इसी के अन्दर ही अहम 'मैं' हउमैं धारण करके, उत्पन्न होने वाला जीव जन्म-मरण, सुख-दुख कर्मों के लेखे जोखे के गोते में चक्कर लगाता रहता है। जन्म मरण के बन्धन से मुक्त होने के लिये परमेश्वर के नाम की महिमा, अन्य प्रकार के साधन तथा माया के विभिन्न रूपों में अज्ञान रूपी माया से बाहर निकलने के साधनों का विस्तृत वर्णन किया गया है। अन्त में मनुष्य को उसके मूल उद्देश्य - जहाँ से यह बिछुड़ा था, उसी मूल अविनाशी ज्योति में वापिस, उसी में मिलने का मार्ग स्पष्ट कर दिया। इसके साथ-साथ परवान रूहों को दरगाह में स्थान मिलता है? दूसरा अध्याय दरगाह में प्रवेश के साथ शुरू हो जाता है।

यहाँ पर यह बताना जरूरी है कि 40 वर्षों से लगातार देवी के दर्शनों को जाने वाले भाई लहणा जी, एक दिन प्रात: बेला में तालाब पर स्नान करने जाते हैं, वहाँ पर गुरमुख प्यारे भाई जोध के मधुर कंठ से 'सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई' की पंक्तियां सुनते हैं तो इनका भाई जोध के प्रति आकर्षण हो जाता है फिर तो इस बाणी के बिशनपदों को सुनने के लिये भाई लहणा जी लालायित हो उठते हैं।

दूसरे अध्याय में बड़े ही सुन्दर, सहज, सरल शब्दों में, हरियश का महत्व, यमदूतों की करनी, शराब, नशे आदि करने वालों का यमदूतों के साथ व्यवहार, दरगाह क्या होती है? अनेक शंकाओं का समाधान करती हुई कथा, 'गुरू बिना ज्ञान नहीं' पर पहुँचती है। गुरू पर तर्क करने वाला वैराग की 6 कलाओं से वंचित हो जाता है। इतना ज्ञान का भण्डार खोलने के पश्चात, भाई लहणा जी का भाई जोध के साथ मिलाप हो जाता है। सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी की बाणी के प्रति आकर्षण बढ़ना शुरू हो जाता है और अधिक जानकारी पाने के लिये, भाई लहणा जी की प्रेम पिपासा और भी तीव्र हो उठती है। लगभग 42 पृष्ठों में यह कथा, अपने प्यारे की प्यारी-प्यारी बातों के सुनने के लिये, अग्रसर होती है।

प्यार किया नहीं जाता, प्यार अनायास हो ही जाता है। अत: लहणा जी जितनी-जितनी बाणी सुनते, उनका प्यार उसी तरह से बाणी के प्रति तथा बाणी के रचयिता के प्रति, पूर्णिमा के चाँद की तरह बढ़ने लगता है। इसलिये आपकी इस प्यास को बुझाने के लिये आप गुरू नानक देव जी महाराज के बचपन के कौतुकों से लेकर उदासियों तक का विवरण बड़े प्यार से सुनाते हैं। भाई लहणा जी एक सच्चे जिज्ञासु की तरह, भाव नाम महिमा आदि बाणी के मर्म भेदी बाण, भाई लहणा जी को बुरी तरह घायल कर देते हैं। सच्चे गुरू की तलाश भाई लहणा जी को बुरी तरह से सताती है। कथा में अन्त में गुरू से मिलने की गुरू दर्शन की लालसा बहुत बढ़ जाती है और गुरू दर्शन के लिये चल पड़ते हैं।

चौथा अध्याय प्रारम्भ करने से पहले, महापुरुषों ने जिज्ञासु की जिज्ञासा को और प्रबल तथा प्रखर करने के लिये गुरसिख बनना आसान है, परन्तु गुरसिखी निभाना सबसे कठिन है विभिन्न प्रसंगों द्वारा इसका निरूपण करते हैं। दुनियां दुखी क्यों है? सत्संग का महत्व, विभिन्न अवतारों का वर्णन परन्तु सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी का स्वंय गुरू परमेश्वर के रूप में अवतरण, हउमै का प्रभाव, दान आदि का महत्व बताते हुए, बुद्धि को स्नान कैसे कराया जाता है। इतना कुछ वर्णन करने के पश्चात, मर्म भेदी

बाणों से आहत, भाई लहणा जी, सच्चे पातशाह के दर्शनों के लिये कदम बढ़ाते हैं। भाई लहणा जी का सच्चे पातशाह के दर्शनों के लिये प्रस्थान के साथ यह चौथा अध्याय समाप्त हो जाता है।

पाँचवा अध्याय कुछ आकार में बड़ा जरूरी बन गया। इसका विस्तार करना स्वाभाविक था। सतगुरू मिलन पूर्ण समरथ गुरू का मेल कोई सहज कार्य नहीं होता यदि भाग्य जाग जायें, शुभ घड़ी आ जाये, तब जाकर कहीं मेल होता है। अत: पाँचवा अध्याय उन सभी पक्षों को उजागर करता है, जिनसे समरथ गुरू मिलन का मिलन, सहज बन जाये। इसके लिये मन को पूरी तरह से तैयार करना पड़ता है। मन की चंचलता पर अंकुश लगाना जरूरी होता है। इसे साधना पड़ता है। मन को साधने के जितने भी साधन हो सकते हैं, उनका विस्तृत वर्णन करना जरूरी था, जिसके फलस्वरूप यह अध्याय लगभग 111 पृष्ठों का विशाल आकार धारण कर गया। इसमें विशेष चर्चा के विषय, भयानक रोगों का वर्णन जिनमें ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, बखीली आदि की व्याख्या, दुखों का मूल कारण हउमै, कलयुग में सत्संग का महत्व, विभिन्न प्रकार के स्नानों में, नाम स्नान की विधि और उसका महत्व, विभिन्न प्रकार की रहतें, विभिन्न प्रकार के साधन, उनमें सुरत शब्द मार्ग का महत्व आदि रखे गये हैं, जिनके लिये विस्तारपूर्वक वर्णन करना आवश्यक था, इसकी सरल और विस्तृत व्याख्या विभिन्न प्रसंगों तथा उदाहरणों सहित, विषयों की मांग थी, वरना यह मन इतनी जल्दी गुरू की तलाश में नहीं जाता। इन विषयों को गम्भीरता के साथ विचार, मनन, चिन्तन ही मन को साध सकता है। इतना कुछ सुनने के पश्चात लहणा रूपी भंवरा, गुरू रूपी सच्चे पातशाह के दर्शनों का रस लूटने के लिये, घोड़े पर सवार होकर चल पड़ता है। भाई लहणा जी कितने सौभाग्यशाली थे, जिनकी अगुवाई करने के लिये स्वंय गुरू नानक पातशाह को चलकर आना पड़ा। महापुरुषों की अमृत रस भरी बाणी में, भाई लहणा जी 'लेनदार' और सच्चे पातशाह 'देनदार' का प्रेम प्रसंग पढ़ते-पढ़ते नेत्र सजल हो उठते हैं। भाई लहणा जी का घोड़ी पर सवार होकर चलना और सच्चे पातशाह का घोड़ी की चाल के साथ, कदम से कदम मिलाने वाला प्रेम प्रसंग ऐसा मन मोहक बन जाता है जिसे बार-बार पढ़ने की उत्सुकता पैदा होती है और जी भर कर अपने प्यारे के प्यारे कौतुकों को सुनने के लिये दिल से 'वाह-वाह' स्वर स्वंयमेव ही निकलता है। इस प्रकार प्रथम मिलन में ही चार दिनों तक सेवा भाव का पाठ सीखते रहे। घर की सुध-बुध भूल गये। चार दिनों के पश्चात सच्चे पातशाह ने घर जाने का आदेश दिया। परन्तु आपका मन इतना सध गया कि और कहीं भी जाने को मन नहीं करता और बार-बार यही कहते हैं, ''जहाँ मैंने जाना था, वहाँ पहुँच गया, अब मैंने और कहीं नहीं जाना।'' जिस प्रकार जहाज के दो पंखों से यात्रा शीघ्र तय कर ली जाती है, इसी प्रकार 'सेवा और सिमरण' रूपी पंखों से आत्म मार्ग का सफर शीघ्र तय किया जा सकता है। भाई आदम की सेवा के प्रसंग के साथ पाँचवा अध्याय गुरू सेवा और सिमरण का रंग भाई लहणा जी के मन पर अमिट छाप छोड़ देता है और भाई लहणा जी घर लौट आते हैं। आपकी अवस्था ऐसी हो जाती है कि देह रूप में घर में होते हैं पर मन गुरू के चरणों में लगा रहता है।

गुरू चरणों से प्रीत बढ़ती चली गई। घर पर मन नहीं लगता, सभी सांसारिक प्रीत तोड़कर पुन: गुरू महाराज जी की चरण शरण में आश्रय आ लेते हैं। छठे अध्याय में, पाँचवे अध्याय के अन्त में गुरू सेवा और सिमरण के पाठ को, पक्का याद करने के पश्चात उसको व्यवहारिक रूप देने के लिये सेवा का पुंज बन जाते हैं। तन से सेवा में लीन, मन से सत्संग में होने वाली ज्ञान चर्चा के सच्चे पिपासु बन कर, दिन रात सन्तों की रीत, गुरमुखों की झाकियां भक्त कबीर, सन्त नामदेव, ऋषि दुर्वासा, भाई बुद्धू शाह आदि की पवित्र जीवन गाथा के कौतुक सुनकर, ज्ञान रूपी मोतियों को चुन कर, उनकी हृदय में माला

पिरोते रहते हैं। घर-बार भूल गया। दिन रात सेवा में जुट गये। अचानक एक दिन सेवा करते समय सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी आसन पर बिराजमान हैं, आपके चरण हिलते हैं। भाई लहणा जी के मन में सन्देह उठता है और महाराज जी से प्रश्न करते हैं, ''सच्चे पातशाह! आज एक अचम्भा देखा, एक कौतुक देखा कि आप जब सोये हुए थे तो आपके चरण हिल रहे थे। कृपा करके मेरा संशय दूर कीजिये।'' इसी के साथ छठा अध्याय समाप्त हो जाता है परन्तु आगे जानने की जिज्ञासा बढ़ती चली जाती है। आगे क्या होगा? इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिये सातवें अध्याय में प्रवेश करना पड़ेगा।

सांतवा अध्याय, सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी द्वारा, भाई लहणा जी के पिछले अध्याय के प्रसंग में, शंका निवारण हेतु उन्हें ज्ञान प्रदान करना, देवता लोग दर्शन करने के लिये धरती पर आते हैं क्योंकि स्वर्ग में उन्हें सत्संग प्राप्त नहीं होता। इसलिये पता नहीं कौन-कौन से देवता, चरण स्पर्श करते हैं। फिर महापुरुष कभी सोया नहीं करते।'' इस प्रकार सन्देह निवारण करके, निरारी कथा आगे बढ़ती है। जिसमें शबद की सवारी, माया के विभिन्न रूप, माया बुरी नहीं बल्कि माया का प्रयोग गलत होता है, विभिन्न प्रकार की माया में अज्ञान रूपी माया, भ्रम सबसे खतरनाक माया है। इसकी विस्तृत व्याख्या की गई है। सन्तों के पास माया दासी बनकर कार कमाती है। बड़े-बड़े तपस्वी, ऋषि, मुनि, देवता, योगी अज्ञान रूपी माया का शिकार हो गये। मनुष्य के अन्दर तीन दोष मल, विक्षेप, आवरण जब तक इन्हें दूर नहीं किया जाता, तब तक नेत्रों पर पड़ा ज्ञान का पर्दा हट नहीं सकता। तीन दोषों को दूर करने की विस्तृत व्याख्या के पश्चात, पाँच भ्रमों में ग्रस्त इस जीव को बाहर निकालने की बात कहकर सांतवा अध्याय समाप्त हो जाता है।

यह तो महापुरुष ही जानते हैं कि अपने मूल से बिछुड़ी ज्योति, अविनाशी ज्योति में कब मिलेगी, कितना लम्बा विस्तार अभी और करना है? पर जिज्ञासा यह जरूर बनी रहती है कि 'मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु' कभी न कभी तो अपने मूल की पहचान हो ही जायेगी। वाहिगुरू के चरणों में दास की सदा-सदा यही अरदास है कि विश्व का सदा कल्याण सोचने वाले, दूरदर्शी सत्पुरुषों का सत्संग दर्शन सदीवीं प्राप्त होता रहे। दो शब्द लिखते समय अनेक कमियां रह गई होगीं उनके लिये दास क्षमा याचक है क्योंकि महापुरुषों के अथाह ज्ञान के सागर को चन्द शब्दों में बान्धने की ढीठता दिखाने का कार्य कर रहा हूँ, इसमें भी मेरा कोई बल नहीं है। आपने दास से सेवा लेनी है सो आप को जैसे रूचता है, उसी तरह से हो जाता है।

आपका दास

(डा.) डी. के पाण्डे

रतवाड़ा साहिब
16-9-2001

1

शान..।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

सगल दुआर कउ छाडि कै गइयो तुहारो दुआर।
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥

धारना - आइओ शरन तुहारी,
सतिगुरू आइओ शरन तुहारी - 2, 2
सतिगुर आइओ शरन तुहारी - 2, 2
आइओ शरन तुहारी.............-2.

सतिगुर आइओ सरणि तुहारी।
मिलै सूखु नामु हरि सोभा चिंता लाहि हमारी।
अवर न सूझै दूजी ठाहर हारि परिओ तउ दुआरी।
लेखा छोडि अलेखै छूटह हम निरगुन लेहु उबारी।
सद बखसिंदु सदा मिहरवाना सभना देइ अधारी।
नानक दास संत पाछै परिओ राखि लेहु इह बारी॥ *पृष्ठ - 713*

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 4, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए...........-2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

जो वाहिगुरू को रूच जाये, अच्छा लग जाये, उनकी कथाएं तथा हम लोगों की कथाएं एक जैसी नहीं हुआ करतीं। हमारा ध्यान संसार की ओर है, हम काल के पट्टे पर चढ़े हुए हैं; उनका रूख अकाल की ओर है, जहाँ पर न कोई मौत है, न दुख, न कोई तकलीफ पहुँच सकती है।

दुखित हुआ संसार, तृष्णा की आग में जल, - गल रहा है, वैर विरोध की आग में जल रहा है। थोड़ी देर के लिये भी शान्ति नहीं हो रही। जब हम ऐसे परमेश्वर के प्यारों की कथाएं, मन, चित्त लगाकर श्रवण करेंगे तो हमारे लिये भी रास्ता खुल जाया करता है। पता नहीं वाहिगुरू जी ने किस-किस को भेजा है और उसने कब जागना है, कब उसने महान बनकर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व सम्भालना है, कोई नहीं बता सकता क्योंकि अकाल पुरुष की नेत ही ऐसी है। जितने भी महान पुरुष हुए हैं, बेशक

उन्होंने पहले ही पूर्व जन्मों में, तप साधनाएं की हुई थीं – पर जब तक जाग नहीं आई, कोई पूर्ण पुरुष नहीं मिला, तब तक वे दूध का दूध ही बने रहे और जब जाग लगा (खट्टा लगा) फिर दही बनकर मक्खन के रूप में, घी के रूप में, प्रकट हुए। इसी तरह से इस संसार में इस प्रकृति के अन्दर छोटी-छोटी रूहें आती हैं, महान हस्तियाँ भी आती हैं। महान हस्तियों को कितनी देर तक महाराज गुप्त रखते हैं, कब उनका मिलाप करवाते हैं, यह सारा, जितना भी प्रबन्ध और कार्यक्रम है, अकाल पुरुष के हाथ में है, मनुष्य के हाथ में कुछ भी नहीं। सो इस प्रकार –

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

उनकी कथाएं न्यारी हुआ करती हैं।

गुरू अंगद साहिब जी महाराज अभी आपने गुरूपद प्राप्त नहीं किया था, उस समय की उनकी लीलाओं को सुनकर हैरान रह जाते हैं कि आप किस उच्च अवस्था के स्वामी थे। उस समय कोई भी अनुमान नहीं लगा सकता था कि कोई दिन ऐसा भी आयेगा, जिस समय वह अकाल पुरुष का रूप होकर, समस्त खण्डों ब्रह्मण्डों के मालिक बन जायेंगे। आप जी का जन्म सन 1504 या सम्वत 1561 कहें, उस समय मत्ते की सरां, जो फरीदकोट से कुछ ही दूरी पर है, उस गांव में हुआ। आपके पिता जी भाई फेरू जी के पूर्वज बहुत दूर गुजरात के थे, तथा आप जी के तीन भाई मंगोवाल गुजरात पिता जी के पास रहते थे, परन्तु भाई फेरू मल को उनके ननिहाल मत्ते की सरां ले गये। वहाँ पर उनका विवाह बीबी सभराई के साथ कर दिया। फेरू मल बहुत योग्य हिसाब-किताब रखने वाला तथा फारसी भाषा का मुन्शी और बही-खाते का उस्ताद निकला। मत्ते की सरां के तख्त मल जाने-माने चौधरी थे। उन्होंने फेरू मल को मुन्शी रख लिया और काम काज का सारा कार्यभार सौंप दिया। तख्त मल इलाके के चौधरी थे। भाई फेरू से एक वार हिसाब-किताब के कारण कोई गलती रह गयी। उस समय उसने उन्हें कोठरी में बन्द कर दिया। उस समय गुरू अंगद साहिब, भाई लहणा के रूप में खडूर साहिब गये। वहाँ पर तख्त मल की लड़की ब्याही हुई थी। उसे सारी वार्ता सुनाई। चौधरी तख्त मल के घर वाली जो बीबी थी उसे आप बूआ कहा करते थे क्योंकि बचपन में उनके मायके घर ही आपका पालन-पोषण हुआ था। दोबारा हिसाब-किताब देखने का हुकम हो गया। जब हिसाब-किताब किया गया, उस समय गलती का पता चल गया, फिर चौधरी ने भाई फेरू मल जी का बड़ा मान सम्मान किया पर आपका मन पिछले वरतारे से उचाट हो गया। आपने भाई लहणा जी (गुरू अंगद साहिब) के ससुराल संघर गाँव में, छोटा सा व्यापार शुरू कर लिया पर उसके नज़दीक ही हरि के पत्तन जहाँ से आम जनता तथा फौज़ें निकला करती थीं, आपने वहाँ जाकर व्यापार शुरू कर दिया तथा थोड़े से दिनों में ही अकाल पुरख की रहिमत से काफी अमीर हो गये। उसके पश्चात भाई लहणा जी ने यह कारोबार चलाया और जो थोक का काम था, वह छोड़ दिया तथा दूर-दूर तक नमक का व्यापार शुरू कर दिया क्योंकि और तो सभी वस्तुएं घरों में मिल जाया करती थीं, कपड़ा मिल जाता था, तेल मिल जाता था, हर चीज़ घर में होती थी लेकिन एक नमक ऐसी चीज़ थी जो नहीं मिलता था, काफी दूर से लाना पड़ता था।बहुत अच्छा व्यापार धन्धा चल रहा था और आप जी देवी की भक्ति किया करते थे। उन दिनों भारत वर्ष में देवियों देवताओं की पूजा आम तौर पर 100 प्रतिशत तक पहुँच गई थी और अकाल पुरुष को मानना बहुत दूर की बात हो गई थी। उसका कारण यह था कि जो यहाँ का दर्शन शास्त्र था, वह यह था कि जो ईश्वर है वह सर्व कला समरथ नहीं है। ऐसा विश्वास था, इन लोगों का, कि सृष्टि को बनाने के लिये प्रकृति अर्थात माया की जरूरत है। माया पहले भी थी और उस त्रिगुणी माया रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण का जब ईश्वर के साथ संयोग हुआ, उस समय उसके प्रताप से इसके अन्दर जीव पैदा हुआ। सो वाहिगुरू

पूरी तरह स्वतन्त्र नहीं थे। जिस प्रकार कुम्हार को बर्तन बनाने के लिये मिट्टी की जरूरत है, चक्के की जरूरत है, चक्के को घुमाने के लिये डण्डे की जरूरत है फिर अपने अन्दर कला, हुनर (Skill) की जरूरत है। जब ये चारों चीज़ें इकट्ठी हो जाती हैं, फिर कोई चीज़ बन सकती है। वाहिगुरू को ईश्वर ही कहा करते थे। निर्गुण ब्रह्म को मानते थे पर ईश्वर दूसरे स्तर पर था। उस पर उनका विश्वास नहीं था, वे कोई रूप रेखा नहीं बान्ध सकते थे। इसलिये जो तीन प्रमुख देवता थे विष्णु जी, महेश जी तथा ब्रह्मा जी एक पालन करने वाला, एक संहार करने वाला और एक उत्पत्ति करने वाला –

इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु॥ *पृष्ठ - 7*

उनकी पूजा किया करते थे। वाहिगुरू जी को एक प्रकार से भूल ही चुके थे। इनसे ऊपर आदि शक्ति को मानते थे, जिसे देवी कहकर सम्बोधन किया जाता था। अनेक नाम प्रचलित हैं – देवी कह लो, आदि शक्ति कह लो, भवानी कह लो, भगवती कह लो, ये सभी नाम उस शक्ति का ही संकेत करते हैं।

इस तरह भाई फेरू जी ने काफी संगत बनाई हुई थी। ये हर साल काफी सारी संगत का इकट्ठ लेकर देवी पूजन करने के लिये जाया करते थे।

देवीओं का पूजन करने के लिए आपने-अपने पिता जी के स्थान पर उन्हीं के द्वारा अपनाये जाने वाले धर्म कर्म, देवी के जगराते आदि करने शुरू कर दिये। सारी रात आप घुंघरू बान्ध कर नृत्य किया करते थे। भेंटे गाया करते थे, गला बहुत सुरीला था, नैन सुन्दर थे, नव युवक थे, भरा हुआ चेहरा था और जो भी देखता था, देखते ही मोहित हो जाता था, कुदरत ने आपको खास ही रूप दिया था, कुछ धार्मिक विचार होने के कारण, हर समय संजीदगी में रहने के कारण सभी आपका मान किया करते थे।

एक दिन की बात है कि सारी रात का जगराता हो रहा है, भेंटे बोली जा रही हैं और नृत्य हो रहा है। आपके टखनों के पास घुंघरूं बन्धे हुए हैं, हाथों में खड़तालें हैं, बहुत जोश के साथ तथा श्रद्धापूर्वक सारी रात आप कीर्तन करते रहे। उसके बाद जब अमृत बेला हुई दो या तीन बजे, तब मन में विचार आया कि चलो, चलकर स्नान करें। पानी का और कोई इन्तज़ाम नहीं था, छोटे-छोटे तालाब हुआ करते थे, उन्हें साफ सुथरा रखा जाया करता था।

उस समय आप स्नान करने के लिये जाते हैं, जिस प्रकार से दूध में थोड़ा सा खट्टा डाला जाता है, इसी प्रकार गुरू नानक पातशाह का एक सिख जिसका नाम भाई जोध था, गुरू महाराज जी के पास अकसर जाया करता था, उसने बहुत सी बाणी याद की हुई थी, उस समय वह भी स्नान करने के लिए आये हुए थे। जिसके मन में बाणी हुआ करती है, वह या तो चुप-चाप पढ़ता है या धीरे-धीरे पढ़ता है या गाकर पढ़ता है। आप जी के मुख से उस समय इस भाव के शब्द निकल रहे थे –

धारना - अंमृत वेले ओ, कौण जागदे - 2, 2
कोई जागदे ने, राम पिआरे - 2, 2
कोई जागदे ने राम पिआरे संगते, कौण जागदे,
अंमृत वेले ओ....................-2

भिंनी रैनड़ीऐ चामकनि तारे।
जागहि संत जना मेरे राम पिआरे।
राम पिआरे सदा जागहि नामु सिमरहि अनदिनो।
चरण कमल धिआनु हिरदै प्रभ बिसरु नाही इकु खिनो।

तजि मानु मोहु बिकारु मन का कलमला दुख जारे।
बिनवंति नानक सदा जागहि हरि दास संत पिआरे॥ पृष्ठ - 459

जागना सबके भाग्य में नहीं हुआ करता। या तो दुखी व्यक्ति को नींद नहीं आया करती, शरीर में कोई रोग हो किसी के सिर पर कोई दुश्मन बैठा हो, उसे नींद नहीं आया करती, कर्ज़ा देना हो, मन में विचार हो कि ज़रूर देना है, इन सोच विचारों में डूबे हुए को नींद नहीं आया करती। लड़की जवान हो, वर न मिलना, दुखदायी हुआ करता है पर जो प्रभु के प्यार में जागते हैं, उसमें सुख ही सुख हुआ करता है। ऐसे जागने के लिये बाणी में बार-बार फ़रमान आता है -

कबीर सूता किआ करहि बैठा रहु अरु जागु।
जा के संग ते बीछुरा ताही के संगि लागु॥ पृष्ठ - 1371

सोया हुआ क्या कर रहा है? उठकर बैठ, जाग तथा याद कर कि किसी दिन परमात्मा से तेरा बिछौड़ा हुआ था, तूने उसे मिलना है, उसे मिलने के लिए तुझे मानस देही, मनुष्य जन्म मिला है।

महाराज फ़रमान करते हैं कि दलिद्री आदमी इनके भाग्य बदकिस्मत हैं, उन्हें अमृत बेला में जाग नहीं आया करती क्योंकि उनका अभी समय नहीं आया, जो प्रभु के प्यारे हैं, वे अमृत बेला में जागते हैं, उस समय उन्हें नींद नहीं आया करती क्योंकि -

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी।
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥ *डा. भाई वार सिंघ जी*

अमृत बेला होते ही उनके अन्दर आकर्षण पैदा होता है। उस समय वे सोया नहीं करते क्योंकि अपने प्यारे की याद में बैठने की उनके अन्दर लालसा होती है, उसके दर्शनों की प्यास होती है। यह समय केवल प्रभु के प्यारों के नसीब में हुआ करता है। मनमुख लोगों के भाग्य में नहीं हुआ करता क्योंकि पिछली रात तो वे रंग रलियाँ मनाते रहते हैं, फिर अमृत बेला में उनकी नींद नहीं खुला करती, इस संसार में आने का मनोरथ उन्हें भूल गया।

तू तो ज़िन्दा ही मर गया। गुरू महाराज जी का बहुत ही कठोर वाक्य है, इस तरह पढ़ लो-

धारना - तूं जीउंदा मर गिआ ओ,
गाफला तैनूं जाग ना आई - 2, 2

फरीदा पिछल राति न जागिओहि जीवदड़ो मुइओहि॥ पृष्ठ - 1383

यदि अमृत बेला में नहीं जागा फिर तो तू जीवित ही मर गया क्योंकि तुझे तो परमात्मा ही भूला हुआ है पर वाहिगुरू को तो तू याद है -

जे तै रबु विसारिआ त रबि न विसरिओहि॥ पृष्ठ - 1383

वह हर समय तेरे साथ रहता है, इन्तज़ार करता है कि यह अरबों-खरबों से चल रहा राही, कब अपने घर लौटेगा; क्योंकि काफी समय बीत गया -

कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ।
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ। चिरंकालि इह देह संजरीआ॥ पृष्ठ - 176

परमेश्वर इसकी इन्तज़ार करता है पर यह जागता ही नहीं, कैसे जगाया जाये। जाग नहीं आया

करती साध संगत जी! जब तक पूरा न मिले –

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी॥ पृष्ठ - 204

जब रसिक वैरागी से मेल होता है, उस समय फिर क्या होता है, जब मिल जाता है, कहते हैं –

मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी॥ पृष्ठ - 204

यह जो मन में अन्धेरा पड़ा हुआ है, इसका अन्त हो जाता है – अज्ञान का अन्धकार नष्ट हो जाता है।

करोड़ों जन्मों से सोई हुई, हउमै में खेल रही सुरत, जाग जाया करती है। यह भी एक जागना है। दूसरा जागना शरीर का है। जो शरीर से नहीं जागता, उसे रूहानी जाग कैसे आ जायेगी? नहीं आया करती। वह समय होता है। उस समय कहता है, मैं तो लुट गया, मारा गया –

घर ही महि अंम्रितु भरपूरु है मनमुखा सादु न पाइआ।
जिउ कसतूरी मिरगु न जाणै भ्रमदा भरमि भुलाइआ॥ पृष्ठ - 644

बुरे काम के लिये, गलत काम करने के लिये, यह समय कभी नहीं देखता; चाहे रात हो, चाहे दिन हो, इसे नींद नहीं आती, आलस नहीं आता। जो भजन बन्दगी करने का, परमेश्वर से मिलने का समय, अमृत बेला है, उसको तो सम्भालता नहीं। सो इस प्रकार है –

बुरे काम कउ ऊठि खलोइआ। नाम की बेला पै पै सोइआ॥ पृष्ठ - 738

चंगिआईं आलकु करे बुरिआईं होइ सेरु॥ पृष्ठ - 518

शेर जैसा जिगर हो जाता है जब कोई गलत काम करना होता है। अतः अमृत बेला में वही जागते हैं, जिनके सीने में प्रभु प्यार का आकर्षण होता है। वे सोया नहीं करते।

एक बार की बात है कि गुरू नानक पातशाह चले जा रहे हैं। मरदाना की नज़रों में एक बहुत ही अजीब प्रकार का व्यक्ति नज़र आया जिसने एक बहुत बड़ा जुल्लड़ (जाल) उठाया हुआ है। मरदाना कहने लगा, ''पातशाह! यह आदमी कैसा अजीब है? यह कितना भारी (गट्ठर) उठाये हुए जा रहा है।''

महाराज कहते हैं, ''मरदाना! बुलाकर पूछ ले।'' आवाज़ लगाई वह पास आ गया। जाल रख दिया।

पूछते हैं, ''कौन है तू?''

कहता है, ''मैं कलयुग हूँ, मैं कभी भी एक जैसा नहीं रहता। न तो किसी व्यक्ति पर एक जैसा रहता हूँ, न ही वातावरण में एक जैसा रहता हूँ। मेरे अन्दर परिवर्तन हर समय होता रहता है, हर रोज़ होता है, हर क्षण में बदलता रहता हूँ। पलक झपकते समय में भी, बदल जाया करता हूँ, एक जैसा कभी नहीं रहता। कभी वह समय था जब मैं सतयुग में रहा करता था। सारी प्रजा, जितने भी जीव जन्तु थे सभी सत्य का पालन करते थे। मनुष्य, जानवरों द्वारा बोली जाने वाली बोलियों को समझते थे, वातावरण की भाषा, हवा की बोली भी समझते थे। सभी बातें जानते थे Telepathy (दूर संवेदन) द्वारा हर एक के मन की बात बिना बताये, बोले समझ जाते थे और सत्य के पुजारी हुआ करते थे, वह भी समय था, फिर राजाओं महाराजाओं का समय आया। यज्ञों का जोर हुआ, बड़े-बड़े यज्ञ, राजसूय यज्ञ, अश्वमेध यज्ञ आदि-आदि कई प्रकार के यज्ञ शुरू हो गये फिर पूजा पाठ का समय आ गया। द्वापर युग में वह भी बीत गया, फिर कलयुग का समय आ गया। वही समय, वही वृक्ष, वही मौसम सभी कुछ कायम है, लेकिन समय बदल गया। समय परिवर्तन के कारण जो मनुष्य था, वह देवता के पद से नीचे गिरकर, भूत प्रेत बन गया –

कलि महि प्रेत जिन्ही रामु न पछाता सतजुगि परमहंस बीचारी।
दुआपरि त्रेतै माणस वरतहि विरलै हउमै मारी॥ पृष्ठ - 1131

अत: समय हमेशा बदलता चला जा रहा है।''

कहने लगा कि अब मेरा समय आ गया है। मुझे कलयुग कहते हैं। हूँ तो मैं एक ही समय, लेकिन मेरी करतूतों के कारण मेरे परिवर्तन के कारण, सियाने लोगों ने मुझे तोड़ कर रख दिया। सत्रह लाख अठाईस हजार साल मुझे सतयुग कहते रहे। बारह लाख छियानवें हजार साल त्रेता कहते रहे, आठ लाख, चौंसठ हजार साल मुझे द्वापर कहते रहे और अब चार लाख बत्तीस हजार साल मुझे कलयुग कहेंगे। सो मैं कलयुग हूँ भाई! मैं समय हूँ।

महाराज कहते हैं, ''यह क्या उठाया हुआ है?''

कहता है, यह जुल्लड़ उठाया हुआ है - आलस की गठड़ी क्योंकि इस समय जो जीव जन्तु हैं, उनके हृदयों में से परमेश्वर की भक्ति निकल चुकी है और आलस्य का जाल मैंने सभी के ऊपर डाल देता हूँ और अमृत बेला जो नाम जपने का होता है, फिर इन्हें गहरी नींद आती है फिर जगाने पर भी नहीं जागते। शरीर चुस्त (तन्दरूस्त) नहीं होता क्योंकि रूचि नहीं है इनके अन्दर।

कहने लगे, ''इसके अन्दर छेद हो चुके हैं।''

कहने लगा, ''गलियाँ (छेद) गुरू नानक पातशाह ने इसके महत्व पर जोर दिया है और जो गुरसिख शौक रखते हैं, जिन्होंने यह जान लिया है कि -

भई परापति मानुख देहुरीआ। गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम। मिलु साध संगति भजु केवल नाम।
सरंजामि लागु भवजल तरन कै। जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै॥ पृष्ठ - 12

जिनके हृदय में यह सूझ पैदा हो गई है कि यह जो जन्म है, यह परमेश्वर को मिलने के लिये मिला है, साथ ही यहभी ज्ञान हो गया कि कलयुग में यदि थोड़ा सा भी भजन कर लिया जाये तो इसी से ही पार उतारा हो जाता है, उनके मन में शौक पैदा हो गया, जिन व्यक्तियों को शौक पैदा हो जाता है, वे सोया नहीं करते, आलस नहीं किया करते। वे अमृत बेला में पहर रात रहते, उठकर स्नान करते हैं।

गुरू अंगद साहिब महाराज ने गुरू नानक पातशाह से पूछा, ''पातशाह! अमृत बेला के स्नान पर आप बहुत ज़ोर देते हैं और क्या इसका कोई महात्म भी हुआ करता है?''

महाराज कहते है, ''देख! हर काम यदि विधि पूर्वक किया जाये तो उसका फल मिलता ही है।''

किसी भी शबद का जाप विधि पूर्वक कर लो, उसका फल मिलेगा ही। कोई भी काम विधि पूर्वक कर लो, वह फल देगा। खेती विधि पूर्वक कर लो, अधिक लाभ होगा। पहले जो किसान थे, वे चार-चार अंगुल गहरी ज़मीन में गेहूँ का बीज डाला करते थे, बीज तब जमता नहीं था क्योंकि गेहूँ छोटी थी, Hybrid (दोगली नस्ल) थी। इसकी विधि यह थी कि डेढ़ अंगुल गहरा, उसका बीज डाल दो वह बीज बहुत हरा होता है और उसका धान भी बहुत होता है। 21 दिनों के बाद खाद डालो फिर उसका germination (अकुंरण) ज़ोर से हो जाता है। यही विधि हुआ करती है। मेहनत उतनी ही करनी पड़ती है लेकिन विधि पूर्वक खेती करने वाले के भण्डार भर जाते हैं, दूसरे को घाटा पड़ता है। इसी तरह

की पशुओं की बातें हैं। सारी दुनियाँ में जितने भी काम हैं, यदि सभी कार्य विधि पूर्वक किये जाएं तो फल मिलता ही है। विधि रहित किये गये कार्य, कोई फल नहीं देते।

महाराज कहते हैं कि विधि पूर्वक जो स्नान करता है, उनका फल यह है कि जो सवा पहर रात रहते उठकर स्नान करे, उस समय केवल स्नान करने का फल ही इतना है कि जितना सवा मन सोना दान कर देना। उससे दो घड़ी बाद में जो स्नान करते हैं, सवा मन चाँदी पुण्य दान करने के समान उसका फल होता है। इससे भी दो घड़ी बाद में जो स्नान करते हैं, उसको सवा मन तांबा पुण्य दान करने का फल होता है। इसके बाद जो स्नान करते हैं, उन्हें सवा मन अनाज पुण्य दान करने का फल मिलता है। सूर्य निकलने पर जो स्नान करते हैं, उसका फल न पाप होता है न पुण्य होता है। वे केवल शरीर की सफाई के लिये ही करते हैं। इसलिये हम ज़ोर देते हैं कि यदि और कुछ भी नहीं करता और स्नान ही कर ले विधि पूर्वक, तो भी बहुत भारी फल प्राप्त हो सकता है।

अत: अमृत बेला है, स्थिर समय है। लहणा जी स्नान करने के लिये गाँव के तालाब पर गये हुए हैं। आप संघर गाँव में रह रहे हैं, जहाँ पर आपका नानका परिवार था। भाई फेरू मल जी की वहाँ ससुराल थी। वह अपना व्यापार करते थे। सारी रात देवी की भेंटे गाते गाते, स्नान करने के लिये चले गये। जब कोई अच्छा समय आने वाला हो, तो कोई न कोई कारण बन ही जाता है। दबे हुए शुभ कर्म जाग पड़ते हैं। वह समय सौभाग्यशाली होता है, जब परमेश्वर की आवाज़ कानों में पड़ जाये। बड़ों-बड़ों का सुधार ऐसे ही हुआ है, साध संगत जी! पापों में प्रवृत हुए लोगों के कानों में जब आवाज़ पड़ी तो उन्होंने उसे सम्भाल लिया।

उस समय वहाँ क्या देखते हैं कि उनसे भी पहले जाकर एक गुरसिख स्नान कर रहा है, जिनका नाम भाई जोध है। गुरू अंगद साहिब (भाई लहणा जी) उन्हें अच्छी तरह जानते हैं, लेकिन बहुत अधिक निकटता नहीं हुई थी। उसका कारण यह था कि आपके आस-पास देवी की पूजा करने वालों का इकट्ठ था, उनके साथ ही मित्रता थी, उनकी संगत में रहते थे, आपस में इकट्ठे हो जाया करते थे, पर भाई जोध जी, गुरू नानक पातशाह के श्रद्धालु थे, गुरू नानक पातशाह देवी देवताओं के पास नहीं जाते थे, 'सत' का प्रचार करते थे। इसलिये आपस में किसी भी बात में साझांपन नहीं था। जब कोई भी बात सांझी न हो फिर कोई मेल मिलाप नहीं हुआ करता -

आसा इसट उपासना खाण पीण पहिराण।
तुलसी खट लच्छण मिले मित्रता पहिचाण।

ये 6 बातें जहाँ हों, वहाँ पर मित्रता हुआ करती है। जहाँ ये 6 बातें पूरी न हों, उनमें मित्रता नहीं हुआ करती, जान पहचान नहीं हुआ करती। आज आप हैरान रह गये कि वह कुछ पढ़ रहे हैं, अति लय में गा रहे हैं। अत: आपने यह सुना -

१ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि। जपु॥
आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ *पृष्ठ - 1*

'नानक' नाम सुना पर समझ में कुछ भी न आया कि क्या कह दिया, समझने की कोशिश की, फिर आपने स्नान किया। स्नान करने के पश्चात उसी सरोवर के किनारे साफ सुथरे स्थान पर चौकड़ी लगा कर बैठ गये और लहणा जी भी स्नान करके आ गये और बिना कोई खटका किये, उनके पिछली

ओर जाकर इस आशय से चौकड़ी लगाकर बैठ गये कि यह जो कुछ गा रहे हैं, उसे समझने का यत्न करूं। भाई जोध जी ने जपुजी साहिब पढ़ना शुरू कर दिया। आप समझने की कोशिश करते हैं लेकिन जपुजी साहिब बहुत गूढ़ बाणी होने के कारण पूरी तरह से समझ में नहीं आती। अन्त जब पाँचवी पउड़ी पढ़नी शुरू की, उसकी अन्तिम तुक में आया जिसे इस तरह समझने का प्रयास किया।

धारना - जिहड़ा सारिआं जीआं दा इको दाता,
ओहनूं ना विसारीं बंदिआ - 2, 2
मेरे पिआरे ओहनूं ना विसारीं बंदिआ - 2, 2
जिहड़ा सारिआं जीआं दा इको दाता .... - 2

बहुत ध्यान के साथ श्रवण किया -

गुरा इक देहि बुझाई।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ *पृष्ठ - 2*

पहली बार ऐसे शबद सुने कि सभी जीवों का दाता एक है। सभी को वही एक ही देता है। इस तरफ ध्यान खिचा चला गया। उस समय तक यही विचार था कि देवी माता ही सब कुछ है और कहीं भी कुछ नहीं है। ऐसा विचार कभी आया ही नहीं कि कोई राज़क भी है संसार का। लेकिन एक तो नहीं भूला हुआ साध संगत जी! सारी सृष्टि भूल गई है। कोई नहीं ऐसा जो भ्रमित और भूला हुआ न हो। पढ़ तो लेते हैं हम, सुन भी लेते हैं लेकिन वहीं के वहीं रहते हैं। कई बार आपने यह सुना है कि इस जीव का जो सफर है, यदि इसे इतना ही पता चल जाये कि मेरा यह शरीर बनने से पहले मैं क्या था, तब भी जिन्दगी के अन्दर मोड़ आ जाने की सम्भावना है पर यह विश्वास नहीं करता। जन्म से पहले यह माँ के पेट में उलटा लटकता हुआ तप करता था -

गरभ कुंट महि उरध तप करते। सासि सासि सिमरत प्रभु रहते॥ *पृष्ठ - 251*

हर श्वांस परमेश्वर के नाम की धुन में मस्त रहता था। उस समय उसे ज्ञान था। पिछले सौ जन्म देख-देख कर पश्चाताप किया करता था कि मैंने किस प्रकार जन्म बर्बाद कर दिये, मेरे भाग्य में क्या आया? किसी भी काम नहीं आये। मैं यदि बहुत बड़ा राजा भी था तो भी मर गया, फकीर था तो भी मर गया। मैनें जो काम करना था वह तो किया नहीं। वहाँ बार-बार प्रार्थनाएं करता है कि हे प्रभु! यदि तू मुझे इस कुम्भी नरक में से निकाल ले तो फिर मैं नहीं भूलूँगा।

महाराज कहते हैं, तू एक बार नहीं हर बार जब भी तू मनुष्य बनता है -

बैर बिरोध काम क्रोध मोह।
झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह।
इआहू जुगति बिहाने कई जनम।।
नानक राखि लेहु आपन करि करम॥ *पृष्ठ - 268*

एक बार थोड़े ही भूला तू, सैकड़ों बार भूलता चला जा रहा है, अब भी तू भूल जायेगा।

बार-बार प्रार्थनाएं करता है कि हे प्रभु! मैं कभी भी तेरा एहसान नहीं भूलूंगा, क्योंकि मुझे यह पता है कि कितनी छोटी सी वस्तु से तूने मुझे कितने बड़े आकार में बदल दिया है। कितनी सुन्दर मुझे देही दे रहा है। मेरे लिये कितनी वस्तुएं तूने पहले ही तैयार कर ली हैं। तुझे चिन्ता है कि जब इसने पैदा होना है, इससे रोटी नहीं खाई जायेगी, कोई फल नहीं खाया जायेगा और इसे केवल दूध ही पच सकता है। वह भी किसी स्वस्थ शरीर का, ठीक ढंग से हज़म होगा, तब तूने माँ के स्तनों में दूध पैदा

कर दिया – मुझे पिलाने के लिये। लेकिन हमें तो यह विचार ही नहीं आता, हम कहते हैं कि यह तो automatic स्वाभाविक ही हो गया, जिसने यह प्रबन्ध किया है, शरीर में दूध पैदा किया है। पशुओं में दूध पैदा किया है। फलों में रस तथा शहद पैदा कर दी। हम कभी भी ध्यान नहीं देते कि वह कितना महान दाता है। अनाज के अन्दर सभी विटामिन पैदा कर दिये, जिससे हमारे शरीर का इन्जन चलता है। पानी पैदा कर दिया जिसके बिना हम जीवित ही नहीं रह सकते पर फिर भी उसके सारे अहसान हम भूल जाते हैं, कभी उसकी याद नहीं आती, हम वचनों से फिर जाते हैं। अकृतघ्न से भी नीचे गिर जाते हैं क्योंकि उसका एक भी परोपकार कभी हमारे ख्याल में नहीं आता। वह कहते हैं कि अपने आप तो तूने क्या करना है, तुझे महापुरुष चिल्ला-चिल्ला कर समझायेंगे, लेकिन मज़ाल है कि तू टस से मस भी हो जाये। तू इतना मुनकर हो जायेगा कि तू इस बात पर विश्वास ही नहीं करेगा कि –

माता के उदर महि प्रतिपाल करे सो किउ मनहु विसारीऐ।
मनहु किउ विसारीऐ एवडु दाता जि अगनि महि आहारु पहुचावए॥ पृष्ठ - 920

जो वहाँ भी तुझे आहार देता था, उसे तू भूला बैठा है। 2 खरब 15 अरब सैल तेरे शरीर के अन्दर, माँ के पेट में लगाये हैं, कभी गिन कर देख लेना यदि 10 जन्म में 2 खरब गिन ले लेकिन कभी भी नहीं गिन सकता। उस प्रभु का कितना बड़ा एहसान है कि उसने तुझे सुन्दर शरीर प्रदान करके दुनियाँ दिखा दी, फिर भी तू उसे भूला बैठा है?

जीव कहता है, ''महाराज! अब मैं नहीं भूलूँगा, अब मैं 24 घंटे नाम जपूंगा। अब मुझे ज्ञान हो गया कि नाम क्या होता है?''

वाहिगुरू कहते हैं, ''प्यारे! 24 घंटे? तू 24 घंटे नाम जपेगा तो तेरे सारे सफर का जो निर्वाह होगा, जो वस्तुएं चाहिए, वे सभी मैं स्वयं दूंगा और सारे काम मैं करूंगा। तुझे कुछ भी करने की जरुरत नहीं है, तू बैठे रहना, सभी चीज़ें तुझे बैठे बिठाये ही मिल जाया करेंगी, मैं लाकर दिया करूंगा।''

परमात्मा कहता है,''मैं तेरा चाकर बनूंगा और तू 24 घंटे नाम में रह कर तो देख, पर तुझ से रहा नहीं जायेगा।'' जब बार-बार कहता है, तब वाहिगुरू जी कहते हैं, ''अच्छा! तू ज्यादा मत कह, दसवां हिस्सा अपने श्वांसों का दे दिया करना, यह तुझ पर मेरा जो अहसान है, इसका मैं बदला नहीं लेता, एक मामूली सा दसवां हिस्सा, मैं तेरे से लेना चाहता हूँ – तेरी साधना का, ताकि तेरा भला हो जाये। मुझे किसी चीज़ की जरूरत नहीं है, मुझे तो कुछ भी नहीं चाहिए, मेरे पास सभी वरदान हैं। यदि जरूरत है तो तुझे है और तू ईमानदारी से व्यवहार करना, दसवाँ हिस्सा दे दिया करना। इसी से ही तेरा भला हो जायेगा। यह तुझ पर मेरा कर्ज़ा रहा।

महाराज कहते हैं, ''हैरानी की बात है –

जैसी अगनि उदर महि तैसी बाहरि माइआ।
माइआ अगनि सभ इको जेही करतै खेलु रचाइआ।
जा तिसु भाणा ता जंमिआ परवारि भला भाइआ॥ पृष्ठ - 921

जन्म हो गया, जन्म होते ही परिवार में खुशियां छा गई। पार्टियां होनी शुरू हो गईं, समागम होने शुरू हो गये, बधाईयां मिलनी शुरू हो गईं। लेकिन दूसरी ओर जीव के साथ क्या हुआ?

लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ॥ पृष्ठ - 921

इसकी वह लिव जो लगी हुई थी वह टूट गई तथा सांसारिक पदार्थों की ओर इसका ध्यान लगना शुरू हो गया-

एहु माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ॥ *पृष्ठ - 921*

माया किसे कहते हैं? भूल को माया कहते हैं, जिस परमात्मा को हम भूल गये - इतने वायदे, प्रतिज्ञाएं करने के बाद भी, यह माया फैल गई और महापुरुष बार-बार याद करवाते हैं ''प्यारे! तेरे ऊपर माया का प्रभाव हो गया, तू लौट कर आ जा, अपने घर क्योंकि तू वायदा करके आया था, तूने प्रभू के साथ इकरार (agreement) किया था कि श्वांस-श्वांस नाम जपूंगा, पर अब तू इन्कार कर रहा है, मुँह फेर रहा है, तेरे अन्दर संसार का मोह जाग्रत हो गया है और अब तुझे दूसरा दिखाई देने लग गया है। प्यारे तू याद रख तुझे सम्मन आयेंगे और तुझे इसकी बहुत बड़ी सजा भुगतनी पड़ेगी। तेरे सिर पर बहुत बड़ा कर्ज़ा है। जब तक तू उसका हिसाब नहीं चुकाता तब तक तेरा छुटकारा नहीं होगा। यह हिसाब तो तुझे देना ही पड़ेगा। यदि अब नहीं तो अगले जन्म में, अगले में नहीं तो उससे अगले जन्म में -

नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही।
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही।
तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही॥॥ *पृष्ठ - 953*

किन्हें तलब होना पड़ेगा? किसके वारन्ट आयेंगे? जिनके सिर पर कर्जा रह गया, उनके वारन्ट आयेंगे, यमदूत आयेंगे वारन्ट लेकर। अब महापुरुष कहते हैं, ''तू क्यों नहीं याद करता? तू अपने कर्ज़े को याद कर, कर्जा बढ़ता ही जा रहा है।

धारना - हो गिआ करज़ाई,
करज़ा कासतों नहीं मोड़दा - 2, 2
कासतों नहीं मोड़दा......... - 2, 2
हो गिआ करज़ाई करज़ा ....-2

तू कर्ज़दार हो गया। एक घंटे में तुझे 2400 श्वांस आते हैं, 24000 श्वांस का रोज़ का, कर्ज़ा तेरे सिर पर चढ़ता है, आयु के हिसाब से गिनती कर के देख ले। यदि तू कहता है कि मैं कर्जा उतारता हूँ, जाग रहा हूँ, जाग कर पाठ भी करता हूँ, नाम भी जपता हूँ; क्या तू वास्तव में नाम जपता हैं? क्या उस समय तेरा मन छलांगें तो नहीं मारता रहता, प्रभु के चरणों में रहता है? यदि अपनी ही बातें विचार बनाता रहता हैं, यदि अपनी ही जरूरतें पूरी करने में लगा रहता हैं, फिर तो तू कर्जा नहीं लौटा रहा? तू तो अपने ही काम कर रहा हैं। वहाँ बैठे हुए भी आँखें बन्द की हुई हैं- अपने काम शुरू किये हुए हैं, ये करूंगा, वो करूगां; करना-वरना कुछ भी नहीं। वह भी नहीं लौटा रहा प्यारे! सावधान हो, सावधान होकर लौटा दे। यदि नहीं लौटाना तो -

तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही॥ *पृष्ठ - 953*

जो कर्जा नहीं लौटाते, आकी हो गये, उन्हें फिर वारन्ट आएगें।

अजराईलु फरेसता होसी आइ तई॥ *पृष्ठ - 953*

और अज़राईल फरेसता ने आ जाना है -

आवणु जाणु न सुझई भीड़ी गली फही।
कूड़ निखुटे नानका ओड़कि सचि रही॥ *पृष्ठ - 953*

सो इस प्रकार हम भूले बैठे हैं, साध संगत जी!

गुरा इक देहि बुझाई।
सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ *पृष्ठ - 2*

हमें कितना याद है? उसकी याद में कितना रहते हैं? यदि उसकी याद में रहें तो फिर न तो दुख हो, न ही क्लेश हो, फिर तो सदा आनन्द ही आनन्द है, उच्च अवस्था में विचरता रहता है क्योंकि उस परमेश्वर प्यारे की याद से इन सभी चीजों का खात्मा होता है।

धारणा - सिमर पिआरे नूं,
सिमरउ सिमर सिमर सुख पावो - 2, 2
सिमरउ सिमर सिमर सुख पावो - 2, 2
सिमर पिआरे नूं,.........-2

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ।
कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ *पृष्ठ - 262*

कलह और क्लेश हर एक के मन में पड़ा हुआ है - कलह भी है, क्लेश भी पड़ा हुआ है। लेकिन क्लेशों का इसे ज्ञान नहीं है कि कौन-कौन से क्लेश हैं। पांच क्लेश महापुरुषों ने बताए हैं। पहला अविद्या का है - Ignorance ´भूल। अविद्या, जिसे हउमैं भी कहते हैं।

इससे असली चीज़ नकली नज़र आती है। कितना बड़ा दुख है, असली दिखाई देती ही नहीं, नकली दिखाई देती है। नकली भी वह दिखती है जो प्रत्येक पल बदलती रहती है। सो असली को छोड़कर, नकली को देखना, अविद्या कहलाता है।

दूसरा होता है अस्मिता - मृत्यु का डर हर व्यक्ति को है, डरता है मरने से - कहता है, मैं सदा ही जीवित रहूँ - इसी तरह रहूँ। इस डर से हर समय मन में क्लेश रहता है।

तीसरा अभिनिवेश है - गलत चीज़ों के साथ प्यार जो हाथों से दूर जाती है। जो हाथों में रहनी हो उनके साथ प्यार न करना। चौथा है राग - सांसारिक चीज़ों की पकड़ जो हर समय दुख देती है।

पांचवा है द्वैष - द्वैष में रहना, परमेश्वर को भूलकर दूसरा दिखाई देना। हर समय किसी न किसी से विरोध रखना, गलत बातें करनी, ईर्ष्या करना।

ये पाँच क्लेश मनुष्य के अन्दर हर समय रहते हैं। महाराज कहते हैं, यदि वाहिगुरू तुझे याद रहे तो इन पाँचों का ही खातमा हो जायेगा। फिर वह सभी को देने वाला है, दाता है। उसे तू याद रख। माता के उदर में भी तुझे देता था -

माता के उदर महि प्रतिपाल करे सो किउ मनहु विसारीऐ॥ *पृष्ठ - 920*

मन से इसे क्यों भूल जाता है। प्यारे! जिसने तुझे कन्चन जैसा शरीर दिया है। परमेश्वर कहता है कि यदि तू मेरा भजन करे तो मैं तेरे पीछे-पीछे घूमता रहूँगा, तेरे सारे काम मैं स्वयं किया करूंगा तुझे कुछ भी करने की जरूरत नहीं, तू मेरी याद में बैठ जा।

सन्त महाराज बाबा अतर सिंघ जी मस्तुआणे वाले - आप हजूर साहिब गये हुए हैं। वहाँ पर सवा लाख जपुजी साहिब का पाठ किया। बहुत कठिन है, कितने पाठ रोज करो; सौ पाठ भी रोज करें तो भी हिसाब लगाएं कितना समय लग जायेगा, डेढ़ सौ पाठ करो, फिर हिसाब लगाओ। अत: महापुरुष कठिन साधना करते हैं हमारे लिये कि जो संसार भविष्य में आयेगा, ऐसे ही सन्त मत बन जाये कपड़े पहन कर, चोले पहन कर। अन्दर साधना भी हो, नाम की कमाई भी हो, तितिक्षा भी हो।

गुरू नानक साहिब जी की तितिक्षा को याद करें तो हैरानी होती है। जितनी तितिक्षा आपने की, कोई नहीं कर सकता।

अत: महापुरुषों के मन में मौज उठी कि पानी में बैठकर बन्दगी करें। हजूर साहिब से 4 मील दूर चले गये, किसी से भी नहीं कहा कि भोजन आदि लेकर आना। जाकर चुप चाप बैठ गये। एक दिन बीता, दूसरा भी बीता, तीसरे दिन वहाँ के प्रमुख ग्रन्थी को सपना आया, गुरू महाराज जी कहते हैं कि भाई! मेरा एक प्रेमी नदी में बैठा है, उसे जाकर भोजन खिला आओ। पर उसने सपना समझकर कुछ न किया। दूसरे दिन फिर सपना आया, आखिर चौथा दिन हो गया। पत्नी से बात की कि मुझे ऐसा-ऐसा सपना आया है। वह बोली, वाह! आप तो अच्छे ज्ञानी ध्यानी पुरुष हो, सपने का भी कोई भरोसा होता है? ये तो ऐसे ही आते रहते हैं। तुम्हारे पास दिन रात यहाँ लोग आते रहते हैं और क्या तुम्हें सपना, गाय भैसों का आना था?

चौथा दिन भी बीत गया। पाँचवे दिन सपना फिर आया कि हमें चार दिन हो गये तुम्हें कहते-कहते कि भोजन लेकर जाओ 4 मील पर। पाँचवे दिन भोजन लेकर गया और 3 मील तक जाकर वापिस लौट आया और मन ही मन कहने लगा, मुझे लोग कहेंगे ऐसे ही रोटियाँ बान्धे फिर रहा है। छठा दिन भी ऐसे ही टाल दिया। महापुरुष वहाँ से उठकर साँतवें दिन 4 मील और दूर चले गये। बहुत सुन्दर स्थान देखकर वहाँ बैठ गये पानी के अन्दर। इधर फिर इसे ताड़ना मिली, ''देख ले, फिर यदि आज न गया तो बहुत बुरा होगा तेरे साथ।'' उस समय फिर मन में पक्का इरादा करके गया। जब सातवें मील पर पहुँचा तो क्या देखता है कि एक महात्मा पानी के अन्दर बैठे हुए हैं, पहुँच कर आवाज़ लगाई तथा भोजन खिलाया, अपनी सारी व्यथा सुनाई और महापुरुषों को नमस्कार की। कहने लगा, सच्चे पातशाह! इतनी चिन्ता करते हैं जीवों की सो वह दाता है-

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ ***पृष्ठ - 2***

कोई भी बन्दगी करके देख लो जिसका मन करता हो, यह तो सभी कुछ अपने आप ही आता है, वाहिगुरू का प्रबन्ध है, उसने देना है। महात्माओं को इन चक्करों में नहीं पड़ना चाहिए। लंगर चलते हैं तो उसने देना ही है, और कोई काम हो तो उसने देना ही है, यह उसका काम है। सन्तों को तो वैसे ही बीच में ही खड़ा किया हुआ है। इस प्रकार सभी जीवों का दाता है।

भाई लहणा जी बड़े ही ध्यान के साथ बाणी सुन रहे हैं। केवल समझ ही नहीं रहे, साथ-साथ विश्वास भी बढ़ता जा रहा है क्योंकि उत्तम जिज्ञासु थे। हमारे जैसे नहीं थे मध्यम कि अभी तो सुन लिया और भूल गये। रोज़ सुन लेते हैं, फिर भूल जाते हैं। हम तो वहीं के वहीं रहते हैं, कोई भी उपदेश असर नहीं कर रहा। सुनते-सुनते कई आयु बीत गईं, बढ़िया से बढ़िया कीर्तन, बढ़िया से बढ़िया प्रचार सुनते हैं, अच्छी से अच्छी पुस्तकें पढ़ते हैं लेकिन वहीं के वहीं रहते हैं, भूल भुलैया में पड़े रहते हैं। होश में तो थोड़ा सा समय ही आते हैं।

सो व्यक्ति संसार में रहता हुआ परमात्मा को भूला रहता है। भूलने का कारण यह है कि हऊमैं की सुरत में रहता है। महाराज कहते हैं तू इस सुरत को छोड़ दे; जब तक नहीं छोड़ता, तब तक इस भ्रम में से नहीं निकल सकता -

भोलिआ हउमै सुरति विसारि॥ ***पृष्ठ - 1168***

इस सुरत को भुला दे। इस प्रकार आप आगे बाणी सुनने लगे। छठी पौड़ी में फिर इसी प्रकार हुआ, सातवीं सुनी ध्यान दिया, फिर 4 पौड़ियां 'सुनिये' की सुनीं लेकिन बात अच्छी तरह से समझ में

न आई। चार पौड़ी आगे 'मंने' की सुनी, फिर भी बहुत अधिक समझ में न आई, उसके बाद 'असंख' की सुनीं फिर –

भरीऐ हथु पैरु तनु देह। पाणी धोतै उतरसु खेह।
मूत पलीती कपड़ु होइ। दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ।
भरीऐ मति पापा कै संगि। ओहु धोपै नावै कै रंगि।
पुंनी पापी आखणु नाहि। करि करि करणा लिखि लै जाहु।
आपे बीजि आपे ही खाहु॥ *पृष्ठ - 4*

जब आपने यह पढ़ा कि स्वंय ही बोया जाता है और स्वंय का बोया हुआ ही खाना है –

आपे बीजि आपे ही खाहु। नानक हुकमी आवहु जाहु॥ *पृष्ठ - 4*

अच्छी तरह समझ में आ गया। इस तरह पढ़ लो –

धारना - आपे बीज, आपे ही खाहु - 2, 2

और ध्यान दिया, और सुरत का कुण्डा फंस गया – तुक के अन्दर। क्योंकि बाणी तो हम बेअन्त पढ़ते हैं पर कोई-कोई तुक होती है, जिसके अन्दर हमारी सुरत फंस जाया करती है। जब सुरत फस गई, फिर वह बाणी असर किया करती है मन पर। सो आपने अच्छी तरह से समझ लिया कि –

पुंनी पापी आखणु नाहि॥ *पृष्ठ - 4*

कह देने से कोई पुण्य करने वाला नहीं बन जाता और न ही पापी बन जाता है। यदि कहे कि मैं पापी हूँ, मैं बड़ा परोपकारी हूँ, ऐसा कहने से नहीं बनता –

करि करि करणा लिखि लै जाहु॥ *पृष्ठ - 4*

जो कुछ तू करेगा, वह अपने साथ लिखकर ले जायेगा – संस्कारों के अन्दर।

आपे बीजि आपे ही खाहु॥ *पृष्ठ - 4*

अच्छा बोया हुआ भी तू ही खायेगा और बुरा बोया हुआ भी तूने ही खाना है –

नानक हुकमी आवहु जाहु॥ *पृष्ठ - 4*

यहाँ पर हुक्म चल रहा है – कर्मों पर वह टल नहीं सकता। दुनियाँ इसीलिये दुखी है क्योंकि इस प्रकार के कर्म किये हुए हैं, अब उनका फल भोग रहे हैं। जो बोये थे वही काट रहे हैं। अब तो इसका किसी को भी दोष नहीं देना चाहिए। महाराज कहते हैं – दोष मत दे –

धारना - प्यारे दोष ना किसे नूं देवीं,
दोष तेरे करमां दा - 2, 2
मेरे प्यारे, दोष तेरे करमां दा - 2, 2
प्यारे दोष ना किसे नूं देवीं, ... - 2

ददै दोसु न देऊ किसै दोसु करंमा आपणिआ।
जो मै कीआ सो मै पाइआ दोसु न दीजै अवर जना॥ *पृष्ठ - 433*

क्यों दोष देता है दूसरों को, तेरा अपना ही तो बोया हुआ है, अपना बोया हुआ ही काट रहा है –

आपे बीजि आपे ही खाहु। *पृष्ठ - 4*

जब बोता था तो सन्त आवाज़ें लगा-लगा कर कहते थे कि मत कर निन्दा; जब इसका लेखा जोखा देना पड़ेगा फिर मुश्किल हो जायेगी। ऐसे समझाते थे –

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि।
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥ पृष्ठ - 755

शराब की बोतलें पीता था, महात्मा समझाते थे कि 'खसम' की दरगाह में जा कर तुझे पैर रखने के लिये भी स्थान नहीं मिलेगा, वहाँ पर धक्के खाने पड़ेंगे, धक्के मिलेंगे। कभी कुत्ता बनेगा, कभी बिल्ला बनेगा, कभी सूअर बनेगा, कभी साँप बनेगा -

जितु पीतै खसमु वीसरै दरगह मिलै सजाइ॥ पृष्ठ - 554

और वहाँ पर सजा मिलती है क्योंकि उस समय तो सुना नहीं, तुझे आवाज़ें लगा-लगा कर जगाते थे। जब फिर फल पक गया, कांटे चुगने पड़ गये, उस समय फिर रोता है कि मेरे साथ ऐसा हो गया, वैसा हो गया, मेरा काम नहीं चलता, मैं दुखी हूँ। प्यारे! किये हुए कर्मों का फल भोगना पड़ता है। महाराज समझाते हैं -

करणी कागदु मनु मसवाणी बुरा भला दुइ लेख पए॥॥ पृष्ठ - 990

जो कुछ करते हो इसे तो कागज़ समझ लो और जो मन इसके साथ मिल जाता है, वह स्याही है, जो बुरे कर्म करते हैं, वे भी लिखे जाते हैं, जो अच्छे कर्म हैं, वे भी लिखे जाते हैं -

लेखै बोलणु लेखै चलणु काइतु कीचहि दावे॥ पृष्ठ - 1238

जब सारा कुछ ही लेखे में है, सारा बोलना, चलना सभी कुछ लेखे में है, हमारा सांस लेना भी लेखे में है, फिर तो प्रत्येक कार्य, हर बात सोच समझ कर करो ताकि गलत काम न हो क्योंकि इसका भी हिसाब किताब होगा। कोई भी चीज़ नहीं है बिना लेखे के -

मूलु मति परवाणा एहो नानकु आखि सुणाए।
करणी उपरि होइ तपावसु जे को कहै कहाए॥ पृष्ठ - 1238

अपने आप नहीं बनता, यदि कोई कहे कि मैं अच्छा हूँ। जैसा किसी ने कर्म किया है, वैसा ही फल भोगना पड़ता है, क्योंकि वह किरत बन जाती है, किरत कभी भी मिटा नहीं करती। बड़ों-बड़ों ने जोर लगाया - किरत मिटाने के लिए, पर फिर भी पहले किये गये कर्म फल भोगने पड़े। बेअन्त उदाहरण हैं, रोज़ के जीवन में भी हैं। प्रतिदिन आप देखते हो कि इन्होंने यह कर्म किया हुआ था, ये फल भोग रहे हैं उस काम का; कुछ को इसी जन्म में फल मिल जाता है कुछ को बहुत दूर जाकर मिलता है।

जब महाभारत का युद्ध समाप्त हुआ, उस समय कृष्ण महाराज तथा सारे पाण्डव, मिलकर धृतराष्ट्र के पास आते हैं और अफसोस प्रकट करते हैं कि बड़ा नुक्सान हुआ, औरतें विधवा हो गईं, भारत कमज़ोर हो गया, सारे जवान लोग मर गये; 45 लाख व्यक्ति 18 दिनों के अन्दर मारे गये। कभी भी इतना महान नुकसान नहीं हुआ। युद्ध तो बहुत भयंकर लड़े गये। पहले तथा दूसरे महायुद्ध में पाँच करोड़ लोगों ने भाग लिया। कई वर्षों तक युद्ध चलता रहा, लेकिन महाभारत में केवल 18 दिन लगे और 18 दिनों में 45 लाख व्यक्ति मारे गये, केवल 7 बचे।

धृतराष्ट्र कृष्ण महाराज से कहने लगे, ''महाराज! मुझे पिछले 100 जन्मों का ज्ञान है क्योंकि जन्मांध नेत्रहीन होने के कारण मेरी सुरत सुखमना नाड़ी में प्रवेश करके, मुझे 100 जन्मों का ज्ञान हुआ और मैंने देखा कि इन 100 जन्मों में कोई भी ऐसा काम नहीं किया था जिसका मुझे यह फल मिलता। मेरे 100 बच्चे भी मारे गये।'' कृष्ण जी बोले, ''किये बिना तो होता नहीं है राजन।''

जब मनुष्य बुरा कर्म करता है उस समय तो फल की ओर ध्यान नहीं देता लेकिन जब कर्म बो देता है फिर पता चलता है कि इसकी खेती का फल भी मुझे ही काटना पड़ गया। महाराज कहते हैं –

जिउ जिउ किरतु चलाए तिउ चलीऐ तउ गुण नाही अंतु हरे॥ पृष्ठ - 990

यह किरत ने चलाना है, वैसा ही स्वभाव बनना है जैसे किरत की गई है। किरत कहते हैं – कर्म जब पक जाते हैं और लेखा जोखा देने के लिये आ जाते हैं – उसका स्वभाव वैसा ही बन जाता है। उसी परिवार में जन्म लेगा जहाँ से बदले लेने या देने हैं –

करम धरती सरीरु जुग अंतरि जो बोवै सो खाति।
कहु नानक भगत सोहहि दरवारे मनमुख सदा भवाति॥ पृष्ठ - 78

सो कहने लगे कि उसका न्याय सच्चा हुआ करता है –

निआउ तिसै का है सद साचा विरले हुकमु मनाई॥ पृष्ठ - 912

किरतु ओन्हा का मिटसि नाहि। ओइ अपणा बीजिआ आपि खाहि॥ पृष्ठ - 1183

कृष्ण महाराज कहने लगे, ''तुमने जो बोया था उसी का फल खा रहे हो राजन! जब बीज बो रहे थे तब ख्याल नहीं किया था कि मैं ऐसे कर्म बो रहा हूँ।''

धृतराष्ट्र पूछता है, ''महाराज! मुझे तो 100 जन्मों में ऐसा कुछ भी नज़र नहीं आया जिसका मुझे इतना महान दुखमय फल भोगना पड़ा।''

श्री कृष्ण महाराज कहते हैं, ''एक सौ सातवां जन्म देख।''

कहता है, ''वहाँ तक मेरी पहुँच नहीं है महाराज।'' कृष्ण महाराज ने कृपा की और 107वां जन्म दिखा दिया। इस जन्म में वह एक बहुत बड़ा राजा है और इसे मांस खाने की आदत है। एक दिन बावर्चियों को मांस न मिला और वे मांस न बना सके। इस राजा ने हंस पाले हुए थे और इन हंसों के सौ बच्चे थे और इसने हुक्म कर दिया कि हंस मार कर, उनका मांस तैयार करके पेश किया जाये। जब इसने मांस खाया तो इसे बहुत ही स्वादिष्ट लगा और इसने बावर्चियों से कहा कि इसी तरह का मांस प्रतिदिन बनाया करो। इस प्रकार सौ दिन बीत गये और सौ दिनों में सौ बच्चे खा गया। हंस ऐसा पन्छी है जो बहुत ही संवेदनशील होता है। इसे 49 प्रतिशत होश (जाग) मनुष्य को 50 प्रतिशत होती है, 1 प्रतिशत का ही अन्तर होता है। अन्य जानवर भी जागते हैं, कौवा बहुत जागता है। कुत्ते को मनुष्य से भी कई बातों में अधिक ज्ञान होता है। मनुष्य को नहीं पता चलता, कुत्ते को एक बार सुंघा दो और 100 मील दूर छोड़ आओ, वहीं पर वापिस आ जायेगा। जिस व्यक्ति को सुंघाया था, उसे आकर पकड़ लेगा, बेशक उसके वस्त्र ही सुंघा दो, लेकिन यह मनुष्य कहता है कि मैं ज्यादा जानता हूँ। मनुष्य की एक विशेषता है कि इसके पास छठी इन्द्रिय sense (बुद्धि चेतना), Third eye (तीसरा नेत्र), शिव नेत्र, बिअन्न अखड़ियाँ, दशम द्वार है जो और किसी को प्राप्त नहीं है, जिनसे यह परमेश्वर को देख सकता है। बाकी चौरासी में यह शक्ति नहीं है कि वे देख सकें, सो यह इसकी विशेषता है।

जब इन हंस बच्चों के माता-पिता मान सरोवर से लौटकर आए, उस समय इन हंस बच्चों के माता-पिता ने सूंघ लिया कि बच्चे तो इसी राजा ने मारे हैं। वे दोनों इसके महल के चारों ओर घूम-घूम कर, तड़प-तड़प कर मर गये, श्राप दे दिया, ''राजन! जैसे तूने हमें तड़पाया है, ऐसे ही तू भी

तड़पेगा।''

कृष्ण महाराज कहते हैं कि अब एक सौ चौथा जन्म देख। एक टिड्डा पकड़ा हुआ है और भी बच्चे हैं, कोई कच्चा धागा उसकी टांगों में बान्धकर उड़ा रहा है पतंग की तरह, तो धागा टूट जाता है, वह छूट कर भाग जाता है। तेरे मन में क्या आया कि तूने एक कांटा तोड़ा और उसके दोनों नेत्रों में से आर-पार करके उसे फैंक दिया, थोड़ी देर में उसने तड़प-तड़प कर जान दे दी। वह तेरी किरत बन गई और तेरा कर्म लिखा गया। वह तूने बोया था।

कृष्ण महाराज कहते हैं, ''बोया था न? फिर अब उसी का फल खाना पड़ा। उसके बच्चे तूने मारे थे, तेरे भी मारे गये; उसके नेत्र तूने अन्धे किये, तेरे भी हो गये।'' सो -

भोगे बिन भागे नहीं करम गती बलवान।

बड़ी-बड़ी महान हस्तियों ने जोर लगाया इन कर्मों के, लेखों को बदलने का, पर सफल न हुए। राजा जनमेजय जो अर्जुन का पौत्र था, इसके पास एक बार व्यास जी गये। इसने नमस्कार तो की, पर कुछ तर्क पूर्ण ढंग से की।

वे पूछते हैं, ''क्या बात है बेटे?''

महात्मा तो प्यार के भूखे होते हैं, उन्हें कुछ भी लेना देना नहीं होता। सन्त तो केवल प्यार मांगते हैं।

वे बोले, ''हम तो तेरे प्यार के कारण तेरे पास आए हैं। तेरे मन में क्या तर्क चल रही है?''

कहने लगा, ''महाराज! मेरे मन में यह तर्क पैदा हुआ कि आपको त्रिकालदर्शी कहते हैं, तीनों कालों का जिसे ज्ञान हो।'' पिछले समय का, वर्तमान का और भविष्य का पता हो, उसे त्रिकालदर्शी कहते हैं।

कहता है, ''कृष्ण महाराज जी को भी कहते हैं - सौलह कला सम्पूर्ण अवतार थे। फिर मैं अन्य लोगों का भी उल्लेख पढ़ता हूँ - भीष्म पितामह जो बहुत सियाने थे, द्रोणाचार्य, कृपाचार्य आदि। आप इतने योग्य और महान होते हुए भी युद्ध न रोक सके? आपको चाहिए था कि युद्ध रोक लेते।''

व्यास जी बोले, ''जनमेजय! युद्ध कोई भी नहीं चाहता, दुनियाँ में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं जो युद्ध चाहता हो पर फिर भी युद्ध हो जाया करते हैं, ये किसी के वश की बात नहीं होती। जब से संसार बना है, युद्ध होते ही आ रहे हैं और ये होते ही रहेंगे, ये कभी समाप्त नहीं हुआ करते, हालात ऐसे बन जाया करते हैं, उन्हें टाला नहीं जा सकता।''

कहने लगा, ''कैसे नहीं टाला जा सकता?''

वह बोले, ''किरत बन जाया करती है। कहीं तो सारे देश की किरत, कहीं कौम की किरत हुआ करती है। किसी स्थान पर सौ आदमी सफर में जा रहे हैं, उनकी किरत आ गई, हादसा हुआ, इकट्ठे ही मर गये, डूब गया जहाज। सो किरत हुआ करती है, वह मिटती नहीं है।''

जनमेजय बोला, ये तो पुरानी बातें हैं, जब बात या घटना पूरी हो जाती है फिर सियाने आदमी, दिलासा हिम्मत बन्धाने के लिये, दुख प्रकट करने के लिये ये बातें आम किया करते हैं पर इसमें

सत्यता नहीं है। यह बात मानी नहीं जा सकती कि मनुष्य को पता हो कि उसके सामने कुंआ है और उसे कहो, ''तूने कुएं में गिर जाना है अब। वह कैसे गिर जायेगा?'' वह कहता है, ''मैं तो चलता ही नहीं, मैं नहीं गिरता।'' कहते हैं तेरी किरत में लिखा हुआ है - कुएं में गिरना। तो वह कहेगा कैसे गिर जाऊंगा जब कुएं की तरफ से जाना ही नहीं हमने।

जब इसने बहुत तर्क कुर्तक की, उस समय व्यास जी ने कहा, अच्छा हम तुझे समझाते हैं कि तेरे साथ ऐसे भावी घटित होनी है। यह तुझे भोगनी पड़ेगी -

भोगे बिन भागे नहीं करम गती बलवान।

जनमेजय बोले, ''मैं कभी भी नहीं भोगूंगा यदि मुझे पता हो।''

व्यास जी ने कहा, ''लिख ले, लेखक बुला ले।''

उस समय व्यास जी ने अति विस्तार पूर्वक लिखवाया कि तेरे साथ इस इस तरह से घटित होगा। तू एक घोड़ी लायेगा, उस पर चढ़ कर जंगल में जायेगा। वहाँ एक लड़की जिसकी जात का पता नहीं, कौम का पता नहीं, उसे सुन्दर समझ कर ले आयेगा और सारी प्रजा तेरे खिलाफ हो जायेगी। उस समय तू सोचेगा कि सारी प्रजा को अपने पक्ष में कैसे करूं? तू फिर यज्ञ करेगा, कोई भी ब्राह्मण तेरे यज्ञ में नहीं आयेगा और तू फिर कुछ विद्यार्थियों को ले आयेगा फिर ऐसी घटना घटित होगी कि जब वे खाना खाने के लिये पंगत में बैठेंगे तो तेरी उस नई रानी का कपड़ा हवा से ऊपर उड़ जायेगा और बच्चे किसी और बात पर हंस पड़ेंगे। तू यह समझ कर ब्राह्मण के बच्चों को मार देगा कि वे तेरी रानी को देखकर हंसे हैं। उन बच्चों को मारने का फल तुझे यह मिलेगा कि तेरे शरीर में कोढ़ हो जायेगा।

व्यास जी कहते हैं, लिख ले, यदि इस लेख को मिटा सके तो मिटा लेना। इसके बाद जो तूने बचाव या उपाय करना है वह भी तुझे बता देते हैं। बचाव यह है कि तू भागवत की कथा सुनेगा-वाहिगुरू, परमात्मा के यश की, उसमें एक साखी आयेगी - अमित बल की, उस पर तू तर्क करेगा, नाक चढ़ायेगा, फिर तेरे नाक पर ही कोढ़ रह जायेगा जिससे तेरी मृत्यु हो जायेगी। अब तू पूरा जोर लगा लेना, यदि एक भी बात टल जाये।

गुरू नानक पातशाह फ़रमान करते हैं कि -

राजा जनमेजा दे मतीं बरजि बिआसि पढ़ाइआ॥ *पृष्ठ - 1344*

कहते हैं बार-बार सावधान करके व्यास जी ने जनमेजय को समझाया कि यदि तेरे से पहले गलती हो जाए तो फिर दूसरी मत करना, ऐसे मत करना, वैसे मत करना लेकिन हुआ क्या -

तिन्हि करि जग अठारह घाए किरतु न चलै चलाइआ॥ *पृष्ठ - 1344*

फिर उसने किरत को पूरा जोर लगाकर क्या हटा दिया? किसी तरह से भी न हटा सका। उसने हुक्म कर दिया कि घोड़े नहीं खरीदने। चार साल बीत गये। सेनापति (बख्शी) ने कहा, ''महाराज! घोड़े यदि न रहे तो लड़ाई कैसे करेंगे? यह तो सारा रसाला ही बूढ़ा हो गया है। आप घोड़े खरीदने की इज़ाज़त दे दो।'' इजाजत दे दी, घोड़े खरीद लिए। कहने लगा, घोड़ी मत खरीदना भूल कर भी। आखिर एक घोड़ी इतनी सुन्दर आई कि जो खरीदनी पड़ गई।

सेनापति ने कहा, ''महाराज! तबेले में बन्धे रहने देना, आप इस पर मत चढ़ना।''

घोड़ी खरीद ली गई तथा बन्धी रहती। अन्त में बीमार रहने लग गई। बार-बार महाराज से प्रार्थना की जाती है, ''महाराज! आपके सिवाय तो इस पर और कोई चढ़ ही नहीं सकता। आप इन तीन दिशाओं में चले जाया करो, चौथी दिशा में जाओ ही मत।'' सो बात मान ली। तीन दिशाओं में घोड़ी पर चढ़कर घूम आया करते। एक दिन ऐसा दिशा भ्रम हुआ कि दिशा का पता ही न चला कि कौन दिशा किधर है? दक्षिण में चला गया, क्रूर दिशा की ओर चला गया। आगे जंगल में जाकर रास्ता भूल गया। पानी की प्यास लगी। पानी की तालाश में घूमता फिरता एक झौंपड़ी के आगे जाकर खड़ा हो गया और पानी के लिये आवाज़ लगाई।

एक नौ जवान युवती जल लेकर बाहर आई - अति सुन्दर। देखते ही सभी कुछ भूल गया। सोचने लग पड़ा कि इसे तो मैं साथ लेकर जाऊँगा पर झगड़ा खड़ा हो जायेगा। कहता है, लेकर तो जाऊँगा पर पहले जैसी बातें नहीं करूंगा। उसे भी ले आया। इसके पश्चात इसका विरोध होना शुरू हो गया, निन्दा होनी शुरू हो गई। यज्ञ करने लगा तो ब्राह्मणों ने यज्ञ में आने से मना कर दिया। विद्यार्थियों को ले आया। जब यज्ञ शुरू हुआ, उस समय जो नई रानी आई थी, वह एक कपड़ा शरीर के ऊपर लेकर भोजन खिला रही थी। एक लड़का कहने लगा कि कई रानियाँ हैं जो भोजन खिला रही हैं। एक सियाना विद्यार्थी था, वह कहने लगा, ''नहीं, है तो एक ही, कपड़े बदल-बदल कर आती है, हर बार साड़ी बदल कर आती है।''

लड़के कहते हैं, ''पता कैसे चले?''

सियाना विद्यार्थी बोला, ''अभी लग जायेगा।''

जब रानी पास से निकलने लगी तो उसने एक चावल नाखून पर रखकर मारा और वह उसके पैर पर जाकर टिक गया। जब दूसरी बार आई तो दूर से ही बच्चों ने देख लिया - कि वही चावल उसके पैर पर लगा हुआ है। इस बात पर सभी बालक हंस पड़े क्योंकि नया जोश था। इधर तो वे बच्चे हंसे, उधर ऐसा तूफान उठा, जिससे रानी का कपड़ा ऊपर उठ गया। इस पर राजा जनमेजय को ऐसा गुस्सा आया कि उसकी बुद्धि भ्रष्ट हो गई -

होणहार हिरदे वसी गई सरीरों बुध।

जब किसी के मन में होनहार बस जाये तो शरीर की बुद्धि, विवेक का नाश हो जाता है। बुद्धि उलट हो जाती है, जब नाश होना होता है। यदि सियाने अपनी मर्ज़ी से संसार को चला सकें तो शोर शराबा ही न मचे, पर मर्ज़ी नहीं चलती। यह तो जो कुछ होना होता है, वही हो कर रहता है -

कहु नानक करते कीआ बाता जो किछु करणा सु करि रहिआ॥ ***पृष्ठ - 469***

उसे इतना क्रोध आया कि इसने उठाकर बच्चे कड़ाहों में फैंक दिये - किसी को खीर के कड़ाहे में, किसी को घी के कड़ाहे में, किसी को भोजन आदि के कड़ाहे में; 18 ब्राह्मण बच्चे मार दिये-

रोवै जनमेजा खुइ गइआ। एकी कारणि पापी भइआ॥ ***पृष्ठ - 954***

कोढ़ हो गया, फिर रोता फिरता है, विलाप करता है कि मैंने बात नहीं मानी। अब यदि व्यास जी आ जाएं तो अब मैं मान लूंगा, एक ही मौका और रहता है। व्यास जी आ गये। आकर राजा का हाल चाल पूछने लगे, कहते हैं, क्यों राजन! देख लिया तूने? महाराज कहते हैं -

लेखु न मिटई हे सखी जो लिखिआ करतारि।। ***पृष्ठ - 937***

मिटता नहीं है जो लेख मस्तक पर लिख दिया जाता है। इस तरह पढ़ लो -

धारना - लेख ना मिटदा जी,
लिखिआ जो आप हरी ने - 2, 2
लिखिआ जो आप हरी ने - 2, 2
लेख ना मिटदा जी,............-2

लेखु न मिटई हे सखी जो लिखिआ करतारि॥ पृष्ठ - 937

क्योंकि वाहिगुरू का लिखा हुआ मिटाने के लिए कोई भी संसार में समरथ नहीं है। केवल उसके प्यारों में समर्थथा है, वे मिटा सकते हैं क्योंकि उनकी कथा सांसारिक लोगों में नहीं आती, उनकी कथा न्यारी हुआ करती है -

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे॥ पृष्ठ - 855

उनके वश में है, उनके पास लेख रद्द करने की ताकत हुआ करती है -

मेरी बांधी भगतु छड़ावै बांधै भगतु न छुटै मोहि।
एक समै मोकउ गहि बांधै तउ फुनि मो पै जबाबु न होइ॥ पृष्ठ - 1253

इस प्रकार भाई लहणा जी ने यह अच्छी तरह से समझ लिया कि -

आपे बीजि आपे ही खाहु॥ पृष्ठ - 4

क्यों दोष देते हैं कि उसने मेरे साथ ऐसे कर दिया, यह तो जड़ें फंसी पड़ी हैं - खरबों सालों से; होती ही रहेगी जब तक कर्मों का नाश नहीं होता। कर्मों का नाश केवल नाम जपने से ही होता है, और कोई तरीका नहीं है। जो प्रालब्ध कर्म हैं, वे तो हर एक को भोगने ही पड़ते हैं, सन्त भी भोग लेते हैं। जो संचित कर्म हैं, करोड़ों कर्म जमा पड़े हैं, वे -

गुर का सबदु काटै कोटि करम॥ पृष्ठ - 1195

करोड़ों कर्मों का नाश नाम कर देता है और कोई तरीका नहीं है। कर्मों का नाश नाम के बिना नहीं हुआ करता। नाम के बिना जीव ने ऐसे ही भटकते रहना है, दुख सुख का यह रहट चलता ही रहता है - हमेशा, बिना रोक टोक के चलने वाला रहट है यह दुख और सुख का -

सुखु दुखु दुइ दरि कपड़े पहिरहि जाइ मनुख॥ पृष्ठ - 149

ये तो मनुष्य को पहनने के लिये दरगाह में से मिलते हैं - एक दुखों का कपड़ा है और एक सुखों का कपड़ा। अत: कर्मों का नाश नहीं हुआ करता, जब तक बन्दगी करके ज्ञान नहीं प्राप्त होता। जब ज्ञान हो गया फिर -

गिआनु भइआ तह करमह नासु॥ पृष्ठ - 1167

कर्मों का नाश हो जाता है, फिर कर्म फल देना बन्द कर देते हैं लेकिन महापुरुष संसार के लिये कर्म करते हैं। उनका अपना कोई स्वार्थ नहीं हुआ करता, क्योंकि वे फल की इच्छा नहीं चाहते। जो सेवा करने वाले हैं, वे पुण्य ले जाते हैं, निन्दा करने वाले पाप ले जाते हैं। सन्तों के साथ कुछ भी नहीं जाता।

इस प्रकार भाई लहणा जी बहुत ध्यान लगाकर समझ कर, उसी समय विचार करते रहे, इतनी देर में बाणी पढ़ी गई। कई बार कोशिश की - समझने की, लेकिन समझ से ऊँची थी। भाई जोध ने उस समय 'आसा जी की वार' शुरू कर दी और जब पहला ही श्लोक पढ़ना शुरू किया, आपके कानों में इस प्रकार की आवाज़ आई -

धारना - जावां बलिहार जी मैं आपणे गुरां तों - 2, 2
आपणे गुरां तों जी मैं आपणे गुरां तों - 2, 2
जावां बलिहार जी मैं आपणे...........-2

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सदवार।
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार॥ *पृष्ठ - 463*

समझ में आ गई कि गुरू की बात कही जा रही है और गुरू भी वह है जिसके बारे में कहा गया है कि सैकड़ों बार मैं बलिहार जाता हूँ। आप भी गुरू की तालाश में घूम रहे थे, महात्मा की संगत किया करते थे और उन महात्माओं की संगत में से पता चला कि परमेश्वर का नाम जपना चाहिए। सो आप राम-राम का जाप किया करते थे, लेकिन किसी गुरू से प्राप्त नहीं हुआ था, अपने आप ही दूसरों की देखा-देखी किया करते थे।

हमारे यहाँ भी बहुत से करते हैं - वाहिगुरू-वाहिगुरू पर गुरू से नहीं मिला। पूरी विधि के साथ जब तक नाम नहीं मिलता तब तक नाम की जड़ अन्दर नहीं लगा करती। जैसे बोहड़ है, इसकी गोहल (बीज) इतनी सख़्त है कि रूड़ी में दबा दो तो भी नहीं फटती। यदि पन्छी इसे खा ले तो उसके मैदे में जाकर फट जाती है और नर्म हो जाती है और जहाँ कहीं पन्छी गीले स्थान पर विष्ठा कर दे, तो वहीं पर ही बोहड़ जड़ पकड़ कर हरा हो जाता है।

इसी प्रकार प्रभु का नाम है जिसकी पहुँच नाम तक है। यह भ्रम पड़ जाता है कि रूसवाई (पहुँच) भी नाम तक हो, कोई ऐसी भी बात हुआ करती है क्योंकि -

राम राम सभु को कहै कहिऐ रामु न होइ।
गुर परसादी रामु मनि वसै ता फलु पावै कोइ॥ *पृष्ठ - 491*

रूसवाई कहते हैं - मन के अन्दर नाम बस जाना, वह नाम फिर 24 घंटे कभी भी नहीं भूला करता। नेत्र खुले होने पर भी नाम जपता है, बिना बोले भी नाम जपता है, कानों से सुनकर भी नाम जपता है, मन से नाम जपता है और नाम का उसे हर समय का अनुभव हो जाता है कि यहाँ पर परमात्मा के सिवाय और कोई नहीं है - सभी जगह वह स्वंय ही है। सो जिसके हृदय में यह बात होगी, वह नाम को आगे चला सकता है। पाँच प्यारे जो हैं, वे अमृत पान करवाकर नाम देते हैं, गुरूमन्त्र देते हैं। यहाँ बहुत सावधानी का प्रयोग करना पड़ता है। एक तो दुनियाँ के प्यारे हैं, दुनियाँ के अन्दर उनकी वृत्ति हर समय फंसी रहती है, दुनियाँ से प्यार करते हैं; कई पुत्रों के प्यारे हैं, पुत्रों के लिये धन कमाते हैं; बेअन्त कमाई करते हैं, दुखी होते हैं, कष्ट उठाते हैं; किसके लिये कि पुत्रों के लिए छोड़ जाएं। न तो फिर सम्बन्ध होगा और न ही वापिस कभी मिलेंगे? एक मोह के वश हुआ जीव, गधे की तरह लदा हुआ फिरता रहता है क्योंकि वह पुत्रों का प्यारा है; कई पदों के प्यारे हैं, पैसे के प्यारे हैं, बेअन्त किस्म के प्यार हैं। कोई देह अधिआस, शरीर का प्यारा है, कोई भोगों का प्यारा है, कोई वैर का ही प्यारा है, वैर प्यारा लगता है, पर एक वे हैं जिन्हें परमेश्वर प्यारा लगता है, गुरू के प्यारे हैं। उनके हृदयों में कभी भी दुजायगी (द्वैत) नहीं आती -

रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि जिन्ही सिञाता साई॥ *पृष्ठ - 1424*

वे परमेश्वर के प्यार में रंगे हुए हैं, वे पीछे मुँह नहीं मोड़ते। वे तो हर समय -

आगाहा कू त्राघि पिछा फेरि न मुहडड़ा॥ *पृष्ठ - 1096*

आगे को बढ़ते हैं। जो नाम कल जप लिया, आज उससे आगे बढ़ना है, पीछे नहीं लौटना, वहीं पर ही

नहीं खड़े रहना। वे अपना सफर पूरा करते हैं, उनके अन्दर बस एक ही लगन लगी होती है –

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे।

अत: जब इस प्रकार की वृत्ति वाले जब पाँच इकट्ठे हो जाते हैं, उन्हें पाँच प्यारे कहते हैं, फिर ब्राह्मंडी शक्ति उनके अन्दर प्रवेश कर जाती है। जब वे बाणी के साथ जल को मन्त्रित करते हैं तो उसके अन्दर बाणी का असर प्रवेश कर जाता है और उस जल को जब विधि पूर्वक पान करवाते हैं, उससे वह शुद्ध हो जाता है क्योंकि वह शक्ति जल होता है, मन्त्रित जल होता है। उसके पश्चात फिर ये पाँचों एक जुबान होकर नाम देते हैं।

सो गुरू ग्रन्थ साहिब के स्थान पर, गुरू के प्रतिनिधि काम कर रहे होते हैं। गुरू के बिना नाम की प्राप्ति नहीं हुआ करती –

बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु।
नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखु पाए जुग चारि।। *पृष्ठ - 649*

अत: जो ऐसा गुरू है उस पर बलिहार जाते हैं। कच्चे गुरू तो बेअन्त हैं – कोई कच्चा गुरू है, कोई अन्धा गुरू है, पाखण्डी गुरू है, विद्वान गुरू है, अवधूत गुरू है। समरथ गुरू तो यदि आदमी के मस्तक में लेख लिखे हों तो मिलता है, अन्यथा नहीं मिला करता –

जिन मसतकि धुरि हरि लिखिआ तिना सतिगुरु मिलिआ राम राजे॥ *पृष्ठ - 450*

उसे सतगुरू का मिलाप होगा क्योंकि सतगुरू को मिलते ही करोड़ों जन्मों का भटकता हुआ यह अपने घर को ना लौटता हुआ जीव, अपने घर को जाने की जाँच सीख जायेगा–

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै॥ *पृष्ठ - 954*

दसवां गुप्त रखा हुआ है, उसके आगे दरवाज़े हैं –

बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै॥ *पृष्ठ - 954*

ऐसा ताला लगा हुआ है कि दरवाज़े खुलते ही नहीं –

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई।। *पृष्ठ - 205*

मालिक ने अपने घर को ताला लगाकर उसकी चाबी गुरू को दे दी, फिर गुरू से उसकी चाबी मिलती है –

बजर कपाट न खुलनी............॥ *पृष्ठ - 954*

इतने जबरदस्त कपाट लगे हुए हैं जो खुलते ही नहीं –

................गुर सबदि खुलीजै॥ *पृष्ठ - 954*

फिर शब्द रूपी चाबी, जब गुरू से प्राप्त हो गई फिर वह ताला खुल जाया करता है अन्यथा और कोई विधि नहीं है। इस तरह पढ़ लो –

धारना - औखे खुलणे जंगाले होए जंदरे,
बाझ गुरू पूरिआं तों - 2, 2
मेरे प्यारे, बाझ गुरू पूरिआं तों - 2, 2

औखे खुलणे जंगाले होए जंदरे,........-2

अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई॥ *पृष्ठ - 205*

जब तक सतगुरू की शरण में नहीं आता, यह ताला नहीं खुला करता, चाहे लाख यत्न क्यों न कर लें?

यदि प्रकाश हो गया फिर तो जन्म मरण के बन्धन समाप्त हो गये। यदि प्रकाश न हुआ तो फिर आना जाना तैयार खड़ा रहेगा क्योंकि अभी प्रकाश नहीं हुआ, द्वैत नहीं मिटी। जीव तथा ब्रह्म की एकता का प्रश्न ही अभी पैदा नहीं हुआ। इसलिये -

बिनु सबदै अंतरि आनेरा। न वसतु लहै न चूकै फेरा।
सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुल्है नाही गुरु पूरै भागि मिलावणिआ॥ *पृष्ठ - 124*

पूरे भाग्य जागें तो गुरू मिलता है -

गुरु कुंजी पाहू निवलु मनु कोठा तनु छति।
नानक गुर बिनु मन का ताकु न उघड़ै अवर न कुंजी हथि॥ *पृष्ठ - 1237*

जब पूर्ण गुरू मिल गया फिर -

भइआ मनूरु कंचनु फिरि होवै जे गुरु मिलै तिनेहा।
एकु नामु अंम्रितु ओहु देवै तउ नानक त्रिसटसि देहा॥ *पृष्ठ - 990*

वह नाम की चाबी देता है। यदि गुरू न मिला तो प्यारे! अपने आपको भाग्यशाली मत कह, तेरे भाग्य अभी नहीं जागे, अभी तो तू बहुत ही भाग्यहीन है क्योंकि तुझे गुरू की प्राप्ति नहीं हुई -

नानक गुरू न चेतनी मनि आपणै सुचेत।। *पृष्ठ - 463*

सचेत बना फिरता है, किसी को आगे नहीं आने देता, आगे होकर बढ़ चढ़ कर बातें करता है। पहले यह बता कि तुझे गुरू मिल गया? नहीं मिला तो -

छूटे तिल बूआड़ जिउ सुंञे अंदरि खेत॥ *पृष्ठ - 463*

किसान बुआड़ तिल को नहीं काटा करता क्योंकि उसके कपड़ों पर कालिख लग जाती है, वैसे ही छोड़ देता है, खेत में अकेला ही खड़ा रहता है। पशु चराने वाले लड़के, फिर उसे डण्डे मार-मार कर तोड़ते हैं -

खेतै अंदरि छुटिआ कहु नानक सउ नाह।
फलीअहि फुलीअहि बपुड़े भी तन विचि सुआह॥ *पृष्ठ - 463*

इस प्रकार विचार करते हैं। भाई लहणा जी ने सारा श्लोक सुना। इसके पश्चात आपने बड़े ही प्यार से पऊड़ी पढ़नी शुरू की और उसके भाव को समझने का यत्न किया कि -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ॥ *पृष्ठ - 463*

हैं! अपने आप से स्वंय ही यह संसार बना दिया? आज तक तो यह सुनते आए थे कि माया, जीव तथा ईश्वर तीन अनादि तत्व हैं और आज यह नई बात सुनी है कि स्वंय ही अपने आप से यह संसार बना दिया। यह तो अलग ही बात सुनी। इस तरह पढ़ लो -

धारना - निरगुन रूप तों सरगुण रूप हो के,
आपे रची सारी दुनीआं - 2, 2
मेरे प्यारे, आपे रची सारी दुनीआं - 2, 2
निरगुण रूप तों सरगुण रूप हो के........-2

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसणु डिठो चाउ॥ *पृष्ठ - 463*

तूं आपे ही सिध साधिको तू आपे ही जुग जोगीआ।
तू आपे ही रस रसीअड़ा तू आपे ही भोग भोगीआ।
तू आपे आपि वरतदा तू आपे करहि सु होगीआ॥ *पृष्ठ - 1313*

उन्हें ज्ञान था, सत्संग में जाया करते थे। एक दम बात को पकड़ लिया कि आज तक तो हम यही सुनते आए थे कि माया भी है, जीव भी है और ईश्वर भी है लेकिन आज नई बात सुनी है कि निर्गुण से सगुण होकर स्वंय ही रचना रची है -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा।
नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥ *पृष्ठ - 537*

इस सारी सृष्टि में होता हुआ सभी से बाहर है। अन्दर भी रहता है फिर निर्लेप भी है। बहुत ध्यान लगाकर सुनने के बाद इस पर आप विचार करते हैं -

दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ॥ *पृष्ठ - 463*

साथ ही देखने लग गया, अपनी माया स्वंय ही प्रसार ली - अपने अन्दर से ही। माया और चीज़ नहीं है, यदि कोई कहे कि परमात्मा से अलग है यह सारा भी उसी का ही रूप है लेकिन इसका व्यवहार और तरह का है, परमेश्वर का व्यवहार अन्य तरह का है पर स्वंय फिर भी वही है। निर्गुण से आपने ऐकंकार का स्वरूप धारण किया। ऐकंकार से औंकार शबद धुन पैदा की, शबद धुन से सारी सृष्टि वजूद में आई। आज सांईस कहती है कि एक Big Bang (बड़ा धमाका) हुआ। वह Big Bang होने से धक्का लगा। किसे लगा? यह नहीं बता सकते कि धक्का किसे लगा? क्योंकि वह seed (बीज) जो प्रकृति का बताते हैं, वह इतना छोटा है कि जैसे decimal (दशमलव) लगाकर 80 zero (शून्य) लगा दिये जाएं, फिर एक लिख दिया जाये। यह तो कुछ, भी न हुआ। दिमाग में ही नहीं आ सकता -

सूछम ते सूछम कर चीने ब्रिधन ब्रिध बताए।
भूम अकास पताल सभै सजि एक अनेक सदाए॥ *पातशाही 10*

एक ही अनेक हो गया। जिन्होंने जान लिया, उन्हें भ्रम नहीं पैदा होता, वे कहते हैं, स्वंय ही बना हुआ है सभी कुछ यहाँ पर दूसरा कोई भी नहीं है -

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तूं।
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू॥ *पृष्ठ - 1291*

सो आज तक तो यह सुना नहीं था और उन्होंने यह बता दिया। ऐकंकार एक को कहा है, जब १ओंकार कहा तो औंकार शबद धुन हुई। उस शबद धुन द्वारा सारी सृष्टि वजूद में आई।

ईसाई धर्म तथा इस्लाम धर्म दो बातें कहते हैं कि When there was no creation, there was logos. (जब कोई सृष्टि नहीं थी, एक शबद था उस समय) यह शबद ही परमेश्वर था क्योंकि जहाँ तक कोई पहुँचता है, वहीं तक की ही बात करता है।

गुरू नानक पातशाह ने कहा कि यह शबद ब्रह्म जो है, यह भी पहले नहीं था। ऐकंकार

अवस्था में निरंकार साकार हुआ। इसमें पहले निर्गुण स्वरूप में था वाहिगुरू। वह क्या करता था? उसकी क्रिया क्या थी? यह बात उसके बनाये हुए नहीं बता सकते। वह अपनी गति आप ही जानता है। वहाँ हुक्म कैसे चलता था? उसका हुक्म कहाँ रहता था? किस प्रकार वहाँ कोई सृष्टि थी या नहीं थी? कौन था? भगत कहाँ थे? सन्त कहाँ थे?

नानक कथना करड़ा सारु॥ *पृष्ठ - 8*

इसके बारे में कोई भी बात कहने सुनने वाली नहीं हुआ करती, बहुत गहरी बात है - पहली पौड़ी में। हम तो गा कर ऐसे ही ऊपर से निकल जाते हैं, पता नहीं चलता, लेकिन यहीं पर ही मनुष्य में इन्क्लाब आ जाता है। कांटा मुड़ जाता है, यह पौड़ी पढ़ते सुनते ही कि हैं, यह क्या बात हुई -

दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ॥ *पृष्ठ - 463*

साथ ही बनाने वाला और दाता भी स्वंय है, प्रसन्न होकर दिये भी जाता है, साथ ही प्रसार किये जाता है -

तू जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।। *पृष्ठ - 463*

सभी के दिल की आन्तरिक बातें जानता है। उसे किसी की बात नहीं भूलती, जिन्दगी देता भी है और वापिस भी ले लेता है -

करि आसणु डिठो चाउ॥ *पृष्ठ - 463*

इसलिये महाराज आगे कहते हैं -

तूं आपे ही सिध साधिको तू आपे ही जुग जोगीआ॥ *पृष्ठ - 1313*

यह ऊपर की बात कह दी कि हे प्रभु! साधना करने वाला भी तू ही है, सिद्ध भी तू ही है, युग जोगी भी तू ही हैं -

तू आपे ही रस रसीअड़ा तू आपे ही भोग भोगीआ॥ *पृष्ठ - 1313*

तू आपे आपि वरतदा तू आपे करहि सु होगीआ॥ *पृष्ठ - 1313*

आपे जलु आपे थलु थंम्हनु आपे कीआ घटि घटि बासा॥ *पृष्ठ - 1403*

सभी रसों का आनन्द लेने वाला भी तू ही है - स्वंय ही जल है, स्वंय ही आकाश है, स्वंय ही पवन है, स्वंय धरती है। स्वंय ही सभी के अन्दर बसा हुआ है, साथ ही साथ निर्लेप है। अब कोई विरला ही समझता है - इस बात को, अन्यथा दिमाग में नहीं बैठती। हमारे शरीर में 2 खरब 15 अरब सैल हैं। पढ़े लिखे व्यक्ति इसे समझ जायेंगे और यदि उन सैलों (कोशिकाओं) के लाख-लाख टुकड़े कर दो, करोड़-करोड़ छोटा-छोटा टुकड़ा हो जाये, उसके अन्दर भी वह स्वंय है। यदि इससे भी सूक्ष्म कर दें, उसके अन्दर भी है, फिर तो वह ओत पोत रमा हुआ है, जिसे कहीं भी अलग नहीं किया जा सकता -

जिमी जमान के बिखे समसत एक जोत है।
न घाट है न बाढ है न बाढ घाट होत है॥ *अकाल उसतति*

आपे नरु आपे फुनि नारी आपे सारि आप ही पासा॥ *पृष्ठ - 1403*

दूसरी बात महाराज और स्पष्ट करके समझाते हैं कि -

जल ते तरंग तरंग ते है जलु कहन सुनन कउ दूजा॥ *पृष्ठ - 1252*

जल से लहर बनती है, जब तरंग आकर किनारे से टकराती है, (समुद्र के किनारे जो गये हैं, उन्होंने देखा होगा कि लहरें किस तरह से किनारे पर आकर टकराती हैं) फिर वह लहर तो रहती नहीं, वह पानी ही बन जाती है। महाराज जी बहुत बड़ी बात कह गये कि निरंकार से यह सृष्टि हुई है, इस सृष्टि से फिर निरंकार है। कहने सुनने के लिये तो यह एक बात बीच में ही रह गई - दूसरी, लेकिन वास्तविकता यह है कि -

आपहि गावै आपहि नाचै आपि बजावै तूरा।
कहत नामदेउ तूं मेरो ठाकुरु जनु ऊरा तूं पूरा॥ पृष्ठ - 1252

अन्तर इतना ही है। जब मैं अपने आप से तुझे अलग करता हूँ तो मैं 'जन' बन जाता हूँ, मैं अधूरा हो जाता है और तू सदा ही (पूरा) रहता है। जब मैं तेरे अन्दर लीन हो जाता हूँ, फिर तू पूरा ही पूरा रह जाता है, मेरा वजूद ही नहीं रहता -

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही।
अनल अगम जैसे लहरि मइओदधि जल केवल जल माहि॥ पृष्ठ - 657

सो इस प्रकार -

सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि।
आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥ पृष्ठ - 290

निरगुनु आपि सरगुनु भी ओही।
कलाधारि जिनि सगली मोही॥ पृष्ठ - 287

सगुण भी स्वंय है - जितना कुछ दिखाई देता है, निर्गुण भी वह स्वंय ही है -

आपे सूरु किरणि बिसथारु। सोई गुपतु सोई आकारु॥ पृष्ठ - 387

सो यह बात जब आपने सुनी, क्योंकि पढ़े लिखे थे, सत्संग में जाया करते थे, बड़े ध्यान के साथ आपने बात को समझा जो इस प्रकार थी -

धारना - निरगुण रूप तों सरगुण रूप हो के,
आपे रची सारी दुनीआं - 2, 2
मेरे प्यारे, आपे रची सारी दुनीआं - 2, 2
निरगुण रूप तों सरगुण रूप हो के.........-2

गुर परमेसरु जाणीऐ सचे सचा नाउ धराइआ।
निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ।
एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ।
इकदू होइ तिनि देव तिहुँ मिलि दस अवतार गणाइआ।
आदि पुरखु आदेसु है ओहु वेखै ओन्हा नदरि न आइआ।
सेख नागु सिमरणु करै नावां अंतु बिअंतु न पाइआ।
गुरमुखि सचा नाउ मनि भाइआ।। भाई गुरदास जी, वार 26/2

इस पौड़ी का भाई गुरदास जी ने बहुत ही विस्तार पूर्वक वर्णन किया है, जिनकी बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब की कुन्जी होने का मान प्राप्त है। हम रोज़ पढ़ते हैं -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ॥ पृष्ठ - 463

पढ़ने से काम नहीं चलेगा -

पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा॥ पृष्ठ - 148

बात को समझो, पहचानो, फिर अन्दर ले जाओ, सफर समाप्त हो जाता है। जिस प्रकार राकेट पर सवार होकर मनुष्य जल्दी अपनी यात्रा पूरी कर लेता है, इसी प्रकार बाणी के अभ्यास द्वारा, इसे परिपक्व करके बहुत लम्बा सफर सैकिन्डों में समाप्त होने वाला बन जाता है। सो आप कहते हैं-

गुर परमेसरु जाणीऐ सचे सचा नाउ धराइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

निरंकार से आकार होकर क्या नाम पड़ा? उस समय ऐकंकार सरगुण ब्रह्म हुआ, ऐकंकार ब्रह्म से -

एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

वह धुन जिसका बार-बार उल्लेख किया जाता है -

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी।। पृष्ठ - 879

वही धुन माता के पेट में बच्चे के कानों में प्रवेश की हुई जिसे जीवित रख रही थी, उसी धुन को हम नाम कहते हैं, शबद ब्रह्म कहा जाता है। वह जो नाम है -

नाम के धारे सगले जंत। नाम के धारे खंड ब्रहमंड॥ पृष्ठ - 284

इस धुन ने ही सारे आकार पैदा किये। यह धुन आवाज़ है। कैसी आवाज़ है? कोई नहीं बता सकता। न ही यह नाम लिखित में आता है, न ही इसकी व्याख्या की जा सकती है। यह तो केवल अनुभव में ही आता है। जिनके अन्दर इस नाम का जहूर प्रकट हो गया, वही जानते हैं कि नाम क्या है। सो -

एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

औंकार कहलवाकर जितने आकार हैं, जितनी सृष्टियाँ हैं, वे सभी शब्द से उत्पन्न हुई हैं -

इकदू होइ तिनि देव तिहुँ मिलि दस अवतार गणाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

तीन शक्तियाँ पहले पैदा हुईं -

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु॥ पृष्ठ - 7

तीनों ही एक साथ बना दिये। बहुत से नाम हैं Electron, Proton, Nutron कहते हैं, कुछ शिव, ब्रह्म, विष्णु, महेश कहते हैं। तीन धाराएं बना दीं और वे चेतन धाराएं, प्रकृतिक धाराएं, वे जड़ हैं, अन्धी हैं, इन्हें पता नहीं है लेकिन जो चेतन हैं, उन तीनों को पता है। सबसे बड़ी बात यह है कि -

इकदू होइ तिनि देव तिहुँ मिलि दस अवतार गणाइआ॥
आदि पुरखु आदेसु है ओहु वेखै ओन्हा नदरि न आइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

देश, काल, वस्तु से रहित होकर -

ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ पृष्ठ - 7

अब इन्हें नज़र नहीं आता। ब्रह्मा को भी भ्रम पड़ गया था कि मुझे पैदा करने वाला यदि कोई है तो बोले। मैं अकेला ही हूँ, स्वंयमेव हूँ, अपने आप से स्वंय हूँ। आकाशवाणी हुई कि नहीं ब्रह्मा! तू स्वंयमेव नहीं है, तुझे पैदा करने वाला मैं हूँ।

कहता हैं, ''कहाँ से पैदा किया है?''

वे बोले, ''कमल की नाल में से पैदा किया है।''

ठोकर मारी उस पर।

कहता है, ''इसमें से मेरा जन्म हुआ? यह क्या चीज़ है?'' वह भी उसी में समा गया। महाराज कहते हैं कि 36 युग घूमता रहा। 4 युगों के 43,20,000 साल होते हैं, 9 से गुणा कर लो, सो इतने युग करोड़ों साल, लगभग 3 करोड़ 88 लाख 80 हज़ार साल उसी नाल में घूमता रहा। जब घूमते-घूमते परेशान हो गया फिर आवाज़ लगाई, ''हे प्रभु! मुझे यहाँ से निकाल। तू कौन है? इसके बारे में बता।''

उस समय अनुभव हुआ, वेदों का ज्ञान हुआ। महापुरुषों को सारा ज्ञान ऊपर से हुआ करता है -

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥ पृष्ठ - 722

हउ आपहु बोलि न जाणदा मै कहिआ सभु हुकमाउ जीउ।। पृष्ठ - 763

सो -

आदि पुरखु आदेसु है ओहु वेखै ओन्हा नदरि न आइआ।
सेख नागु सिमरणु करै नावां अंतु बिअंतु न पाइआ।
गुरमुखि सचा नाउ मनि भाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

जो सच्चा नाम था वह गुरू के द्वारा मन में रूच गया। इस नाम ने फिर अज्ञान को दूर कर दिया। अब हमें यहाँ पर नाम का पता नहीं चलता। हम उलझ जाते हैं - शबद, नाम, गुरू मन्त्र के बारे में। गुरू मन्त्र को ही हम कहते हैं कि हमें नाम मिल गया। नाम तो बहुत दूर है, नाम यदि मिल जाये न -

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ पृष्ठ - 649

जब नाम हृदय में बस गया फिर रिद्धियाँ, सिद्धियाँ हाथ जोड़कर आगे पीछे फिरती रहती हैं। सो भाई गुरदास जी विस्तार पूर्वक बताते हैं कि ओंकार हो कर -

अंबरु धरति विछोड़िअनु कुदरति करि करतार कहाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/3

जो तारे, सितारे हैं, ये आकाश में टिका दिये और थम्ब कोई नहीं है - इनके तथा धरती के बीच -

धरती अंदरि पाणीऐ विणु थंमां आगासु रहाइआ॥ भाई गुरजास जी, वार 26/3

सभी gravity (गुरूत्वाकर्षण) द्वारा घूमते फिरते हैं, घूमते जा रहे हैं, कभी भी कोई रूकता नहीं है।

इंन्हण अंदरि अगि धरि अहिनिसि सूरजु चंदु उपाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/3

जो वृक्ष हैं इनके अन्दर अग्नि रख दी परमेश्वर ने। सूरज, चाँद, दिन और रात बना दिये -

छिअ रुति बारह माह करि खाणी बाणी चलतु रचाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/3

चार खाणी, चार बाणी बना दीं - बैखरी, मधमा, पसन्ती तथा परा बाणी। उधर अण्डज, जेरज, सेतज, उदभज - चार खाणी बना दीं। इन सभी 84 लाख यौनियों में से मनुष्य का जन्म दुर्लभ हो गया -

माणस जनमु दुलंभु है सफलु जनमु गुरु पूरा पाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/3

जन्म सफल तब होता है यदि पूरा गुरू मिल जाये अन्यथा महाराज कहते हैं संसार में आने

का कोई लाभ नहीं-

धारना - काहनूं जंमणा सी, भगती तों हीणिआ ओए - 2, 2

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे।
इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए॥ *पृष्ठ - 450*

नाम के बिना यह व्यर्थ चला जाता है -

माणस जनमु दुलंभु गुरमुखि पाइआ।
मनु तनु होइ चुलंभु जे सतिगुर भाइआ।
चलै जनमु सवारि वखरु सचु लै।
पति पाए दरबारि सतिगुर सबदि भै।
मनि तनि सचु सलाहि साचे मनि भाइआ।
लालि रता मनु मानिआ गुरु पूरा पाइआ॥ *पृष्ठ - 751*

यदि तो पूरा गुरू मिल गया फिर तो यह जन्म सफल हो गया, अन्यथा यह खत्म है -

साधसंगति मिलि सहजि समाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

फिर सन्तों की संगत मिल जाये, पूरे साधना सम्पन्न व्यक्ति की संगत मिल जाये, फिर उससे यह सहज में समा जाया करता है।

इस प्रकार इस निश्चय से आपने यह धारण कर लिया कि यह सारी सृष्टि वाहिगुरू जी ने बनाई है। सोचकर देख लो, वृत्ति पता नहीं कहाँ से कहाँ पहुँच जाती है? हम कभी सोचते ही नहीं, इसीलिये वहीं के वहीं खड़े रहते हैं, तभी हम पार नहीं हो रहे। बस मन में रहता है कि मैं बीमार हूँ, मुझे दुख है, मेरा काम नहीं हुआ, मेरे लड़की नहीं है, मेरे लड़का नहीं है, सारा दिन सारा संसार रोता रहता है -

बाली रोवै नाहि भतारु। नानक दुखीआ सभु संसारु। *पृष्ठ - 954*

यदि मान लो इस नाम को, तो अभी जीत जाओगे, रोने-धोने सभी खत्म हो जाते हैं, कोई नहीं रहता -

मंने नाउ सोई जिणि जाइ। अउरी करम न लेखै लाइ।। *पृष्ठ - 954*

बाकी खूब कोशिश करके, पैसे कमा-कमा कर देख लो, कोठियाँ बनाकर देख लो, बड़े-बड़े करोड़ों एकड़ के फार्म बनाकर देख लो, राज करके देख लो - महाराज कहते हैं, ये तो कुछ भी नहीं है, ये तू गलत काम कर रहा है। तू क्या समझता है कि तूने सदा यहीं रहना है? प्यारे! तूने तो यहाँ से चले जाना है -

कहा बिसासा इस भांडे का इतनकु लागै ठणका। *पृष्ठ - 1253*

जरा सी ठोकर लगी, उसी समय सभी कुछ खत्म हो जाता है, योजनाएं बनाते-बनाते धरी रह जाती हैं। प्यारे! असली काम कर, जिसके लिये तू आया है। समझने की कोशिश कर प्यारे! यह सृष्टि वाहिगुरू ने रची है। लहणा जी ने यह बात समझ ली। भाई गुरदास जी इससे भी और आगे समझाते हैं। कई प्रेमियों के मनों में शंका उठती है कि यदि वाहिगुरू ही है फिर यह शोर शराबा किस बात का? ये बुरे व्यक्ति क्यों हैं? या फिर वाहिगुरू इतना बुरा हो गया? इतना गलत हो गया? यह बात भी समझ लो। वाहिगुरू जी तो सभी को सत्ता दे रहे हैं, सभी के अन्दर बाहर इतने ओत-प्रोत हैं कि कहीं भी अलग

नहीं होते, लेकिन इस प्रकृति में तीन गुण बने हैं - एक रजोगुण, एक तमोगुण, एक सतोगुण है। इनके साथ हमारे स्वभाव बने हैं, स्वभावों में हमारे कर्म मिले हुए हैं - करोड़ों जन्मों के। उन करोड़ों जन्मों के हिसाब से यह इन्जन चलता जा रहा है। स्वांति बूंद को सभी निर्मल बूंद कहते हैं। बूंद तो वही निर्मल है, पर अलग-अलग स्थान पर अलग-अलग प्रभाव होता है -

समसरि वरसै स्वांत बूंद जिउ सभनी थाई।
जल अंदरि जलु होइ मिलै धरती बहु भाई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

जल के अन्दर जल बन जाती है, धरती पर गिर कर मिट्टी में मिल जाती है -

किरख बिरख रस कस घणे फलु फुलु सुहाई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

यदि फलों के ऊपर गिरती है तो उनका रस बढ़ जाता है -

केले विचि कपूरु होइ सीतलु सुखदाई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

यदि केले पर गिर जाये तो कपूर, जो कहीं भी नहीं मिलता, वह कपूर बन जाया करती है -

मोती होवै सिप मुहि बहु मोल मुलाई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

यदि सीपी के मुँह में गिर जाये तो मोती बन जाती है। मोती बहुमूल्य होता है। यदि कहीं साँप के मुँह में गिर जाये, फिर ज़हर बन जाती है, फिर वही सांप फर्राटे मारता फिरता है -

बिसीअर दे मुहि कालकूट चितवै बुरिआई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

फिर वह बुराई, डंक मारने को चितवता है -

आपे आपि वरतदा सतिसंगि सुभाई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/5**

जैसे सूर्य का प्रतिबिम्ब सभी बर्तनों में एक समान बनता है, अनेक बर्तन पानी के भरे हुए हैं, प्रत्येक में उसका अक्ष (प्रतिबम्ब) है। सभी पदार्थों में चमकता है पर यदि शीशा रख दो, तो शीशे में बहुत चमक मारता है। जल में प्रकाश चमकता है। इसी तरह से जिसका अन्तसकरण शुद्ध है जिसमें मल, विक्षेप तथा आवरण तीन दोष दूर हो गये हैं, वहाँ पर वाहिगुरू पूरे बल के साथ प्रकाश देता है, प्रकाश की कोई कमी नहीं, प्रकाश में नेक व्यक्ति, नेक कार्य करते हैं; प्रकाश कम हो तो चोरी करते हैं, प्रकाश में ही कत्ल होते हैं, प्रकाश में ही बुरे लोग बुरे काम करते हैं, ब्लैकमेल करते हैं, धोखा करते हैं, रिश्वतें लेते हैं। प्रकाश का कोई कसूर नहीं, प्रकाश ने तो उजाला देना ही देना था। इस प्रकार संगत का दोष है। वाहिगुरू तो सारी सृष्टि में ही है -

धारना - आपे ही वरतदा, आपणी रचना अंदर - 2, 2
आपणी रचना अंदर - 2, 2
आपे ही वरतदा........ - 2

आपे भुखा होइकै आपि जाइ रसोई।
भोजन आपि बणाइदा रस विचि रस गोई।
आपे खाइ सलाहि कै होइ त्रिपति समोई।
आपे रसीआ आपि रस रसु रसना भोई।
दाता भुगता आपि है, सरबंगु समोई।
आपे आपि वरतदा गुरमुखि सुखु होई॥ **भाई गुरदास जी, वार 2/3**

जिन्होंने बन्दगी करके मल, विक्षेप तथा आवरण, तीन दोष दूर कर लिये हैं, जैसे नेत्रों में से

मोतिया हट जाता है, इसी तरह उन्हें सारी सृष्टि में वाहिगुरू ही दिखाई देता है क्योंकि अन्दर प्रकाश हो गया, गुरू ने अन्धेरा दूर कर दिया –

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥ *पृष्ठ – 293*

नामदेव जी भोजन पका रहे हैं। चपातियाँ बनाकर रख दीं और कोठी के अन्दर घी रखा हुआ था। आप घी लेने के लिये अन्दर चले जाते हैं। जब घी लेकर वापिस आए तो एक दम एक कुत्ता आया और पोने (रोटियाँ लपेटने वाला कपड़ा) सहित रोटियाँ उठाकर भाग गया। उस समय नामदेव जी ऐसे ब्रह्म भाव में थे –

आपे भुखा होइकै आपि जाइ रसोई॥ *भाई गुरदास जी, वार 2/3*

उसके पीछे-पीछे भागते हैं, आवाज़ें लगाते जा रहे हैं, ''प्रभु! रूखी मत खाना।'' एक तो पाखंड बनाकर कहता है, उसके पल्ले तो कुछ नहीं पड़ता। नामदेव को तो सचमुच नज़र आता था कि यहाँ दूसरा कोई है ही नहीं, आप ही आप है। 3-4 मील दौड़े ही चले गये; एक ही आवाज़ है, ''प्रभु! रूखी मत खाना, मेरे से गलती हो गई, मैंने रोटियों को साथ ही साथ घी नहीं लगाया।'' कुत्ता वहीं पर रुक गया। रोटी रख दी। आप रोटियाँ चुपड़ कर, कपड़े पर रखते चले जाते हैं। जब आपने आंख उठाकर ऊपर की ओर देखा तो क्या देखते हैं कि प्रभु सामने बैठे मुस्करा रहे हैं।

कहते हैं, नामदेव! तूने मुझे कुत्ते में भी पहचान लिया?

कहते हैं, प्रभु! आप यह बताओ कि आप कहाँ पर नहीं हैं। आप तो हर स्थान पर हो।

कहने लगे, हे प्रभु! कोई ऐसी जगह है जहाँ आप न हों? उस समय आपके अनुभव में से यह वचन उच्चरित हुआ –

धारना – राम बोले, राम बोले, राम बोलदै,
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै – 2, 2

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै राम बिना को बोलै रे।
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे॥ *पृष्ठ – 988*

जो कुछ भी है मिट्टी का बना हुआ है – चाहे हाथी है, चाहे चींटी। सभी के अन्दर एक ही परमेश्वर समाया हुआ है। साध संगत जी! यह बात कहना बहुत आसान है। कुछ लोग देखा देखी सुनकर बातें कहने लग जाते हैं लेकिन यह बहुत कठिन है, जितना आसान मुँह से कह देना है उतना ही व्यवहार में कर दिखाना कठिन है। एक उदाहरण द्वारा बात समझ आ जायेगी।

यू. पी. में जहाँ हमारा फार्म था – कैमरी में, वहाँ एक सन्त हमारे पास ही रहा करते थे जो 4-5 मील की दूरी पर था। उनके पास डाकू आ गये। डाकुओं ने उन्हें बहुत मारा। कभी-कभी उनका सेवादार धान, गेहूँ लेने आया करता था। मुझे उसने कहना कि कभी आइये। पास ही रहते थे पर कभी दर्शन नहीं किये थे। पता चला कि डाकू आ गये उनके पास। महापुरुषों की खबर लेने के लिये मैं चला गया।

मैंने कहा, ''महापुरुषो! कैसे हुआ यह सब?''

वे बोले, ''भगवान आ गये थे।''

''रूप कैसा था?''

''आप जिसको डाकू बोलते हैं वह रूप था। कुछ क्रूर रूप में थे। उन्होंने हमसे आकर पूछा, ''सन्त जी! दे दे जो कुछ है।'' हमने कहा, ''भगवन! यह शरीर भी आपका है, श्वांस भी आपके हैं, जो कुछ है सभी आपका है। आप देख लो। आपकी जो इच्छा है वह ले लो। हमने तो कोई ताला भी नहीं लगाया हुआ और न ही लगाते हैं लेकिन जो हमारे सेवादार हैं, इनको डाकू नज़र आये और वे भाग गये। मुझे तो भगवान ही नज़र आते थे। हमने कहा कि आज भगवान दूसरा रूप धारण करके आए हैं, तो वे मुझे फिर मारने लग गये। काफी मारा। भगवान के हाथ हमें लगे।''

मैंने कहा, ''फिर क्या हुआ?''

सन्त जी, ''कुछ नहीं हुआ फिर जो चीज़ हाथ लगी वही उठा कर ले गये।''

मैंने कहा, ''आपने फिर पुलिस को नहीं बताया?''

सन्त जी, ''भगवान! पुलिस की क्या बात? सब बात भगवान की हो रही है। भगवान ही आए थे – दर्शन देने। कभी दूसरी तरह देते हैं, कभी ऐसे?''

इतनी देर में मैं अन्दर जाकर देखने लगा कि डाकू किधर से भागे थे?

वे मुझे कहने लगे, ''अन्दर भगवान लेटे हुए हैं, संभल कर जाना।''

मैंने पूछा, ''कौन से भगवान हैं?''

सन्त जी, ''सांप भगवान हैं।''

जब मैंने अन्दर झांक कर देखा तो अन्दर साँप पड़ा हुआ है। एक ही कुटिया है, उसी के अन्दर साँप रहता है। मैंने कहा, ''जब आप अन्दर सोते हैं तो यह बाहर निकल जाता है?''

कहने लगे, ''मैं तो यहीं सोता हूँ, बाहर बरामदे में ही। भगवान अपनी मौज में सो जाते हैं। कई बार मेरे ऊपर ही सो जाते हैं, कभी मेरे साथ ही सो जाते हैं।''

मैंने कहा, ''जब तुम सुबह उठते हो, तो?''

सन्त जी, ''फिर हम भगवान से बेनती करते हैं कि भगवान! अब उठने का समय हो गया है, अब हमें आज्ञा दो, फिर वो चले जाते हैं।''

ऐसी वृत्ति होना कोई आसान काम नहीं, साध संगत जी! बहुत कठिन है। ये पूर्ण रूहें जो बहुत ऊँची अवस्थाओं में पहुँची हुई होती हैं, उन्हें तो यह जंच जाती हैं; दूसरा यदि कोई बातों से बन जाये तो बात नहीं बना करती। इसलिये महाराज जी ने इस तरह फ़रमान किया है –

धारना – गलीं असीं चंगीआं आचारीं बुरीआं – 2, 2
मनहु कसुधां कालीआं बाहर चिटवीआं – 2, 2
रीसां करे तिनाड़ीआं जो सेवहि दरि खड़ीआं – 2

ये अनुभव महापुरुषों के सुनकर यदि हम इस प्रकार यत्न करने लगें, हमारा पूरा नहीं होगा क्योंकि हमारे अन्दर निश्चय, विश्वास नहीं है। जब तक प्रत्यक्ष रूप में प्रकट नहीं होता, तब तक इस पर चलना बहुत कठिन है -

खंनिअहु तिखी वालहु निकी एतु मारगि जाणा॥ पृष्ठ - 918

अतः जो अनुभव महापुरुषों का है, आप सभी श्रवण कर रहे हो कि किस तरह से आपने एक पौड़ी सुनी कि सभी के अन्दर परमेश्वर है। इसे और अधिक स्पष्ट करते हुए भाई साहिब इस तरह लिखते हैं -

धारना - रूपां रंगां दा भुलेखा पै गिआ,
सभना अंदर इको जोत है - 2, 2
मेरे प्यारे सभनां अंदर इको जोत है - 2, 2
रूपां रंगां दा भुलेखा पै गिआ.......... - 2

पाणी काले रंगि विच जिउ काला दिसै।
रता रते रंग विचि मिलि मेलि सलिसै।
पीलै पीला होइ मिलै हितु जेही विसै।
सावा सावे रंग मिलि सभि रंग सरिसै।
तता ठंढा होइकै हित जिसै तिसै।
आपै आपि वरतदा गुरमुखि सुखु जिसै॥ भाई गुरदास जी, वार 2/7

पानी एक ही है - जैसी संगत वैसी रंगत। एक ही ज्योति है - चोर के अन्दर चोरी का काम करती है, डाकू में डाकूपना का काम करती है, बदमाश में बदमाश का काम करती है; दोष संगत का है। ज्योति वही है - सभी के अन्दर, उसका कोई भ्रम नहीं, पर इसके अन्दर एक 'मैं' बनी हुई है - फालतू की -

.... अणहोंदा आपु गणाइदे। पृष्ठ - 589

यदि तो 'मैं' छोड़ दे फिर तो यह पार हो गया। यदि 'मैं' नहीं छोड़ता फिर इस पर असर पड़ता है। पानी तो काला नहीं है, पानी का तो कोई रंग नहीं है, यदि काले रंग में डाल दिया तो काला दिखाई देने लग पड़ता है, लाल रंग डाल दो तो लाल हो जाता है, यदि पीला रंग डाला जाये तो पीला हो जाता है। किसी को गर्म अच्छा लगता है, किसी को ठण्डा अच्छा लगता है।

सो वाहिगुरू तो सभी के अन्दर है पर यह भ्रम पड़ा हुआ है, बार-बार भ्रम पैदा हो जाता है। जब कोई बात होती है कि ये बुरे आदमी क्यों हैं, वाहिगुरू तो सभी को सत्ता देता है। शरीर जिस प्रकार के बने हुए हैं, जैसे-जैसे बर्तन हैं, वैसी ही इसमें चेतन कला आकर इसे हरकत देती है। 'हलचल' होकर जो 'मैं' बनी हुई है, किरत बनी हुई है, स्वभाव बना हुआ है, उसके अनुसार यह हरकत करता है। एक और उदाहरण देते हैं कि -

होवै सूतु कपाह दा करि ताणा बाणा॥ भाई गुरदास जी, वार 2/10

सूत तो बाद में बना, पहले कपास में से चुगा गया, कपास में से डोडियाँ चुनी गई, उन्हें निकाल कर उन्हें बटा गयाऽ फिर उन्हें पैंजे के पास भेजा गया फिर उसकी पूनियाँ बनाई गईं, पूनियाँ बनाकर उन्हें काता गया, कात कर फिर उसे पक्का किया गया, उसके बाद फिर ताना बना लिया।

सूतहु कपड़ु जाणीऐ अखाण वखाणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 2/10*

इसके बाद उस सूत के कपड़े बनने लग गये। कोई चौसी बन गई, चौतार बन गया –

चउसी ते चउतार होइ गंगा जलु जाणा।
खासा मलमल सिरीसाफु तन सुख मनि भाणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 2/10*

कोई सिरी साफ बन गया, कोई मलमल बन गई, कोई पगड़ी बन गई, तनसुख बन गया –

पग दुपटा चोलणा पटुका परवाणा।
आपे आपि वरतदा गुरमुखि रंग माणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 2/10*

इस प्रकार हमने जो एक पौड़ी पढ़ी थी – ***'आपीन्है आप साजिओ'*** उसका विस्तार साध संगत जी! समझ में लाने के लिए जानना, ढूंढना पड़ता है क्योंकि पढ़ने से कोई भेद नहीं खुला करता, कोई बात नहीं बना करती –

पढ़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा॥ *पृष्ठ - 148*

बूझने की बात है। जो बन्दगी करते हैं, जिनकी सुरतें ऊपर के मण्डल में गई हुई हैं, यहाँ रूकना नहीं है, उसे अनुभव करना है हर एक में। इस प्रकार आपने सारी बात समझी और झूठी 'मैं' का पता चल गया – बाणी सुनते ही फिर क्या हुआ? महाराज कहते हैं, तू कुछ भी नहीं है, ऐसे ही बना हुआ है खामाखाह, 'मैं' बनकर फंसा हुआ है। 'मैं' छोड़ दे, तू छूट जायेगा। यह परिपूर्ण आत्मा 'मैं' के कारण ही जीव बन गई। इसे जीव आत्मा कहने लग गये। जीव आत्मा की उपाधि धारण करके फिर इसे संग दोष लगने लग गया। बुद्धि पर आत्मा का प्रकाश पड़ता है बुद्धि कहती है कि मैं गोरा हूँ, मैं काला हूँ, मैं गरीब हूँ, मैं अमीर हूँ, मैं पुण्यी हूँ, मैं पापी हूँ, मैं सिख हूँ, मैं हिन्दू हूँ, मैं मुसलमान हूँ, मैं इसाई हूँ, मैं बौद्धी हूँ, मैं जैनी हूँ, मैं आस्तिक हूँ, मैं नास्तिक हूँ। सब बेकार का झगड़ा 'मैं' ने खड़ा कर दिया। ऊपर से परमेश्वर की सत्ता पड़ रही है जैसे सूर्य धरती को सत्ता दे रहा है। यह बीच में 'मैं' बनकर दुखी होता हुआ घूम रहा है। गुरू के बिना यह ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ करता। सो इसके साथ फिर सुख दुख शरीर के कर्मों के कारण बन्धे जाते हैं – मैं के साथ। मैं के साथ बन्धे हुये ये कर्मऽ फिर कलाबाजियाँ खिलाते हैं। यह बात तो लहणा जी ने अच्छी तरह से समझ ली कि यहाँ पर वाहिगुरू ही है। आगे चलकर और विस्तार से समझा –

सचे तेरे खंड सचे ब्रहमंड॥ *पृष्ठ - 463*

आखिरी पौड़ी पर फिर ध्यान लगा दिया कि 'मैं' जो है, यह कर्मों के साथ चिपटी हुई है, फिर कर्मों के अनुसार चक्कर खाता फिरता है तथा इस पौड़ी में जाकर बात स्पष्ट होती है –

धारना - पापी रोंदे दोजकां नूँ जाणगे,
दरगह विचों कढ्ढे जाणगे - 2, 2
मेरे प्यारे, दरगह विचों कढ्ढे जाणगे - 2, 2
पापी रोंदे दोजकां नूँ जाणगे .... - 2

नानक जीअ उपाइ कै लिखि नावै धरमु बहालिआ।
ओथै सचे ही सचि निबड़ै चुणि वखि कढे जजमालिआ।
थाउ न पाइनि कूड़िआर मुह काल्है दोजकि चालिआ।
तेरै नाइ रते से जिणि गए हारि गए सि ठगण वालिआ।
लिखि नावै धरमु बहालिआ॥ *पृष्ठ - 463*

पसारा हो गया सृष्टि का, 'मैं' बन गई, 'मैं' ने अपने साथ कर्म बान्ध लिये – कुछ अच्छे, कुछ

बुरे कर्म साथ बान्ध लिये। संसार से जाना पड़ा और अन्त में गति क्या होती है? जो बन्दगी करते हैं –

तेरै नाइ रते से जिणि गए हारि गए सि ठगण वालिआ॥ ***पृष्ठ - 463***

जिन्होंने अपने आपको मूल की ओर मोड़ लिया, जहाँ से बिछुड़ा था, वहीं से जोड़ लिया, वे तो दरगाह में प्रवान हो जायेंगे, दूसरों को धक्के मार कर निकाल दिया जायेगा, पैर रखने के लिये भी जगह नहीं मिलेगी।

सो दरगाह क्या होती है? इसकी व्याख्या बहुत लम्बी है, अगले सत्संग में फिर विचार करेंगे क्योंकि लहणा जी गुरू अंगद देव जी के रूप में ऐसे नहीं आ गये थे। आपकी काफी आयु बीत गई थी इस संसार में। उनके मन पर कैसे असर हुआ और हमारे मन पर क्यों नहीं होता क्योंकि सुनते तो हम भी हैं जो कुछ उन्होंने सुना था, पर हमारे अन्दर फर्क क्यों नहीं पड़ता। अगले सत्संग में पहुँच कर ये विचार श्रवण करो।

– ***आनन्द साहिब*** –

– ***गुर सतोतर*** –

– ***अरदास*** –

□ □

2

शान..।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

धारना - मोहि न विसारो जी, मैं जन तेरा - 2, 2
मैं जन तेरा, मोहि ना विसारो - 2, 2
मोहि न विसारो जी, मैं जन तेरा - 2

मेरी संगति पोच सोच दिनु राती।
मेरा करमु कुटिलता जनमु कुभांती।
राम गुसईआ जीअ के जीवना।
मोहि न विसारहु मै जनु तेरा।
मेरी हरहु बिपति जन करहु सुभाई।
चरण न छाडउ सरीर कल जाई।
कहु रविदास परउ तेरी साभा।
बेगि मिलहु जन करि न बिलांबा॥ *पृष्ठ - 345*

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए,........2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

कितनी न्यारी कथा है कि संसार पैदा भी होता है और मरता भी है; आता भी है और चला भी जाता है, शरीर धारण करता है, शरीर धारण करने के बाद इस संसार से चला जाता है, फिर उसका कुछ भी अता-पता नहीं रहता। न ही कुछ पता चलता है, लेकिन जो वाहिगुरू के सेवक हैं, न तो वे संसार में आते हैं, न ही जाते हैं, बड़ी अजीब बात है। वे प्रकट हुआ करते हैं और अपना काम पूरा करने के बाद ज्योति में समा जाया करते हैं। एक जीवन तो यह है।

दूसरा जीवन है पैदा होते रहना, मरते रहना, पैदा होना, मर जाना; मनुष्य बना दिया परमेश्वर ने। यह शरीर ढांचा सा बना हुआ है, इसके अन्दर रूह पड़ी हुई है लेकिन है मनुष्य। पशु वृत्ति है, पशु की शक्ल है। अपना कोई पता नहीं है। इस दृष्टिमान संसार से आगे का, किसी को भी कुछ भी पता नहीं है। न यह पता है कि मैं कहाँ से आया हूँ और कहाँ जाऊँगा? उनका यह हाल होता है कि वे पैदा होते हैं, फिर मर जाते हैं। चौरासी लाख यौनियों में घूमते रहते हैं। न तो खरबों वर्षों तक उनकी

यात्रा खत्म होती है, न ही खरबों या अनन्त वर्षों तक, उनका यह चक्र खत्म होता है। अतः दोनों के जीवन में यही अन्तर है।

गुरू महाराज जी यह चाहते हैं कि सत्संग करने वालों को, संसार के उन सभी व्यक्तियों को, जो परमेश्वर पर विश्वास करते हैं, उन्हें एक ऐसे स्थान पर ले जाये, जहाँ जन्म मरण का दुख समाप्त हो जाये, फिर ये न जन्म लें और न ही मरें, आज़ाद हो जाएं, काल चक्र में से निकल जायें, पर हैरानी की बात है कि महापुरुष आवाज़ें लगा-लगा कर बताते हैं, चारों वेद, 6 शास्त्र, 27 स्मृतियाँ, उपनिषद, धार्मिक ग्रन्थ, कुरान शरीफ, तौरेन्त, अंजील, जम्बूर, बाईबल अन्य अनेक ग्रन्थ, गुरू ग्रन्थ साहिब महाराज समझाते ही चले आ रहे हैं पर यह जीव समझता ही नहीं, वहीं का वहीं रहता है। पता नहीं इसे बात क्यों नहीं समझ में आती? हालांकि महापुरुष शब्द भी ऐसे बोलते हैं जो इसकी समझ में आ जाएं, कोई अंग्रेजी नहीं बोलते, संस्कृत नहीं बोलते, कोई फारसी अरबी नहीं बोलते, साफ बोली, पंजाबी में बातें करते हैं, धारनाएं पंजाबी की हैं ताकि इसके दिल में बैठ जाएं और यह बात को समझ कर, इस रास्ते पर चल पड़े और धीरे-धीरे अपना रास्ता तय करने लगे। लेकिन क्या होता है? वहीं का वहीं रहता है। यह एक बहुत बड़ी समस्या है कि वह क्यों नहीं इस बात को समझता?

यदि मैं यह कह दूँ कि यहाँ से कुछ दूरी के फासले पर रेता उठाते हुए एक बहुत बड़ा खजाना निकला है, सैकड़ों ही लोग ढुलाई के काम में जा लगेंगे, सुबह-सुबह 2 बजे से ही लग जायेंगे, एक भी आदमी दीवान में नहीं आयेगा, सारे के सारे चले जायेंगे, यह सोचकर कि चलो एक पल्ला भी भर गया तो वह भी बहुत है। यदि टोकरी भर ली वह भी काफी है पर यदि कहें कि सत्संग होता है और सत्संग का फल कितना मिलता है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ *पृष्ठ - 546*

कई करोड़ों यज्ञों का फल है -

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूँ ते आध।
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ *पृष्ठ - 1377*

इतना लाभ है कि यमदूत छोड़ जाते हैं। मार पिटाई जो मरते समय होती है और मरने के बाद होती है, नरकों में जाकर जो दुख भोगने हैं, वह सभी कुछ दिखा दो फिर भी मनुष्य पर कोई असर नहीं होता। हालांकि उसके हित की बात है क्योंकि पैसा टका तो यहीं पर ही छोड़ जाना है, इसी चीज़ ने साथ जाना है -

जिह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥ *पृष्ठ - 264*

फिर क्या कारण है, मनुष्य क्यों नहीं समझता? कुछ कह देते हैं कि हम पढ़े लिखे नहीं हैं। अनपढ़ और पढ़े लिखे की कोई बात नहीं है। जो अनपढ़ हैं वे तो बहुत आगे निकल गये। कबीर साहिब कौन से स्कूल में पढ़ने गये थे? नामदेव जी कौन से स्कूल में जाकर पढ़े थे? लेकिन जो पढ़े लिखे व्यक्ति हैं Ph.D. भी की हुई है, वह बाणी के एक भी अक्षर को Decode (संकेत वाच्य) नहीं कर सकते कि यह कौन सी बात महापुरुषों ने कह दी। उनकी समझ से बाहर की बात कह देते हैं। महाराज कहते हैं पढ़े लिखे का सवाल नहीं है -

पड़िऐ नाही भेदु बुझिऐ पावणा॥ *पृष्ठ - 148*

बात तो समझने वाली है, भेद ढूँढने वाली है, मैं सीधी सी बात कहता हूँ, इस बात को बूझ लो, कोई मुश्किल नहीं है। अतः महाराज जी कहते हैं पढ़े हुए तो झूठे (कूड़ै) हो गये होते हैं। उनका

दिमाग तो इतना तीक्ष्ण हो जाता है कि उन पर कोई भी उपदेश कारगर सिद्ध नहीं होता जैसे खण्डा (तलवार) होता है, कोई आदमी कोशिश करे कि उसके ऊपर कोई वस्तु टिका देगा, बिल्कुल नहीं रख सकता, क्योंकि वह बहुत ही तेज़ धार हो चुका होता है। Blunt (खुन्डा) हो, चौरस हो, उस पर तो थोड़ा बहुत टिकाया जा सकता है, लेकिन इतनी तेज़ धार पर नहीं टिकाया जा सकता। अतः पढ़ा हुआ दिमाग बहुत तेज़ हो जाया करता है, वह हर बात में तर्क करेगा, अपनी अक्ल को बढ़िया बतायेगा और गुरू की मति को, उसकी मत को नहीं मानेगा। अतः इसलिये यह एक बड़ी भारी समस्या है -

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ मती देदिआ नित।
जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित॥ ***पृष्ठ - 1378***

महात्मा बुद्ध कहते हैं, आसमान में एक मार देवता है, देवता नहीं है, वह राक्षस किस्म का एक जीव है। यदि कोई परमेश्वर की ओर कदम बढ़ाता है तो वह गलत काम करवाने शुरू कर देता है। उसे कहता है कि उधर मत जा, इधर देख बहुत बढ़िया चीज़ है। आलस्य पैदा कर देगा और कहेगा कि मैंने आज सत्संग में नहीं जाना हांलाकि घर पर भी कुछ नहीं करना। जब लाभ कमाने का अवसर आयेगा तो उसे गवां देगा। फिर उछलता कूदता जायेगा - कमी वाले स्थान पर। क्यों जाता है? क्योंकि बात इसकी समझ में नहीं आती, इसकी अन्दर से रुचि पैदा नहीं होती। यह हरिआए ढोर की तरह है, जिसे पता है कि मैंने इस खेत में से खाना है, चाहे अन्य स्थानों पर कितनी भी घास क्यों न हो, उसे नहीं खाता; मालिक को देखता रहेगा, देखता रहेगा, जब देखा कि मालिक अब दूसरी ओर देख रहा है तो दौड़कर जाकर मुँह चलाने लग जायेगा, वह फिर उसे डण्डे मारता है। ठीक इसी प्रकार हमारा मन हरिआई हो चुका है। गुरू की बाणी को तो यह समझने का यत्न ही नहीं करता और इसकी बजाये अपनी मति के पीछे लगा रहता है, अपनी रूचि के मुताबिक चलता है फिर सबसे बड़ा दोष यह है कि अनजान बना हुआ यह कहता है कि मैं सभी कुछ जानता हूँ। महाराज कहते हैं, ''अनजान की निशानी बताएं क्या होती हैं? कौन सा व्यक्ति अनजान है?'' हम तो कह देते हैं कि अमुक आदमी तो अनजान था, उससे इसलिये यह गलती हो गई। महाराज कहते हैं, ''नहीं, यह बात नहीं है। अनजान के यदि अर्थ समझने हैं और उसकी कोई निशानी, पहचान लेनी है तो कहते हैं -

सोई अजाणु कहै मै जाना............॥ ***पृष्ठ - 382***

जो यह कहे कि मैंने बात समझ ली, उस जैसा अनजान दुनियाँ में कोई नहीं है। न इल्म कहीं खत्म होता है, विद्या कहीं समाप्त नहीं होती, न ही परमेश्वर की बात की कोई सीमा है, यह कहाँ खत्म हो जायेगी, वह तो जितना जानता है उतना ही छोटा होता चला जाता है, अनजान बन जाता है। सो यह मनुष्य के दिमाग में नुक्स है। एक उदाहरण से बात समझ में आ जायेगी।

मान सरोवर झील सैंकड़ों वर्ग मीलों में हिमालय पर्वत की जड़ों में स्थित है, जहाँ पर बर्फ पिघल-पिघल कर गिरती रहती है। वहाँ से एक तो सिन्ध दरिया निकलता है और सतलुज निकलती है, एक ब्रह्म पुत्र धरती के नीचे से होती हुई कलकत्ता के पास जाकर निकलती है। अन्य कई नदियों का भी उदगम है, किसी का प्रत्यक्ष तो किसी का अप्रत्यक्ष। गंगा के लिये पहाड़ों के बीचों बीच में से आकर गौमुख पर प्रकट होता है, वहाँ पर बेशुम्मार बर्फ हर समय पड़ती रहती है, पहाड़ों में से नदियाँ निकलती रहती हैं, वहाँ पर हंस रहते हैं, यह हंस उस स्थान का निवासी है। हंस न तो मेंढक खाता है, न ही कृमि खाता है; उस पानी के अन्दर मोती होते हैं, डुबकी लगाकर मोती निकाल लाते हैं, उन्हें खाते हैं, जो बहुत ही कीमती चीज़ है। यदि मनुष्य को खाने के लिये शुद्ध मोती मिल जाएं तो इसकी ताकत दुगुनी हो जाती है अर्थात दुगुना तकड़ा हो जाता है। असली मोती नहीं मिलते उसके छिलके मिलते हैं।

वह हंस उड़ान भरता है - 1200 मील की उड़ान होती है, इस हंस की। जहाज की तरह समुद्र पार कर जाता है। वह किसी कुएं पर आकर बैठ गया, नीचे को देखा, नीचे मेढक बैठा था। उसे वह अजीब पन्छी नज़र आया। अन्दर से आवाज़ लगाई, ''तू कहाँ से आया है?'' वह बोला, ''मैं मान सरोवर से आया हूँ,'' मेंढक बोला, ''वह कहाँ है?''

कहने लगा, जैसे तेरा पानी है, ऐसा ही पानी वहाँ है। मेंढक को समझाने का इसके सिवाय और कोई तरीका नहीं था कि वहाँ भी पानी तेरी ही तरह का होता है। यदि वह कहता कि इतने बड़े-बड़े पहाड़ हैं, मेढक ने तो वे देखें न ही उसे पता कि पहाड़ क्या होते हैं? वृक्ष क्या होते हैं? वहाँ पर बर्फ ही पड़ती रहती है, उसे इनका कुछ भी पता नहीं क्योंकि उसने ये चीज़ें पहले कभी देखी ही नहीं। वह फिर बोला, ''कितना बड़ा होता है?'' हंस ने छलांग लगाई और कहा इतना बड़ा होता है। कूएं का चौथाई हिस्सा कूद गया।

हंस कहता है, ''नहीं। इससे तो बहुत बड़ा है।'' दूसरी बार छलांग लगाई, बीच में चला गया। कहने लगा फिर इतना बड़ा होगा। तीसरी बार तीन चौथाई पार कर गया। चौथी बार मुंडेर के साथ जा लगा और बोला, इतना बड़ा होगा। हंस ने कहा, ''नहीं।''

मेंढक ने चारों ओर चक्कर लगाया और कहा कि इतना बड़ा होगा। हंस बोला, ऐसे तो करोड़ों कुएं उसमें समा जायें। मेंढक बोला, ''तेरे जैसा झूठा भी दुनियाँ में कोई नहीं होगा, किसी झूठों के देश में से आया लगता है। इससे बड़ी तो कोई चीज़ ही नहीं है।''

सो यह जो मनुष्य है जितना जो कुछ जान लिया, वह कहता है कि इससे आगे तो और कुछ है ही नहीं। इसीलिये कहावत चल पड़ी, 'अपनी अक्ल, बैगानी माया बहुत ही बहुत।' अपनी अक्ल तो सभी को बहुत लगती है, चाहे वह पागल हो। एक आदमी शराब पीता है, ज़र्दा खाता है, गलत काम करता है। उसे जो सियाना आदमी है वह समझाता है कि तू शराब पीता है, तुझे कैंसर हो जायेगा। तू शराब पीनी छोड़ दे और अपने बच्चों का पालन पोषण कर। यहाँ पर मैंने बहुत से देखे हैं, पहले भी मेरे पास आये थे, पर जब मैं यहाँ आया था, तब अभी शुरू ही हुआ था, 1978 की बात है। मैंने कहा कि तुम शराब मत पीया करो। तुम्हें जमीन के पैसे मिले हैं, इन्हें बर्बाद मत करो। खुशी में आकर पीने लग गये। इसी बीच ज़मीन का मुकदमा चल रहा था और 20-20, 30-30 हज़ार रूपये मिल गये फिर मुकदमा चला, अन्त में सवा लाख तक पहुँच गया। वे शराब पीते रहे। पहले एक मरा, फिर दूसरा, फिर तीसरा मर गया। उनके छोटे-छोटे बच्चे अनाथ हुए घूम रहे हैं। उनकी पत्नियां एक दिन मेरे पास आईं। मैंने कहा, ''क्या किया जाये, समझाया तो बहुत था पर माने ही नहीं।'' वह यही बात समझते थे कि शराब पीने से भी कोई मरता है? यह तो पानी ही है, हम कौन सा पाप करते हैं। परिणाम क्या निकला कि सारा परिवार इधर उधर बिखरा हुआ घूम रहा है। एक ही घर के तीन आदमी मर गये। किसी को कहो कि तू तम्बाकू मत खाया कर। धार्मिक बातें तू मत मान लेकिन माननी पड़ती हैं -

मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक।
जगत जूठ शत कुल दहै निंदा दहै अनेक॥

शराब 7 कुलों का नाश करती है। भंग एक तन का नाश करती है। जो तम्बाकू पीते हैं, यह तम्बाकू उसके 100 कुलों तक मार करेगा। प्यारे! जो बुजुर्ग दान करके, पुण्य करके स्वर्गों में गये हैं, उन्हें तू वहीं पर ही उलटा मार देगा। वहाँ यह बात चलती है कि तेरे कुल में मर्यादा वाले क्यों नहीं पैदा हुए। जिस कुल में मर्यादा वाले पैदा नहीं होते, उस कुल का बुरा होता है, उसकी माँ को भी बुरा कहते

हैं -

जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी। बिधवा कस न भई महतारी॥ ***पृष्ठ - 328***

जिस कुल में बन्दगी करने वाला पुत्र पैदा न हो सका, उसकी माँ रन्डी हो जाती। महाराज जी से पूछा, ''महाराज! इतनी कठोर बात आपने कह दी कि विधवा हो जाती। दुनियाँ तो सुख मांगती है, किसी को शीश झुकाओ और आर्शीवाद दो, वृद्धा सुहागन हो, तेरा सुहाग कायम रहे, आप कहते हैं कि तेरा सुहाग खत्म हो जाना चाहिये। इसका क्या कारण है?'' महाराज कहते हैं, यह नशों का सेवन करेगा, कुलों को नष्ट करेगा, जो बुजुर्ग थोड़े-थोड़े पुण्य करके, स्वर्ग का आनन्द लूट रहे हैं, सभी के सभी नीचे फैंक दिए जायेंगे। फिर क्या होता है, वे बुजुर्ग जो निगाह करके बैठे हैं, अपने घरों की, पुत्रों की, पोत्रों की, पौते-पड़पौतों की, वह जब कोई एक कुल में खराब जीव आता है, पहले तो वे रक्षा करते हैं, बचाते हैं, जितनी उनमें समर्थ होती है, उतना वे बचाव करते हैं फिर वे अपना हाथ खींच लेते हैं -

तनक तमाकू सेवीऐ देव पितर तजि जाइ॥

उस समय देवता भी और पितर भी उसे छोड़ जाते हैं तथा उसके घर में फिर पाप इतना होता है -

पाणी ता के हाथ कउ मधरा सम अघदाइ॥

जैसे शराब पी ली, वैसे ही समझो उसके हाथ का पानी पी लिया। उसके हाथों का इतना पाप हो जाता है। कहते हैं, ''महाराज! शराब पीने का पाप कितना होता है?'' महाराज बताते हैं -

मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक॥

शराब 7 कुलों का नाश करती है। 3 ऊपर की, 3 नीचे की और अपने तन का नाश करती है, एक शराब पीने वाला अपने आपको 1 पाप का फल ऊपर वालों को तो मिलता है कि तुम्हारे कुल में ऐसा व्यक्ति कैसे पैदा हो गया? नीचे वालों का यह फल जाता है क्योंकि उसकी जीन्स में खराबी आ जाती है, जो बच्चे पैदा होंगे उनके दिमाग खराब होंगे, विघ्न आयेंगे तथा जो बुजुर्ग हैं, वे भी साथ छोड़ जायेंगे। साथ छोड़ कर फिर उस घर में जो पहरा होता है देवताओं का, वह हट जाता है। फिर वहाँ पर भूत प्रेतों का पहरा शुरू हो जाता है - भूत प्रेत जो हैं वे कलह पैदा करते हैं - लड़ाई, झगड़ा, क्रोध, उलटे काम जिनमें नुकसान होता हो, बिमारी लगना आदि। घर में रोना-धोना शुरू हो जाता है। बच्चों को बीमार कर देते हैं, मार देते हैं क्योंकि बुजुर्गों का पहरा हट जाता है। गलत व्यक्ति पैदा हो गया, उसने सारा का सारा system (प्रबन्ध) बदल दिया। अत: कहते हैं जो तम्बाकू पीता है, 24 कुल तो दादके परिवार की नाश कर देता है, 20 नानके परिवार की नाश करता है, देख लो कहाँ तक पहुँचता है? मामा, नाना जो बुजुर्ग हैं, वे सारे दुखी हो जाते हैं, 16 कुल जहाँ विवाहित होता है, उनका नाश करता है, 12 कुल जहाँ लड़के-लड़कियाँ ब्याहे होते हैं, उनका खातमा करता है, 11 कुल जहाँ बहन ब्याही होती है, 9 जहाँ बूआ रहती है, 8 जहाँ मासी रहती है, इतनी दूर तक मार करता है -

जगत जूठ शत कुल दहै.......................।

100 कुलों का नाश करता है -

.......................निंदा दहै अनेक॥

निन्दा करने वाला तो इतने कुलों का नाश करता है जिनकी गिनती ही नहीं हो सकती। इसलिये महाराज कहते हैं, ''ए माता! यदि तेरा पुत्र बन्दगी करने वाला नहीं होना था, तू तो प्रार्थना किया करती थी? महाराज! मैं विधवा हो जाती, पुत्र ही पैदा न करती। क्या जरूरत थी ऐसे पुत्र की जिसने

आकर संसार में कलयुग फैलाना था?''

अतः मनुष्य समझता ही नहीं, वह कहता है कि जो परमात्मा ने मुझे अक्ल दी है, उसके आगे कोई बात है ही नहीं। मुझे अकल देने के बाद परमात्मा फिर सो गया और किसी को नहीं दीं। यदि कोई सन्त ऐसी बात कहता है तो कहता है, ''लो, सन्त भी कोई आदमी होते हैं; इन्हें तो पता ही नहीं कि शराब का स्वाद कैसा होता है? यदि इन्हें स्वाद का पता हो तो ये रोज़ पीयें और गाये मारे बैठ कर।'' शराबी की चार अवस्थाएं होती हैं।

पहली हालत होती है, जब पहला पैग पीता है तो जिस व्यक्ति के मुँह में जुबान नहीं होती, वह भी तोते की तरह बातें करने लग जाता है। 4-5 बैठे हों, हुंकारा भरने वाला कोई नहीं, पाँचों इकट्ठे ही बोले जाते हैं। जो सोफी (जिसने शराब न पी हो) है, वह कहता है कि इन्हें क्या हो गया, कोई भी हुंकारा नहीं भरता - एक दूसरे से बढ़कर ज़ोर-ज़ोर से ऊँचा-ऊँचा बोलते हैं।

दूसरा पैग जब पी लेता है तो जो कायर से कायर आदमी भी, जो रात को बाहर निकलने से डरता है, वह कहता है, ''मुझे बताना था। जब यह बात हुई थी, फिर देखते मेरे हाथ?'' कहते हैं, शेर बन जाता है।

तीसरा पैग जब पीता है, फिर कहते हैं गधा बन जाता है वह। सभी कुछ अपने ऊपर ही फैंके जाता है, दाल भी अपने ऊपर गिराता जायेगा सभी कपड़े आदि खराब कर लेगा।

चौथी हालत इसकी होती है जब यह चौथी बार बहुत पी जाता है फिर मुर्दे की तरह हो जाता है, फिर चाहे कुत्ते मुँह चाटते रहें, चाहे घसीट कर दूर कर दो, पता ही नहीं होता इसे। यहाँ एक दिन मैं दीवान सजाकर लौटकर आ रहा था। पड़ौल नदी के पास सड़क पर एक आदमी गिरा पड़ा था। कार की लाइटें कम थीं और मुझे ऐसा लगा कि पत्थर रख दिया हो किसी ने क्योंकि उसका एक तरफ का हिस्सा दिखाई दे रहा था, पत्थर की तरह दिखाई देता था। मैंने अपने साथ बैठे कार में संगियों को उतारा और कहा कि इस पत्थर को हटा दो। वे नीचे उतरे और देखा तो बोले, ''जी, पत्थर नहीं, यह तो आदमी है।''

मैंने कहा, ''ज़िन्दा है?'' वह बात सुनकर बोला, ''मेरे ऊपर से ही कार निकाल लो, ऊपर से ही कार निकाल लो।''

पैरों तथा बाजुओं से पकड़ कर 20-30 कदम दूर लिटा आए, फिर साईकल उसके ऊपर ड्रम आदि, दूर करके हमने रख दिये कि यहाँ उसकी कोई जेब न काट ले। ऐसी हालत व्यक्ति की हो जाती है, अच्छा खासा व्यक्ति भी उपदेश नहीं मानता। वह कहता है जो कुछ मैंने जान लिया, उसके आगे कोई बात है ही नहीं। मेरी जानी हुई बात ठीक है। महाराज कहते हैं, ''तूने धर्मराज के बारे में कभी नहीं सुना। तुझे पता है वहाँ जाकर तू क्या बनेगा? जब वहाँ जाकर लेखा देना पड़ता है, बहुत बुरी हालत होती है'' -

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी।
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी।
संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी।
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी।
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी॥ *पृष्ठ - 315*

कभी तिलों, सरसों का तेल निकलते देखा है? उसी तरह वहाँ पर पीसे जाते हैं। अब तू बात नहीं मानता, पहले तो सन्तों की बात ही नहीं मानता, अब तू अपने किये का फल पाता है, साथ ही दुखी होता है। जब तुझे अगला जन्म मिलेगा, अति गरीब घर में मिलेगा, शरीर अच्छा नहीं मिलेगा फिर दुखी होगा। अब भी समझ जा, अभी बीज ले आगे के लिये। पर बात नहीं सुनता, क्योंकि अपनी अक्ल को बड़ा मानता है।

इस प्रकार वह मेंढक हंस से कहता है, ''जा जा, झूठे, इससे आगे तो कोई बात ही नहीं होती। इससे आगे तो कोई चीज़ ही नहीं होती।''

हंस कहता है, ''प्यारे! तुझे नहीं मालूम, जहाँ हम रहते हैं, वह बहुत बड़ा स्थान है।'' वह कहता है, ''मैं नहीं मानता।'' वह भी सच्चा है क्योंकि उसे उससे आगे पता ही नहीं था। अत: महाराज कहते हैं, यदि तुम्हें नहीं पता तो जो अनुभवी महापुरुष हैं, गुरू हैं, जो नेत्रों से देखकर बोलते हैं। सन्तों की गवाही सच्ची होती है, वह गवाही सुन ले –

संतन की सुणि साची साखी॥
सो बोलहि जो पेखहि आखी॥ ***पृष्ठ - 894***

जो बात नेत्रों से देखते हैं, वही बोलते हैं, अब नेत्रों से देखा हुआ है, गुरू ग्रन्थ साहिब में, सभी चीज़ें वाहिगुरू द्वारा आई हुई हैं जितनी बाणी है –

जैसी मै आवै खसम की बाणी तैसड़ा करी गिआनु वे लालो॥ ***पृष्ठ - 722***

पर मज़ाल है कि हमारे ऊपर कोई असर हो जाये, वहीं के वहीं रहते हैं। महाराज कहते हैं, परमेश्वर को 24 घंटे याद रख। हम कहते हैं, हमें तो याद ही नहीं रहता। पढ़े लिखे, गुरू घर में आने वाले ऐसा कहते हैं।

सो इस तरह साध संगत जी, सभी महापुरुष हैरान हैं कि इनके हित की बातें बताई हैं पर ये उन पर अमल नहीं करते। यदि बाबा जी कहते हैं, शराब मत पीओ, बाबा जी ने क्या लेना है? वे पैसे जो तुम्हारे शराब न पीने से बचेंगे, वे बाबा जी ने तो नहीं लेने। वह तो बस इतना ही चाहते हैं कि इनका मानस जन्म बेकार जा रहा है, किसी तरह बचा लो, पर इसे पता ही नहीं चलता, इसकी समझ में बात नहीं आती। मानने को तैयार नहीं होता। अन्त में महापुरुषों को यही कहना पड़ता है –

धारना - भाग जिन्हां दे मंदे, दितीआं बांगां तों ना जागदे - 2, 2
बांगां तों ना जागण, दितीआं बांगां तों ना जागदे - 2, 2
भाग जिन्हां दे मंदे, ... - 2

फरीदा कूकेदिआ चांगेदिआ मती देदिआ नित॥ ***पृष्ठ - 1378***

कितना जोरदार लाऊडस्पीकर लगाया हुआ हो, कानों के पर्दे भी फाड़ता हो और हैरानी की बात है कि सभी महात्मा, धर्म ग्रन्थ उपदेश देते हैं –

जो सैतानि वंञाइआ से कित फेरहि चित॥ ***पृष्ठ - 1378***

हैरानी है कि अगर चित्त को फेर ले, वहीं का वहीं रहता है। यह तकलीफ है, समस्या है बहुत बड़ी साध संगत जी! इसीलिये हमारे संकट दूर नहीं होते। महाराज कहते हैं कि यदि क्लेश दूर करने हैं तो वाहिगुरू को याद रखना शुरू कर दे, सभी क्लेशों का अन्त हो जायेगा, एक भी नहीं रहेगा –

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ। कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ पृष्ठ - 262

तन के दुख भी चले जायेंगे और मन के दुख भी खत्म हो जायेंगे। नेत्रों से देखने के बाद भी, अजमा लेने के बाद भी, मनुष्य ऐसा है कि फिर भी भूल जाता है। यहाँ पर आने के बाद पाठ करके ऐसे भयानक रोगों वाले बीमार ठीक हो गये हैं कि जिन्हें डाक्टरों ने जवाब दे दिया था। यदि यह बात कही जाये तो मानने को तैयार नहीं होता, कहता है, झूठ बोलते हैं। परमेश्वर के नाम की महिमा तथा शक्ति स्वंय अज़मा कर देख ली, जब ठीक ठाक हो गये, वहीं पुरानी जगह पर फिर चले गये; कहाँ नाम? कहाँ परमात्मा? कहाँ बाणी? और कहाँ सेवा सभी भूल गये? चाहिये तो यह था कि यदि यह इतनी बहुमूल्य चीज़ है फिर मैंने दुनियाँ से क्या लेना? मैं दिन-रात बन्दगी करूंगा। मुझे तो पता ही नहीं था कि इसके अन्दर इतनी शक्ति है। वह भी सभी कुछ भूल जाता है, सभी कुछ आखों से देखने और कानों से सुनने के बाद भूल जाता है। इसका उपदेश देने वाले तो दिये चले जाते हैं, सुनने वाले, सुनते चले जाते हैं पर यह बात पक्की है कि -

संतहु सागरु पारि उतरीऐ।
जे को बचनु कमावै संतन का सो गुरपरसादी तरीऐ॥ पृष्ठ - 747

वचनों की पालना कर लो, सन्त जो बात कहते हैं समस्त दुनियाँ के लिये सांझी होती है; बात किसी और की करेंगे पर होगी हमारे मतलब की। इसे ही सत्संग कहते हैं। कोई वचन, वार्तालाप, किसी एक के साथ हो रहा है, वह सभी के लिये सांझा होता है। सो प्रार्थना की थी कि -

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे॥ पृष्ठ - 855

उनकी कथा न्यारी क्यों है? क्योंकि वे वाहिगुरू को रुच गये हैं, परवान हो गये हैं। हमारी कथा न्यारी क्यों नहीं है क्योंकि हम परवान नहीं हुए, खोटे सिक्के हैं, हम बाहर फैंके हुए हैं। जो खोटा सिक्का है उसे तो कोई जेब में भी नहीं रखता। कहता है यह तो फालतू में जेब को भी फाड़ता है। वे तो परवान हो चुके हैं, तथा उनकी जो बातें हैं वे बिल्कुल न्यारी होती हैं - हमारे से, संसार से। दूसरी बात यह है कि वे जन्म मरण के चक्र में नहीं पड़ते -

जनम मरण दुहहू महि नाही जन परउपकारी आए।
जीअ दानु दे भगती लाइनि हरि सिउ लैनि मिलाए॥ पृष्ठ - 749

पिछले सत्संग में एक वार्ता चल रही थी। जो प्रेमी उसमें हाज़िर थे, उनमें से शायद किसी को याद हो कि क्या कहा था? शायद मैं इसलिये कहता हूँ कि मैंने अज़मा कर देखा है कि तीन घंटे बोलने के बाद जो मैं पूछता हूँ कि मैंने क्या कहा था तीन घंटे? कभी नीचे को धरती की ओर देखेंगे, कभी इधर तो कभी उधर देखेंगे, कभी ऊपर देखेगें। एक भी आदमी पाँच मिनट नहीं बोल सकता। कोई विरला है साध संगत जी! जो दिल को लगाता है, बाकी तो - इसे गीत गाना समझते हैं।

लोगु जानै इहु गीतु है इहु तउ ब्रहम बीचार॥ पृष्ठ - 335

यह कोई मनोरंजन का साधन नहीं है। यह तो जीव के तरने का साधन है कि इसकी मुक्ति कैसे हो सकती है? एक दो बातें यदि ध्यान में रखकर, पक्की कर ली जायें तो दुखों का, शारीरिक दुखों का, छुटकारा हो जाता है -

बार-बार आकर कहते हैं कि बाबा जी मेरा यह दुख दूर नहीं होता। मैं कहता हूँ कि सेवा करो, नाम जपो, दूर हो जायेगा। फिर वे सौ बहाने बनायेंगे जी, हम तो पढ़े लिखे नहीं हैं, मेरे तो बच्चे अभी बहुत छोटे हैं आदि-आदि।

फिर मैं कह देता हूँ कि अच्छा फिर P.G.I चले जाओ। देख लो, इन दो कामों में से जो आसान लगता है, वह कर लो। एक जगह तो जाना ही है। वह बात समझ में नहीं आती, सभी कुछ समझ कर भी अनजान बना रहता है। मैं हैरान होता हूँ कि यह इनके हित की बात है, ये फिर भी नहीं समझते। सो पता नहीं चलता। जिन्हें ध्यान होता है, वे बात को ध्यान पूर्वक सुनकर, पल्ले बान्ध लेते हैं और अपना जीवन उसी समय बदल लेते हैं और इसीलिये उनकी कथा न्यारी होती है।

एक ऐसे होते हैं, जिन्हें सारी जिन्दगी बताते रहो, नहीं समझ आती, एक ऐसे हैं जो मिनटों में ही समझ जाते हैं।

एक बार कहीं पर एक कथा चल रही थी, बहुत अच्छे महापुरुष थे। कोई आदमी अपने राह पर चला जा रहा था और उसने देखा कि बहुत सारा इकट्ठ है। उसने किसी से पूछा, "क्या बात है, यहाँ पर इतना इकट्ठ क्यों है?" उसने बताया कि यहाँ पर सत्संग हो रहा है। वह प्रेमी बोला कुदरती तू आया है, तू भी दो घड़ी सुन ले क्योंकि सत्संग तो चाहे थोड़ा ही कर लो, उसका भी फल है –

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूँ ते आध।
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ *पृष्ठ - 1377*

मन, चित्त, लगाकर सुन लो। थोड़ा समय किया गया सत्संग भी बेअन्त फल दे देता है। वह भी बैठ गया तथा महात्मा यह बात बता रहे थे कि यह जो मनुष्य है, यह चौरासी लाख यौनियों में से घूमता हुआ आया है – कुत्ता, बिल्ला, घोड़ा बनता हुआ। आगे बताया कि –

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम॥ *पृष्ठ - 12*

जिन कामों में अपना समय लगाकर तू अपनी जिन्दगी बर्बाद करता है, कौड़ी के काम नहीं है क्योंकि वे तेरे साथ नहीं जायेंगे, यदि तू कहता है कि रोटी-पानी तभी मिलता है, वह तो प्यारे तू बीज कर आया हुआ है, तभी मिलता है। जिसने नहीं बोया, वह खाकर दिखाये, कमी पड़ी रहती है, काम ही नहीं चलते, घाटा रहता है, सदा विघ्न पड़े रहते हैं, दुर्घटनाएं होती रहती हैं, फिर कहते हैं काम नहीं चलता, दूध का काम किया था, चला नहीं। भाई, बोया ही नहीं तूने। बीज ले साथ-साथ थोड़ा-थोड़ा, कभी समय आने पर तेरा काम चल पड़ेगा और जो तू खाता पीता है, यह तो तेरे मस्तक में लिखा हुआ है परमात्मा ने। जिन कामों में तू फंसा हुआ है, कभी विचार करके देख कि मैंने चार कोठियाँ बना लीं, मैंने अमुक स्थान पर इतने प्लाट ले लिये, ये तेरे साथ भी जायेंगे? जब तेरी मौत आयेगी, मरेगा तो कमर से बान्ध लेना, जंजीरों से बान्ध लेना कि कोठियाँ मेरे साथ भेजो। कभी जा सकती हैं किसी तरीके से? महाराज कहते हैं इतना बड़ा गाफिल अब कैसे जा रहा है, संसार से जन्म गवाँ कर। हमारी बात मान लें –

अवरि काज तेरै कितै न काम॥ *पृष्ठ - 12*

बेकार, व्यर्थ (Worthless) काम करता है तू –

मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥ *पृष्ठ - 12*

सन्तों की संगत में चला जा और वहाँ जाकर गप्पें मत मारना, नाम जपना –

सरंजामि लागु भवजल तरन कै। जनमु ब्रिथा जात रंगि माइआ कै।। *पृष्ठ - 12*

कमर कस ले, इस काम को करने के लिये क्योंकि जो समय पहले बीत गया, वह तो बीत

गया, जो बाकी बचा है वह माया के प्यार में, बाल बच्चों के प्यार में, कोठियों के मोह में, ज़मीन जायदादों के लालच में बीत जायेगा। इसके पश्चात सन्तों ने कथा का भोग डाल दिया। वह प्रेमी वहीं पर बैठा सोचे जा रहा है कि अरे मन! मैंने तो आज तक ऐसी बात सुनी ही नहीं थी। उस समय दो अवस्थाएं होती हैं - एक तो सुनने की हुआ करती है, सुन लिया पूरी तरह से, मान लिया निश्चय पूर्वक। तुम भी सभी सुन रहे हो, इसका बहुत बड़ा फल होता है। सुनने का भी फल महाराज जी बताते हैं -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ *पृष्ठ - 546*

फिर जो गाते हैं उनका भी आधा-आधा भाग कर दें तो आधा फल तो मिला ही। यदि कई करोड़ है, यदि पचास करोड़ यज्ञ का फल हो तो 25 करोड़ तो सुनने का ही फल हो गया। यदि नहीं भी गाता तो भी ठीक है।

फिर दूसरा होता है, मान लेना, मान लेने का बहुत बड़ा फल मिलता है। सो यह मान कर वहीं बैठा रहा और सभी चले गये। महात्मा भी बैठे हैं। कहने लगे, "प्यारे! तू कैसे बैठा है?"

बोला, "महाराज! आपने तो मेरे नेत्र खोल दिये, मैं तो अन्धा था। मुझे अब आगे का रास्ता बताओ कि मैं क्या करूं? मैं जा रहा था और घोड़ा मेरे पास है। मैंने अब कहीं नहीं जाना, मुझे रास्ता दिखाओ।"

महात्मा बोले, "देख! पूर्ण महापुरुषों के बिना रास्ता नहीं मिला करता।" उन दिनों में जंगलों के अन्दर महापुरुषों के आश्रम हुआ करते थे, एकान्त स्थानों पर, इसलिये आवाजाई भी कम हुआ करती थी और वहाँ पर बन्दगी करने के लिये बड़ा ही शान्त वातावरण होता था।

ऐसी कोई जगह ढूँढ ले, किसी महात्मा के पास चला जा, उपदेश ले ले, उसकी साधना कर, फिर तेरा उद्धार हो जायेगा।

महात्मा को घोड़ा देकर आप चला गया। 14 वर्ष बाद दोबारा फिर उसी जगह से जा रहा था। उस समय बड़ी उच्च अवस्था उसे प्राप्त हो चुकी है, अनुभव खुल गया और महात्मा के रूप में जा रहा है। वहाँ से जब गुज़रा फिर कथा हो रही है। उन दिनों जो लोग थे, उसने उन्हें पहचान लिया कि ये तो मैंने पहले भी देखे हैं, जब मैं यहाँ था। इतना फर्क पड़ गया कि उन दिनों इनकी दाढ़ी काली थी अब सफेद हो गई।

पूछने लगा, "तुम भी गये थे बन्दगी करने?"

"नहीं, हमने कहाँ जाना था?"

"मैंने तो 14 साल पहले कथा सुनी थी।"

"हमने तो सुनी थी, जब महात्मा आये हुए थे फिर भी आते रहे हैं, हर साल आते थे। इनकी कथा बहुत अच्छी लगती थी और हम उमड़-उमड़ कर सुनते हैं, बड़े इकट्ठ करते हैं।"

"तुम सुने ही जाते हो?"

"हाँ, सुनते ही हैं, बड़ा आनन्द आता है।"

"मैंने तो एक दिन ही सुनी थी, मैं तो फिर न जा सका। मैंने सोचा कि जो कुछ यह कहते

हैं, वही काम कर लो; और तुम जो कुछ यह कहते हैं, वही काम करते हो?''

''वह काम हमसे कहाँ होता है? दुनियांदार लोग हैं, काम काजी बन्दे हैं, वह तो होता नहीं, हम सुन लेते हैं, यही ठीक है।''

सो यह प्रश्न है हमारा, सुनते तो हैं, वचनों की साधना नहीं करते। महाराज कहते हैं –

जे को बचनु कमावै संतन का सो गुरपरसादी तरीऐ॥ *पृष्ठ - 747*

यदि वचनों का पालन कर लो तो तर जाओगे। चाहे गनका जैसी पापिन हो, चाहे अजामल जैसा पापी हो, चाहे वाल्मीकि जैसा लुटेरा हो, चाहे कितना भी नीच आदमी क्यों न हो, वह भी तर जायेगा। भाई मन्झ की तुम साखी सुनते हो कि वह एक आम साधारण आदमी, कब्रों को मानने वाला था। नगाहे जाया करता था, सरवरिया के मानने वाला था। जब गुरसिख से गुरू के बारे में सुना, एक दम उसके मन में असर हो गया और गुरू के पास जाकर सेवा करके कितनी बड़ी पदवी प्राप्त की–

मंझ पिआरा गुरू नूँ गुरू मंझ पिआरा॥

कहने लगे, ''मंझ अब तुझे जहाज बना दिया। सारे संसार को पार करा दे। जो इस जहाज में चढ़ जायेगा वह पार हो जायेगा।'' वह एक साधारण आदमी था।

सो पिछली बार हम गुरू अंगद साहिब महाराज के पूर्ण जीवन पर विचार कर रहे थे। आपका पहला नाम भाई लहणा था। आपके पिता का नाम फेरू मल था। आप पहले गुज़रात के पास के रहने वाले थे, धीरे-धीरे व्यापार करते-करते मत्ते की सरां में आ गये। यहाँ पर पहुँच कर हरि के पत्तन में व्यापार शुरू कर लिया। गाँव में व्यापार था, बड़ा भारी व्यापार चलता था, साथ ही साथ साहूकारा भी किया करते थे, पैसे भी दिया करते थे। समय का हेर-फेर ऐसा हुआ कि आपका गाँव पचाधियो और भट्टियों ने लूट लिया। लूटा भी इतनी बुरी तरह से कि कोई भी कोठी न रहने दी, खण्डहर बना दिया। वहाँ से आप चलकर गुरू अंगद साहिब महाराज के जो ससुराल थे, शंघर गाँव थे – खडूर साहिब के पास, वहाँ पर उन्होंने कहा कि अब आप और कहीं न जाओ हमारे पास आ जाओ। व्यापार तो हमने अपना-अपना करना है, तुम्हारा रास्ता और है हमारा और है। आप आ जाओ, हम सहायता करेंगे तथा आपकी पत्नी बच्चों सहित हमारे यहाँ रह जायेगीं। फिर जब आपका काम चल जाये तो ठीक। यहाँ पर आकर भी आपने बहुत बड़ा काम शुरू कर दिया। कुछ ही दिनों में आप बहुत अमीर हो गये। यह भाई फेरू जी देवी जी के भक्त थे, देवी को मानते थे, हर साल इकट्ठ लेकर जाया करते थे, साल में दो बार जाया करते थे, कभी-कभी एक बार भी जाते थे। आपको बहुत सारी भेंटे भी याद थीं, गाने गाते हुए जाया करते थे। जब आप शरीर छोड़ गये तो उसके बाद भाई लहणा जी, गुरू अंगद साहिब जी महाराज का जो पहला नाम था, को मुखिया बना दिया। आपके बोल बहुत ही कमाल के थे। चेहरा-मोहरा देखकर, एक बार जिसने दर्शन कर लिये वह मोहित हो जाता था और कह उठता था कि इतना सुन्दर नौजवान कभी नहीं देखा! फिर रहन-सहन इतना पवित्र था, रेशमी कपड़ों से कम तो वस्त्र नहीं पहनते थे, दस्तार भी रेशम की होती थी; रेशमी ही रेशमी फिर सिलाई भी बड़े कमाल की होती थी तथा वस्त्रों पर अति सुन्दर कढ़ाई की होती थी। पूरे अमीर थे। आपने बहुत सुन्दर घोड़ी रखी हुई थी, लेकिन धार्मिक भाव इतना उच्च था कि जगराते करते और फिर सारी-सारी रात भेंटे गाया करते थे। आज इसी प्रकार गाते हुये, अमृत बेला में आपका मन किया कि स्नान करें। गर्मी बहुत थी, वहाँ से उठकर स्नान करने चले गये। उन दिनों स्नान करने के लिये छोटी-छोटी तलैया हुआ करती थीं। या तो उन तलैया में या फिर चलते हुए पानी में स्नान किया करते थे। सो आपने स्नान किया। वहाँ पर एक गुरू का सिख, भाई

जोध जो परवान अवस्था का गुरसिख था, वह स्नान कर रहा था। स्नान करने के बाद उसने बैठ कर जपुजी साहिब का पाठ किया। इन्होंने भी जल्दी स्नान किया और जब कानों में आवाज़ पड़ी तो समझ में आने लग गई –

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ पृष्ठ - 2

फिर आवाज़ आई –

आपे बीजि आपे ही खाहु॥ पृष्ठ - 4

फिर आगे की आवाज़ें आती रहीं, बेअन्तपने की आई –

थिति वारु न जोगी जाणै रुति माहु ना कोई।
जा करता सिरठी कउ साजे आपे जाणै सोई॥ पृष्ठ - 4

रूचिकर तो लगीं पर पूरी तरह से समझ में न आईं। उसके पश्चात भाई जोध जी ने आसा जी की वार शुरू कर दी – बहुत ही रस के साथ आसा जी की वार पढ़ते हैं और पहले समझ में आया –

बलिहारी गुर आपणे दिउहाड़ी सदवार।
जिनि माणस ते देवते कीए करत न लागी वार॥ पृष्ठ - 463

उसके बाद समझ में आया कि –

नानक गुरू न चेतनी मनि आपणै सुचेत।। पृष्ठ - 463

क्योंकि बीच में श्लोक गुरू दूसरे पातशाह का है गुरू अंगद देव जी का, पहले पातशाह का एक अगला श्लोक एक श्लोक छोड़कर था। कहते हैं मन में तो सचेत बने फिरते हैं लेकिन गुरू को याद नहीं करते, गुरू धारण ही नहीं किया और उनकी अवस्था इस प्रकार की होती है जैसे –

छुटे तिल बूआड़ जिउ सुंञे अंदरि खेत॥ पृष्ठ - 463

जैसे बुआड़ तिल होता है उसके अन्दर राख होती है। उसे किसान काटता नहीं है क्योंकि काटने से उसे डर रहता है कि कहीं उसके ऊपर राख न गिर जाये, वह उसे वैसे ही छोड़ देता है। पशु चराने वाले चरवाहे फिर उसे तोड़ते हैं, उसके अन्दर राख होती है, पर बाहर से देखने में सुन्दर लगता है –

खेतै अंदरि छुटिआ कहु नानक सउ नाह।
फलीअहि फुलीअहि बपुड़े भी तन विचि सुआह॥ पृष्ठ - 463

फला-फूला हुआ है, बाल बच्चेदार है, कारोबार काफी बड़ा है, बेअन्त धन है, कोठियाँ बनाई हुई हैं, पर तन में क्या है? तन राख से भरा हुआ है जो गुरू के बिना है। आपने बड़े गौर से सुना। उसके बाद समझ में आया –

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ॥ पृष्ठ - 463

सो, इसकी व्याख्या की कि वाहिगुरू ने सृष्टि कैसे साजी? एक से दो कैसे हुआ? फिर अलग कैसे नज़र आता है? इकट्ठा कैसे नज़र आता है? पिछले दीवान में इस बात की व्याख्या की गई थी। अब मैं इससे आगे भी बात करता हूँ। आपने दूसरी पौड़ी तथा श्लोक सुना –

नानक जीअ उपाइ कै लिखि नावै धरमु बहालिआ।
ओथै सचे ही सचि निबड़ै चुणि वखि कढे जजमालिआ।
थाउ न पाइनि कूड़िआर मुह काल्है दोजकि चालिआ।
तेरै नाइ रते से जिणि गए ....॥ पृष्ठ - 463

जो नाम में लीन या मस्त हुए, वे तो जीत गये फिर हारे कौन?

.............हारि गए सि ठगण वालिआ। लिखि नावै धरमु बहालिआ॥ *पृष्ठ - 463*

पहले आप सुना तो करते थे। शास्त्रों में ये बातें आम आया करती हैं लेकिन कभी इतना ध्यान नहीं दिया था। केवल इतना ध्यान रखते थे कि देवी के स्थान पर जाकर भेंटे गानी हैं और भेंट चढ़ानी है और जो वहाँ की मर्यादा थी, वह पूरी कर देनी है। न तो गुरू का पता था, न परमेश्वर का पता था। उसके पश्चात जब तीसरा श्लोक और तीसरी पौड़ी पढ़ी, उस समय आपके कानों में इस प्रकार की आवाज़ आई–

धारना - जिन्दे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई ना बणे - 2, 2
फेर तेरा जी, कोई ना बणे - 2, 2
जिन्दे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी.....-2, 2

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ।
वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ।
अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ।
थाउ न होवी पउदीई हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ।
मनि अंधै जनमु गवाइआ॥ *पृष्ठ - 464*

साधारण बोली में सारी बात समझ ली कि दरगाह की बात हो रही है। साधना सम्पन्न हृदय में से बाणी के बाण निकल रहे थे, हृदय को बीन्धते चले जा रहे हैं, एक-एक अक्षर मन के अन्दर समाता जा रहा है। सो आप सोच में पड़ गये कि मनुष्य इस हाल में संसार से जाता है –

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ॥ *पृष्ठ - 464*

शरीर मर जाता है, इसके अन्दर से फिर भउर निकल कर आस-पास झांकता है कि मैं कहाँ जाऊँ? न तो अब तक गुरू ही बनाया, न ही गुरू का हुक्म माना; कहाँ जायें? फिर यमदूत आते हैं –

कहते हैं, ''चल।''

कहता है, ''नहीं, मैंने नहीं जाना।''

टांगे अड़ाता है। महाराज कहते हैं जैसे पशु के गले में रस्से डालते हैं –

वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ॥ *पृष्ठ - 464*

फिर रस्से, जंजीरें डाल देते हैं जंजीरें डाल कर खींच लेते हैं। कहते हैं, ''अब बता, कोई है तेरा हमदर्दी, जिसे तूने अपना बनाया है?'' महापुरुष इस प्रकार पढ़ा करते हैं –

धारना - दरगाह विच ओ, संगल पैणगे - 2, 2
उथे कौण छडाउ तेरा दरदी - 2, 2
पिआरिआ, संगल पैणगे,
दरगाह विच ओ, संगल पैणगे .... - 2

वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ॥ *पृष्ठ - 464*

जैसे पशु के गले में रस्से डाल देते हैं, इस तरह यमदूत भी गले में जन्जीरें डाल देते हैं। राजाओं, महाराजाओं, अफसरों को भी जन्जीरें डाल देते हैं। पढ़े लिखे, गरीबों तथा परमात्मा से विमुख हुए को भी डाल देते हैं। जिनका कोई रखवाला होता है, उनके तो पास भी नहीं फटकते, उनका तो

आदर मान होता है –

साध संगि धरम राइ करे सेवा॥ पृष्ठ – 271

जिसने सन्तों की संगत कर ली, उसकी तो धर्मराज सेवा करता है। उन्हें तो कहता है, ''आओ जी, बैठो जी, आपने तो मेरा भवन पवित्र कर दिया, आपने मेरे घर चरण रखे।''

बाबा साहिब सिंघ जी ऊना साहिब वाले आपके लांगरी भाई भाग सिंघ लंगर की बहुत सेवा किया करते थे क्योंकि बाबा जी का जो लंगर था, बहुत बड़ा था, 13-14 हज़ार आदमी तो हर समय साथ रहा करता था। कभी-कभी तो 30-30 हज़ार हो जाया करते थे। इस लंगर में भाग सिंघ जी की माता भी दिन रात एक करके सेवा किया करती थी। एक दिन अचानक बाबा जी के पास आकर सिंघ कहने लगे, ''महाराज! भाग सिंघ जी की माता पूरी हो गईं।'' बाबा जी अर्न्तध्यान हुए और बोले, ''उनके शरीर का कोई दाह संस्कार मत करना उसने जिन्दा हो जाना है। इन्तज़ार करो।''

आखिर थोड़ा समय बीता उसके पश्चात माता जी जीवित हो गईं। सभी उन्हें लेकर बाबा जी के पास आ गये।

बाबा जी कहते हैं, ''माता! सुनाओ कैसा हाल रहा? कहाँ-कहाँ जाकर आई हो?''

वह बोली, ''बाबा जी, पहले तो मुझे धर्मराज के पास ले गये। मुझे कहा कुछ नहीं। guide (मार्ग दर्शक) आया मैं उसके साथ चली गई। वहाँ धर्मराज ने चित्र गुप्तों से कहा कि इसका खाता निकालो। जब खाता खोला गया तो उसमें मेरा नाम ही नहीं निकला। उस समय धर्मराज बहुत घबराया कि यह तो गुरू नानक पातशाह के घर जाने वाली रूह थी, हमारे यहाँ कैसे आ गई? उसने यमदूतों को डांटना शुरू कर दिया। कहने लगा, तुम इसे यहाँ पर क्यों ले आए? अमुक स्त्री को लेकर आना था, इतनी बड़ी गलती की कि गुरू के सिख को ले आए। उस समय मैंने कहा कि मुझे सन्त मण्डल के दर्शन तो करा दो, जहाँ साधु रहते हैं। उस समय वे मुझे दरगाह में ले गये। अपने बहुत प्यारे जैसे महापुरुष होते हैं, ऐसे ही वहाँ बैठे थे। उन्होंने कहा माई! अभी तो तेरा समय नहीं आया सात साल और रहते हैं। कौन लेकर आया है तुझे? फिर यमदूतों ने माफी मांगी कि उनसे गलती हो गई।

बाबा जी बोले, ''देखो प्रेमियो! गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी में कोई किन्तु परन्तु करने की गुजांयश नहीं है और आप सभी ने गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बाणी श्रवण की है, वह क्या कहती है?'' किसी के दिमाग में बात न बैठी कि बाबा जी इस तरफ इशारा कर रहे हैं? और जब प्रार्थना की कि महाराज, आप ही कृपा करके बताएं, आपका क्या भाव है? तब आपने इस प्रकार स्पष्ट किया –

धारना – धर्मराजा वी करेगा सेवा, साधूआं दे संगीआं दी – 2, 2
मेरे प्यारे, साधूआं दे संगीआं दी – 2, 2
धर्मराजा वी करेगा सेवा, ...-2

साध संगि धरम राइ करे सेवा। साध कै संगि सोभा सुरदेवा।। पृष्ठ – 271

सत्संग की फोटो दरगाह में जा रही है जैसे फिल्म में आ रही है। वाहिगुरू का ऐसा प्रबन्ध है, दरगाह में बनी बनाई फोटो चली जाती है। यमदूतों ने पहचान लेना है कि ये तो सत्संग में बैठने वाले आदमियों की है। इनसे डरो क्योंकि हुक्म नहीं है उन्हें –

जह साधू गोबिन्द भजनु कीरतनु नानक नीत।
णा हउ णा तूँ णह छुटहि निकटि न जाईअहु दूत॥ पृष्ठ – 256

देखना, कहीं भूल कर भी मत चले जाना फिर यदि चले गये तो मैं भी तुम्हारे साथ ही बन्ध जाऊँगा।

बाबा जी कहने लगे, ''देखो, कितनी बड़ी बात है साध संगत जी! माता आखों से जो देखकर आई है, वही हाल बता रही है। बाकी जो है वे सभी धर्मराज के यहाँ जाते हैं-

धरमराइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि।
दूजै भाइ दुसटु आतमा ओहु तेरी सरकार॥ पृष्ठ - 38

जो गुरू का कहना ही नहीं मानते, शराबों, कबाबों गलत कामों में पड़े हुए हैं, झूठे केस बनाते हैं, झूठी गवाहियाँ देते हैं, फिर ये सारे तेरे पास आएंगे और तू इनके साथ न्याय करना। फिर वह नरक भर देता है। सो इस प्रकार महाराज जी कहते हैं -

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ।
वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ॥ पृष्ठ - 464

इन्हें तो रस्से और जन्जीरों से बान्ध-बान्ध कर ले जाते हैं। दूसरे कैसे जाते हैं। भिंडरा वाले महापुरुष बाबा गुरबचन सिंघ जी गुरदासपुर गये हुए थे। वहाँ पर आपका एक सिख सरदारा सिंघ, वह बीमार हो गया। बाबा जी को जब पता चला कि ज्यादा ही बीमार है तो कहने लगे, ''सरदारा सिंघ क्या हाल है?''

''महाराज! मैं आपका ही इन्तज़ार कर रहा था। अब अन्तिम समय आ गया।''

''कोई बात बता। कोई अनुभव देखा हो?''

''महाराज! मैं तो बहुत धन्यवादी हूँ कि गुरू की शरण में आ गया और अब पाँच सिंघ लेने के लिये आए हैं सिर्फ आपका इन्तज़ार था।'' फतह बुलाई, उसके पश्चात पूरा हो गया। एक सिंघ और था वह भी बीमार हो गया। बाबा जी उसके पास भी गये जब अन्त समय आया। कहते हैं, ''कैसे हो?''

कहता है, ''महापुरुष आ गये - सन्त महाराज बाबा अतर सिंघ जी, उन्होंने आकर मुझे अभी कह दिया कि तैयारी कर ले सिंघा! तुझे हम लेने आए हैं।''

जो बन्दगी करते हैं, उन्हें तो स्वंय गुरू नानक महाराज लेने आते हैं। थोड़ी सी ही सेवा करके देख लो, गुरू नानक पातशाह कभी नहीं भूलते।

जिन्होंने गुरू नानक पातशाह की इस जीवन में सेवा की है, जिन्होंने सच्चे दिल से उन्हें प्यार किया है, उनका रक्षक गुरू नानक स्वंय हो जाता है, यहाँ पर भी रक्षा करता है और दरगाह में भी उनकी रक्षा करता है। इस सम्बन्ध में एक सच्ची घटना का उल्लेख करता हूँ, जिससे पता चल जाये कि किस तरह से गुरू अपने सिखों की रक्षा करता है।

उत्तर प्रदेश के तराई क्षेत्र में मैंने 1948 में ज़मीन खरीदी। जिसका धीरे-धीरे क्षेत्र 100 एकड़ हो गया। 1965 में सन्त महाराज जी ने हुक्म दिया कि तू सिविल सैकटैरियेट की नौकरी छोड़कर यू. पी. में जाकर अपनी ज़मीन की देखभाल कर अन्यथा यह जमीन भाई दबा लेंगे और तुझे नहीं मिलेगी। मेरे सामने दोनों पक्ष थे। एक था कि मेरी सर्विस, पैनशन लायक हो गई थी, इसका मतलब था कि मैं थोड़े दिन सर्विस और कर लेता और अपनी पैनशन के कागज़ पूरे करवा कर छुट्टी मांगता। दूसरा था कि महापुरुषों का हुक्म जो अज़ली (दैवी) होता है, जिसे किसी तरह भी टाला नहीं जा सकता, को बिना

किसी सोच विचार के मान लेना। सन्त महाराज जी के साथ मेरा बहुत प्यार था तथा मैं उन्हें परमेश्वर रूप जानता था। कुछ भी विचार न करते हुए, मैं अपने फार्म पर चला गया, खेती आरम्भ कर दी, ट्रैक्टर खरीद लिया, टयूबवैल लगा लिये और भी खेती का सामान खरीद लिया। मैंने पहले साल ही मक्की का फाऊन्डेशन बीज तैयार करके मक्की बो दी। इसलिये मेरा पन्त नगर विश्वविद्यालय में आना जाना काफी बढ़ गया। उन्हीं दिनों में कर्नल लाल सिंघ जी, जो पटियाला फौज में थे, मेरे फार्म के साथ ही बहुत बड़ा फार्म उन्होंने खरीद लिया। इस फार्म का नाम बांरादरी फार्म था तथा तराई के सभी फार्मों में से बीज फार्म के लिये प्रसिद्ध था। इसकी 683 एकड़ ज़मीन थी। कर्नल लाल सिंघ जी बहुत ही सुलझे हुये व्यक्ति थे। गुरू नानक पातशाह के साथ उनका अथाह प्यार था। वहाँ पर गुरू नानक पातशाह का प्रसिद्ध स्थान नानक मत्ता था, जहाँ पर थोड़े समय के पश्चात कर्नल लाल सिंघ जी गुरूद्वारा कमेटी के प्रधान चुने गये। मैं भी जब यू. पी. में अपने फार्म पर गया तो 1969 से वहाँ हर महीने पूर्णमाशी वाले दिन जाकर कीर्तन किया करता था। वहाँ पर बहुत से किसान इकट्ठे हुआ करते थे। यू. पी. में किसानों की नई आबादी तराई के इलाके में बढ़ रही थी जिनमें से विशेष रूप से पाकिस्तान से बेघर हुए किसान, अपनी-अपनी ज़मीनें आबाद कर रहे थे। इन किसानों में 99% सिख, किसान थे। पर इनके लिये कोई भी संगत वहाँ पर नहीं थी। केवल नानक मत्ता ही सैन्ट्रल बिन्दु था, जहाँ महीने के पश्चात ये सारे किसान इकट्ठे हुआ करते थे। आम तौर पर यह देखा गया था कि बहुत छोटे किसान Cattle Lifting (पशु चोरी) के निन्दनीय धन्धे में लिप्त थे और शराबों के ड्रम भर-भर कर निकाला करते थे और गिलास भर-भर कर पीया करते थे। इनमें से कुछ Hitman भी थे जो पैसे लेकर आदमी मार दिया करते थे, इन्हीं कारणों के फलस्वरूप सिंघों का मान सम्मान बहुत ही धुंधला हो गया था। सिघों को क्राइम (अपराधी) पेशा कौम समझने लग गये थे। पण्डित जवाहर लाल नेहरू भारत के प्रधान मन्त्री रूद्र पुर कानफ्रैंस में आए। उन्हें सिख क्राइम पेशा कौम के बारे में वहाँ के स्थानीय अफसरों ने बताया, इस पर काफी शोर शराबा हुआ। पण्डित जवाहर लाल तक यह बात पहुँचाई गई, उसने यह गलती महसूस की। पर हमें पता था कि वास्तव में बात क्या है? गुरू नानक पातशाह के पाँच सौ साला दिवस को बहुत धूम-धाम से मनाया गया। बिलासपुर, जिला राम पुर में 101 अखण्ड पाठ किये। शिरोमणी कमेटी को प्रार्थना करके एक बहुत बढ़िया रागी (ढाडी) जत्था यू. पी. में प्रचार करने के लिये लगाया। वे लोग अखण्ड पाठ की डयूटियां भी दिया करते थे। उनके जत्थेदार से 101वें अखण्ड में एक महान भूल हो गई। वह यह थी कि गुरूद्वारा साहिब की दुकानों में एक जूतों की दुकान थी। उनके सात बच्चे थे, छोटा बच्चा चार साल का था। दुकान वाले सरदार साहिब के घर से जो बीबी थी, वह बहुत सुन्दर अखण्ड पाठ किया करती थी, पर पंजाब से आये हुए जत्थे के मुखिया के मन में गलत विचार पैदा हो गया तथा वह पाठ के भोग के समय बीबी को लेकर गुमनाम स्थान पर चला गया। इस बात का किसानों पर बहुत कुप्रभाव पड़ा तथा सिख चरित्र की खुल्लम खुल्ला निन्दा होने लग गई। सिघों के लिये यह बात सहन करनी बहुत कठिन हो रही थी क्योंकि घटना सच्ची थी, उसके बारे में निन्दनीय विचारों को कैसे परिवर्तित किया जाए? पंथक हितैषियों का बहुत भारी इकट्ठ हुआ, जिसमें फैसला किया गया कि तराई के इलाके में गुरू नानक सिद्धान्त का प्रचार करके, इन लोगों को बुरे कामों से हटाया जाये। पुलिस इन्हें बाजारों में से केशों सहित पकड़ कर, दाढ़ियों से पकड़कर ले जाया करती थी। उस मीटिंग में मैं भी बैठा था पर मैंने देखा कि विचार केवल विचार ही हैं, कोई ठोस कदम नहीं उठाया जाना था क्योंकि सभी नये आबादकार किसान थे। किसान बहुत व्यस्त थे क्योंकि उनकी आर्थिक दशा बहुत ही निम्न स्तर की थी, उन्हें साहूकारों से पैसे उधार लेने पड़ते थे।

प्रचार का काम शुरू हो गया पर तीन प्रोग्रामों के पश्चात एक भी आदमी साथ न रहा, उसके पश्चात मैंने गुरू महाराज जी के पास प्रार्थना की कि मेरे पास न कोई साजी है, न कोई साधन है। आप ही कृपा करो। उस समय कर्नल लाल सिंघ जी परोपकारी कामों में व्यस्त थे। लड़कियों का स्कूल चलाना, रीठा साहिब गुरूद्वारा बनाने के लिये एक बीघा भी जमीन नहीं थी। वह सारा स्थान पहाड़ियों से घिरा हुआ था। यात्रियों के रहने के लिये कोई स्थान नहीं था। कर्नल लाल सिंघ जी वहाँ के प्रधान नहीं थे परन्तु उन्होंने 30 बीघे जमीन मोल लेकर गुरूद्वारा साहिब के नाम पर करवा दी। गुरूद्वारे के लिये ज़मीन निकलवाते-निकलवाते उन्हें अलमोड़े का भी पता चला कि अलमोड़ा में किसी समय गुरूद्वारे की काफी ज़मीन थी और वह स्थान बहुत प्रसिद्ध था, पर वहाँ के पुजारियों ने गुरूद्वारा साहिब की सारी ज़मीन बेच दी तथा लोगों ने वह ज़मीन मोल खरीद कर घर बना लिये। केवल एक चबूतरा बचा था, वहाँ पर अलमोड़ा शहर की म्यूनिसिपल कमेटी कोई याद कायम कर रही थी। गुरूद्वारा सहिब का नामों निशां ही मिट जाना था। कर्नल लाल सिंघ जी ने वह ज़मीन भी ले ली और घर भी मोल ले लिये और धीरे-धीरे वहाँ पर बहुत बड़ा स्थान बनवा दिया।

इसी तरह उन्होंने बागेश्वर में गुरू नानक पातशाह के गुरूद्वारा का पता लगाया, वहाँ भी निशान निकलवाकर स्थान बनवाया। इस प्रकार वे फार्म के काम करते हुये भी गुरू घर की ओर अधिक ध्यान दिया करते थे और हर समय गुरू नानक पातशाह के ध्यान में रहा करते थे। सांसारिक पक्ष से वे बहुत ही कामयाब किसान थे, सुलझे हुए गृहस्थी थे। उनके दो पुत्र हैं - बड़ा हरमिन्दर सिंघ (Air Commodore) और छोटा लड़का राजेन्द्र सिंघ ब्रिगेडियर था। एक दिन मैंने कर्नल लाल सिंघ जी के साथ बात चीत की कि हम तो सिख आबादकारों में ही उलझ गये, यू. पी. में कई करोड़ नानक पन्थी हैं, उनके अन्दर हम कोई भी रूसवाई (पहुँच) नहीं कर सके। जाटों में शिरोमणी कमेटी ने चाहे दो मिशन कायम किये थे, पर वह भी धीरे-धीरे खत्म हो रहे थे। यू. पी. में सारे के सारे जाटव नानक पन्थी थे, जिनकी संख्या करोड़ से भी अधिक होगी। राजस्थान में राणा प्रताप के परिवार से सम्बन्धित राजपूत तराई में आकर आबाद हो गये थे, इन्हें थार कहते थे। वह नानक मत्ते को बहुत श्रद्धा पूर्वक मानते थे पर उनमें और कोई प्रचार नहीं था। ऐसे गुरू नानक पातशाह के एक सिख जिसे लाल गुरू कहा जाता है, उसे सारे भंगी गुरू कहते थे। वे नानक मत्ते में आकर अपने ढंग से पूजा किया करते थे। कर्नल लाल सिंघ जी को मैंने कहा कि हम इन लोगों में प्रचार करें। इसके लिये मैं 40 बोरियां धान की अपने फार्म में से ले आया करूंगा और 150 धान की बोरियां तुम अपने फार्म में से निकालना। हर बस्ती में हम यज्ञ करना शुरू कर देंगे और इन लोगों को दसों गुरू साहिबान की जानकारी देकर, छोटे-छोटे मन्दिर बनवा देंगे। कर्नल साहिब मेरे साथ पूरी तरह सहमत हो गये।

दूसरे दिन ही मुझे पता चला कि आपको दिल का दौरा पड़ गया है। उनके अपने बच्चे, भाई, मित्र प्रसिद्ध डाक्टर थे, 6 डाक्टर आपकी सेवा में हाज़िर थे, उन्हें दिल्ली ले गये पर वहाँ वे काफी समय जीवित न रह सके। बारांदरी उनके मृतक शरीर को लाया गया। जब संस्कार का समय आया उस समय उनके बच्चों ने कहा, "अंकल जी! आप इनका अन्तिम संस्कार अपनी देख रेख में करवाओ।" मैंने उन्हें पूछा कि कर्नल साहिब का अन्त समय कैसे आया, यह विस्तार से बताओ।

उन्होंने बताया कि जब हम दिल्ली हस्पताल में लेकर गये थे तो आपको हर रोज़ याद किया करते थे। हमने सन्देशा भी भेजा था, शायद वह आपको नहीं मिला। उनके छोटे लड़के जोगिन्द्र सिंघ ने बताया कि हम सभी पिता जी के पास बैड के पास बैठे थे, आपस में बात-चीत चल रही थी, बड़े भ्राता हरमिन्दर सिंघ जी, पिता जी के साथ बात चीत कर रहे थे, अचानक चुप हो गये। थोड़ी देर इन्तज़ार

करने के पश्चात हमने पूछा, ''आप अचानक चुप क्यों हो गये?'' पिता जी कहने लगे, मुझे नहीं पता, मेरे अन्दर इतना मौन और शान्ति बढ़ रही है जो मैंने सारी जिन्दगी में कभी नहीं देखी और साथ ही यह भी कहा कि मुझे कोई न बुलाये। थोड़ा समय इस तरह बीता, हमारे चाचा जी, जो कामयाब डाक्टर थे, उन्होंने नब्ज़ पकड़ कर देखी, पिता जी, अचानक बोल उठे, ''देखो, गुरू नानक पातशाह आ रहे हैं।'' उनके मुख से निकला - ''गुरू नानक पातशाह की जय, गुरू अंगद देव की जय और गुरू ग्रन्थ साहिब की जय तक पहुँचने'' पर हम सभी की ओर देख कर, हाथ जोड़े और कहा, ''तुम्हारा मेरा सम्बन्ध खत्म हो गया यह देखो। गुरू नानक पातशाह मेरी ओर कितने प्यार से देख रहे हैं, मैं इनके साथ जा रहा हूँ। मैं यह वचन सुनकर बहुत गहरा चला गया कि गुरू महाराज अपने प्यारे गुरसिखों की किस तरह से अन्तिम समय में रक्षा करते हैं, अपने लोक में कितने प्यार के साथ ले जाते हैं।''

कर्नल साहिब ने वाहिगुरू जी का खालसा, वाहिगुरू जी की फतह बुलाई। दायां हाथ दायीं ओर, बायां हाथ बांई ओर रख लिया और आराम से नेत्र बन्द कर लिये। मैंने विचार किया कि कर्नल साहिब ने सेवा की गुरुद्वारों की तथा रक्षा की थी, पर भजन बन्दगी का उन्हें कोई बहुत ध्यान नहीं था।

हम एक बार मुरादाबाद सन्त महाराज राड़े साहिब वालों के पास गये। कर्नल साहिब ने नानक मत्ते कीर्तन करने की प्रार्थना की। महाराज जी ने परवानगी दे दी। जब सन्त महाराज जी उठ कर चले, कर्नल लाल सिंघ जी महाराज जी की ओर देख रहे थे, उनकी नज़रें एक अति सुन्दर सिमरनी पर केन्द्रित थी। महाराज जी ने वह कीमती सिमरनी उठाई और कर्नल साहिब की ओर फैंक कर मारी और इन्होंने दोनों हाथों में दबा कर, मस्तक से लगा ली। आपने कहा, ''प्यारे! सिमरना तो ले लिया इससे करना क्या है, यह तो पूछा नहीं?'' कर्नल साहिब सिमरनी लेकर ही खुश थे। उनके चित्त में यह ध्यान ही नहीं था कि मैं नाम जपने की युक्ति पूछ लूँ। केवल सेवा करने का ही उन्हें इतना मान प्राप्त हुआ कि सतगुरू नानक पातशाह स्वंय आकर अपनी दरगाह में ले गये। गुरू महाराज का फ़रमान है -

विचि दुनीआ सेव करमाईऐ।
ता दरगह बैसणु पाईऐ। कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ *पृष्ठ - 26*

जो गुरू से विमुख होकर मांस शराब, अण्डे खाते हैं, निन्दा, चुगली, वैर-विरोध, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, हंस, हेतु, कोप की आग की नदियों में जलते हैं, उन्हें अन्त समय आदर मान नहीं मिलता। यमदूत मारते पीटते जीव को बान्ध लेते हैं। गुरू नानक महाराज जी फ़रमान करते हैं -

वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ॥ *पृष्ठ - 464*

गले में जन्जीर डाल कर जैसे पशुओं को घसीटा जाता है, इस तरह से गले में जन्जीरें डालते हैं। माता पिता की वहाँ पर पहुँच नहीं हुआ करती। न ही कोई पुत्र, पुत्री मदद करती हैं। वहाँ तो अपने शुभ कर्म ही सहायता करते हैं। महाराज फ़रमान करते हैं कि जब जीव को ले जाते हैं, वहाँ पर उसकी करनी और किरत पर विचार किया जाता है। इसके अच्छे बुरे कर्मों का debit, Credit, Balance निकाला जाता है। उस समय जीव अपने अवगुणों को किसी तरह भी छिपा नहीं सकता क्योंकि वह नंगा होता है। गुरू महाराज जी का फ़रमान है -

कपड़ु रूपु सुहावणा छडि दुनीआ अंदरि जावणा।
मंदा चंगा आपणा आपे ही कीता पावणा।
हुकम कीए मनि भावदे राहि भीड़ै अगै जावणा।
नंगा दोजकि चालिआ ता दिसै खरा डरावणा।

करि अउगण पछोतावणा॥ पृष्ठ - 470

सो इस प्रकार जीव को ले जाकर उसके द्वारा किये गये कर्मों के बारे में जानकारी दी जाती है जैसा कि फ़रमान है -

अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ॥ पृष्ठ - 464

गुरबाणी का सिद्धान्त है कि जब हम जीव मार कर खाते हैं तो लेखा देते समय ऐसी यौनियों में भेजा जाता है, जहाँ पर वे जीव हमें काट-काट कर खायेंगे और अपना लेखा मागेंगे -

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु।
हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु॥ पृष्ठ - 1374

पहले तो शिकार करने के लिये पन्छी, पशु मारो, फिर लेखा देते समय अपना गला कटवाओ। क्या रखा है इन बातों में? परमात्मा ने मनुष्य को सभी यौनियों का सरदार बनाया है। इसके हाथों में भलाई का, इन्साफ का तराज़ू आता है, यह सभी यौनियों का रक्षक है, फूलों फलों के लिये वृक्षों की रक्षा इसी ने करनी है, जीव जन्तुओं की रक्षा भी इसने करनी है क्योंकि यह बादशाह जो हुआ। जैसा कि फ़रमान है -

अवर जोनि तेरी पनिहारी। इसु धरती महि तेरी सिकदारी।। पृष्ठ - 374

वाहिगुरू जी ने मीठा शहद पैदा करने के लिये बेअन्त मक्खियां बनाई हैं जो अकेले-अकेले फूल से शहद तैयार करती हैं। स्वास्थ्य वर्द्धक दूध के लिये गाय, भैसें बनाईं हैं, वे काट-काट कर खाने के लिये नहीं है। बेअन्त दवाईयां स्वास्थ्य के लिये विटामिन बनाये हैं। दूध, घी, मक्खन फूल आदि हैं, प्यारे! जैसा बोओगे वैसा ही काटना पड़ेगा -

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु॥ पृष्ठ - 134

वहाँ पर हिसाब-किताब देना तभी आसान होता है, यदि दिल में सच्चाई हो, किसी से धोखा न किया हो, अपने जत-सत को कायम रखा हो -

कबीर लेखा देना सुहेला जउ दिल सूची होइ॥
उसु साचे दीबान महि पला न पकरै कोइ॥ पृष्ठ - 1375

और यह भी फ़रमान है -

रे रे दरगह कहै न कोऊ। आउ बैठु आदरु सुभ देऊ॥ पृष्ठ - 252

धर्मराज की कचहरी ऐसी कचहरी है, जहाँ पर मनुष्य का हाथ पहुँचता ही नहीं है, वहाँ पर तो सच का तराज़ू लगा होता है। कर्मों के हिसाब के साथ निपटारा होना है -

ओथै हथु न अपड़ै कूक न सुणीऐ पुकार।
ओथै सतिगुरु बेली होवै कढि लए अंतीवार॥ पृष्ठ - 1281

इसलिये गुरू महाराज जी कहते हैं कि वहाँ पर जीव को दरगाह में ले जाकर लेखे पत्ते समझाये जाते हैं जैसे कि-

अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ॥ पृष्ठ - 464

उसके बाद उसे धकेल दिया जाता है, कहा जाता है धकेले जाने के बाद? गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि परमेश्वर के हुक्म अनुसार 84 नरक बने हुए हैं, जिनमें से 18 बड़े नरक हैं, जिनके अन्दर मनुष्यों को उनकी किरदार के मुताबिक धकेल दिया जाता है -

जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे॥ पृष्ठ - 1073

जीव को अपने किये हुए कर्मों के भोग भोगने के लिये निखिद्ध यौनियों में आना पड़ता है। कभी वह साँप बनता है। कभी घोड़ा बनता है, कभी हाथी बनता है, जब जीव संसार में मानस शरीर धारण करता है, उस समय यह न तो किसी साधु महापुरुष की बात मानता है न ही किसी महापुरुष की बाणी पर विश्वास करता है। अपनी मनमर्ज़ी करता है। जब हिसाब किताब होता है, अच्छा स्थान नहीं मिलता, उस समय रो-रो कर पुकारता है कि मुझे एक मौका और दे दो, मैं फिर मनुष्य बनूं और अच्छे कर्म करूं -

थाउ न होवी पाउदीई हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ।। पृष्ठ - 464

यह बाणी, गुरसिख के मुखारविन्द से भाई लहणा जी के पास बैठे सुन रहे थे और अन्दर ही अन्दर विचार कर रहे थे कि हम तो देवी के दर्शनों को जाते हैं, इन बातों की तरफ तो कभी ध्यान ही नहीं दिया। गुरसिख आसा जी की वार का काफी रस पूर्ण पाठ कर रहा था। भाई लहणा जी और पास होकर सुनने लग गये कि सारी कुदरत उसके हुक्म में चल रही है, किसी में ताकत नहीं कि वह अपनी मर्ज़ी से, उस हुक्म के नियम में से बाहर आ जाये। सारे ब्रह्मण्ड, पवन, पानी, अग्नि, देवता, देवियाँ, सूर्य, चाँद, तारे सभी वाहिगुरू जी के हुक्म में चलते हैं। वाहिगुरू जी स्वंय सभी के मालिक हैं, वे सभी उसके हुक्म के अधीन हैं इस तरह पढ़ लो -

धारना - पउण पाणी देवते सारे, चलदे ने भै विच जी - 2, 2
मेरे प्यारे, चलदे ने भै विच जी - 2, 2
पउण पाणी देवते सारे .... -2

भै विचि पवणु वहै सदवाउ। भै विचि चलहि लख दरीआउ।
भै विचि अगनि कढै वेगारि। भै विचि धरती दबी भारि।
भै विचि इंदु फिरै सिर भारि। भै विचि राजा धरमु दुआरु।
भै विचि सूरजु भै विचि चंदु। कोह करोड़ी चलत न अंतु।
भै विचि सिध बुध सुर नाथ। भै विचि आडाणे आकास।
भै विचि जोध महाबल सूर। भै विचि आवहि जावहि पूर।
सगलिआ भउ लिखिआ सिरि लेखु। नानक निरभउ निरंकारु सचु एकु॥ पृष्ठ - 464

भाई लहणा जी ने सारी कुदरती शक्तियों को प्रत्यक्ष रूप में निरंकार के हुक्म में चलता हुआ अनुभव किया। वाहिगुरू जी के जो प्यारे हैं, उन्हें ही परमेश्वर द्वारा अधिकार मिले हुए हैं, वे परमेश्वर की बान्धी हुई मर्यादा को, उसके लाडले प्यारे आकर बदल दिया करते हैं -

जो किछु करे सोई प्रभ मानहि ओइ राम नाम रंगि राते॥ पृष्ठ - 748

इस सम्बन्ध में मैं एक प्रार्थना करता हूँ कि पश्चिमी पंजाब में एक बहुत बड़े महापुरुष हुए हैं जिनका नाम राम किशन था। आप शाहपुर रहा करते थे। उस समय पाकिस्तान में जब इकट्ठा पंजाब हुआ करता था, जेहलम दरिया में बाढ़ आ गई और उसका प्रवाह शहर की ओर बढ़ने लगा। बड़ी-बड़ी इमारतों को गिरा रहा था। सारे शहर में हाहाकार मची हुई थी। हर एक अपनी जान बचाने की चिन्ता में था। उस समय सभी लोग महापुरुष की शरण में गये और मिलकर प्रार्थना की, ''जेहलम नदी ने बहुत सारी जमीन काट दी है, अब तो गुरूद्वारा साहिब के निकट पहुँचने वाली है, आप कुछ कृपा करो। आप समरथ हो, इस दरिया से कहो कि अब शान्त हो जाये।''

उस समय महापुरुष बोले, ''प्रेमियो! हम तो गुरू नानक पातशाह के हुक्म में चलते हैं, यदि उन्हें रूचता है कि गुरूद्वारा बच जाये तो दरिया रूक जायेगा, यदि नहीं रूचता तो जेहलम नहीं रूकेगा।

गुरू महाराज जी स्वंय ही जानते हैं कि इस स्थान को बनाना है या नहीं क्योंकि गुरू घर में अरदास (प्रार्थना) को बहुत बड़ी महानता मिली हुई है। जब गुरसिख का कोई बल न चले तो उसके पास एक सच्चे दिल से अरदास होती है।'' महापुरुषों ने कहा, ''प्रसाद तैयार करो, गुरू नानक पातशाह को भोग लगवाओ।'' प्रसाद तैयार किया गया और स्वंय शीश पर रख कर, जेहलम के किनारे ले गये, वहाँ पर एक ढिग (मिट्टी का बड़ा ढेला) पिछली धरती से कट गई थी। उसके ऊपर आपने आसन जमा लिया और जेहलम से कहा, ''ले तुझे गुरू का प्रसाद देते हैं, इतना गुस्सा मत कर, यह गरीब जनता है, तुझे थोड़ा बहुत जेरा करना चाहिये। ये गुरू के सिख हैं, कितने दुखी हो रहे हैं? यह सहन करने की इनमें शक्ति नहीं है। गुरू के वासते दूसरी ओर बह ले।'' जिस ढिग पर आप बैठे थे, वह नीचे से पानी ने काट दी थी, सभी को ऐसा मालूम हो रहा था कि जैसे यह अभी गिरने वाली है। प्रसाद लेते ही दरिया ने मुँह मोड़ लिया, वह ढिग सन्तों के जीवन काल तक उसी तरह खड़ी रही। जेहलम दरिया आज तक शाहपुर से काफी दूर-दूर बहता है। पुन: कभी उधर नहीं आया। साध संगत जी! कुदरती शक्तियाँ, परमेश्वर के भय में चलती हैं, बादल वर्षा भी भय में चलते हैं।

एक कथा आती है कि सन्त महाराज मस्तुआणे वाले एक बार कबायली इलाके में से गुज़र रहे थे। इस इलाके में काफी समय से वर्षा नहीं हुई थी। महापुरुष तांगे में बैठे जा रहे थे, तांगा बड़ी धीरे-धीरे चलता था। पठानों ने देखा कि जाहो जलाल वाला कोई महापुरुष, वली अल्लाह जा रहा है। उनमें से सियाने पठान ने तांगे में लगी हुई घोड़े की लगाम पकड़ ली और कहा, ''महापुरुषो! हमारा मन कहता है कि आप कोई पीर हो, आपके चेहरे की आभा न्यारी है। आपके नेत्रों का आकर्षण अलौकिक है, कृपा करो, काफी समय से यहाँ पर वर्षा नहीं हुई, फसलें नहीं हुई, हमारा गुज़ारा इसी से होता है, भुखमरी फैल जायेगी।'' महापुरुषों ने कहा, ''प्यारे! हमारे हाथ में तो कुछ भी नहीं है।'' उन्होंने फिर प्रार्थना की कि, ''हमारा गुज़ारा बादामों, अंगूरों पिस्तों की खेती पर निर्भर करता है, पर वर्षा की कमी के कारण जो थोड़ा बहुत फल लगा है, वह झड़ जायेगा। आपकी पहुँच अल्लाह-ताला तक है, कृपा करो।''

उस समय महापुरुष मौन हो गये। महापुरुष अपनी ओर से कुछ भी नहीं करना चाहते क्योंकि गुरू घर में शक्तियों का प्रयोग करना वर्जित है -

नाटक चेटक कीए कुकाजा। प्रभ लोगन कह आवत लाजा॥ ***बचित्र नाटक***

उस समय आपके दिल में दया उत्पन्न हुई, आप तांगे से नीचे उतर गये, अपने साथियों को कहा कि साज सुर करो, हम प्रार्थना करते हैं। उस समय आपने शबद पढ़ा जो पठानों की समझ में तो नहीं आ रहा था, पर वे हैरान रह गये कि अचानक बादल उठे और गहरे काले हो गये, थोड़ी देर पश्चात छम-छम वर्षा शुरू हो गई। मलार राग के शबद आप पढ़ रहे थे। ज्यों-ज्यों शबद की धुन ऊँची होती थी, त्यों-त्यों वर्षा साजों के साथ-साथ मिलकर बरस रही थी। इतनी वर्षा हुई कि बाजे ढोलकियां भी गीली हो गई। आप जोड़ों के रूप में शबद पढ़ रहे थे। जब बहुत वर्षा हुई तो एक सूझवान पठान खड़ा हुआ और कहने लगा, ''महाराज! अब बहुत वर्षा हो गई है, यदि इससे ज्यादा हो गई तो फसलें बह जायेंगी।'' इस प्रकार की साखियां महापुरुषों के जीवन में आम हुआ करती हैं।

भाई लहणा जी चौथा श्लोक बहुत ही ध्यान से श्रवण कर रहे थे और जब आप पौड़ी श्रवण करने लगे तो उसमें फ़रमान आया कि इस जीव को भटकते हुए युग बीत गये हैं और इसका छुटकारा किसी भी कर्म से नहीं होता। यह तो वाहिगुरू की कृपा हो जाये तो पूरा सतगुरू मिल जाया करता है। उस सतगुरू के पास वह शबद है, जिस शबद को सारे खण्डों, ब्रह्मण्डों ने धारण किया हुआ है। सतगुरू

दाता है, यदि पूरा सतगुरू मिल जाये तो हउमैं का नाश हो जाता है। सच की प्राप्ति हो जाती है। वह हमेशा ही वाहिगुरू को, जिज्ञासु को ज्ञान दे दिया करते हैं। इस तरह पढ़ लो -

धारना - मेला पूरिआं गुरां दा होवे, नदर हो जाए तेरी मालका - 2, 2
नदर हो जाए जी, तेरी मालका - 2, 2
मेला पूरिआं गुरां दा होवे,.........-2, 2

नदरि करहि जे आपणी ता नदरी सतिगुरु पाइआ।
एहु जीउ बहुते जनम भरंमिआ ता सतिगुरि सबदु सुणाइआ।
सतिगुर जेवडु दाता को नही सभि सुणिअहु लोक सबाइआ।
सतिगुरि मिलिऐ सचु पाइआ जिन्ही विचहु आपु गवाइआ।
जिनि सचो सचु बुझाइआ॥ *पृष्ठ - 465*

इस पौड़ी को सुनकर आप सोच रहे हैं कि पूरे गुरू का मिलाप नहीं होता जब तक इस संसार के मालिक की नदर न हो जाये। यह जीव चाहे कितना भी जोर क्यों न लगा ले, कितना भजन क्यों न कर ले, वाहिगुरू के मिलाप का द्वार नहीं खुला करता। उसके द्वार को खुलवाने के लिये सतगुरू की बख्शीश जरूरी है। सतगुरू से शब्द प्राप्त करके, उस दरवाज़े पर खड़ा होकर, उस शब्द द्वारा दरवाज़ा खटखटाना पड़ता है। बाणी में ऐसा फ़रमान आता है -

कबीर केसो केसो कूकीऐ न सोईऐ असार॥
राति दिवस के कूकने कबहू के सुनै पुकार॥ *पृष्ठ - 1376*

सियाने कहते हैं, ''प्यारे! Knock the door. The door will be opened. हमारा काम है दरवाज़ा खटखटाते रहना। सतगुरू ने चाबी दे दी, यदि हम इसका प्रयोग न करें तो हमारी गलती है। फ़रमान है -

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई।
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई॥ *पृष्ठ - 205*

एक जगह पर इससे भी स्पष्ट फ़रमान करते हैं -

बजर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै॥ *पृष्ठ - 954*

दसवां द्वार गुरू के शबद की सहायता से खुलता है। परमेश्वर की कृपा हो तो गुरू का मिलाप होता है, गुरू दयालु हो तो गुरू शबद की दात देता है, वह शबद वाहिगुरू के दरवाजे की चाबी है क्योंकि शबद अपने आप प्राप्त नहीं होता। फ़रमान है -

बिनु सतिगुर नाउ न पाईऐ बुझहु करि वीचारु।
नानक पूरै भागि सतिगुरु मिलै सुखु पाए जुग चारि॥ *पृष्ठ - 649*

नदरि के बिना पूरे भाग्य नहीं खुला करते। वाहिगुरू के द्वार पर ही खड़े होकर पुकार करनी पड़ती है। हे वाहिगुरू! कोई ऐसा प्यारा मिला दे, जो मुझे तेरे रास्ते का ज्ञान दे दे, जिस चाबी से ताले खोलता हुआ, मैं तेरे दर तक पहुँच जाऊँ आप कृपा करो और बन्द हुआ दरवाज़ा खोल दो।

नदरि (कृपा) एक बहुत बड़ा करिश्मा है जो जिज्ञासु पर रहम करके परमेश्वर द्वारा प्रयोग किया जाता है। बाणी में *'नानक नदरी नदर निहाल'* कहा है यह नदर हो तो सतगुरू मिलता है जीव अरबों, खरबों यौनियों में घूमते हैं -

कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥ *पृष्ठ - 176*

कृपा हुई तभी गुरू के दर का ज्ञान प्राप्त हुआ है, इससे अधिक कृपा हुई तो गुरू दयालु हो गया और उसने वह शबद सुना दिया जिसका अभ्यास करके, हम नाम तक पहुँच जाते हैं। जिज्ञासु को गुरू, मन्त्र देता है, उसका अभ्यास करके मंज़िल दर मंज़िल चढ़ाई करता है और वहाँ पहुँच जाता है, जहाँ नाम है। वह गुरू की कृपा से ही प्राप्त होता है –

एहु जीउ बहुते जनम भरंमिआ ता सतिगुरि सबदु सुणाइआ॥ पृष्ठ - 465

हर एक जीव के अन्दर शबद है जिसे शबद ब्रह्म या नाम या वाहिगुरू कहा जाता है। भाई गुरदास जी लिखते हैं–

निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 26/2

परमेश्वर निरंकार से ऐकंकार तथा सगुण रूप में आकर शबद का उच्चारण हुआ, जिसे शबद धुन या औंकार कहा जाता है। वह धुन सभी ओर फैल गई, जिससे सारा संसार रूपमान हुआ। बेअन्त खाणीयां, बाणीयां शक्तियां बन गई। वह शबद घट-घट में व्याप्त हो गया –

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ पृष्ठ - 293

इस नाम शक्ति के साथ ही नामी भी घट-घट में व्याप्त है। नाम द्वारा नामी तक पहुँचा जा सकता है। औंकार कोई प्राकृतिक शबद नहीं है, न ही अक्षरों की लपेट में आने वाला शबद है, यह पवित्र धुन है। अक्षरों के बारे में फ़रमान है –

ए अखर खिरि जाहिगे ओइ अखर इन महि नाहि॥ पृष्ठ - 340

वह ऐसा अक्षर है, जिसका कोई अक्षर नहीं है, उसे ही शबद ब्रह्म कहा जाता है।

मनुष्य के अन्दर वह शबद, धुन के रूप में प्रकट होता है। यह धुन, हर व्यक्ति के अन्दर है, निरन्तर साकार रूप में रहती है। पर माया के अन्धकार में इसने दिव्य कर्ण, दिव्य नेत्र बन्द किये हुए हैं। दिव्य नासिका तथा दिव्य जीभ को दूर रखा हुआ है पर शबद की साधना से यह खुल जाते हैं। प्रत्यक्ष रूप में यह नाम धुन सुनती है। धुन हर जगह प्रकाशित होकर, परमेश्वर के दर्शन होते हैं। इस नाम द्वारा ही, इस शबद द्वारा ही, हम विवेक मण्डल में पहुँचते हैं। उस ज्ञान प्रकाश में इस जीव को अपना आपा खोया हुआ नज़र आता है, वही बन जाता है जिसकी तलाश में बेअन्त मेहनत की है, फ़रमान है –

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूं।
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू॥ पृष्ठ - 1375

जिसे ढूँढता फिरता था, जब वह मिला तो यह बिल्कुल पता ही नहीं चला कि ढूंढने वाला कौन था। प्रकाश हो जाने से वह अन्धकार का भ्रम खत्म हो गया। सारे भ्रमों का नाश हो गया तथा पता चला कि जीव रूपी खेल अन्धकार में हुई ही नहीं थी और यह सतगुरू के सम्बन्ध का प्रताप है, जिसने इस जीव को, भंवर चक्कर में पड़े हुए को, अपनी कृपा द्वारा सुनाया –

एहु जीउ बहुते जनम भरंमिआ ता सतिगुरि सबदु सुणाइआ॥ पृष्ठ - 465

है कोई सतगुरू जैसा दाता। दाता तो बेअन्त हुए हैं। कोई सवा मन सोना पुण्य करता है, कोई धरती देता है, पर गुरू जैसा दाता कोई नहीं –

सतिगुर जेवडु दाता को नही सभि सुणिअहु लोक सबाइआ॥ पृष्ठ - 465

महाराज कहते हैं, ''प्यारे! कान खोल कर सुनो, इस तरह सच की प्राप्ति नहीं हुआ करती। जब पूरे सतगुरू ने मन्त्र देकर, जो मैं भाव इसके अन्दर पैदा होकर, इस जीव को अन्धकार में धकेले फिरता था, वह दूर कर दिया और सच की प्राप्ति हो गई।'' जब 'मैं' खत्म हो गई, असली आत्मिक वस्तु प्राप्त हो गई तो मन का अन्धकार मिट कर प्रकाश हो गया। यह तभी होता है यदि पूरा सतगुरू मिल जाये। निशानी यह होती है कि -

कबीर गुरु लागा तब जानीऐ मिटै मोहु तन ताप।
हरख सोग दाझै नही तब हरि आपहि आप॥ *पृष्ठ - 1374*

यदि मोह हट गया, तीनों ताप मिट गये, आधि बिआधि उपाधि से छुटकारा हो गया, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या छल, कपट, आसा अन्देसा से पीछा छूट गया तो समझ लो कि गुरू मिल गया। यदि ये चीज़ें हैं तो गुरू नहीं मिला। यदि गुरू मिल भी गया तो तूने गुरू को मनाया नहीं, तेरी रहत में अन्तर था। तूने उसके प्यारों से पूछा नहीं कि गुरू कैसे मिलता है, सतगुरू के साथ अभी तेरा दूर का सम्बन्ध है सतगुरू यदि मिल जाये तो सच का ज्ञान प्राप्त हो जाता है -

सतिगुरि मिलिऐ सचु पाइआ जिन्ही विचहु आपु गवाइआ॥ *पृष्ठ - 465*

जो इस जीव के अन्तसकरण में हंगता और ममता है इसने जीव को परमेश्वर से बिछौड़ा हुआ है। जब ज्ञान हो गया फिर मैं, मेरी की धुन्ध मिट जाती है। हर जगह वाहिगुरू ही दिखाई देता है -

जिनि सचो सचु बुझाइआ॥ *पृष्ठ - 465*

सो यह गुरू की कृपा है जिसने सच बता दिया, सच का ज्ञान दे दिया और घनी अन्धेरी अज्ञान की रात में से प्रकाश करा दिया।

भाई लहणा जी के अन्दर बहुत ही सूक्ष्म ज्ञान उत्पन्न हो रहा था और वह एक-एक अक्षर की गहराई में जाकर उसे समझ रहे थे। भाई लहणा जी के ऊपर इस शबद ने बहुत गहरा प्रभाव डाला। उन्होंने विचार किया कि जिस इष्ट को मैं मानता हूँ, उस इष्ट ने तो कभी बताया ही नहीं कि परमेश्वर से कैसे मिला जाता है। जन्म मरण का चक्कर कैसे तोड़ा जाता है? मेरा इष्ट मुँह माँगी चीज़ें दे देता है पर मुक्ति नहीं देता। परमेश्वर का मिलाप गुरू के बिना नहीं हो सकता। आपके कान आकाश द्वारा यह सुन रहे थे -

धारना - बिनां गुरां तो पिआरे राम नहींओ मिलदा - 2, 2
राम नहींओ मिलदा, प्यारे राम नहींओ मिलदा - 2, 2
बिनां गुरां तों प्यारे,...........-2

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ।
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ।
सतिगुर मिलिऐ सदा मुकतु है जिनि विचहु मोहु चुकाइआ।
उतमु एहु वीचारु है जिनि सचे सिउ चितु लाइआ।
जगजीवनु दाता पाइआ॥ *पृष्ठ - 466*

दो टूक फैसला सुन लिया। न पहले किसी को मिला है, न ही अब मिलना है। क्योंकि परमेश्वर ने अपने दरवाज़े को ताला लगाया हुआ है। वह रहता इस जीव के अन्दर है-

काइआ नगरु नगर गड़ अंदरि। साचा वासा पुरि गगनंदरि।
असथिरु थानु सदा निरमाइलु आपे आपु उपाइदा।
अंदरि कोट छजे हट नाले। आपे लेवै वसतु समाले।

बजर कपाट जड़े जड़ि जाणै गुर सबदी खोलाइदा।
भीतरि कोट गुफा घर जाई। नउ घर थापे हुकमि रजाई।
दसवै पुरखु अलेखु अपारी आपे अलखु लखाइदा॥ *पृष्ठ - 1033*

पर इस घर को ताला लगा होने के कारण इस घर की चाबी पूरे सतगुरू से मिलती है, पर और चाहे जितने मर्ज़ी पुण्य कर लो, दान कर लो, परमेश्वर के द्वार की चाबी नहीं मिलेगी क्योंकि यह प्राप्ति सतगुरू तक ही सीमित है -

जिस का ग्रिहु तिनि दीआ ताला कुंजी गुर सउपाई।
अनिक उपाव करे नही पावै बिनु सतिगुर सरणाई॥ *पृष्ठ - 205*

जब तक गुरू की शरण में आकर चाबी नहीं मिलती, दरवाज़ा कैसे खुलेगा -

बिनु सबदै अंतरि आनेरा। न वसतु लहै न चूकै फेरा।
सतिगुर हथि कुंजी होरतु दरु खुलै नाही गुरु पूरै भागि मिलावणिआ॥ *पृष्ठ - 124*

वह कौन सी चीज़ है जो अन्धेरे में दिखाई नहीं दे रही, वह है अपना स्वरूप जिसे आत्मा कहा जाता है। आत्मा और परमात्मा एक ही होते हैं -

आतमा परातमा एको करै। अंतर की दुबिधा अंतरि मरै॥ *पृष्ठ - 661*

न तो शबद की प्राप्ति हुई है। शबद की प्राप्ति इसलिये नहीं हुई क्योंकि दरवाज़ा नहीं खुला। अन्दर शबद बजता है-

नउ दरवाजे काइआ कोटु है दसवै गुपतु रखीजै।
बजुर कपाट न खुलनी गुर सबदि खुलीजै॥ *पृष्ठ - 954*

खोलेगा कौन? कहते हैं, पहले गुरू से शबद लो। जब गुरू का शबद, मन्त्र रूप में मिल गया फिर तेरे अन्दर जो शबद है, मन्त्र का अभ्यास करके उसकी प्राप्ति हो जाती है -

अनहद वाजे धुनि वजदे गुर सबदि सुणीजै॥ *पृष्ठ - 954*

एक तो अनहद बाजे सुनते हैं, साथ ही जो गुरू ने शबद दिया है, वह सुनता है। कमाल की बात है, दो चीज़ें हो गई। महाराज कहते हैं - दो नहीं, तीसरी भी है -

तितु घट अंतरि चानणा करि भगति मिलीजै।
सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई।। *पृष्ठ - 954*

अनुभव प्रकाश हो गया -

वाहु वाहु सचे पातसाह तू सची नाई॥ *पृष्ठ - 954*

ऐसे नहीं मिलता, जब तक समरथ गुरू न मिले क्योंकि चाबी गुरू के पास है -

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ॥ *पृष्ठ - 466*

महाराज कहते हैं, ''पूछ लो गुरू से। निगुरे पुरुष का तो नाम लेना भी बुरा है। वह जहाँ बैठ जाये सवा गज़ धरती भ्रष्ट करके जाता है। जहाँ बन्दगी वाला पुरुष बैठ जाये, वहाँ तीर्थ बन जाता है'' -

जिथै बैसनि साध जन सो थानु सुहंदा॥ *पृष्ठ - 319*

जिथै जाइ बहै मेरा सतिगुरू सो थानु सुहावा राम राजे॥ *पृष्ठ - 450*

विष्णु भगवान जी के दरबार वैकुंठ धाम में सारे देवता पहुँच कर आपके वचन श्रवण किया करते थे। नारद को क्योंकि यह शक्ति प्राप्त थी, कि वह सभी स्थानों पर पहुँच सकते थे, केवल अकाल

पुरुष की दरगाह के अतिरिक्त बैकुण्ठ धाम तक उसकी पहुँच है। धरती पर भी उसकी पहुँच है, जब मन करे आ सकते हैं। कुछ कहते हैं, अब नहीं आते? साध संगत जी! यहाँ तम्बाकू की दुगर्न्ध पड़ी हुई है। एक देवता तो क्या, कोई भी नहीं आ रहा यहाँ। कलयुग चल रहा है, अब अच्छी मुक्त आत्माएं अपने नालायक वारिसों का साथ छोड़ गई हैं क्योंकि मनुष्य शराबों-कबाबों, तम्बाकू पी-पी कर बदबू छोड़ रहा है।

एक बार गुरू दसवें पातशाह का दीवान सजा हुआ है, संगत बैठी है। महाराज जी वचन कर रहे हैं, तो क्या देखते हैं कि एक अजीब से कपड़े पहने हुए और अजीब तरह की चादर ओढ़े हुए, कोई आया है। महाराज जी को नमस्कार की, पहचान में नहीं आया कि कौन है? वह आदमी कहाँ से आया है? उसने महाराज जी के पास पाँच पंख लाकर भेंट कर दिये। महाराज जी ने पूछा, ''मुनि जी कैसे आना हुआ?''

कहने लगे, ''सच्चे पातशाह! कलयुग का हाल तो हमें पता चल गया था। भविष्यत पुराण में मुझे ब्रह्मा जी ने सारा सुना दिया था कि इस इस तरह के लोग होंगे, मर्यादाएं टूट जायेंगी, किसी का धर्म नहीं बचेगा, धर्म के चारों पैर टूट जायेंगे। अन्त में पूछा कि महाराज! दुनियां तो सारी नर्क में चली जायेगी?'' कहते हैं, ''नहीं, पश्चिम देश में बेदी वंश में नानक नाम रख कर, स्वंय अकाल पुरुष, गुरू रूप में प्रकट होगा। उन्होंने धर्म का सेतु बान्धना है और नाम का बल देकर संसार का उद्धार करना है। वह बहुत बड़ी शक्ति लेकर आ रहे हैं और सच्चे पातशाह! मैं यह देखने आया था कि अब जीवों का आचरण कैसा है? यह जो आपका दरबार है। इसके सामने बैकुण्ठ कुछ भी चीज़ नहीं है -

कहि कमीर अब कहीऐ काहि। साध संगति बैकुंठै आहि॥ पृष्ठ - 1161

उसने भी हाल चाल पूछा। महाराज जी ने भी सभी का हाल पूछा। उसके पश्चात उसने पाँच पंख फिर भेंट किए और विदा हो गये। सभी का ध्यान उधर चला गया। जब वह शामियाने के दूसरे सिरे पर पहुँचा तो सभी हैरान हो गये, किसी को जाता हुआ दिखाई नहीं दिया।

सभी ने पूछा, ''महाराज जी! वह कौन था?''

महाराज कहने लगे, ''यह स्वर्ग मण्डल में से नारद जी आए थे। यह वार्तालाप करने आये थे।'' जिस समय नारद, विष्णु जी की सभा में जाते हैं तो देखते हैं कि जिस आसन पर वह बैठते हैं, वहाँ से मज़दूर मिट्टी खोद रहे हैं। मज़दूरों से पूछा, ''मिट्टी क्यों खोद रहे हो?''

मज़दूर कहने लगे, ''आज से नहीं खोद रहे हैं, हमें तो एक महीना हो गया।''

कहते हैं, ''क्यों?''

कहने लगे, ''यहाँ एक नारद नाम का निगुरा बैठता है, वह इस स्थान को भ्रष्ट कर देता है।''

मन में बड़ा गुस्सा आया और विष्णु जी के पास जाकर बोले, ''महाराज! आप तो मेरा निरादर करवा रहे हो?''

विष्णु जी कहते हैं, ''क्यों?''

नारद जी बोले, ''महाराज! पता नहीं किसने हुक्म दे दिया, जहाँ मैं बैठता हूँ, उस स्थान पर सवा गज़ धरती गहरी तथा सवा गज़ चौड़ी जगह खोद देते हैं, फिर मिट्टी से भर देते हैं।''

बोले, ‘‘हाँ, यह काम तो हम, जब से यह सभा लगी है, तभी से करते आ रहे हैं।’’

नारद जी बोले, ‘‘क्यों?’’

विष्णु जी बोले कि ‘‘तू निगुरा है। निगुरा पुरुष जो होता है वह भ्रष्ट पुरुष होता है –

गुरमंत्र हीणस्य जो प्राणी ध्रिगंत जनम भ्रसटणह॥ *पृष्ठ - 1357*

‘धिक्कार’ कहते हैं उसे, सौ बार धिक्कार है तुझे, तू मनुष्य भी बना और गुरू से मन्त्र भी नहीं लिया, तूने गुरू धारण नहीं किया, तूने अमृत पान नहीं किया और तेरा जन्म भ्रष्ट हो गया। धिक्कार है तेरे जन्म को –

कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह॥ *पृष्ठ - 1357*

‘‘कुत्ता, बिल्ला, सूअर, साँप और गधे के समान तेरा जन्म है।’’

कहते हैं, ‘‘नारद! तूने कभी महापुरुषों के वचन नहीं सुने?’’

कहता है, ‘‘महाराज! मैंने कभी ध्यान ही नहीं दिया। फिर अब मैं क्या करूं?’’

कहने लगे, ‘‘गुरू धारण करो।’’

नारद बोले, ‘‘जहाँ आपने इतनी बात बताई है, मुझे यह भी बता दो कि गुरू किसे बनाऊँ?’’

विष्णु जी बोले, ‘‘तू जंगल में चले जाना, सुबह-सुबह जो तुझे सबसे पहले मिले, उसे ही गुरू बना लेना।’’

जब सुबह बाहर निकला तो सबसे पहले उसे एक शिकारी मिला, उसने चण्डाल का रूप धारण किया हुआ है, कुत्ते उसके साथ हैं, शिकार करने के लिये जा रहा है क्योंकि वचनों का पालन करना था, इसलिये उसने नमस्कार कर दी।

शिकारी कहता है, ‘‘तू मुझे शीश क्यों नवांता है?’’

नारद बोले, ‘‘मैं आपको गुरू धारण करता हूँ।’’

वह बोला, ‘‘मैं तो चण्डाल हूँ, शिकारी हूँ, किसी अच्छे व्यक्ति को जाकर गुरू बना।’’

नारद बोले, ‘‘मुझे हुक्म हुआ है जिसके सबसे पहले दर्शन हो जायें, उसे ही गुरू बनाना है।’’

शिकारी बोला, ‘‘पहले जिसने तुझे ऐसा कहा है, उसे जाकर पूछ आ।’’

नारद बोले, ‘‘नहीं, मैंने तो यह पक्का निर्णय कर लिया है, आप ही मेरे गुरू हो, मुझे कोई उपदेश करो।’’ शिकारी ने उसे बहुत डांटा-डपटा और भगा दिया। वे वहाँ से चलकर विष्णु जी के पास आ गया।

विष्णु जी ने पूछा, ‘‘गुरू धारण कर लिया?’’

नारद बोले, ‘‘कर तो लिया पर मुझे चण्डाल ही मिला।’’

विष्णु जी बोले, ‘‘तूने बहुत बुरा काम किया। तू गुरू की क्रिया को नहीं जानता, तूने गुरू की निन्दा की है, उस पर तर्क किया है। जो गुरू पर तर्क करता है उसका सारा जीवन, सभी पुण्य भ्रष्ट हो जाते हैं, एक भी नहीं बचता। बहुत से प्रेमी ऐसे होते हैं। एक बार मेरे पास एक प्रेमी आया। कहने लगा,

"जी, ये जो Eskimo (इसकीमो) जाति के लोग कैसे बचते हैं? वे मांस खाते हैं, वह अमुक काम करते हैं, भजन बन्दगी नहीं करते।"

मैंने कहा, "तू गुरू नानक पातशाह का सिख है, गुरू नानक पातशाह की बाणी पर तर्क करता है।"

कोई मुसलमान कुरान-शरीफ पर तर्क करके दिखाये, उसी समय ही गला काट देते हैं। कहते हैं, "तूने तर्क किया है।" उसी समय कुरान-शरीफ की शरां (नियम) लग जाते हैं। हमारे ये जितने प्रचारक हैं, ये सीधे ही गुरू ग्रन्थ साहिब का निरादर किये जाते हैं और झूठ बोलते हैं। महाराज जी का प्रकाश कर लेंगे, लोगों को गालियाँ निकालते हैं, बुरा भला कहते हैं। उनके मनों में श्रद्धा नहीं है। गुरू ग्रन्थ साहिब जी, गुरू महाराज पास बैठे हों और हम झूठ बोलें, लोगों को बुरा कहें, बहुत बुरी बात है। इसीलिये हमारे पल्ले कुछ नहीं पड़ रहा। गुरू ग्रन्थ साहिब को गुरू मान कर, गुरू ग्रन्थ साहिब की इज्जत नहीं कर रहे, अपमान कर रहे हैं। जो गुरू पर तर्क करेगा और गुरू पर श्रद्धा नहीं रखेगा, उसके पल्ले कुछ नहीं पड़ता। अतः कहने लगे, "तू तो नरकों का भागीदार बनेगा, चौरासी भोगनी पड़ेगी उसे। यदि कोई गुरू पर तर्क करता है, तो 83, 99, 999 शरीर उसे भोगने ही पड़ते हैं।"

नारद बोले, "महाराज! कोई तरीका भी बता दो। "

विष्णु बोले, "गुरू के पास चला जा। गुरू के बिना और कोई नहीं बताया करता।"

फिर अपने गुरू के पास लौट आया। देखता है कि मेरे गुरू उलट-पुलट कार्य कर रहे हैं।

वह बोला, "तू फिर आ गया।"

नारद बोले, "मैंने तो आपको गुरू धारण कर लिया। मैंने आप पर तर्क किया इसलिये विष्णु जी ने कहा है कि तुझे चौरासी लाख यौनियां भोगनी पड़ेंगीं। मुझे बचाओ महाराज! मैं तो आपका चेला हो गया।"

चण्डाल बोला, "विष्णु जी से जाकर कहो कि चौरासी कैसी होती है? उसका कोई नक्शा बनाकर दिखाओ। जब नक्शा बनायेंगे तो तू धड़ाम से उसके ऊपर गिर कर लेटता हुआ उन सभी के ऊपर से निकल जाना। उसके बाद खड़ा हो जाना और कहना मैंने तो चौरासी भोग ली।"

नारद जी ने ऐसे ही किया विष्णु जी से जाकर कहा, "चौरासी कैसी होती है? उसका कोई नक्शा खींच कर दिखाओ।" उन्होंने दृष्टि की, सारे चौरासी के शरीर थोड़ी सी जगह में दिखा दिये। वह एक दम डण्डोत होकर लेटता हुआ, सभी के ऊपर से निकल गया।

कहने लगा, "महाराज! अब तो मैंने चौरासी भोग ली।"

विष्णु बोले, "नारद! यही अन्तर है। यदि गुरू न होता तो तुझे वास्तव में चौरासी भोगनी पड़ती। यह गुरू ही है जिसने तुझे चौरासी भोगने से बचा लिया।"

सो महाराज कहते हैं, पूछ लो पहले वालों से, न तो अब किसी को मिला है। जब से संसार की सृष्टि हुई है और जो पैदा हुए हैं उन्हें भी नहीं मिला। जो वाहिगुरू है, परमात्मा है, वह गुरू के अन्दर स्वंय बैठा है -

बिनु सतिगुर किनै न पाइओ बिनु सतिगुर किनै न पाइआ॥
सतिगुर विचि आपु रखिओनु करि परगटु आखि सुणाइआ॥ *पृष्ठ - 466*

यहाँ पर मोह का विचार पैदा हो गया। हंगता और ममता को मिलाकर मोह कहते हैं। मोह हउमै के बाद दूसरे दर्जे पर आता है। पहले मोह Attachment जिसे ममता कहते हैं। दूसरा हंगता है, मैं बना हुआ है, मैं अमुक सिंघ, मैं सिख, मैं हिन्दू, मैं अच्छा, मैं पुण्य दान करने वाला, मैं पापी यह मनुष्य को भ्रम पड़ा हुआ है। सन्त आवाज़ें लगा-लगा कर कहे जा रहे हैं कि भ्रम में मत पड़ जाना, तुम तो हो ही नहीं, पहचानो अपने आपको। तुम्हारी कोई जात नहीं है -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥ पृष्ठ - 441

तू तो सर्व व्यापक ज्योति है। शरीर तो तुझे माँ-बाप के संयोग से मिला है। तू शरीर नहीं है, यह तो तेरा वस्त्र है। जैसे कपड़े पहने हुए हैं, यह तेरा वस्त्र है। तू वस्त्रों को 'मैं' कहकर अपने आप फंस गया। महाराज कहते हैं, जो गुरू है, वह इस प्रकार के मोह को उखाड़ फैंकता है -

सतिगुरि मिलिऐ सदा मुकतु है जिनि विचहु मोहु चुकाइआ॥ पृष्ठ - 466

सो वह अभी सोचा ही करते थे कि यह मोह क्या है, हंगता, ममता क्या है? हंगता और ममता को हमारी बोली में हउमै कहते हैं। जहाँ हउमै आ गई, उसका प्रभाव क्या होता है, महाराज इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - जंमदा ते मरदा है, हउमै दा बंनिआ होइआ - 2, 2
हउमै दा बंनिआ होइआ - 2, 2
जंमदा ते मरदा है, ... - 2

हउ विचि आइआ हउ विच गइआ। हउ विचि जंमिआ हउ विचि मूआ।
हउ विचि दिता हउ विचि लइआ। हउ विचि खटिआ हउ विचि गइआ।
हउ विचि सचिआरु कूड़िआरु। हउ विचि पाप पुंन वीचारु।
हउ विचि नरकि सुरगि अवतारु। हउ विचि हसै हउ विचि रोवै।
हउ विचि भरीऐ हउ विचि धोवै। हउ विचि जाती जिनसी खोवै।
हउ विचि मूरखु हउ विचि सिआणा। मोख मुकति की सार न जाणा।
हउ विचि माइआ हउ विचि छाइआ। हउमै करि करि जंत उपाइआ।
हउमै बुझै ता दरु सूझै। गिआन विहूणा कथि कथि लूझै।
नानक हुकमी लिखीऐ लेखु। जेहा वेखहि तेहा वेखु॥ पृष्ठ - 466

नई बात पहली बार सुनी है कि मनुष्य के अन्दर कोई चीज़ है, जिसे हउमै कहते हैं और फिर पुण्य भी उसी के अन्दर आ जाते हैं, पाप भी आ जाते हैं, सत्य अवस्था भी उसी में आ गई, असत्य भी उसी में समा गया, नरक और स्वर्ग भी इसी हउमैं में समा गये। कहने लगे यह हउमै क्या है? इस हउमै को भुला नहीं सकते, समझने का यत्न करते हैं क्योंकि साध-संगत जी हमारी समझ में हउमै नहीं आती कि यह क्या चीज़ है? महाराज कहते हैं, हर एक के अन्दर वाहिगुरू बैठा है। बाबा जी के साथ बात करने की जरूरत नहीं है, वाहिगुरू से कर लो, तुम्हारे अन्दर बैठा है। आँखे बन्द करके देखते हैं, कहते हैं, हमारे अन्दर तो अन्धेरा पड़ा हुआ है, कोई भी नहीं बैठा। देख लो आँखें बन्द करके, दिखाई देता है। महाराज कहते हैं -

धन पिर का इक ही संगि वासा......................॥ पृष्ठ - 1263

इकट्ठे रहते हैं दोनों, दसवें द्वार में। महाराज, फिर दिखाई क्यों नहीं देता? कहते हैं, दीवार बनाई हुई है -

.....................विचि हउमै भीति करारी॥ पृष्ठ - 1263

अपने आप ही बनाई हुई है। फिर कोई तरीका है इस दीवार को तोड़ने का? कहते हैं, गुरू की शरण चला जा –

गुरि पूरै हउमै भीति तोरी जन नानक मिले बनवारी॥ पृष्ठ - 1263

तूने दीवार बना ली है 'मैं' की। 'मैं' को छोड़ दे, बात खत्म हो जायेगी। महाराज जी के पास पीर बुद्धू शाह आया, काफी वार्तालाप हुई। कहने लगा, ''महाराज! मैं छूटती ही नहीं, बहुत यत्न किये हैं। मैं को छोड़ने के लिये, हउमै को छोड़ने के लिये, तप भी किये, चालीसे भी रखे, हज भी गया, लंगर भी चलाए और कई तरह की सेवाएं भी कीं, पुण्य भी किये, दान भी बहुत किये।''

महाराज कहते हैं, ''बुद्धू शाह! ये तो तू अपने ऊपर जन्ज़ीरें ही जन्जीरें लपेटता चला गया।''

कहता हैं, ''सच्चे पातशाह! ये अच्छे कर्म भी बन्धन होते हैं।''

महाराज कहते हैं, ''हाँ! ये बन्धन, जन्जीरें तब बनते हैं यदि यह कहे कि 'मैं' करता हूँ। यदि मैं कह दिया 'मैं' दान करता हूँ, मैं प्रचार करता हूँ, मेरे प्रचार के कारण इतने लोगों ने अमृत पान कर लिया। कहते हैं फिर यह हउमै का ही भ्रम है, इसके अन्दर कोई बात नहीं है, यह तो केवल बेकार की बेफजूल माथा पच्ची है। इसका पुण्य तुझे मिल जायेगा, स्वर्गों में से घूमता हुआ फिर चक्कर लगाता हुआ लौट आयेगा। जब तक हउमै नहीं मिटेगी तब तक निरंकार नहीं मिलेगा। यह एक रोग है। सिद्धों ने पूछा यह रोग कैसे मिटे –

किव सचिआरा होईऐ किव कूड़ै तुटै पालि॥ पृष्ठ - 1

''यह कूड़ (झूठ) का रोग कैसे जायेगा?'' महाराज कहते हैं –

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि॥ पृष्ठ - 1

इसे रोज़ पढ़ते हैं, पर समझते नहीं हैं।

पूछते हैं, ''संसार कैसे बन गया?''

कहते हैं, ''संसार बन गया हउमैं में। फिर सवाल पूछा–

कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा कितु कितु दुखि बिनसि जाई॥ पृष्ठ - 946

आप कहते हो कि सारा निरंकार है, फिर संसार कैसे बन गया? दुख कहाँ से आ गया? फिर इस दुख का खातमा कैसे हो? महाराज कहते हैं –

हउमै विचि जगु उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखु पाई॥ पृष्ठ - 946

नाम की स्थिति हर एक के अन्दर है। पहले तो हर एक के अन्दर शबद है। हमें तो शबद का ही नहीं पता। कहता है, महाराज 'सुनता ही नहीं है।' बहुत बार कान बन्द करके भी देखते हैं, तो भी नहीं सुनता। महाराज कहते हैं कि इसलिये नहीं सुनता क्योंकि तेरा चित्त माया के साथ लगा हुआ है। दिखाई देने वाली चीज़ों में लिप्त है, इसलिये शबद नहीं सुनाई देता। यह तो अन्दर इतना शोर शराबा मचा हुआ है –

माइआधारी अति अंना बोला। सबदु न सुणई बहु रोल घचोला॥ पृष्ठ - 313

चाहे अमेरिका चला जाये, चाहे इंग्लैण्ड चला जाये। चाहे पी. एच. डी. कर ले, चाहे कुछ और कर ले। हउमैं का शोर शराबा इसके अन्दर इतना मचा हुआ है कि यह मायाधारी बन गया।

कहता है, जी, हम तो आज तक मायाधारी उन्हें कहते थे, जिनके पास पैसा बहुत होता है?

महाराज कहते हैं, ''नहीं, जिसने दिखाई देने वाली, सुनने वाली चीज़ों के साथ चित्त लगा लिया, वही मायाधारी हुआ करता है। उसी का शोर शराबा इतना मचा हुआ है कि शुद्ध शबद अन्दर सुनाई नहीं देता।''

सो जब शबद अन्दर सुना तो फिर नाम की प्राप्ति हो जायेगी। जब नाम की प्राप्ति हो गई फिर दुखों का खातमा हो गया। महाराज कहते हैं, दुख पैदा ही तभी होते हैं -

.......................नामि विसरिऐ दुखु पाई॥ पृष्ठ - 946

गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए॥ पृष्ठ - 946

गुरू की शरण में रहकर, ज्ञान के अन्दर जो जीव तत्व तथा ब्रह्म तत्व है, इसकी विचार करो - मैं कौन हूँ? परमात्मा कौन है? हमें तो यह पता ही नहीं है, सोये पड़े हैं। किसी को पूछो, ''तुम कौन हो? यह जो मिट्टी का पुतला सा जो खड़ा है, क्या 'मैं' यही हूँ?'' -

माटी को पुतरा कैसे नचतु है॥ पृष्ठ - 487

नाचता फिरता है -

देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है।
जब कछु पावै तब गरबु करतु है।
माइआ गई तब रोवनु लगतु है॥ पृष्ठ - 487

महापुरुष कहते हैं, ''यह देखो, मिट्टी के पुतले कैसे नाचते फिरते हैं? कहीं कोई मुकदमा चला रहा है, कोई किसी के सिर ऊपर लाठियां मार रहा है, कोई गालियां निकाल रहा है। कोई कुछ कर रहा है तो कोई कुछ कर रहा है? ये मिट्टी के पुतले अपने आप को पहचानते नहीं कि हम कौन हैं?'' इस तरह कहते हैं पढ़ो -

धारना - कैसे नचत है, माटी का पूतरा - 2, 2
माटी का पूतरा, कैसे नचत है - 2, 2
कैसे नचत है, माटी का पूतरा - 2

कहते हैं कि यह देखो, मिट्टी के पुतले नाचते फिरते हैं? अपने आपको नहीं पहचानते कि 'मैं' कौन हूँ। यदि आपको नहीं पता तो पूछ लो किसी महापुरुष से, गुरूओं से पूछ लो। गुरू कहते हैं -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥ पृष्ठ - 441

क्यों फसा हुआ है मिट्टी के अन्दर? यदि मिट्टी में से नहीं निकलना तो यहीं पैदा होता रहेगा, मरता रहेगा। इतना तो मान ले यदि बहुत नहीं मान सकता - अपने आपको आत्मा मान ले, यह मिट्टी का पुतला मत समझ। इतना भ्रम पड़ा हुआ है पढ़ा लिखा है, B.A. M.A. Ph.D की हुई है। कहता है 'मैं' हूँ, 'मैं'। 'मैं' ने मार दिया। महाराज कहते हैं, मैं मार देती है -

गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै..........॥ पृष्ठ - 946

फिर जब ज्ञान के तत्व को विचार लिया, अपने स्वरूप का पता चल गया फिर कहते हैं इसके साथ क्या होता है-

...........हउमै सबदि जलाए॥ पृष्ठ - 946

शबद की प्राप्ति हो जायेगी और हउमैं का तत्व जल जायेगा -

तनु मनु निरमलु निरमल बाणी सचे सचि समाइआ॥ *पृष्ठ - 602*

फिर तन भी निर्मल हो गया, मन भी निर्मल हो गया, जो बोलता है, वह बाणी भी निर्मल हो गई तथा यह ज्ञान भी प्राप्त हो गया कि वाहिगुरू जी इसके शरीर में समाये हुए हैं। अत: हउमै का रोग मनुष्य को लगा हुआ है -

हउमै रोगु मानुख कउ दीना॥ *पृष्ठ - 1140*

मनुष्य को लगा दिया हउमै रोग। रोगी होते हुए भी हम कहते हैं कि हम तो रोगी ही नहीं, कभी भी दवाई (दारू) नहीं लेते। यहाँ पर Free (मुफ्त) डिस्पैन्सरी चली है, वहाँ से दवाई ले लेंगे, कहते हैं शरीर बीमार है। तुम्हारा मन बीमार है प्यारे! इसकी दवाई ले लो। कहता है हमें तो कोई दुकान ही नहीं मिलती, जहाँ हउमै रोग की दवाई मिलती हो। महाराज कहते हैं, इसकी दवाई होती है, सुन लो ध्यान से -

धारना - हउमै रोग दी शबद है दारू, मिलदी सतिगुरू पूरिआं तों - 2, 2
मेरे प्यारे, मिलदी सतिगुर पूरिआं तों - 2, 2
हउमै रोग दी शबद है दारू, ... - 2

हउमै दीरघ रोगु है दारू भी इसु माहि।
किरपा करे जे आपणी ता गुर का सबदु कमाहि॥ *पृष्ठ - 466*

दारू (दवाई) मिलती है गुरू से, वह है शबद की दवाई। फिर कहते हैं, अपनी कृपा आप पर ही कर। परमात्मा को दोष मत दे कि यदि नाम जपवायेगा तो जपेंगे।

चार प्रकार की कृपा होती है -

तुझ पर कृपा की परमेश्वर ने, तुझे मनुष्य का जामा दे दिया। माँ-बाप ने कृपा की तुझे नशों से बचाकर, पढ़ा लिखा कर आदमी बना दिया। पाल पोस कर बड़ा किया कोई मज़दूरी नहीं मांगी, कोई खर्चा नहीं मांगा। सभी कुछ तेरे लिये कुर्बान कर दिया। तीसरी कृपा गुरू ने कर दी। पाँच प्यारों ने अमृत पान करा दिया, पाँच प्यारों ने नाम की दवाई दे दी कि कह 'वाहिगुरू'। वाहिगुरू का मन्त्र अब दिन रात जपता रह।

चौथी कृपा अब तूने आप करनी है - अमृत बेला में उठना है -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै॥ *पृष्ठ - 305*

फिर क्या करे? फिर कहते हैं -

उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रितसरि नावै।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥ *पृष्ठ - 305*

यह पाँच प्यारे अब जो उपदेश दे रहे हैं कि मूल मन्त्र है यह -

१ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि। जपु॥
आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ *पृष्ठ - 1*

पूरा बताते हैं। सभी एक स्वर में बोलते हैं अमृत पान करने वाले बोलते हैं, फिर पाँचों बोलते

हैं 'वाहिगुरू-वाहिगुरू'। सारे पीछे-पीछे बोलते हैं। कहते हैं यह मन्त्र है, इसी मन्त्र से सभी कुछ सम्भव हो जायेगा। अब तू कृपा अपने ऊपर आप करना -

उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै...........॥ पृष्ठ - 305

फिर इससे क्या होगा -

.... सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥ पृष्ठ - 305

दोष भी, हत्या भी, पाप भी सभी उतर जायेंगे। कहता है "कृपा तो जी आप ही कर दो।" मुझे कहेंगे, "मैं कहता हूँ, "बेटा! जपुजी साहिब के पाठ कर।" नहीं जी, वे तो करने नहीं, आप कृपा कर दो।" मैंने कहा, "कभी तूने यह भी कहा है, रोटी खाते समय कृपा कर दो, मेरे मुँह के अन्दर डाल दो। रोटी तू आप खाती है, नहाती भी तू आप ही है। रोटी भी आप ही पका कर, मुझे खिलाओ भी आप, ऐसे कोई बात बनती है? कभी कोई कहता है कि रोटी खिलाओगे तो खायेंगे। मेज़ पर रखी हुई है, खाता नहीं है। कहता है, "भाई! खिलाओगे तो खाऊंगा। तेरे पास रोटी बनी बनाई मेज़ पर आ गई, अब तो अपने हाथ हिला। चलो मुँह में ग्रास डाल दिया, अब तू चबाता नहीं। फिर कहता है चबवाओगे तो चबाऊंगा।"

खैर, यह काम भी हो जायेगा। ज़ोर-ज़ोर से जबाड़ा दबाते जाओ। आगे गले से कैसे उतारेंगे? कुछ तो करना ही पड़ेगा। फिर आगे चलकर मैदे (पेट) में हज़म कैसे करोगे? वहाँ पर तो फिर आप ही कृपा करता है? नाम जपते समय अटकलें खड़ी करता है।

सो महाराज कहते हैं, यदि सच्चे मन से रोग दूर करना चाहता है तो गुरू शबद ले ले। जब शबद मिल गया, जब तुझे, नाम की प्राप्ति हो गई, नाम तेरे अन्दर प्रकट हो गया, हृदय में बस गया तो दो बातें हो जाया करती हैं - एक तो -

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ पृष्ठ - 949

जब हृदय में बस गया तो 9 निधियां, 18 सिद्धियां तरले करती हुईं आगे पीछे घूमती हैं -

रिधि सिधि सभ भगता चरणी लागी.....................॥ पृष्ठ - 937

चरणों में आकर गिर जाती हैं और कहती हैं कि मेरा प्रयोग करो। वे ठोकरें मारते हैं कि जा दूर रह। दूसरा यह है कि जब नाम हृदय में बस गया तो परम शान्ति 'सत-चित्त-आनन्द' की अवस्था मनुष्य के अन्दर आ जाती है। सभी रोग, हर प्रकार के संशय दूर हो जाते हैं, बेचैनी और तड़पन समाप्त हो जाती है। स्वस्थ अवस्था प्राप्त हो जाती है -

नानक भगता सदा विगासु॥ पृष्ठ - 2

विगास हो जाता है, आनन्द आ जाता है, चेहरे पर प्रकट होना शुरू हो जाता है। ठण्डी आहें नहीं भरता, नेत्रों में क्रूरता नहीं होती, प्यार होता है, प्रत्येक को आकर्षित करता है, बोल में आकर्षण होता है, नेत्रों में झांकने पर आकर्षण होता है क्योंकि अन्दर आनन्द से भरा पड़ा है। उसके अन्दर नाम का निवास हो गया, नाम प्रकट हो गया। जहाँ नाम प्रकट हो गया, वहाँ महाराज जी कहते हैं -

हउमै नावै नालि विरोधु है....................॥ पृष्ठ - 560

दोनों नहीं रहते -

........................दुइ न वसहि इक ठाइ॥ पृष्ठ - 560

या तो हउमै रहेगी या नाम रहेगा। यदि नाम नहीं आया तो समझ लो हउमैं में घूमता है। जब

यह हउमै है तो सेवा का मूल्य नहीं मिला करता प्यारे क्योंकि तेरे अन्दर हउमै है–

हउमै विचि सेवा न होवई ता मनु बिरथा जाइ।
हरि चेति मन मेरे तू गुर का सबदु कमाइ॥ पृष्ठ - 560

तू गुरू शबद की साधना कर और यदि सेवा करके 'मैं' धारण करता है, गुस्से भी होता है, किसी ने कह दिया कि तू क्या करता है? वहीं पर ही गुस्सा आ जायेगा कहेगा, "मैंने कीर्तन भी किया, प्रचार भी किया, घर–बार भी छोड़ा, मुझे ऐसे कहते हैं।" वे तो तभी कहते हैं, तेरे अन्दर हउमै है। यदि हउमै न हो तो तेरे ऊपर प्रभाव ही न पड़े क्योंकि –

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै।
सुख सनेहु अरु भै नही जाकै कंचन माटी मानै।
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहि अभिमाना।
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना।
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा।
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा।
गुर किरपा जिह नर कउ कीनी तिह इह जुगति पछानी।
नानक लीन भइओ गोबिंद सिउ जिउ पानी संगि पानी॥ पृष्ठ - 634

यह अवस्था हो जाती है, जब हउमै मिट जाती है। महाराज कहते हैं, गुरू के शबद की साधना करके जब इस जीवन मुक्त अवस्था में पहुँच गया फिर हुक्म के अन्दर रहता है – स्वंय कुछ भी नहीं किया करता। उसका शरीर फिर cosmic (दरगाही) हुक्म में हिलता है –

हुकमु मंनहि ता हरि मिलै ता विचहु हउमै जाइ॥ पृष्ठ - 560

और यह जो शरीर तुझे दिखाई देता है जिसे 'मैं' कहता है – महाराज कहते हैं कि यह सभी कुछ हउमै है –

हउमै सभु सरीरु है हउमै ओपति होइ॥ पृष्ठ - 560

हउमै के अन्दर पैदा होता है और हउमै में ही मर जाता है –

हउमै वडा गुबारु है हउमै विचि बुझि न सकै कोइ॥ पृष्ठ - 560

बेअन्त गुब्बार चढ़ा हुआ है। कैसे करे? कोई रास्ता है इस भव सागर से पार होने का? भवजल बहुत ही अगाध है। यह जो आ रहा है समुद्री तूफान, एक बार अमेरिका में आया था, 200 फुट ऊँची लहर उठी थीं और 200 मील की रफ्तार से आया था। इतना पानी धरती पर लेकर आया कि बड़ी–बड़ी इमारतों को साथ बहा कर ले गया। सड़कें उखाड़ कर फैंक दीं, उन्हें भी बहाकर ले गया। मैंने वहाँ पर देखा, यह देखो, कितनी ताकत है इसमें? यही गुब्बार है हउमै का, साध संगत जी! अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं होता –

हउमै विचि भगति न होवई..................॥ पृष्ठ - 560

यदि हउमै है तो भक्ति भी नहीं होती –

....................हुकमु न बुझिआ जाइ॥ पृष्ठ - 560

न ही फिर इलाही, अगम्मी हुक्म को जान सकता है–

नानक सतिगुरि मिलिऐ हउमै गई ता सचु वसिआ मनि आइ।
सचु कमावै सचि रहै सचे सेवि समाइ।। पृष्ठ - 560

सतगुरू ने सच शब्द दे दिया तो फिर सच की प्राप्ति हो गई, इस प्रकार हंगता और ममता का

नाश हो जाता है। अतः हउमै के बारे में समझाने का काफी यत्न किया गया है क्योंकि गुरू ग्रन्थ साहिब में हउमै का बहुत बार उल्लेख आता है। कोई-कोई ऐसा शबद होगा जिसमें हउमै का उल्लेख न हो। गुरबाणी में छह चीज़ों का उल्लेख आता है।

थोड़ी-थोड़ी देर के बाद हर शबद में तुम्हें **'सन्त'** के बारे में कोई न कोई बात जरूर मिलेगी। इसके बाद सन्त, गुरमुख को मिले बिना तेरा काम नहीं बनेगा, तू **'गुरमुखों की संगत कर,'** गुरमुखों को मिल, गुरू की बाणी तेरी समझ में तभी आयेगी। जिन्होंने साधना, तप किया हुआ है, उनके मुख से बाणी निकलती है, तब समझ में आ जाती है। सन्त कहते हैं, ''तू गुरू ग्रन्थ साहिब जी की सारी बातें मान ले। जब सारी बातें मानने लगता है तो गुरबाणी कहती है, तू सन्तों के पास जा, मैं तो उनके चरणों की धूल मांगता हूँ, तू भी जा, सेवा कर, तन-मन-धन अर्पण कर दे।'' तीसरा उल्लेख आता है **'मन'** का। चौथा **'शबद'** का, पाँचवा **'हुक्म'** का, छठा **'नाम'** का उल्लेख आता है। यदि ये 6 बातें समझ में आ जाएं तो रास्ता तय हो जाया करता है। अतः महाराज जी बार-बार समझाते हुए कहते हैं -

हउमै करी ता तू नाही.....................॥ *पृष्ठ - 1092*

यदि मैं हूँ तो तू नहीं है -

.... तू होवहि हउ नाहि॥ *पृष्ठ - 1092*

यदि तू है तो 'मैं' नहीं। कहते हैं अजीब पहेली डाल दी? कहते हैं इस बुझारत को ढूंढो-

बुझहु गिआनी बूझणा एह अकथ कथा मन माहि॥ *पृष्ठ - 1093*

बोल कर मत बताना, अन्दर अनुभव में जाकर ढूंढो, हमने क्या बात कही है -

खुदी मिटी तब सुख भए मन तन भए अरोग।
नानक द्रिसटी आइआ उसतति करनै जोगु॥ *पृष्ठ - 260*

जब खुदी, हउमै मिट गई जो वाहिगुरू है, परमात्मा है, वह उसी समय अन्दर भी, बाहर भी, कोई ऐसी जगह नहीं जहाँ उसकी दृष्टि न पहुँचे, हर स्थान पर नज़र आना शुरू हो जाता है।

इस प्रकार भाई लहणा जी ने बड़ी सावधानी के साथ, जैसे प्यासे को पानी की प्यास होती है, एक बूंद भी नीचे नहीं गिरने देना चाहता, इस तरह आपने सारी बाणी विचार श्रवण की और मन करता है कि वे चुप न हो जायें तथा और भी बताएं क्योंकि एक तो होता है सुनते हैं हम, सुनकर कानों से बाहर निकाल देते हैं। हमें पिछली बात भूल जाती है। एक वे होते हैं, जो बाणी सुनते हैं, गुरू ग्रन्थ साहिब का पाठ सुनते हैं, एक तुक भी बिना विचार किये आगे नहीं जाते। भाई साहिब भाई रणधीर सिंघ जी नारंगवाल वाले, आप गुरू ग्रन्थ साहिब जी का पाठ एक चौकड़े में सुना करते थे। एक सैकिन्ड के लिये भी मन को इधर उधर नहीं जाने दिया करते थे। कहा करते थे, ''पता नहीं कौन सा सिद्धान्त गुरू महाराज जी का निकल जाये।''

बाबा लोहगड़िया नामधारी थे। किसी को भी गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अखण्ड पाठ करने की बारी नहीं दिया करते थे। यदि कहना कि बाबा जी एक पाठी और अपने साथ बारी देने के लिये लगा लो, कहते, ''लो गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पाठ में और को सांझेदार बनाऊँ?'' अकेले ही बैठ जाते और अखण्ड पाठ पूरा करके 48 घंटे बाद उठते, पूरा पाठ, न बीच में पानी पीना, न कोई और चीज़ खाना, एक हज़ार अखण्ड पाठ अकेले ने ही किये थे। शक्ति कितनी थी? यह भी देख लो।

बापू जी, (सन्त भाई हीरा सिंघ जी) बीजी के पिता जी, लाहौर में बीमार हो गये। इन्हें कहने

लगे, बाबा लोहगड़िया जी नहीं आये? उन्हें आते हुए दिखाई दे रहे थे। ये हस्पताल से बाहर निकले, बाबा जी आ गये, साथ ही घूम कर फिर सीढ़ियां चढ़ गये। जब सामने पहुँचे तो बापू जी कहने लगे, ''बाबा जी! इतनी देर हो गई, आप आये क्यों नहीं?''

लोहगड़िया जी बोले, ''आपने याद ही अभी किया है, आपका सन्देशा अभी मिला है।''

कहते हैं, ''कहाँ थे?''

उत्तर मिला, ''हम लालामूसे में बैठे थे।''

कहाँ लालामूसा, कहाँ रावलपिण्डी और कहाँ लाहौर? न तो किसी जहाज़ पर चढ़े, न किसी गाड़ी पर, एक step (कदम) उठाया, वहाँ पहुँच गये, ऐसे ही नहीं है, गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी? जो ध्यान से पढ़ता है, उसके अन्दर सारी शक्तियां आ जाया करती हैं।

गुरू महाराज छठे पातशाह, भाई गोपाला को शुद्ध बाणी ध्यान से पढ़ने के बदले, गुरू नानक पातशाह के घर की गद्दी, स्वंय ही उठ कर देने चले थे कि आखिरी पंक्ति पर उन्हें फुरना आ गया।

अतः इस तरह से भाई लहणा जी बाणी सुन रहे हैं, मन में ख्याल आ रहा है कि कहीं बन्द न कर दें। उस समय आप जी को आसा जी की वार की अगली तुक इस तरह सुनाई दी –

धारना – मनमुख हो के जनम गवाइआ, काहे आइआ जग ते – 2, 2
काहे आइआ जग ते – 4, 2
मनमुख हो के जनम गवाइआ .... –2

सचा साहिबु एकु तूं जिनि सचो सचु वरताइआ।
जिसु तूं देहि तिसु मिलै सचु ता तिन्ही सचु कमाइआ।
सतिगुरि मिलिऐ सचु पाइआ जिन्ह कै हिरदै सचु वसाइआ।
मूरख सचु न जाणन्ही मनमुखी जनमु गवाइआ।
विचि दुनीआ काहे आइआ॥ ***पृष्ठ – 467***

दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक गुरमुख होता है, एक मनमुख होता है। मनमुख वह है जिसने गुरू धारण नहीं किया और गुरू के हुक्म में नहीं चलता। एक मनमुख ऐसे भी होते हैं जिन्होंने गुरू धारण तो कर लिया पर मन की मर्ज़ी पर चलते हैं, वह बहुत बुरे होते हैं, दूसरे भी बहुत बुरे होते हैं। मनमुख जो है।

महाराज कहते हैं, ''तू सुखी नहीं है प्यारे?''

कहता है, ''मैं तो दुखी हूँ, मुझे सुख मिल जाये।''

महाराज कहते हैं, ''तेरे मित्र, तेरा भाईचारा तो मनमुख है।''

मनमुख सउ करि दोसती सुख कि पुछहि मित॥ ***पृष्ठ – 1421***

सुखों की बात करता है, तेरा मिलना-जुलना, उठना-बैठना, सारा मनमुखों के साथ है और मनमुख के पास दुख होता है –

मनमुखु दुख का खेतु है दुखु बीजे दुखु खाइ।
दुख विचि जंमै दुखि मरै हउमै करत विहाइ॥ ***पृष्ठ – 947***

मुश्किल बातें नहीं हैं, बड़े आराम से समझ में आ जाती है बाणी। मन के पीछे चलने वाला, पाप बोया करता है, निन्दा करता है, चुगली करता है, ईर्ष्या करता है, निन्दा बो डाली। महाराज कहते

हैं, ''पता है इसका फल क्या मिलेगा?''

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगध करंनि॥ पृष्ठ - 755

मनमुखों में भी जो महामूर्ख हैं, वे किया करते हैं -

मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥ पृष्ठ - 755

बो दिया -

बिख बीजै बिख खाहि॥

विष बोता है, विहु (जहर) खाता है। महाराज कहते हैं, इसका तो जन्म ही व्यर्थ है -

मनमुख जनमु भइआ है बिरथा आवत जात लजाई॥ पृष्ठ - 1265

शर्म (लज्जा) आनी चाहिए इसे क्योंकि यमदूतों की मार खाता ही रहता है। हर समय खाता रहता है -

कामि क्रोध डूबे अभिमानी हउमै विचि जलि जाई॥ पृष्ठ - 1265

हउमै में जलता रहता है, काम क्रोध के तपते हुए पानी में डूब रहा है -

तिन सिधि न बुधि भई मति मधिम....................॥ पृष्ठ - 1265

मनमुख के पास बुद्धि ही नहीं है, मति मद्धम पड़ गई है-

.... लोभ लहरि दुखु पाई॥ पृष्ठ - 1265

लोभ की लहर में, मैं अभी यह कर लूँ, वह काम पूरा कर लूँ, जल्दी-जल्दी पैसा कमा लूँ, वह काम करके मेरी जेब भर जाये पैसों में डूबा रहता है। कहते हैं लोभ की लहरों में भागा फिरता है -

गुर बिहून महा दुखु पाइआ जम पकरे बिललाई॥ पृष्ठ - 1265

गुरू बनाया नहीं है। महादुख, हद से भी ज्यादा दुख पाता है। जब फिर यमदूतों ने पकड़ लिया फिर विलाप करता है, फिर नहीं देखता, मानता नहीं है, महाराज कहते हैं -

इहु सरीरु माइआ का पुतला विचि हउमै दुसटी पाई।
आवणु जाणा जंमणु मरणा मनमुखि पति गवाई॥ पृष्ठ - 31

मनमुख ने अपनी पत्त (इज्जत) गवां ली। आता है, चला जाता है, जन्म लेता है, मर जाता है -

मनमुख पथरु सैलु है.....................॥ पृष्ठ - 419

महाराज कहते हैं, पत्थर है, पत्थर को भिगो कर देख लो, कभी नहीं भीगता, साथ ही सैलु कहा है -

मनमुख पथरु सैलु है ध्रिगु जीवणु फीका॥ पृष्ठ - 419

धिक्कार कहते हैं ,ऐसे जीवन को। सौ बार धिक्कार है, मनमुख तेरा जीना ही फीका है -

जल महि केता राखीऐ अभ अंतरि सूका॥ पृष्ठ - 419

पानी में पत्थर को रख लो। बेशक पत्थर पानी में 100 साल पड़ा रहे, जब बाहर निकालोगे तो अन्दर से सूखा ही निकलेगा। ''क्या पढ़े लिखे भी मनमुख हैं?'' कहते हैं, ''हाँ! उनकी जो विद्या है, मनमुखों की, वह भी विहु (ज़हर) ही है -

मनमुखु बिदिआ बिक्रदा बिखु खटे बिखु खाइ।

मूरखु सबदु न चीनई सूझ बूझ नह काइ॥ *पृष्ठ - 938*

मनमुख विणु नावै कूड़िआर फिरहि बेतालिआ॥ *पृष्ठ - 1284*

कहते हैं, भूत बना फिरता है। बेताल भूत को कहते हैं, झूठ को कहते हैं, पशु बना फिरता है। ऐसा कहते हैं कि मनुष्य की चमड़ी के अन्दर पशु लपेट दिया। जो अन्दर से काले हैं -

पसू माणस चंमि पलेटे अंदरहु कालिआ॥ *पृष्ठ - 1284*

अत: इस तरह जब आपने बाणी सुनी, मन पर बहुत गहरा असर हुआ। सोच में पड़ गये कि बार-बार गुरू का उल्लेख आता है। गुरू के बिना हउमै दूर नहीं होती गुरू के बिना गुरमुख नहीं बना जाता। मुझे तो इस बात का पता ही नहीं था कि गुरू की ज़रूरत है। मैं तो यह समझता था कि देवी की पूजा कर लो, उसकी भेटें गा लो, हे देवी, तू ऐसे करती है, तूने शेर पर सवारी की, तूने अमुक महीने में एक राक्षस को मारा था, तूने अमुक महीने में एक दैंत को मारा था, हम तो यही समझते थे। मैंने तो आज तक ये बातें सुनी ही नहीं, न ही कहीं कोई साधु मिला है ऐसा, जो ऐसे वचन करता हो। अभी ऐसा सोच ही रहे थे, तभी इसी भाव से मिलती जुलती आवाज़, इसके कानों में पड़ी -

धारना - तेरा जनम अमोलक हीरा, कौडीआं दे भाअ जांवदा - 2, 2
मेरे प्यारे कौडीआं दे भाअ जांवदा - 2, 2
तेरा जनम अमोलक हीरा .... - 2

रैणि गवाई सोइ कै दिवसु गवाइआ खाइ।
हीरे जैसा जनमु है कउडी बदले जाइ॥ *पृष्ठ - 1284*

कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ।
मिलु जगदीस मिलन की बरीआ। चिरंकाल इह देह संजरीआ।
कई जनम सैल गिरि करिआ। कई जनम गरभ हिरि खरिआ।
कई जनम साख करि उपाइआ। लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ॥ *पृष्ठ - 176*

कितना कीमती शरीर, कितने बड़े-बड़े वायदे करके आया इस संसार में। महाराज कहते हैं, भूल गया सारे वायदे? माता के गर्भ में जब तू था, तुझे 100 जन्मों का पता था।

तब तुझे पता था, जब तू माता के पेट में था कि मैं तो कई बार कीड़ा बना, कई बार पतंगा बना, कई बार हाथी बना, कई बार मछली बना, कई बार हिरन बना। कई जन्मों तक मैं उड़ने वाला पन्छी बना रहा, कहीं मैं साँप बन कर चूहों के बिल ढूँढता रहा। कई बार मैं घोड़ा बना, कई बार मैं बैल बना, बहुत दुखी हुआ, गधा बना -

मिलु जगदीस मिलन की बरीआ।
चिरंकाल इह देह संजरीआ।
कई जनम सैल गिरि करिआ॥ *पृष्ठ - 176*

पत्थर भी बना हुआ मैं सदियों तक पड़ा रहा -

कई जनम गरभ हिरि खरिआ॥ *पृष्ठ - 176*

पेट में आया भी मैं, शरीर न बन सका, बीच में ही मर गया -

कई जनम साख करि उपाइआ।। *पृष्ठ - 176*

मैं तो वृक्ष भी बनता रहा हूँ -

लख चउरासीह जोनि भ्रमाइआ॥ पृष्ठ - 176

84 लाख यौनियां सभी देख रहा था कि यह ऐसी हैं, वहाँ रोता है, कांपता है। रहता किसके सहारे है? महाराज कहते हैं, "वहाँ नाम की धुन सुनती है इसे। यह नाम के सहारे रहता है" -

गरभ कुंट महि उरध तप करते। सासि सासि सिमरत प्रभु रहते॥ पृष्ठ - 251

श्वांस-श्वांस परमेश्वर का भजन करता है, अब याद करवाते हैं। पेट में फिर कहता है, "हे प्रभु! मुझे अब निकाल ले, मुझे माफ कर दे। मैं तोरी की तरह उलटा लटक रहा हूँ, मुझे माफ कर दे। मैं अब तेरा नाम 24 घंटे जपूंगा।"

उरझि परे जो छोडि छडाना॥ पृष्ठ - 251

प्रभु कहते हैं, तू तो झूठे लोगों में एक नम्बर का झूठा है। तेरा विश्वास नहीं। जानवरों का तो मैं विश्वास कर सकता हूँ। उनकी आदतें होती हैं, वे अपनी आदतों के अनुसार चलते हैं। वे तेरी तरह बेहुदरे (मनमर्ज़ी) नहीं चलते। पन्छियों का जब पेट भर जाता है इकट्ठा नहीं किया करते - वृक्ष से उड़ान भरी, रात काटी, सुबह की चिन्ता नहीं है। जहाँ पर भी चुगने लग गये, वहीं पर ही उन्हें पेट भर भोजन मिल जाता है -

फरीदा हउ बलिहारी तिन्ह पंखीआ जंगलि जिंन्हा वासु।
ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु॥ पृष्ठ - 1383

परमात्मा का सहारा नहीं छोड़ते और तू तो मुझे भी भूल जाता है। तुझे गुरू कहेंगे रिज़क परमात्मा देता है -

काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ।
सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ॥ पृष्ठ - 10

ना करि चिंत चिंता है करते॥ पृष्ठ - 1070

कहीं मानता है तू? तू तो कहता है, यह सारे कर्म मैं करता हूँ। मैंने न किया तो क्या होता? तुझे सन्तों ने कहना है -

नकि नथ खसम हथ किरतु धके दे। जहा दाणे तहां खाणे नानका सचु हे॥ पृष्ठ - 653

अरे भाई, तुझे धक्का लग जायेगा, वहीं का जहाँ पर तेरा रिज़क रखा हुआ है। इस काम में वहाँ जाकर लिप्त न हो जाना। देख, जानवर उलटे कामों में नहीं फंसते। इकट्ठा नहीं करते, जमा नहीं करते। रिज़क उनका पड़ा है। तू कोई बहुत बड़ा है क्या? तेरी तो संख्या भी गिनी जा सकती है, उनकी संख्या तो गिनती से बाहर है, उन्हें भी परमेश्वर दे रहा है। भूल जाना है तूने।

कहता, "नहीं महाराज! मैं 24 घंटे नाम जपूंगा।"

परमेश्वर कहता है, "यदि 24 घंटे जपेगा तो मैं तेरा गुलाम बनकर, तेरे काम करता रहूंगा" -

अचिंत कंम करहि प्रभ तिन के जिन हरि का नामु पिआरा॥ पृष्ठ - 638

कहते हैं, "मैं तेरे सारे काम किया करूंगा। तेरे लिये रोटी मैं लाकर दूंगा, तेरे कपड़े भी मैं धोया करूंगा। सब कुछ करूंगा मैं। तू जपेगा 24 घंटे नाम? तेरे से नहीं जपा जाना प्यारे, जा! तुझे मैंने माफ किया। मुझे एक दिन के 2400 श्वांस दे दिया कर, 24000 श्वासों में, बाकी श्वासों में खूब कमाई कर, जो तेरी बचत हो उसमें से दसवां हिस्सा मेरे निमित्त कर दिया कर। लागत ईमानदारी से निकालना कि इतने पैसे मेरी लागत है। यह मेरी बचत है, यह हिस्सा अब गुरू का है। जाओ, मैंने तेरे पाप भी

माफ कर दिये क्योंकि किरत करते समय तेरे हाथों जानवर भी मर जाते हैं। Spray (छिड़काव) कर देगा, हज़ारों ही मर जायेंगे जो फसलों की रक्षा करते हैं, वे भी मर जायेंगे जो दुष्ट हैं, वे भी मर जायेंगे, तुझ पर पाप नहीं चढ़ने दूंगा। तू दसवन्ध निकालते रहना।

और जब संसार में आया था तो वायदे आदि किये थे महाराज कहते हैं -

लिव छुड़की लगी त्रिसना माइआ अमरु वरताइआ॥ *पृष्ठ - 921*

भूल गया परमात्मा को -

उरझि परे जो छोडि छडाना। देवनहारु मनहि बिसराना॥ *पृष्ठ - 251*

उसे बिल्कुल भूल गया, याद नहीं करता। सन्त याद करवाते हैं, ऐसे कह-कह कर -

धारना - हो गिआ करजाई करजा काहतों नहीओं मोड़दा - 2, 2
कासतों नहीं मोड़दा करजा, कासतों नहीं मोड़दा - 2, 2
हो गिआ करजाई, ... - 2

जब से पैदा हुआ है, आज तक गुणा करके देख ले, दिनों की गिनती करके कि कितना कर्ज़ा चढ़ गया, श्वासों का कर्ज़ा वापिस करना है? नहीं महाराज! यह मनुष्य तो कभी भी कर्ज़ा लेकर वापिस नहीं लौटायेगा। लेते समय तो बहुत खुशी-खुशी ले लेता है, जब देने की बारी आती है फिर रोता है। वापिस नहीं करता, बल्कि मुँह फेर लेता है। लड़ाईयां, झगड़े, फसाद, मुकदमे बाजी यह तो दुनियाँ में वापिस नहीं लौटाता, तेरा कर्ज़ा कौन लौटायेगा? परमेश्वर जी! तेरा कर्ज़ा किसी ने नहीं लौटाना? तूने कौन सा मुकदमा चलाना है? तेरे साथ वायदा किया था, यह वायदा फरामोश है, भूल गया है। देखने वाली चीज़ें परमेश्वर ने दीं। पुत्र पुत्रियां दीं, बच्चे दिये, माँ भी दी, पिता भी दिया, घर-बार दिया, स्वास्थ्य दिया, कपड़े दिये, पशु आदि दूध पीने के लिये दिये, ज़मीन जायदाद दी, इन्हें तो याद रखता है, इन सभी चीज़ों को याद रखता है। यदि रूमाल भी कहीं भूल जाये तो याद रहता है इसे कि मेरा रूमाल कहाँ रह गया? इतनी छोटी सी बात भी याद रखता है। यदि याद नहीं रखता तो महाराज कहते हैं, वाहिगुरू को याद नहीं रखता -

धारना - तैनूं विसरिआ करतार मेरी जिंदड़ीए - 2, 2
मेरी जिंदड़ीए ओ, मेरी जिंदड़ीए - 2, 2
तैनूं विसरिआ करतार मेरी जिंदड़ीए - 2

कूड़ु राजा कूड़ु परजा कूड़ु सभु संसारु।
कूड़ु मंडप कूड़ु माड़ी कूड़ु बैसणहारु।
कूड़ु सोइना कूड़ु रुपा कूड़ु पैनणहारु।
कूड़ु काइआ कूड़ु कपड़ु कूड़ु रूपु अपारु।
कूड़ु मीआ कूड़ु बीबी खपि होए खारु।
कूड़ि कूड़ै नेहु लगा विसरिआ करतारु।
किसु नालि कीचै दोसती सभु जगु चलणहारु।
कूड़ु मिठा कूड़ु माखिउ कूड़ु डोबे पूरु।
नानकु वखाणै बेनती तुधु बाझु कूड़ो कूड़ु॥ *पृष्ठ - 468*

परमेश्वर को भूल गया झूठी चीज़ों के चक्कर में पड़कर, तेरे साथ वायदा जरूर किया था, सन्त याद भी करवाते हैं, आवाज़ें लगा-लगा कर बताते हैं, पर यह जीव नहीं मानता।

सो इस तरह से भाई लहणा जी ने सुन लिया। जी चाहता है कि बन्द न कर दें, कहीं बाणी

खत्म न हो जाये क्योंकि पहली बार गुरू नानक महाराज जी की बाणी लहणा जी ने सुनी थी। बाणी अन्दर प्रवेश करती है, अकेला-अकेला सिद्धान्त मन में अंकुर हो जाता है। जिज्ञासु थे, पूरे थे। पर अभी जाग नहीं लगी थी। उस समय जब आसा जी की वार खत्म हो गई, तब आप भाई जोध के पास आए। आकर कहने लगे, ''भाई जोध! यह किस का कलाम पढ़ रहा था तू? ये जो तूने बिशन पद पढ़े हैं ये किसके हैं?''

भाई जोध जी कहने लगे, ''बिशनपद नहीं हैं ये, यह तो गुरू नानक साहिब की बाणी है।''

कहते हैं, ''यह बाणी तो रास्ता खोलती चली जा रही है। मैं तो हैरान हूँ, इतनी सरल बाणी। ये मुझे तो ऐसे लगी है जैसे बाण लगते हैं। तू मुझे बता सकता हैं, गुरू नानक साहिब कहाँ रहते हैं? उनके बारे में मैं तुझ से कुछ पूछना चाहता हूँ क्योंकि अब समय भी बहुत बीत गया है, आप भी बाणी अमृत बेला से बड़ी लय के साथ पढ़ते रहे हो और मुझे भी काम करना है। यदि आप मुझे कुछ समय दें तो मैं आपके साथ इस मसले पर बात करना चाहता हूँ। मैं आपकी सारी बाणी सुनने के पश्चात इस निश्चय पर पहुँचा हूँ, इस नतीजे पर पहुँचा हूँ कि गुरू के बिना गति नहीं हुआ करती। सुनता तो मैं पहले ही आया हूँ, ***'गुरू बिना गति नहीं, शाह बिना पत्त नहीं'*** ये दोनों जरूरी हैं। पर भाई जोध जी! एक बात है, इसे तू बुरा मत मानना। मुझे ऐसा भी बताया गया है कि गुरू कच्चे भी होते हैं, पक्के भी होते हैं, पण्डित भी होते हैं, अन्धे भी होते हैं, समरथ भी होते हैं। मैं ढूँढता फिर रहा हूँ, मुझे कोई नहीं मिला आज तक और आपने जो यह बाणी सुनाई, यह सुनने के पश्चात मुझे यह पता चला है कि यह किसी पूर्ण महापुरुष की बाणी है तथा इसके बारे में मैं आपसे कुछ चर्चा करना चाहता हूँ क्योंकि जो मेरे मन में संशय है, ये यदि मेरे अन्दर ही पड़े रह गये, वे तो ऐसे ही रह जायेंगे जैसे कुंए में से जितना मर्ज़ी पानी निकाल लें, पर दुर्गन्ध नहीं जाती।

यदि कोई संशय, शंका, दिल में पड़ी हो, मन में रह जाये तो वह मिटती नहीं है, इसलिये कृपा करो, मुझे थोड़ा सा समय प्रदान करो ताकि मैं अपने इन संशयों की निवृत्ति कर सकूं। गुरू नानक पातशाह के बारे में जानना चाहता हूँ कि गुरू नानक महाराज किसके चेले हैं? उन्होंने कैसे पूर्णता प्राप्त की? कहाँ के रहने वाले हैं? क्योंकि मैं आस-पास के क्षेत्र के बारे में काफी जानकारी रखता हूँ, हम व्यापार करते हैं, घूमते फिरते रहते हैं। काफी दूर दराज़ तक हमारा लेन-देन चलता है। शाही का भी काम करते हैं, थोक का भी काम करते हैं। लोग सामान, चीज़ें ले जाते हैं, कई बार पैसे नहीं दे जाते। बीस-बीस, तीस-तीस मील दूर जाकर लाने पड़ते हैं। मैंने आज तक गुरू नानक पातशाह का नाम नहीं सुना।

उस समय भाई जोध जी कहने लगे, ''लहणा जी! यदि अभी आपके पास समय है तो अभी चर्चा कर लेते हैं। गुरू नानक महाराज जी की बातें करते हुए बेशक सारा दिन बिता दो-

तै साहिब की बात जि आखै कहु नानक किआ दीजै।
सीसु वढे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै॥ ***पृष्ठ - 558***

हमारे प्यारे की बात हो जाये, चाहे सारे ही काम क्यों न बिगड़ जायें, हमने तो अपने प्यारे की कथा कहनी है। अपने प्यारे की जो भी बात कहनी है, यह भजन हुआ करता है। यदि हम अपने गुरू का उल्लेख करते हैं, यह हमारा भजन होता है और यदि अभी समय नहीं है तो फिर निकाल लेना।''

भाई लहणा जी बोले, ''संग इकट्ठा हो गया है, मैं यहाँ आ गया, वहाँ पर गर्मी थी, मैं वहाँ

पर नाचता था, भेंटे गाता था और मैं तो स्नान करने आया था। कुदरती भाग जाग पड़े, मैं तुम्हारे द्वारा गाई जा रही बाणी को समझने का यत्न करने लगा और 2-3 घंटे बीत गये। मेरे साथ आये हुए प्रेमियों ने जाना भी है, मैंने उन्हें विदा करना है। आज तो मुझे छुट्टी दे दो, मैं कल किसी समय आपके पास आऊंगा, फिर आप मुझे अच्छी तरह से समझाना क्योंकि मैंने गुरू नानक साहिब को देखा नहीं है। तुम्हारे से यह नाम सुनकर, मेरे अन्दर कोई अगम्मी आकर्षण होना शुरू हो गया है, जैसे मेरा कोई उनके साथ सम्बन्ध हो, अतः मुझे उनके बारे में अच्छी तरह से समझाओ।''

सो दूसरे दिन समय निश्चित कर दिया गया, अब समय आपको भी इजाज़त नहीं देता। यहीं पर ही हम समाप्त करते हैं। इसके पश्चात अगले दीवान में वार्ता चलेगी -

बाबाणीआ कहाणीआ पुत सपुत करेनि॥ *पृष्ठ - 951*

बुजुर्गों की, महापुरुषों की कहानियाँ हमारे जैसे कपूतों को भी सपूत बना देती हैं। अब ध्यान लगाकर श्रवण करना कि सिक्खी क्या होती है? कैसे पालना की जाती है? सिक्खी कैसी होती है? कितनी मीठी होती है?

पहले कितनी फीकी होती है बाद में कितनी मीठी होती है? इन सारी बातों का विस्तार से वर्णन किया जायेगा। अब सभी प्रेमी गुरू सतोतर में बोलो, पहले आनन्द साहिब पढ़ो, उसके पश्चात जिन्होंने अभी तक जुबान नहीं खोली, उनके सामने बेनती है कि भाई! अपनी रसना पवित्र कर लो, बहुत मुश्किल से ऐसा समय मिलता है। सारे बोलें।

- *आनन्द साहिब* -

- *गुरू सतोतर* -

- *अरदास* -

3

शान..।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीउ महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर।
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार।

धारना - तुझ बिन कवन हमारा,
मेरे प्रीतम प्रान अधारा - 2, 2
मेरे प्रीतम प्रान अधारा - 4, 2
तुझ बिन कवन हमारा,..........-2

तुझ बिनु कवनु हमारा। मेरे प्रीतम प्रान अधारा।
अंतर की बिधि तुम ही जानी तुम ही सजन सुहेले।
सरब सुखा मै तुझ ते पाए मेरे ठाकुर अगह अतोले।
बरनि न साकउ तुमरे रंगा गुण निधान सुखदाते।
अगम अगोचर प्रभ अबिनासी पूरे गुर ते जाते।
भ्रमु भउ काटि कीए निहकेवल जब ते हउमै मारी।
जनम मरण को चूको सहसा साधसंगति दरसारी।
चरण पखारि करउ गुर सेवा बारि जाउ लख बरीआ।
जिह प्रसादि इहु भउजलु तरिआ
जन नानक प्रिअ संगि मिरीआ॥ *पृष्ठ - 206*

धारना - कोई किसे दा किसे दा कोई,
मेरा तूं है इको मालका - 2, 2
मेरा तूं है जी, इको मालका - 2, 2
कोई किसे दा किसे दा कोई, ...- 2

किसही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू।
किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही॥ *पृष्ठ - 792*

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 4, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए,......-2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

परवान हुई रूहों का जो जीवन है, वह सांसारिक लोगों से न्यारा हुआ करता है, उनकी हर

बात न्यारी हुआ करती है, काफी देर तक कायम रहती है। अन्धेरे संसार में Light House (प्रकाश स्तम्भ) बनकर अगुआई करती है। हजारों ही जीवनियों को दुर्घटना से बचाती है। सो ऐसी न्यारी कथा का हम पिछले कई दीवानों में उल्लेख करते आ रहे हैं। वह यह था कि गुरू अंगद साहिब महाराज, किस विधि से इतनी उच्च पदवी पर पहुँचे, जबकि वे एक साधारण सा जीवन जी रहे थे। हमारे और उनके जीवन में बहुत अन्तर है। हम जो सत्संग में बैठे हैं, हमें जन्म से ही पता है कि गुरू ग्रन्थ साहिब जी के पीछे चलना है, गुरू नानक पातशाह जी को गुरू मानना है। गुरू दशमेश पिता जी के बारे में हम सुनते आ रहे हैं, बाणी सुनते आ रहे हैं और हमारी विरासत में आया है कि मेरा पिता भी सिखी में था, दादा भी सिखी में था, पड़दादा भी सिखी में था, पर गुरू अंगद साहिब जी की विरासत में तो यह बात आई ही नहीं थी। उस समय गुरू नानक पातशाह को केवल नेत्रों वाले ही जानते थे, अन्धा संसार नहीं जानता था। पास रहने वाले नहीं जानते थे। बल्कि बहुत से ऊजां (दोष) लगाते थे - कोई कहता था कुमार्गी है, इसने अपना अलग रास्ता चला दिया, वेदों-शास्त्रों के उलट बातें कर रहा है, शरां (नियमावली) के विरुद्ध बातें कर रहा है और कुछ उन्हें कहते थे कि यह संसार में भूत पैदा हो गया है, कोई उन्हें बेताल कहता। बेताल कहते हैं बड़े प्रेत को। कारण क्या था? जब मनुष्य किसी दलील में हार जाये, वह झुंझलाहट में आ जाता है और फिर वह दो काम करता है या तो लड़ाई किया करता है या फिर निन्दा किया करता है।

सो गुरू नानक पातशाह ने यहाँ आकर जो रास्ता बताया वह बिल्कुल सरल था। यदि आप गंगा स्नान के लिये हरिद्वार जाते हैं, तो वहाँ आम लोगों में यह भावना होती थी कि वे सूर्य को जल चढ़ाएं। गुरू नानक पातशाह समझते थे कि सूर्य जो है वह हाइड्रोजन का विस्फोट है, एक आग का गोला है, जिसकी किरणें 50 लाख मील दूर तक जाती हैं। चान्द हमारी धरती से 2 लाख मील के करीब-करीब दूर है और यह 50 लाख मील, इतनी दूर प्रकाश की किरणें जाती हैं। यदि कोई चीज़ इसके निकट चली जाये तो सूर्य में इतनी विद्युत शक्ति है कि उसी समय, उस वस्तु को खत्म कर देगा, वस्तु जल जायेगी, कुछ भी नहीं रहेगा। Energy (ऊर्जा) में बदल देगा और फिर पानी का तो प्रश्न ही पैदा नहीं होता। कोई ऐसी और वस्तु नहीं थी यदि हम यह भी बात कहें कि ऊपर को यदि इतने आदमी पानी फैंके तो हवा ठण्डी हो जाती है। हवा तो, यदि कल सारा दिन वर्षा होती रहे, आज फिर गर्म हो जाया करती है। अत: प्रकृति ने अपना प्रबन्ध स्वंय ही किया हुआ है। महाराज जी ने इसे एक वहमपरस्ती समझा कि वहम के अन्दर दुनियाँ फंस गई, बात समझते नहीं हैं।

चाँद और सूर्य दोनों ग्रह हैं। सूर्य के चारों ओर हम धरती सहित घूमते हैं तथा चन्द्रमा हमारी धरती के चारों ओर घूमता है और इनके गर्व से देवता भी भरपूर हैं, पर उन्हें पानी की तो जरूरत ही नहीं, पानी तो बेअन्त है, पानी वे पीते भी नहीं क्योंकि Anti Matter (बिना मादा के) संसार है वे Super Matter (मादे से भी परे) के बने हुए हैं। उन्हें भूख प्यास नहीं लगती।

अत: गुरू नानक पातशाह! इन सभी बातों से लोगों को बाहर निकालने के लिये वहाँ स्नान करने लगे, जहाँ बड़े-बड़े साधु महात्मा स्नान कर रहे थे। उस सीढ़ी पर गये क्योंकि आपका वेश भी उसी तरह का था, अन्यथा वहाँ घुसने ही नहीं देना था। महाराज जी ने इसलिये ही भेष धारण किया था कि सन्त महात्मा बात ही नहीं करते थे कि इसने तो गृहस्थियों के वस्त्र पहने हुए हैं। अत: उसी तरह का बनकर जाते थे, तब वे बात करते थे। जब आप पानी में घुसे, आपने पानी पश्चिम की ओर फैंकना शुरू कर दिया,

सूर्य की ओर पीठ कर ली। बड़ी जल्दी-जल्दी पानी ऊपर को उछालने लगे, सीढ़ियों की तरफ उछाले जा रहे हैं। एक ने देखा, दूसरे महात्मा ने देखा तो उन्होंने आपस में कानाफूसी की कि इसे क्या हो गया है, यह इधर को पानी फैंके जा रहा है? वहाँ के बड़े-बड़े सन्त, पुजारी जो थे, उनके ध्यान में भी यह बात आई कि यह आदमी पानी किधर फैंक रहा है? उन्होंने कहा, ''बाबा! तू पानी उधर मत फैंक, इधर फैंक।'' महाराज जी ने किसी की बात न सुनी, बस पानी फैंके जा रहे हैं। बड़ी तेज़ी के साथ जल चढ़ा रहे हैं। आखिर बहुत से साधुओं ने इकट्ठे होकर कहा, ''यह तुम क्या करने में लगे हुए हो, दम फूला हुआ है और पानी इधर को फैंके जा रहे हैं और सभी दो-दो अंजलि पानी फैंकते हैं, तू दस अंजलियां भर कर फैंक देता है।'' आपने कहा, ''तुम पहले मुझे समझाओ कि तुम पानी इधर क्यों फैंक रहे हो?'' मुझे तो अभी तक समझ में नहीं आया।

उस समय सभी का ध्यान इनकी ओर हो गया कि इसे आज तक पता ही नहीं कि जल क्यों चढ़ाया जाता है? तो वह नईं-नईं बातें बना-बना कर कहने लगे कि पानी ऊपर को फैंक कर उसके अन्दर से देखने पर निगाहें तेज़ होती हैं। होगा कोई मैडिकल से सम्बन्धित सिद्धान्त इसे हम गलत नहीं कहते, यदि यह विधि ठीक हो तो पानी का ऐसा प्रबन्ध किया जा सकता है कि लगातार पानी फैंका जाये जिसकी नज़र कमज़ोर हो, वह उस पानी के नीचे, घंटों बैठकर सूर्य को देखता रहे, तो नज़र दृष्टि तेज़ हो सकती है। अंजलि का पानी कितनी देर हमारे सामने ठहरेगा?

अत: ये छोटी-छोटी दलीलें हैं, फोकट कर्मों की दलीलें हैं, कोई बड़ी बात नहीं है पर आदमी का विश्वास होता है, उसे भी चुनौती देना ठीक नहीं होता, जब तक कि उसे बदले में कोई नई चीज़ न दी जाये।

सो कहने लगे, ''हम सूर्य को पानी देते हैं।'' महाराज जी कहते हैं, ''सूर्य कितनी दूर है?'' उन्होंने उस समय के हिसाब से बताया कि करोड़ों मील दूर है। महाराज जी ने फिर कोई बात नहीं की, बड़ी तेज़ी से फिर पानी फैंकने लग गये।

वे बोले, ''भाई! तू बात तो बता, यह पानी इधर की ओर ही क्यों फैंके जा रहा है?''

महाराज कहते हैं, ''मुझे हटाओ मत। यदि तुम्हारा पानी करोड़ों मील दूर पहुँच सकता है तो मेरे खेत तो केवल तीन सौ मील ही दूर हैं, धान बो कर आया हूँ और बरसात नहीं हुई है। इसलिये मैं जल्दी-जल्दी पानी दे रहा हूँ।''

बहुत बड़ा इकट्ठ हो गया। कहने लगे, ''देखो यह आदमी क्या कहता है?'' रौबदाब है, चेहरे पर जलाल है। वे कोई साधारण आदमी नहीं है। जिधर भी देखते उधर विजय ही करते जाते हैं। नेत्रों की ही शक्ति ऐसी है कि जो भी देवता है वही बेताब होकर ला-जवाब होता जाता है। बात समझ में नहीं आती। उस समय बड़े-बड़े साधु, पण्डित जिन्हें धुरन्धर कहते थे आ गये। उन्होंने महाराज जी के साथ विचार विमर्श किया। महाराज जी ने सभी का संशय दूर कर दिया। जो कट्टरवादी होते हैं, वे चाहे प्रत्यक्ष भी क्यों न देख लें, वे अपना दृष्टिकोण नहीं छोड़ा करते। उनके पास बहुत से बहाने होते हैं अत: कोई कहेगा कि यह तो चेटकी है अर्थात चेटक करता है, उसकी बुजुर्गी को नहीं मानना, कोई कहेगा कि रिद्धि सिद्धि दिखा रहा है। वे अपना हठ नहीं छोड़ते।

अत: काफी लोगों ने माना ही नहीं। कहने लगे, ''देखो, पिता, पुरखों की मर्यादा तोड़ रहा है,

यह तो भूत है, बेताल है। यह संसार का आम व्यवहार है, जब सहमत न हों उस समय ऐसे ही वचन कहा करते हैं। अपनी सोच, को ही सही मानते हैं।''

उसी तरह इसी शृंखला में गुरू अंगद साहिब जिनका नाम भाई लहणा था, पहले से ही आप देवी पूजा से सम्बन्ध रखते थे। जत्थों के रूप में हर साल जाया करते थे। आप जत्थे के मुखिया होने के नाते सैकड़ों की संख्या में संगत लेकर जाया करते थे। हर साल जाते तथा फिर इस प्रचार को जारी रखने के लिये आप जगराते किया करते थे। कभी कहीं तो कभी कहीं? जगह-जगह पर जगराते करते और देवी माता की भेंटे गाते क्योंकि संसारी व्यक्ति थे। संसारी लोगों को संसार की जरूरत होती है, उन्हें ही पदार्थों की जरूरत होती है। जितने भी देवता हैं, इनकी आराधना इसीलिये ही की जाती हैं क्योंकि इनके पास पदार्थ हैं। आम धारणा है कि शिवजी भोले नाथ को मना लिया जाये, तो जल्दी खुश हो जाते हैं और जल्दी ही पैसा टका आ जाता है। लक्ष्मी को माया का रूप कहते हैं। दीवाली वाली रात को यदि दरवाज़े खुले रखे जायें और इन्तज़ार की जाये तो लक्ष्मी आ जाती है, ऐसे-ऐसे विश्वास प्रचलित हैं। गुरू घर में ऐसी बातें नहीं आती, गुरू घर में तो ऐसा आता है कि -

तीरथ कीए एक फल, संत मिले फल चार।

महापुरुषों का मत है कि तीर्थ करने पर एक फल मिलता है, सन्तों के पास चार पदार्थ होते हैं -

गुरू मिले फल अनेक है कहत कबीर विचार।

चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ *पृष्ठ - 266*

यदि गुरू मिल जाये तो फिर फलों की गिनती ही नहीं होती, फिर गुरू का ही ध्यान कर लो, गुरू को ही मान लो। गुरू के पास सभी कुछ है -

जो मागहि ठाकुर अपुने ते सोई सोई देवै।
नानक दासु मुख ते जो बोलै ईहा ऊहा सचु होवै॥ *पृष्ठ - 682*

जो मागहि सोई सोई पावहि सेवि हरि के चरण रसाइण॥ *पृष्ठ - 714*

फिर सबसे बड़े को ही मना लो जिसके पास सभी कुछ है। जो केवल एक चीज़ ही लिये घूम रहा है उसके साथ कैसी बात? चाहिये तो सभी चीज़ें, कितनों को मना लोगे? एक गोभी वाला है, उसे मना लो, उसके पास से गोभी ही मिलेगी, एक हल्दी वाला है फिर उसे मनाओ क्योंकि हल्दी भी उसमें डालने के लिये चाहिये। फिर नमक वाले को मनाओ, फिर मिर्च वाले को मनाओ, फिर लकड़ियों वाले को मनाओ। सारा ही हो -हल्ला सा मच जायेगा, इस जिन्दगी में कितनों को मना पाओगे -

मै सभु किछु छोडि प्रभ तुही धिआइआ॥ *पृष्ठ - 371*

एक का ध्यान धर लो, जिसके पास सभी कुछ है। पर उस समय एक प्रचलित रीति रिवाज़ों के अनुसार आप देवी की भक्ति किया करते थे। उन दिनों खड़तालों (चिमटे झान्झ) से तथा घुटनों तक घुंघरू डालकर नाच किया करते थे। पुरखों द्वारा चले आ रहे रिवाज़ के अनुसार इसी ओर लग गये। आज जगराता करने के बाद, गर्मी ज्यादा होने के कारण, आप स्नान करने के लिये पास ही गाँव के तालाब पर चले गये। उन दिनों में तालाब बिल्कुल साफ सुथरे रखे जाते थे। इन तालाबों में पानी इतना साफ रखा जाता था कि लोग इस पानी से कुरली भी कर दिया करते थे, दांतुन आदि भी करते थे। स्नान करना तो आम बात थी। वहाँ पर स्वच्छ जगह होती थी। बन्दगी करने वाले अपने आसन, वहीं पर बिछा कर

भजन बन्दगी भी किया करते थे। वहाँ भाई जोध, जो जाट थे संगर गाँव के थे, आप स्नान करके, पास ही बैठकर जपुजी साहिब पढ़ रहे थे। भाई लहणा जी ने भी आकर स्नान किया। स्नान करने के बाद आप भाई जोध जी के पीछे ही बैठ गये और जो कुछ भाई जोध पढ़ते थे, उसे समझने की कोशिश की क्योंकि कुछ एक शब्द उनके कानों में पड़े जैसे-

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ *पृष्ठ - 2*

समझ गया कि यह क्या कहते हैं। आगे फिर ध्यान से सुना -

आपे बीजि आपे ही खाहु॥ *पृष्ठ - 4*

यह भी समझ में आ गई और भी समझने का यत्न किया, समाप्ति के पश्चात उन्होंने आसा जी की वार पढ़नी शुरू कर दी। उस समय श्लोक तथा पौड़ियां ही थीं। बड़ी लय के साथ धीरे-धीरे पढ़ते हैं और आपने समझने का यत्न किया। फिर मिलाप हुआ। दूसरी बार फिर आपने समझने की कोशिश की। बाणी सुनने का मन में पक्का इरादा कर लिया। आप विशेष तौर पर भाई जोध के पास आते हैं। मन में कुछ समझ पड़ी कि यहीं से ही कुछ रास्ता निकलता दिखाई देता है। इतना तो वह जानते थे कि मनुष्य जामा है, जब तक ज्ञान नहीं होता तब तक मुक्ति नहीं होती। जब तक पूर्ण समरथ गुरू नहीं मिलता, तब तक ज्ञान नहीं होता। सो पहले गुरू है फिर गुरू के वचनों से मुक्ति है। मुक्ति के बाद फिर जन्म मरण का चक्र खत्म होता है। यह सारी बात समझते थे। उन दिनों में एक रिवाज़ था कि पिता-पुरखी गुरू किया करते थे। हर एक का गुरू हुआ करता था, पर समरथ गुरू नहीं था। धरती पर इतना पाप फैल गया था कि कोई रोकने वाला नहीं था उस समय -

कोई न थंमै साध बिन साध न दिसै जग विच कोआ॥ *(भाई गुरदास जी)*

कोई पूरा नहीं था जो इस धरती के पापों को रोक देता। अज्ञानता को रोक देता, नास्तिकता का जो बहुत बड़ा अन्धेर-गुब्बार पड़ा हुआ था, उसके अन्दर कोई प्रकाश कर देता, धुन्ध मिटा देता, ऐसा संसार में दिखाई न देने के कारण आपको तलाश थी कि कोई पूरा गुरू मिले। परन्तु गुरू अंगद देव जी के मन में जो तलाश थी, वह बहुत ही प्रबल थी। आप मौका देखते थे कि यदि कोई पूरा मिल जाये तो किस्मत जाग जायेगी, लेकिन ज्यादातर ध्यान उधर की ओर, देवी पूजा की ओर होने के कारण, मन की श्रद्धा पक्की हो गई थी कि देवी की पूजा करना, भेंटे गाना, इसे ही बहुत भारी कीर्तन समझ कर सन्तुष्ट रहते थे, लेकिन आज जब आपने सुना उसी समय आपके मन में कई प्रकार के नये-नये विचार उत्पन्न हुए। उस समय आपके कानों में आवाज़ सुनाई पड़ी-

धारना - सारे कूड़ दा हो गिआ वरतारा,
सच्चा वाला काल पै गिआ - 2, 2
मेरे पिआरे, सच्चा वाला काल पै गिआ - 2, 2
सारे कूड़ दा हो गिआ वरतारा,.............- 2

सचि कालु कूड़ु वरतिआ कलि कालख बेताल।
बीउ बीजि पति लै गए अब किउ उगवै दालि।
जे इकु होइ त उगवै रुती हू रुति होइ।
नानक पाहै बाहरा कोरै रंगु न सोइ।
भै विचि खुंबि चड़ाईऐ सरमु पाहु तनि होइ।
नानक भगती जे रपै कूड़ै सोइ न कोइ।
लबु पापु दुइ राजा महता कूड़ु होआ सिकदारु।

कामु नेबु सदि पुछीऐ बहि बहि करे बीचारु।
अंधी रयति गिआन विहूणी भाहि भरे मुरदारु।
गिआनी नचहि वाजे वावहि रूप करहि सीगारु।
ऊचे कूकहि वादा गावहि जोधा का वीचारु।
मूरख पंडित हिकमति हुजति संजै करहि पिआरु।
धरमी धरमु करहि गावावहि मंगहि मोख दुआरु।
जती सदावहि जुगति न जाणहि छडि बहहि घर बारु।
सभु को पूरा आपे होवै घटि न कोई आखै।
पति परवाणा पिछै पाईऐ ता नानक तोलिआ जापै॥ पृष्ठ - 469

अकेला-अकेला अक्षर सुना, समाज की हालत, राज्य की हालत, गुरूओं की हालत, धार्मिक लोगों की हालत, गाने वालों की हालत के बारे में सुना, कोई भी परमेश्वर की भक्ति नहीं करता -

गिआनी नचहि वाजे वावहि। जोधा का विचारु॥ पृष्ठ - 469

ज्ञानी जो ज्ञान देने वाला है, वह नाच करता है। गाता क्या है? ब्रह्म तथा एकता के बारे में नहीं गा रहा, कोई प्यार का गीत नहीं गा रहा, लड़ाई झगड़े गा रहा है, अमुक राजा ने हमला कर दिया, अमुक फौजें इस तरह से लड़ीं, वाद-विवाद, झगड़ों के गीत गाता है। जो दुनियाँ के लिये लड़ कर मर गये, उनके बारे में गा रहा है। उन सूरमाओं का उल्लेख नहीं करता जिन्होंने बड़ी-बड़ी साधनाएं की हैं। दुनियां की उपलब्धियां प्राप्त करने वालों के गीत गाता है -

मूरख पंडित हिकमति हुजति संजै करहि पिआरु॥ पृष्ठ - 469

तर्क कुर्तक के साथ बात सिद्ध करते हैं तथा मूर्खता की सीमा पार हो गई है। केवल धन इकट्ठा करने तक प्यार पड़ा हुआ है -

धरमी धरमु करहि गावावहि मंगहि मोख दुआरु।। पृष्ठ - 469

केवल धर्म के कारण अपने आपको नश्र करता है कि मैंने ऐसा किया, मैंने इतना दान किया है, फिर उसके बदले में मोक्ष द्वार मांगता है। महाराज कहते हैं क्या ऐसे मिल जायेगा तुझे -

जती सदावहि जुगति न जाणहि छडि बहहि घर बारु॥ पृष्ठ - 469

सभु को पूरा आपे होवै घटि न कोई आखै।। पृष्ठ - 469

जति बन गया, घर बार छोड़ दिया, जत की युक्ति नहीं जानता। पाँच ज्ञानेन्द्रियों के जत के बारे में कुछ नहीं जानता। इस तरह फिर जत नहीं रहा करता। सभी कहते हैं, मैं पूरा हूँ, मैं पूरा हूँ, मेरा धर्म पूरा है, मेरे विचार पूरे हैं। अब बताओ जो बर्तन पहले ही भरा हुआ हो, उसमें और चीज़ कैसे डाली जाये? और पानी कैसे जायेगा, वे तो पहले ही भरे हुए हैं, खाली हों तभी और डाला जायेगा -

वसतू अंदरि वसतु समावै दूजी होवै पासि॥ पृष्ठ - 474

सो ऐसी अवस्था देखकर धीरे-धीरे सारी 'आसा जी की वार' सुनी -

जितु सेविऐ सुखु पाईऐ सो साहिबु सदा सम्हालीऐ।
जितु कीता पाईऐ आपणा सा घाल बुरी किउ घालीऐ॥ पृष्ठ - 474

मन में विचार बैठ गया। जब भाई जोध पाठ कर चुके तो उस समय लहणा जी ने कहा, "भाई जोध! आपने जो यह बिशन-पद गाये हैं या कोई बाणी गाई है, यह किसकी है? यह तो कपाट खोलती चली जा रही है और मेरे अन्दर तो इसने बड़ी भारी हलचल पैदा कर दी है।"

हमारे अन्दर नहीं करती क्योंकि हम Immune (प्रभाव मुक्त) हो गये हैं। पहले-पहले जब D.D.T. आई थी तो मच्छर वैसे ही मर जाते थे। अब तो D.D.T. में से ही मच्छर पैदा हुए हैं, वे मरते ही नहीं हैं, इसे Immune कहते हैं। जब किसी दवाई का, ज़हर का मनुष्य पर असर होना बन्द हो जाये, वह Immune हो जाता है। उस पर असर नहीं हुआ करता। इसी तरह जब कोई नियम बन जाये, तब पूरा प्रभाव नहीं हुआ करता। गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बाणी को यदि कोई नया आदमी सुने, वह हैरान रह जायेगा कि इतनी महान बाणी, इतने गुप्त भेद इसके अन्दर लिखे हुए हैं। हम रोज़ सुनते हैं, हमारे ऊपर कोई असर नहीं होता, वह वहीं के वहीं रहते हैं। इसे कोल्हू का बैल कहते हैं। सारा दिन घूमता है पर जब आखों पर बान्धे हुए खोपे खोले जाते हैं तो वहीं का वहीं खड़ा पाता है।

यही बाणी थोड़ी सी आनन्द साहिब सुनकर भाई अनन्द सिंघ ने एक ही तुक पर विचार किया था कि -

ऐसा कंमु मूले न कीचै जितु अंति पछोताईऐ॥ ***पृष्ठ - 918***

और परिवार के बारे में पढ़ा कि साथ नहीं जाता। उसी समय वैरागी बन कर बैठ गया। गुरू दसवें पातशाह के सामने पेश किया गया तो महाराज जी कहते हैं, ''धन्य है गुरसिख! धन्य है! तूने बाणी की तुक पकड़ ली। अब बता क्या चाहता है?''

कहता है, ''महाराज जी ***'साथि तेरै चलै नाही तिसु नालि किउ चितु लाईऐ॥' (पृष्ठ - 918)*** सच्चे पातशाह! मेरे से इस तुक के ऊपर से पार नहीं हुआ जाता, यह मेरे सामने पहाड़ बनकर खड़ी हो गई। मैं अब इसे पार नहीं कर सकता। फिर मैं परिवार के साथ कैसे चित्त लगा लूँ? इसने साथ तो जाना नहीं। इसके साथ चित्त लगाकर मेरा सारा जीवन बर्बाद हो जायेगा और मैं यहीं के लायक ही रह जाऊंगा। बड़ी मुश्किल से मानस जन्म प्राप्त हुआ है पर यदि अब मैंने गलत काम कर लिया तो फिर मैं दुनियाँ के मोह में फसा, परमपद की प्राप्ति किये बिना, यहीं पर ही रह जाऊंगा। सच्चे पातशाह! कृपा करो।''

महाराज जी ने कहा, ''क्या चाहता है?''

आनन्द सिंघ ने कहा, ''सच्चे पातशाह! मैं परिवार में नहीं जाना चाहता और बाहर एक रस रहकर नाम जपना चाहता हूँ।''

''ठीक है, शाबाश! ये माता-पिता तेरे कहते हैं कि परिवार में रह।''

''सच्चे पातशाह! आपने ही फ़रमान किया है कि कोई भी नहीं है इनमें तेरा साथी, ये सारे पैसे के ग्राहक हैं। जब तक पैसा है तब तक तेरे साथ रहते हैं और जब पैसा खत्म हो जायेगा फिर छोड़ देते हैं और मैं तो प्रभु के साथ मन लगाना चाहता हूँ।''

महाराज कहते हैं, ''अच्छा! तू हमसे दो बातें सुन ले, हम दोनों बता देते हैं, एक साधु की और एक गृहस्थी की।'' बहुत विस्तार के साथ गृहस्थ और त्याग का राह बताया।

दोनों बातें महाराज जी ने बता दीं। यहाँ पर हमने बड़े विस्तार के साथ विचार किया है। मतलब यह है कि उसने बाणी पर विचार कर ली। बाणी के ऊपर से नहीं निकल सका। हम तो पार करते जाते हैं, बेअन्त पढ़ते चले जाते हैं, एक भी याद नहीं रहता, कोई तुक नहीं है जो 24 घंटे अपना प्रभाव रखे। परन्तु भाई लहणा जी ऐसे नहीं थे। हालांकि गुरू नानक देखे भी नहीं थे, सुना भी नहीं था।

यदि देखे थे तो भूल चुके थे क्योंकि एक समय था, जब आपने गुरू नानक पातशाह के दर्शन भी किये थे। इनके पिता फेरू मल जी हिसाब-किताब रखा करते थे जो तख्त मल चौधरी थे। वह 20-25 या 30 गाँवों के चौधरी थे। सारा मालिया फेरूमल के हाथों में से निकलकर सरकारी खज़ाने में जमा हुआ करता था तथा सारे खर्चे जितने भी चकौते आदि के थे, उनका लेन-देन भी रखा करते थे, उनका घर का खर्चा भी काफी था। एक बार पैसे कम पड़ गये। इस पर चौधरी नाराज़ हो गये और इन्हें तपोस्थान में बन्द कर दिया। भाई लहणा जी ने देखा कि चौधरी तख्त मल जी बहुत नाराज़ हैं तो आप चौधरी की लड़की 'बराईं' जो भाई लहणा जी के परिवार से हमदर्दी रखती थी तथा भाई लहणा जी को प्यार करती थी। उससे अपने पिता के लिये सहायता लेने के लिए खडूर साहिब पहुँच गये। वहाँ जाकर अपने पिता को छुड़ाने के लिये सिफारिश लगाने के लिए कहा। वह कहने लगी, "मेरी सिफारिश तो नहीं चलेगी, एक परमेश्वर रूप हमारे यहाँ आए हैं, पास ही हैं, चल मैं तुझे उनके पास ले चलूं।" चिट्ठी मैं लिख दूंगी, अपने पिता को बड़े आदर पूर्वक उन्हें छोड़ देना अन्यथा उनके मन में उलझन रह जायेगी अन्यथा पहले जैसा प्यार नहीं बन पायेगा। मन में संशय बना ही रहता है। मेरे कहने से मेरे पिता फेरूमल जी को छोड़ तो देंगे परन्तु मन से संशय नहीं दूर होगा। अत: हिसाब किताब का लेखा ठीक होना चाहिये। गुरू नानक पातशाह के पास भाई लहणा जी को बीबी 'बराईं' ले गई। प्रार्थना की, महाराज जी कहते हैं, "कोई बात नहीं भाई, ऐसे ही गलती हो गई है, तुम दोबारा हिसाब चैक करो, गलती निकल आयेगी, कुछ नहीं होगा।"

दोबारा जाकर हिसाब चैक किया तो गलती पता चल गई, सारा मामला साफ हो गया। उस समय इस बात को आपने साधारण सी बात समझा। बहुत से ऐसे लोग होते हैं, सन्तों के पास जाते हैं, वचन हो जाता है, उसे आम बात ही समझते हैं और कहते हैं ये तो ऐसे ही वचन कर देते हैं, फिर उनके साथ उनका कोई वासता नहीं पड़ता। अपना काम पूरा हो जाता है। संसार का रवैया ही ऐसा है चाहे सन्त हो या कोई और हो। ये मन्त्री लोग होते हैं, जब तक वे कुर्सी पर बैठे होते हैं तब तो उनका पीछा नहीं छोड़ते, जब कुर्सी छूट जाती है, फिर डरते हैं कि कहीं पैसे ही न मांग लें हमसे, फिर उनसे बात नहीं करते। सो उस समय दर्शन किये थे पर भूल चुके थे।

भाई जोध से कहने लगे, "भाई जोध! यह जो तू पढ़ रहा है, मैंने बड़े ध्यान से श्रवण किया है। एक-एक अक्षर समझने का यत्न किया है और मेरे मन में एक बात घर कर गई। मुझे ऐसा प्रतीत होने लगा कि जो मेरा रास्ता है, वह और है तथा गुरू वाला रास्ता कोई और है। तू मुझे बता वह कौन हैं जिन्होंने यह बाणी रची है? कहाँ रहते हैं? कैसे हैं? मुझे उनके बारे में बता सकता है यदि तुझे मालूम है?"

भाई जोध कहने लगे, "भाई लहणा जी! जिनके बारे में तू बात करता है, उन्हें तो सारा संसार जानता है। कोई भी उन्हें नहीं भूलता जैसे सूर्य को सभी जानते हैं, ऐसे ही उन्हें जानते हैं। देशो-विदेशों, टापुओं में हर जगह पर, राजा महाराजा, साधु, बड़े-बड़े मठों वाले महन्त, सभी जानते हैं।"

कहने लगे, "मैंने नहीं सुना और कृपा करके मुझे उनसे परिचय करवा दें।" उस समय भाई जोध बोले, "उन्होंने संसार की चार उदासियां (यात्राएं) कीं और सारी यात्राएं पैदल ही की हैं।"

एक अनुमान के अनुसार आज के सियाने लोग हिसाब लगाते हैं कि उन्होंने 25000 मील पैदल सफर किया लेकिन उस समय के सियाने लोग नहीं ऐसा हिसाब लगाते थे। उस समय तो यह था कि गुरू नानक पातशाह सारी धरती पर घूमे, जहाँ तक आबादी थी, जहाँ तक मनुष्य थे, वहाँ तक गये।

उनकी बोली में ही जाकर उनका मार्ग दर्शन किया। यह बात अलग है कि उस समय का रिकार्ड रहा या नहीं रहा, पर भाई गुरदास जी ने लिखा है कि जहाँ तक भी धरती थी, वहाँ तक गुरू नानक पातशाह ने जाकर अपना सच का सन्देश दिया।

बाबे डिट्ठी पिरथमी, नवे खंडि जिथै तकि आही।
फिरि जाइ चढ़िआ सुमेर परि सिधि मंडली द्रिसटी आई। भाई गुरदास जी, वार 1/28

कितने हज़ार मील चले गये, इसका कोई अनुमान नहीं है।

आपने बताया कि चार यात्राएं कीं। उसके पश्चात क्योंकि संगत इतनी बढ़ गई, उन्हें उपदेश भी देने हैं इसलिये केन्द्र बनाया है, आप करतारपुर में बिराजे हुए हैं। पास ही रावी दरिया के किनारे पर निवास रखे हुए हैं। पहले भी मैंने एक दो बार आपसे बात की थी। कहने लगे, मैंने ध्यान ही नहीं दिया ऐसे ही सहज स्वभाव सुनी थी पर आज मुझे इसकी गहराई का पता चला है कि आप तो बहुत महान हैं, तू मुझे यह बता कि उनका गुरू कौन है। पूर्ण हैं या अपूर्ण? तपस्या की है, उन्हें प्राप्ति कैसे हुई है?''

कहने लगे, ''आप गीता पढ़ते हो ना? उसमें कृष्ण भगवान कहते हैं कि जब धर्म का नाश होता है, उस समय जो पूर्ण महापुरुष हैं, वे संसार में ग्लानि दूर करने के लिये संसार में आया करते हैं।''

गुरू दशमेश पिता जी ने भी लिखा है -

जब जब होत अरिशट अपारा॥

जब जब संसार में ग्लानि फैल जाती है -

तब तब देह धरति अवतारा॥

उस समय देह धारण करके अवतार आया करते हैं। अवतार कुछ तो देवता हुआ करते हैं, कुछ विष्णु के अवतार होते हैं। अवतारों की गिनती होती है।

आप कहने लगे, गुरू नानक पातशाह तो धुर से आये हुए हैं वे किसी देवता, ब्रह्मा, विष्णु, शिव का अवतार नहीं हैं और उनके बारे में मैं बता नहीं सकता। यदि मैं बताऊं तो पूरी तरह से वर्णन नहीं कर सकता, पर उनके बारे में जो संसार का विचार है, जिन्होंने परख करके देखा है, वे इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - जाहर पीर जगत गुर बाबा - 2, 2
जाहर पीर जगत गुर बाबा - 2, 2

कहने लगे कि वह कहीं छिपे हुए नहीं हैं, सारे संसार में प्रकट हैं, एक-दो-चार के गुरू नहीं हैं, सारे संसार के गुरू हैं -

सतिगुर सचा पातिसाहु बेपरवाहु अथाहु सहाबा।
नाउ गरीब निवाजु है बेमुहताज न मोहु मुहाबा॥ भाई गुरदास जी, वार 24/3

कहने लगे, ''वह गरीब-निवाज़ है। सारी दुनियां उन्हें गरीब निवाज़ कहती है। किसी से कोई खुशामद नहीं करवाते, किसी से कोई चीज़ नहीं लेते, न ही किसी के मोह में फंसते हैं।'' -

बेसुमारु निरंकारु है अलख अपारु सलाह सिञाबा॥ भाई गुरदास जी, वार 24/3

''वह बे-सुम्मार हैं, जिनकी कोई गिनती वगैरा नहीं की जा सकती, वह स्वंय ही निरंकार का रूप हैं, अलख तथा अपार है और परमेश्वर को पूरी तरह से मिलाते हैं।''

काइमु दाइमु साहिबी हाजरु नाजरु वेद किताबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/3*

उनकी जो हकूमत है वह यहाँ भी तथा अर्शों पर भी चल रही है –

अगमु अडोलु अतोलु है तोलणहारु न डंडी छाबा।
इकु छति राजु कमाँवदा दुसमणु दूतु न सोर सराबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/3*

वह एक रस सृष्टि का, अर्श का, कुर्श का राज्य करते हैं। इस राज्य में न कोई एक दूसरे से शत्रुता करता है, न कोई शोर शराबा है। सभी 'बेगमपुरा शहर को नाउ' के वासी हैं –

आदलु अदलु चलाइदा जालमु जुलमु न जोर जराबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/3*

तथा पूरा इन्साफ किया जाता है। इसमें कोई साज़िश नहीं, किसी पर अत्याचार नहीं होता, कोई जोर-जबर नहीं चलता, कोई दुखी नहीं है –

जाहर पीर जगतु गुरु बाबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/3*

भाई जोध जी कहते हैं कि पहले अलग-अलग वर्ण थे। हिन्दू, खत्री, वैश्य, शूद्र थे। एक जगह पर इकट्ठे नहीं बैठ सकते थे। गुरू नानक की दरगाह में, इनके दरबार में सारे के सारे एक ही लंगर में से भोजन करते हैं तथा संगत में मिलकर परमेश्वर का भजन करते हैं –

चंदनु वासु वणासपति अवलि दोम न सेम खराबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/4*

वहाँ पर कोई अव्वल, दोम, तेम (एक, दो, तीन) नहीं है, अलग-अलग पंक्तियाँ नहीं लगतीं, सभी एक ही हैं तथा जैसे चन्दन की सुगन्धि सारी वनस्पति को चन्दन बना देती है, इसी तरह गुरू नानक पातशाह के दर्शन और उनके वचन सभी को चन्दन बना देते हैं –

हुकमै अंदरि सभ को कुदरति किस दी करै जवाबा॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/4*

न देवताओं में ताकत है, न किसी अन्य में कोई ताकत है कि उन्हें जवाब दे दे। सभी हुक्म में चलते हैं –

जाहर पीरु जगतु गुर बाबा। *भाई गुरदास जी, वार 24/4*

अतः इस प्रकार आपने सारी बात समझाई कि वहाँ पर संगत आती है, लंगर चलते हैं, हर समय शब्द का लंगर चलता है, बन्दगी होती है –

निहचल नीउ धराईओनु साधसंगति सच खंड समेउ॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/2*

निश्चयपूर्वक सुनो कि वहाँ पर पूरी तरह सचखण्ड लगता है –

गुरमुखि पंथु चलाइओनु सुख सागरु बेअंतु अमेउ॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/2*

अमाप – न मापा जा सकने वाला पन्थ, उन्होंने गुरमुखों का चलाया है –

सचि सबदि आराधीऐ अगम अगोचरु अलख अभेउ॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/2*

हर वक्त, वहाँ पर सच्चे शबद की आराधना होती रहती है-

चहु वरनाँ उपदेसदा छिअ दरसन सभि सेवक सेउ॥ *भाई गुरदास जी, वार 24/2*

सभी सेवा करते हैं। 6 दर्शन – जो वेदान्त शास्त्र पातंजलि को मानने वाले, विशेषक को मानने वाले, सांख्य को मानने वाले, न्याय शास्त्र को मानने वाले, सभी उनकी सेवा करते हैं और वे सभी को उपदेश देते हैं –

मिठा बोलणु निव चलणु गुरमुखि भाउ भगति अरथेउ।। *भाई गुरदास जी, वार 24/3*

दो बातें कहते हैं, ''प्रेमियो! यदि बोल बोलना है तो मीठा बोलो। मुंह फट, कुल्हाड़े की तरह

बात मत करो, कड़वा मत बोलो, फीका मत बोलो'' –

फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ॥ पृष्ठ - 473

''यह सुना था अभी तुमने?''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''हाँ, मुझे याद है फीका बोलने को बहुत बुरा माना है और दरगाह में से भी फैंक दिया जायेगा, बेशक उसने जो मर्ज़ी धर्म कर्म क्यों न किये हों? केवल फीका बोलने से ही दरगाह में से फैंक दिया जायेगा।'' और वहाँ मीठा बोलते हैं। फिर वहाँ पर कोई अक्कड़ नहीं। चाहे कोई बादशाह आ जाये, या बिल्कुल गरीब आ जाये, दोनों दूसरे के सामने झुकते हैं। प्यार के साथ प्यार की भक्ति करते हैं –

आदि पुरखु आदेसु है अबिनासी अति अछल अछेउ।
जगतु गुरू गुरु नानक देउ॥ भाई गुरदास जी, वार 24/2

फिर वह तो सारे संसार के गुरू हैं –

भगति भंडार गुरि नानक कउ सउपे फिरि लेखा मूलि न लइआ॥ पृष्ठ - 612

निरंकार की भक्ति के जितने भी भण्डार हैं, वे सभी गुरू महाराज जी को सौंप दिये हैं, फिर लेखा-जोखा नहीं मांगा। वह संसार में ऐसे भण्डारे बांट रहे हैं।

कहने लगे, ''यदि मैं उनके बचपन की ही कोई बात सुनाऊँ, आपके पास सुनने के लिये समय है?''

भाई लहणा जी कहने लगे, ''हाँ, हाँ, ज्यों-ज्यों आप सुनाते हो – गुरू नानक पातशाह के बारे में, बेशक मैंने दर्शन नहीं किये, पर मुझे ऐसा लगने लग गया, जैसे मेरा उनके साथ कोई पूर्बला सम्बन्ध है और मेरे अन्दर उनके वचन सुनकर कोई आकर्षण पैदा हो गया।''

भाई जोध कहने लगे, ''जब गुरू नानक पातशाह का जन्म हुआ, उस समय उन्होंने अपनी शक्ति माता जी को दिखाई थी। पहले दाई को दिखाई, दाई (नर्स) हैरान रह गई कि अनहद धुनें बज रही हैं, प्रकाश ही प्रकाश हो गया। वह भी विस्मादिक अवस्था में आ गई कि ऐसा बालक आज तक नहीं देखा कि इतना प्रकाश। इतने प्रकाश वाली रूहें। वह जब बताती थी, तो सभी आम बातों की तरह सुनते थे। सभी पर माया पड़ी हुई थी, बात कोई समझता नहीं था।

जब आपका जन्म हुआ, उस समय माता जी थोड़ी देर बाद नींद में चली गईं। अन्दर आँख मिचौली में देखा कि गुरू नानक पातशाह की, चारों ओर से आरती उतारी जा रही है, बड़े देवता आये हुए हैं, वे आरती उतार रहे हैं और केसर आदि का छिड़काव हो रहा है, फूलों से पूजा की जा रही है। माता जी की नींद खुल गई और उठकर देखती है कि यह क्या बात है? इतना प्रकाश! इतनी रूहें। महाराज जी ने एक दम माया डाल दी। वह सारे अलोप हो गये तथा इस सारे कौतुक को उन्होंने नींद समझ लिया तथा आपने उसी समय दूध मांग लिया। रोने लग पड़े। उस समय यह समझा कि मेरे मन में कोई वहम था क्योंकि सभी महापुरुषों ने आपके बारे में पहले ही बता दिया था।

श्री राम चन्द्र जी ने अपनी माता कौशल्या को सभी रूहानी गुप्त भेद प्रकट कर दिये थे। कृष्ण महाराज जी जब मिट्टी खाते थे तो माता ने जब पूछा, ''तूने मिट्टी खाई है?'' आपने सिर हिलाकर कहा, ''नहीं।'' माता ने समझा कि कही गप्प न मारता हो, तभी से उनका नाम 'गपौड़ू' हो गया। माता ने कहा, ''मुँह खोल।'' जब मुँह खोला तो माता क्या देखती है कि सारा त्रिलोक नज़र आ रहा है। मुँह

के अन्दर ही सारी शक्ति दिखा दी और साथ ही साथ माया भी डाल दी। महापुरुष शक्तियाँ दिखाते हैं, पर साथ ही साथ माया डाल देते हैं। इसी तरह गुरू नानक पातशाह ने शक्ति दिखाई, दूध माँग लिया, साथ ही माता के ऊपर माया भी डाल दी। सो भाई जोध जी कहने लगे, इतने समरथ हैं। यदि बचपन की बातें बतायें –

एक दिन आप बाहर जाकर सो जाते हैं। सोते कहाँ थे? महापुरुष कभी सोया नहीं करते, साध संगत जी। संसार सोया करता है। उन्हें तो सदीवी जाग्रत अवस्था प्राप्त हुआ करती है। संसार तो नींद में सोया करता है। यह एक शारीरिक नींद सोया करता है, एक इस पर मन की नींद चढ़ी होती है –

तिही गुणी संसारु भ्रमि सुता सुतिआ रैणि विहाणी॥ *पृष्ठ - 920*

रजोगुण, तमोगुण, सतोगुण की लहरों में यह अपने देखता है, बेगाने देखता है, मित्र देखता है, शत्रु देखता है, हानि-लाभ देखता है और इसके अन्दर सोया पड़ा है। एक तो नींद होती है शरीर की और दूसरी नींद अज्ञान की होती है। महापुरुषों में कोई भी नींद नहीं हुआ करती, वे नींद से खाली ही होते हैं। आप वृक्ष के नीचे मैदान पर लेटे हुए हैं और सूर्य निकल आया। किस अवस्था में लेटे हुए हैं –

अनहत सुंनि रते से कैसे। जिस ते उपजे तिस ही जैसे॥ *पृष्ठ - 943*

महात्मा भी यदि अनहद अफ़ूर सुन्न अवस्था में पहुँच जायें, कोई फुरना न करें तो शरीर में कोई हरकत नहीं हुआ करती। उस समय एक सफेद साँप आया, उसने फन फैलाया और महाराज जी के मुख पर छांया कर दी। राय बुलार ने आकर देखा, कहने लगे, ''यह बालक है कोई? क्या हैं वह? बड़ी हैरानी में पड़ गया, यह दृश्य देखकर।''

साँप ने डंक नहीं मारा बल्कि धूप को अपने फन से रोके हुए खड़ा था और नानक जी का लाल चेहरा दग-दग कर रहा था। सवार भेजा कि जाकर देख, जीवित है? जब सवार गया तो साँप धीरे-धीरे एक तरफ हो गया और गायब हो गया। कहने लगा, ''महाराज! नानक जी ठीक हैं। मेरी भी समझ में नहीं आता कि वे क्या है?''

राय बुलार कहते हैं, ''मैं समझ गया।''

पहला सिख राय बुलार हुआ। उससे पहले बेबे नानकी। बेबे नानकी ने नानक पातशाह को पूरी तरह से समझा, कहने लगे कि एक दिन वृक्ष के नीचे लेटे हुए हैं। सभी वृक्षों की परछाईयां बदल गईं, पूर्व की ओर हो गये परन्तु एक वृक्ष जिसके नीचे लेटे हुए हैं, उस वृक्ष की परछाईं वैसे की वैसे धूप को रोक कर खड़ी हुई है। उस दिन भी राय बुलार आ गया। इसके पश्चात गुरू नानक पातशाह पशु चराने जाया करते हैं। पिता जी ने कहा, ''यदि तुम और कोई काम नहीं करते तो पशु ही चरा लाया करो आप अपनी धुन में रहते थे। पशुओं को तो ले गये, खेत में खुले रूप में चर रहे हैं। एक किसान का खेत चर लिया। किसान आया, झगड़ा करता है, भैसों को मार-मार कर खेतों से बाहर निकालता है, बहुत क्रोध में आया हुआ है। राय बुलार के पास आकर शिकायत करता है। गुरू नानक पातशाह की पहली पेशी होती है।

राय बुलार कहते हैं, ''नानक जी! आपने पशुओं से इनके खेत चरवा दिये।''

महाराज जी कहते हैं, ''खेत परमेश्वर के हैं। खाने से खत्म नहीं हुआ करते, बल्कि बढ़ते हैं। जाकर देख लो।''

जब वहाँ जाकर देखा हैरान रह गया कि खेत तो वैसे के वैसे हरे भरे खड़े हैं। कहने लगे, ''ये तो सभी खाये हुए थे, यह एक दम क्या हो गया? ये तो पहले से भी अधिक दुगुने हरियाले हो गये।'' कहने लगे, ''ऐसी-ऐसी अजीब बातें, कौतुक गुरू नानक पातशाह जब से संगत करने लगे हैं, तभी से गुरसिखों में होती रहती हैं और इनसे श्रद्धा भी बढ़ती है -

बाबाणीआ कहाणीआ पुत सपुत करेनि॥ *पृष्ठ - 951*

श्री राम चन्द्र जी, श्री वशिष्ट जी से 64 दिन ब्रह्म विद्या सीखते रहे। आठ दिन आपने विश्वामित्र जी से शस्त्र विद्या का अभ्यास किया तथा कृष्ण जी ने आठ दिनों में दुर्वासा जी से ब्रह्मज्ञान की विद्या सीखी थी तथा 64 दिनों में ऋषि संदीपन से शस्त्र विद्या धारण की।

गुरू नानक पातशाह स्कूल भेजे जाते हैं तो आपने स्कूल के पान्धे को ही पढ़ा दिया। मदरसे में भेजे जाते हैं तो मौलवी को ही पढ़ा देते हैं। संस्कृत पढ़ने भेजे जाते हैं तो विद्वान ब्रजनाथ को पढ़ा देते हैं। वे तो बिना पढ़े ही पढ़े हुए हैं। वे तो दूसरों को पढ़ाने वाले हैं। यह संसार कहता है कि गुरू साहिब पढ़ने नहीं गये। आज के प्रोफैसर कहते हैं, ''नहीं, जरूर पढ़े होंगे।'' अपनी तुलना गुरू साहिब से करते हैं। उन्हें भी एक साधारण व्यक्ति समझते हैं। जब मनुष्य समझ लिया तो फिर हम उन्हें बुद्धि से नापेंगे। हम कहेंगे कि हम तो Ph.D. हैं। गुरू साहिब ने तो पहली दूसरी या दस जमातें ही पढ़ी होंगी, उस समय कौन Ph.D. करता था, अपने आपको बड़ा कहते हैं। पर गुरू साहिब कहते हैं, नहीं प्यारे सुन -

पड़िआ मूरखु आखीऐ जिसु लबु लोभु अहंकारा॥ *पृष्ठ - 140*

उसे पढ़ा हुआ मत कहो, वह तो मूर्ख होता है जिसमें अभी लब-लोभ-अहंकार काम आदि भरे पड़े हैं, क्रोध भरा पड़ा है। मोह, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, आशा तृष्णा की डायनें अन्दर लेकर बैठा है, उसे पढ़ा हुआ कौन कहता है? वह तो अनपढ़ है। पढ़ा हुआ तो वह है -

नानक सो पड़िआ सो पंडितु बीना जिसु राम नामु गलि हारु॥ *पृष्ठ - 938*

जो हर समय प्रभु को याद रखता है क्योंकि पढ़ कर तो सूझ आती है, पढ़कर तो मन में अन्धेरा नहीं रह जाता पर जो हमारी विद्या है, यह मन में अन्धेरा पैदा करती है। यह हमें सच की पढ़ाई की ओर नहीं जाने देती, न ही हमारे अन्दर निश्चय पैदा होता है। इसलिये यह विद्या किसी काम की नहीं, रोज़ी रोटी कमाने के काम आती है। रोटी परमेश्वर देता है, इसलिये ये पढ़ाई फजूल है।

गुरू नानक पातशाह को जब पिता जी पढ़ने के लिये पाठशाला ले जाते हैं तो उन्हें स्कूल में दाखिल करवा दिया। शक्कर की परात, सवा रूपया तथा एक फुलकारी, पान्धा जी को गुरू निमित्त प्रदान कर दी, यह दक्षिणा हुआ करती थी, इसे पढ़ाई की फीस भी कहते थे। शक्कर तो बच्चों में बांट दी और सवा रूपया और फुलकारी पान्धा जी को भेंट दे दी गई तथा पान्धा जी ने गुरू नानक का नाम अपने रजिस्टर में लिख लिया और गुरू नानक साहिब से कहने लगे, ''नानक जी! यहाँ पर हम तुम्हें बहुत ही प्यार से पढ़ायेंगे। वह देखो बच्चे पहाड़े पढ़ रहे हैं, तुम भी इसी तरह उनके बीच-बीच में बोलते जाना।''

आप खड़े हो गये। वहाँ पर बच्चे बोल रहे हैं - एक दूना, दूना, दो दूने चार। एक लड़का

पहले बोलता है बाकी सारे उसके पीछे-पीछे बोलते हैं। गुरू साहिब चुप करके खड़े रहते हैं। दूसरे दिन फिर स्कूल आ गये। पान्धा जी कहते हैं, ''तख्ती लाए हो।'' तख्ती ला दी। पान्धा जी ने कहा, ''मेरे पास ले आओ।''

कलम बना कर दे दी, स्याही भी दे दी और कहते हैं, ''मैं अक्षर लिख देता हूँ और फिर तुम भी उसी तरह अक्षरों को देख कर लिखना।''

ऊपर तख्ती पर सबसे पहले लिख दिया, 'ओइम नमः सिद्धम' यह मंगल होता है। परमेश्वर को नमस्कार करके कार्य सिद्धि के लिये लिखा जाता है। जैसे हम '१ओंकार सतगुर परसादि' लिख देते हैं, दूसरा अक्षर लिखने ही लगे थे तो गुरू नानक पातशाह कहने लगे, ''पान्धा जी! यह जो कुछ आपने लिखा है, इसका मतलब तो तुमने मुझे समझाया नहीं।''

पान्धा जी कहने लगे, ''नानक जी! यह जो ओइम है, इसे ईश्वर समझ लो, उसको नमस्कार करके हम कार्य सिद्धि के लिये प्रार्थना करते हैं, ताकि कार्य सिद्ध हो जाये।''

गुरू साहिब ने पूछा, ''पान्धा जी! आप उस ईश्वर को जानते भी हो?''

आज पान्धा जी से यह पहला प्रश्न हुआ। उसके मुख से सच-सच निकल गया, कहता है, ''नहीं नानक जी, मैं तो बुजुर्गों की, अपने पिता पुरखों की एक रस्म पूरी करता आ रहा हूँ, मुझे कुछ भी पता नहीं, वह कौन है? कहाँ रहते हैं? परन्तु मन्त्र है, जो नियमानुसार हमारे मुख पर चढ़ा हुआ है। हम लिखते हैं।''

हम भी लिखते हैं, '१ओंकार सतगुर परसादि' चिट्ठी लिखते समय। पान्धा कहने लगा, ''अच्छा! आज तुम पहाड़े पढ़ लो, फिर।''

महाराज जी ने कहा, ''पान्धा जी! यह जो पढ़ाई आप मुझे करवाने जा रहे हो, यह किस काम आयेगी?''

पान्धा जी ने कहा, ''इसमें हिसाब-किताब आयेगा, जमा बचत खर्च का पता चल जायेगा तथा रोकड़ बही खाता, तुम लिखने लग जाओगे। इस प्रकार का हिसाब-किताब तुम्हें लिखना आ जायेगा।''

गुरू नानक साहिब कहते हैं, ''पान्धा जी! यह लेखा जोखा मुझे यमदूतों से छुड़वा देगा? धर्म राज से छुड़वा देगा? वहाँ उनके पास तो मुझे नहीं जाना पड़ेगा?''

यह सुनकर पान्धा जी एक दम दंग रह गये।

आपने कहा, ''पान्धा जी! यदि ऐसी पढ़ाई आप जानते हैं तो मुझे पढ़ाओ। मैंने यह विद्या सीखनी है। आप ऐसा लेखा-जोखा लिखवाना जानते हो?''

पान्धा कहने लगा, ''नहीं नानक जी! मैं तो रोकड़ बही वाला हिसाब-किताब जानता हूँ। मुझे उन लेखे-जोखों के बारे में कुछ नहीं पता, जो आप कह रहे हो? यदि आप जानते हो तो, मुझे भी बता दो।''

व्यंग्य भाव से उसने प्रश्न किया कि देखो वह क्या पूछते हैं?

उस समय गुरू नानक पातशाह ने ऐसा फ़रमान किया -

धारना - लिखणा तूं जाण लै, लेखा इह लिखणा बाबा - 2, 2

लेखा इह लिखणा बाबा - 2, 2
लिखणा तूं जाण लै,................ - 2

अब पान्धे को पढ़ा रहे हैं, सात साल की आपकी आयु है -

जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु।
भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु।
लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु।
बाबा एहु लेखा लिखि जाणु।
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु॥ पृष्ठ - 16

कहने लगे, ''जो हंगता तथा ममता अन्दर पड़ी है, मैं तथा मेरा दो बातें, ये मोह के भाग हैं। इन्हें जलाकर तू स्याही बना ले और सार मति का कागज़ बना ले।''

सार मति क्या होती है कि यहाँ संसार में झूठ क्या है, सच क्या है? सच तो यहाँ है, साध संगत जी वाहिगुरू, झूठ है जितना कुछ तुम आंखों से देखते हो, कानों से सुनते हो, यह रहने वाली जगह नहीं है। यह पल-पल में बदलती रहती है। एक बच्चे को 5-7 साल बाद देख लो, कितना बदला हुआ लगता है। कहेंगे बहुत तकड़ा हो गया है या कहेंगे बहुत कमज़ोर हो गया है। कोठी बना लो, 50 वर्ष बाद उसकी शक्ल ही बदल जायेगी, पुरानी सी लगने लग जायेगी। हर चीज़ बदलती है। सूर्य, चाँद, तारे जो चीज़ बनी है, वह बदलने के लिये ही बनी है। पहले चीज़ बढ़ती है फिर स्थिर होती है, फिर घटती है। ठहरती नहीं है, परन्तु उसके कम होने का पता नहीं चल पाता। एक डिग्री ऐसी है जिसका आम मनुष्य को पता नहीं चलता। विज्ञान को पता है कि यह वस्तु अब कम होती जा रही है। सांईस ने यह बात जान ली है कि सूर्य अब कमी की ओर बढ़ रहा है। एक दिन खत्म हो जायेगा - आठ अरब चौसठ करोड़ साल बाद इसका पूरी तरह नाश हो जायेगा, धरती का नाश हो जायेगा, यहाँ पर कुछ नहीं रहेगा। यह तो है सारा झूठ जो बदलता नहीं, आदि जुगादि से एक रस है, वह है वाहिगुरू, परमेश्वर। कहते हैं यह मति धारण कर ले, इसे विवेक कहते हैं। विवेक की मति धारण कर ले जैसे हंस के सामने दूध रख दो, चोंच मारता है, पीछे हट जाता है। चोंच में खटास होती है, दूध फट जाता है तथा पानी अलग रह जाता है फिर वह तलछटें खा लेता है। इसी तरह जो ज्ञानवान पुरुष है, वे भी विचार रूपी चोंच के साथ माया को प्रकृति तथा ज्योति से अलग निकाल लेते हैं। प्रकृति को छोड़ देते हैं और परमेश्वर की ज्योति को ग्रहण कर लेते हैं। इसे सार मति कहते हैं -

......................मति कागदु करि सारु॥ पृष्ठ - 16

अब प्यार की तू कलम बना, भक्ति की कलम बना, दर्शन शास्त्र की मत बनाना, अक्ल की कलम मत बनाना क्योंकि अक्ल तथा प्यार का आज तक मेल नहीं हुआ। अक्ल, प्यार को हमेशा पागलपन कहती है। अक्ल की कलम मत बनाना, अक्ल की रूहानियत में बिल्कुल भी जरूरत नहीं, 1% भी नहीं, यहाँ प्यार की, जजबे की ज़रूरत है -

'ग्यानी' सानूं होड़दा ते 'वहिमी ढोला' आखदा ए,
'मारे गए जिन्हां लाईआं बुद्धों पार तारीआं।'
'बैठ वे गिआनी! बुद्धी मंडले दी कैद विच,'
'वलवले दे देश' साडीआं लग गईआं यारीआं। डा. भाई वीर सिंघ जी

हम तो प्यार के मण्डल में खेलते हैं। अत: प्यार की कलम बना कर चित्त को लिखारी बना

फिर अपने आप ऐसे ही ऊट-पटांग मत लिखने लग जाना –

..................गुर पुछि लिखु बीचारु॥ *पृष्ठ - 16*

गुरू धारण कर समरथ गुरू। फिर उनसे विचार लेकर इस पर लिख। क्या लिखना है?

लिखु नामु..............................॥ *पृष्ठ - 16*

चित्त पर लिखना है, चित्त लिखारी ने चित्त पर ही नाम लिखना है। इस तरह से फ़रमान करते हैं –

भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु।
लिखु नामु सालाह लिखु....................॥ *पृष्ठ - 16*

नाम लिख तथा स्तुति लिख परमात्मा की –

धारना - सतिनाम-सतिनाम लिख लै,
हिरदे लिख लै, हिरदे लिख लै - 2, 2
वाहिगुरू-वाहिगुरू लिख लै, हिरदे लिख लै - 2, 2

लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारावारु॥ *पृष्ठ - 16*

लिखना कहाँ है? ऐसे ही इधर-उधर मत लिखे जाना उसे दिल में लिख ले। हृदय में एकाग्रचित्त होकर लिख ले-

बाबा एहु लेखा लिखि जाणु॥ *पृष्ठ - 16*

यदि लिखना ही है तो यह लेखा लिख ले –

जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु॥ *पृष्ठ - 16*

यह लेखा वहाँ पर तेरे बराबर में खड़ा हो जायेगा –

धारना - तेरी नाम ने सहायता करनी
औखी वेला, औखी वेला - 2, 2
तेरी नाम ने सहायता करनी .... - 2

जिह मारग के गने जाहि न कोसा। हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।
जिह पैडै महा अंध गुबारा। हरि का नामु संगि उजिआरा।
जहा पंथि तेरा को न सिञानू। हरि का नामु तह नालि पछानू।
जह महा भइआन तपति बहु घाम। तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम।
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै। तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥ *पृष्ठ - 264*

जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।
जह महा भइआन दूत जम दलै। तह केवल नामु संगि तेरै चलै।
जह मुसकल होवै अति भारी। हरि को नामु खिन माहि उधारी॥ *पृष्ठ - 264*

जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ।
लागू होए दुसमना साक भि भजि खले।
सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ।
चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ।
साहिबु निताणिआ का ताणु।
आइ न जाइ थिरु सदा गुर सबदी सचु जाणु।
जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर।

दमड़ा पलै न पवै ना को देवै धीर।
सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु।
चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु॥ पृष्ठ - 70

धारना - तेरी नाम ने सहायता करनी, औखी वेला-औखी वेला - 2, 2

बाबा एहु लेखा लिखि जाणु।। पृष्ठ - 16

ऐसा लेखा लिखना सीख ले। जहाँ किसी का भी हाथ न पहुँचता हो, यह लेखा वहाँ भी सच्चा निशान बन जाये -

जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु॥ पृष्ठ - 16

दरगाह में जब जीव जाये तो नाम के जाप, किये हुए सत्संग, परोपकार के काम, सेवा तथा दान के लेख गवाही दें। ऐसे लेख लिखने का ज्ञान, संसार में रहते हुए होना चाहिए। जब धर्मराज लेखा मांगता हो तो उस समय ऐसे लेख गवाही देते हों। सो उस समय आपने शब्द उच्चारण किया।

भाई जोध कहने लगे, ''भाई लहणा जी! उस पान्धे की समझ में आ गया।'' वह पान्धा कहने लगा, ''तू साधारण बालक नहीं है, कोई परमेश्वर का प्यारा है। जैसा हम हरदास पण्डित से सुनते थे। हरदास पण्डित ने जन्म पत्री बनाई थी, वह संगी साथियों को गुरू नानक जी के भविष्य की बातें बताया करता था। वास्तव में तेरे अन्दर निरंकार की ज्योति है। मुझे भी वह लेखा लिखने की जाँच सिखा दे।''

सात वर्ष की आयु में ही पान्धा जी को पढ़ाया। फिर आप लेटे रहते हैं, खाते-पीते कुछ नहीं, कुछ नहीं करते। घर में माता पिता को बड़ी चिन्ता हो गई। कोई कहता कि इन पर किसी बदरूह की छांया पड़ गई है, किसी भूत प्रेत की छाया पड़ गई है। इलाज शुरू हो गये। अन्त में एक वैद्य को मेहता कालू जी गुरू नानक जी के बारे में बताते हैं।

वैद्य जी आए तथा गुरू नानक जी का स्वास्थ्य देखा। महाराज जी वैद्य जी से पूछते हैं, ''वैद्य जी! आप तन्दरूस्त हो?''

वैद्य कहता है, ''हाँ, महाराज।''

महाराज जी कहते हैं, ''तू तो क्या, इस संसार में कोई भी सुखी नहीं है।''

जो जो दीसै सो सो रोगी। रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी॥ पृष्ठ - 1140

सारा संसार रोगों ने घेरा हुआ है। दो प्रकार के रोग हैं। एक तो वे रोग हैं जिनका शरीर से सम्बन्ध है। शरीर के रोग कुछ नहीं बिगाड़ते, अधिक से अधिक शरीर को खत्म कर देंगे पर जो मन के रोग हैं, वे बहुत भयानक रोग हैं। जो हउमै का रोग है यह मन को कोढ़ का रोग होता है। सारी दुनियाँ ही हउमै रोग से पीड़ित है। निन्दा का रोग एक प्रकार का हैज़ा है -

निंदा भली किसै की नाही मनमुख मुगद करंनि।
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥ पृष्ठ - 755

ईर्ष्या का रोग है -

जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस का कदे न होवी भला॥ पृष्ठ - 308

उसका कभी भी भला नहीं हो सकता क्योंकि यह मन का तेज़ बुखार है। तृष्णा जो है यह T.B (तपेदिक) की तरह मन को लगी हुई है -

त्रिसना बिरले ही की बुझी हे।

कोटि जोरे लाख क्रोरे मनु न होरे।
परै परै ही कउ लुझी हे॥ पृष्ठ - 213

करोड़ हो गये, कहता है लाख करोड़ चाहिये, वह भी हो गया। कहता है और चाहिए, सारी दुनियाँ मेरी ही होनी चाहिये। यह T.B. का रोग है जो मन में वासना पैदा करता है। वासनाएं जीव के हाथों में लगी हथकड़ियाँ होती हैं, जिससे जीव जन्म मरण के चक्र में पड़ जाता है। चुगली रोग है। इस प्रकार महाराज जी ने अनेक रोग बताए। आशा अन्देसा है। अत: उस वैद्य ने दोनों हाथ जोड़ लिये।

वैद्य कहने लगा, ''नानक जी! आज मैंने पहले दिन सुना है कि सच के डाक्टर आप हो। वास्तव में रोगियों का रोग दूर करने के लिये सच्चे वैद्य आए हो?'' क्योंकि -

संसारु रोगी नामु दारू मैलु लागै सच बिना॥ पृष्ठ - 687

सारा संसार रोगों ने घेरा हुआ है - सभी मानसिक रोगों के शिकार हैं। यदि मन रोगी है तो शरीर स्वभावतया ही रोगी हो जाता है। मन में यदि क्रोध हो तो एक ही साँस शरीर के लाखों सैलों को जला देता है। सारे शरीर में कि 14 खरब 15 अरब सैल हैं। क्रोध का एक ही श्वांस लाखों सैलों को जला डालता है -

कामु क्रोधु काइआ कउ गालै। जिउ कंचन सोहागा ढालै॥ पृष्ठ - 932

क्रोधी व्यक्ति के शरीर की आयु कम होती जाती है और अन्त में खत्म हो जाता है। रोगी हो जाता है, पहले सहन करता रहता है, फिर मैदा खराब हो जाता है, फिर गुर्दे खराब होने शुरू हो जाते हैं, ज़िगर खराब हो जाता है, फिर तो बीमारियों से घिर जाता है क्योंकि शरीर में दो चीज़ें बहुत ही खतरनाक तथा घातक हैं - काम तथा क्रोध -

काम शरीर को नहीं रहने देता, पूरी तरह से समाप्त कर देता है। नौजवान छोटी उम्र में ही बीमार हुए दिखाई देते हैं। किसी का सिर दुखता है, किसी की कमर दुखती है, कोई कहता है जी, मेरे से खड़ा नहीं हुआ जाता, मेरी टांगे नहीं चलतीं। अरे भाई! तुम स्वंय ही गलत काम करके दुखी होते हो। काम आदि भोगों से बचो। जीवन को संयम में लाओ तथा ब्रह्मचर्य धारण करो। हमारे बुजुर्ग शरीर की पूरी तरह से रक्षा किया करते थे। कपड़े बहुत कम पहनते थे। प्रकृति के बहुत ही निकट रहा करते थे, न ही सर्दी आदि में हीटर वगैरा की जरूरत थी। खाने के लिए विशेष ध्यान दिया करते थे। गर्मी सर्दी बहुत कम महसूस होती थी। ब्रह्मचर्य के नियमों का पालन पूरी तरह से किया जाता था। शरीर हृष्ट-पुष्ट होते थे।

अत: महाराज जी कहते हैं, काम तथा क्रोध तो रोग पैदा करते हैं। ईर्ष्या करने लग जाओ, पहले तो अपने आप अन्दर जलने लगता है। माथे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं, रंग फीका पड़ जाता है। ईर्ष्यालु पुरुष को देखकर ही भय लगता है।

क्रोध नेत्रों पर प्रभाव डालता है, जिगर तथा मैदे पर प्रभाव डालता है। किसी को क्रोध आ रहा हो तो उस समय उसे रोटी खाने के लिये देकर देखो, कभी नहीं खायेगा, दो ग्रास भी नहीं खा सकेगा।

चिन्ता है - यदि चिन्ता हो तो भी मनुष्य रोटी नहीं खा सकता। सो शरीर पर ख्यालों का प्रभाव पड़ता है। यदि विचार उत्तम है तो शरीर भी उत्तम होगा। बिना दवाई के व्यक्ति ठीक हो जाता है यदि ख्याल शुद्ध हों, मज़बूत एवं स्वस्थ विचार हों। इस प्रकार जब वैद्य जी को सारी बात समझाई, वैद्य जी बोले, ''हे नानक जी! हमारे वैद्य परम्परा में एक 'अमृत धारा' दवाई है, यह 32 बीमारियों का

एक ही इलाज है।''

महाराज कहने लगे, ''वैद्य जी! रूहानियत में एक ही दवाई लाखों करोड़ों बीमारियों का इलाज कर देती है।''

वैद्य ने यह सुनकर प्रार्थना की, ''फिर सच्चे पातशाह! कृपा करके मुझे उस दवाई का नाम तो बता दो। वह दवाई मुझे दे दो।'' इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - तेरे सारिआं दुखां दी है दारू,
इको नाम वाहिगुरू दा - 2, 2
मेरे प्यारे, इको नाम वाहिगुरू दा - 2, 2
तेरे सारिआं दुखां दी है दारू........ - 2

सरब रोग का अउखदु नामु॥ *पृष्ठ - 274*

कहने लगे, ''यह दवाई कहाँ से मिलती है?''

महाराज जी कहते हैं, ''यह दवाई तो हर एक के शरीर में परमेश्वर ने साथ ही रखी हुई है - रोग का इलाज करने के लिये।''

हरि अउखधु सभ घट है भाई। गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।
गुरि पूरै संजमु करि दीआ। नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥ *पृष्ठ - 259*

पर समरथ गुरू के बिना यह दवाई हाथ नहीं लगती, है वह सभी के अन्दर। अन्दर ही पूरे गुरू को मिलकर खोज करनी चाहिये -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ *पृष्ठ - 293*

उस नाम को अमृत कहते हैं, इस तरह महाराज जी फ़रमान करते हैं -

धारना - सुण मेरे मना, अंम्रित हरि हरि नाम है - 2, 2

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए अंम्रित गुरमति पाए राम॥ *पृष्ठ - 538*

गुरू की मत धारण करने से इस अमृत की प्राप्ति हो जाया करती है। यह अमृत क्या करता है? कहते हैं -

हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम॥ *पृष्ठ - 538*

यह अमृत यदि प्राप्त हो जाये तो हउमै तथा माया की ज़हर उतर कर, आँखों पर अज्ञान का जो मोतियाबिन्द आया हुआ है, इनके अन्दर निगाह आ जायेगी - सच्ची दृष्टि, सच्ची नज़र जब उत्पन्न हो गई तो -

गुरहि दिखाइओ लोइना।
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना॥ *पृष्ठ - 407*

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।
एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ॥ *पृष्ठ - 922*

क्योंकि वे दिव्य नेत्र खुल गये, असली नेत्र खुल गये जो बन्द पड़े थे, अन्धा हो गया था। जब गुरू ने नाम अमृत का सुरमा डाल दिया -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥ पृष्ठ - 293

सो यह नाम अमृत सभी घटाओं में है पर पूरे गुरू के बिना, बगैर पूरी विधि अपनाए प्राप्त नहीं हुआ करता। जब पूरा गुरू विधिपूर्वक अमृत दे देता है, महाराज जी कहते हैं फिर सपने में भी रोग नहीं आते। हउमै दूर हो जाती है, निन्दा खत्म हो जाती है, ईर्ष्या दूर हो जाती है, इनके स्थान पर शुभ गुण आ जाते हैं, हर समय मनुष्य के अन्दर विगास रहता है, जब 'कमल फूल' खिल गया फिर इसकी बीमारी अपने आप ही दूर हो जाती है। झुन्झलाहट नहीं रहती, सारे सैल मज़बूत हो जाते हैं।

महाराज जी कहने लगे, ''वैद्य जी! यदि सारी बीमारियों का कोई इलाज है तो वह नाम है - वाहिगुरू का।''

हम प्रश्न करते हैं कि यह नाम कहाँ से मिलता है? बाहर से भी कोई विधि है? महाराज जी कहते हैं, ''हाँ, बाहर भी है, पर नाम अमृत है, बाहर से गुरू मन्त्र मिलता है -

जिसु वखर कउ लैनि तू आइआ। राम नामु संतन घरि पाइआ।
तजि अभिमानु लेहु मन मोलि। राम नामु हिरदे महि तोलि॥ पृष्ठ - 283

वहाँ पर अभिमान त्याग दे, तो मिलता है क्योंकि उसका मोल देना पड़ता है -

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥ पृष्ठ - 1102

यदि 'मैं' बन कर आता है तो कोई लाभ नहीं हुआ करता। फिर 'मैं' ही पल्ले रह जाया करती है। अभिमान छोड़ दे -

तजि अभिमानु लेहु मन मोलि। राम नामु हिरदे महि तोलि॥ पृष्ठ - 283

फिर हृदय में तोल, यदि पता नहीं हैं तो पूछ ले किसी जानकार से कि नाम किस प्रकार तोला जाया करता है -

लादि खेप संतह संगि चालु॥ अवर तिआगि बिखिआ जंजाल॥
धंनि धंनि कहै सभु कोइ॥ मुख ऊजल हरि दरगह सोइ॥ पृष्ठ - 283

फिर सत्संग में आ जा, आनाकानी मत कर कि आज मैं नहीं आ सकता। घाटा पड़ जायेगा बहुत जबरदस्त, जो फिर कभी पूरा भी नहीं होगा। सो सन्तों की संगत में रह, साध संगत में रह, जो माया के ज़हरीले जंजाल तुझे पड़े हुए हैं वे छोड़ दे फिर जब इस नाम पदार्थ से खेप भर ली तथा अटैची भर ली सच्चे नाम से, फिर सभी धन्य-धन्य कहेंगे। दरगाह में मुख उजला होकर जायेगा-

रे रे दरगह कहै न कोऊ। आउ बैठु आदर सुभ देऊ॥ पृष्ठ - 252

क्योंकि नाम की खेपें भर कर धनी जा रहा है। महाराज जी ने धनी पैसे वालों को नहीं माना, जायदाद वालों को नहीं माना, महाराज जी कहते हैं -

भागठड़े हरि संत तुम्हारे जिन्ह घरि धनु हरि नामा।
परवाणु गणी सेई इह आए सफल तिना के कामा॥ पृष्ठ - 749

नाम से हीन व्यक्ति कंगाल है तथा परवान ही नहीं हैं, ये तो खोटे सिक्के बने फिरते हैं। परवान वही हैं, जिन्होंने परमेश्वर के नाम का धन कमाया है। जब वे सच्ची दरगाह में शरीर छोड़ने के उपरान्त जाते हैं उन्हें कोई अरे, अरे नहीं कहता। सभी आदर मान करते हैं। धर्मराज भी कहता है, आओ

महाराज! हमारा भवन पवित्र करो। नाम धन कमाने वालों को तो कहना ही है, जो उनकी संगत करते हैं, उनका भी आदर धर्मराज करता है -

धारना - धरमराजा भी करेगा सेवा, साधूआं दे संगीआं दी - 2, 2
मेरे पिआरे साधूआं दे संगीआं दी - 2, 2
धरमराजा वी करेगा सेवा,..... - 2

साधसंगि धरम राइ करे सेवा। साध कै संगि सोभा सुरदेवा॥ *पृष्ठ - 271*

बन्दगी करने वाले ने स्वंय तो मान पाना ही होता है, उसकी अपनी तो जय-जयकार होती ही है, जो उनकी संगत करते हैं, उनकी भी सेवा धर्मराज करता है। नाम धन इतना बड़ा बना देता है, वह पातशाहों का भी पातशाह बन जाता है। सभी देवता उसका हुक्म मानते हैं। इसलिये महाराज जी कहते हैं, वैद्य जी! मनुष्य के अन्दर नाम की औषधि रखी हुई है, दवाई सम्भाल कर रखी हुई है। पर पूरे गुरू के बिना इसकी विध नहीं बनती -

गुरि पूरै संजमु करि दीआ॥ *पृष्ठ - 259*

जब समरथ गुरू संयम करके 'अमृत नाम' दे देते हैं, उस समय शरीर में रोग रहता ही नहीं है। रोग समाप्त हो जाता है।

सो वैद्य जी ने प्रार्थना की, ''पातशाह! मुझ पर भी कृपा करो। मुझे भी वह दवाई दे दो।''

गुरू नानक जी जिसे भी मिले, उसे पूरा उतार दिया बीच में नहीं छोड़ा। वैद्य जी को नाम की दात बख्श दी।

भाई जोध कहने लगे, ''भाई लहणा जी! तुम्हें गुरू नानक पातशाह के बारे में कितना सुनायें? जितनी स्तुति करते जायें, उतनी ही बढ़ती चली जाती है। ध्यान से सुनो। आप जी एक दिन आराम से पलंग पर लेटे हुए थे। माता जी ने दासी को कहा, ''तू नानक जी को बुला ला और मैंने भोजन तैयार किया हुआ है, ठण्डा न हो जाये। जगा कर ले आ, वे अन्दर विश्राम कर रहे हैं।'' माता जी को तो सोये हुए ही नज़र आते थे। नेत्र वालों को सोते नज़र नहीं आते थे। तुलसां दासी वास्तव में श्रद्धा रखती थी क्योंकि इसे ज्यादा संगत बेबे नानकी की प्राप्त थी जो हर समय सुनाती रहती थी कि मेरे प्यारे भाई तो परमेश्वर का ही स्वरूप हैं, वह तो सारे संसार का उद्धार करने के लिये आए हैं।

जब तुलसां अन्दर गई तो ख्याल आया कि महापुरुषों को आवाज़ लगाकर जगाना ठीक नहीं होता। इसका कारण होता है साध संगत जी! वह यह है कि जो पूर्ण महात्मा हैं, जब वे संसार को सोते हुए दिखाई देते हैं, उस समय वे शरीर में नहीं हुआ करते। एक बार यह बात मुझे बड़े महाराज जी ने बताई थी। कोई बात ऐसी चल पड़ी थी, प्रसंग में बात आ गई - आपके साथ वचन करते हुए।

सन्त महाराज जी कहने लगे, ''हम रात को सोते नहीं हैं।''

मैंने कहा, ''महाराज! लेटे तो होते हैं।''

कहते हैं, ''शरीर पड़ा होता है, हम इसके अन्दर नहीं होते।'' मैंने हिम्मत की और कहा, ''महाराज! फिर कहाँ चले जाते हैं?''

सन्त जी कहने लगे, ''हाँ! फिर हम उन प्रेमियों को मिलते हैं जो हमें याद करते हैं। किसी के सपने में, किसी का कोई काम कर रहे होते हैं। कोई पहाड़ों पर बैठा फौज़ी आराधना कर रहा होता

है, कोई दूर देश विदेश में बैठा है। इस समय हमें किसी पासपोर्ट की जरूरत नहीं हुआ करती, सूक्ष्म शरीर से ही हम काम करते हैं, बल्कि हम उस समय बहुत काम करते हैं। शारीरिक रूप में तो यह साढ़े तीन हाथ के शारीरिक ढांचे जैसे को साथ ले जाना पड़ता है। सूक्ष्म शरीर से चुटकी भरते ही जहाँ जी करता है चले जाते हैं।''

मैंने कहा, ''महाराज! फिर शरीर कैसे कायम रहता है?''

कहने लगे, ''एक Silver cod (एक चान्दी की तार होती है, जब महापुरुष शरीर से बाहर होते हैं तो Silver cod से रूह का सम्बन्ध जुड़ा रहता है।) शरीर के साथ जुड़ी रहती है, जितनी दूर जाते हैं, वह उतनी ही बढ़ती चली जाती है। सैकिण्डों में ही घट बढ़ जाती है। जितने ब्रह्मण्डों में जाओ, उतनी ही बढ़ जाती है।''

इसलिये सभी महापुरुषों का मत है कि उन्हें कभी भी ऐसे ही एक दम मत जगाओ, बड़े आराम से धीरे-धीरे कोई खटका करके जगाना चाहिये ताकि वे अपने शरीर में वापिस लौट आएं। उड़ते तो हम भी हैं पर हमें सूक्ष्म शरीर से उड़ना नहीं आता, ख्याल से उड़ते हैं - सूक्ष्म शरीर से नहीं, हमारा स्थूल शरीर अलग नहीं होता, पर हम सोते हुए ख्याल द्वारा निकल जाते हैं। हम सपना देखते हैं, होते शरीर के अन्दर ही हैं। हमारे और महापुरुषों में इतना फर्क है।

अत: वहाँ पर तुलसां ने आकर देखा, देखकर आपने कोई बात नहीं की, केवल अपना मस्तक महाराज जी के चरणों के अँगूठे से लगा दिया। अँगूठा मस्तक के साथ स्पर्श करने की देर थी, एक दम तपाक से प्रकाश ही प्रकाश हो गया, बज्र कपाट खुल गये, त्रिभुवन की सूझ हो गई। सारी गुप्त दुनियां देख रही है। गुरू नानक जी को देख रही है। एक सिख अरदास कर रहा है, भाई मनसुख, लंका से सामान लेकर आ रहा है। उसका जहाज डगमगा रहा है। समुद्र के अन्दर तूफान आ गया है। उस समय मल्लाह कहते हैं कि हम अपनी पूरी कोशिश कर रहे हैं, पर हमें जहाज के बचने का कोई भरोसा नहीं है। अब आप अपने पीरों, फकीरों को ध्यान में लाओ। जहाज में मनसुख का सामान ज्यादा भरा हुआ था। आप एकाग्र चित्त होकर, उस समय -

सभ ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी॥ *पृष्ठ - 750*

उनके सामने प्रार्थना करते हैं, ''हे प्रभु! आपका सहारा लेकर चला था और अब बहुत भारी संकट आ पड़ा है और सहायता करने वाला भी कोई नहीं है। मैंने किसी ख्वाजा खिजर को नहीं मानना। पातशाह! और तो सभी का इस दुनियां में किसी का कोई है तो किसी का कोई? मेरा तो तू ही है पातशाह!''

तुलसां दासी देख रही थी कि गुरू नानक पातशाह, जहाज को थाम कर निकाल रहे हैं। चुप करके वापिस लौट आई कि यदि मैंने अब जगा दिया तो जहाज डूब जायेगा। वापिस आ गई। माता जी कहती हैं, ''तू नानक को जगा कर नहीं लाई, भोजन ठण्डा हो जायेगा।''

कहती है, ''माता जी! वे तो वहाँ पर हैं नहीं, वे तो अपने किसी गुरसिख का जहाज किनारे लगा रहे हैं, जो डूबने जा रहा है। थोड़ी देर रूको, वे अपने आप ही आ जायेंगे।''

माता जी कहती है, ''तेरी यह हिम्मत? घर की दासी होकर, तू भी लोगों की तरह बातें करने लग गई? लोग तो कहते ही हैं, तू भी कहने लग गई? माता जी नाराज़ हो गईं। जाकर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें लगाने लग गई। महाराज जी सावधान हो गये।

कहती है, ''बेटा! पहले तो लोग ही कहते थे, अब तो घर के दास भी कहने लग गये।''

महाराज जी कहते हैं, ''क्या कहते हैं दास? तुम्हें किसने सताया है?''

''यह खड़ी है - तुलसां। मैंने इसे कहा था कि जा, नानक को जगा ला, भोजन कर लें। मुझे कुछ और ही बता रही है कि वह तो किसी सिख का जहाज, जिसका नाम मनसुख है, निकाल रहे हैं।''

अब बात तो ठीक थी। महाराज जी ने सोचा, जर नहीं सकी और कहते हैं, ''यह तो झल्ली है, इसका क्या है?''

वह उसी समय मस्तानी हो गई।

इतनी देर में बेबे जी भी आ गईं, कहने लगीं, ''प्यारे भैया! इस पर तरस खाओ।''

महाराज जी कहते हैं, ''बेबे! दुनियां की ओर से अनजान रहेगी। परमेश्वर के पक्ष से सुरत में रहेगी, क्रिया साधेगी, अजर को जरेगी। ताकत होते हुए अन्दर सहन कर जायेगी।''

कहने लगे कि चरण मस्तक को स्पर्श करने से ही कितना बड़ा प्रकाश हो गया। कितने महान सतगुरू पातशाह हैं, उनकी महिमा का वर्णन नहीं किया जा सकता।

भाई लहणा जी कहने लगे, ''आप कृपा करके मुझे यह बता सकते हो कि गुरू नानक कौन सी सम्प्रदा में से हैं? क्योंकि सम्प्रदा को देखकर अनुमान लगाया जा सकता है, वह वैरागी सम्प्रदा से हैं या किसी सन्यासी से, और इनके गुरू का क्या नाम है?''

आप कहने लगे, लहणा जी! विश्वास करो, गुरू नानक देव जी स्वंय ही गुरू परमेश्वर हैं फिर भी अपने गुरू का पता बताया है, गुरबाणी में कहा है -

अपरंपर पारब्रहमु परमेसरु नानक गुरु मिलिआ सोई जीउ॥ ***पृष्ठ - 599***

महाराज जी कहते हैं हमें तो स्वंय निरंकार गुरू मिला है भाई! पर आप भी निरंकार का स्वरूप हैं। आप इस धरती पर शरीर धारण करके ही काम कर रहे हैं और स्वंय ही दरगाह में निरंकार रूप होकर बिराजमान हैं। आप ही शिष्य बने हुए हैं और आप ही गुरू बने हुए हैं।''

भाई लहणा ने पूछा, ''वह कैसे?''

भाई जोध जी कहने लगे, मैं आपको बताता हूँ, ध्यान पूर्वक सुनो। जब आप सुलतानपुर मोदीखाने का काम कर रहे थे, उस समय पूरी तरह से संसारी लगते थे। सांसारिक लोगों की तरह मोदीखाने के अधीन सभी वस्तुओं का हिसाब-किताब रखते थे, चीज़ें लेते और देते थे।

उन दिनों आठ वज़ीर हुआ करते थे। जो बड़ा वज़ीर होता था, उसे वज़ीर-ए-आज़म कहते थे; जो खज़ाना मन्त्री होता था, उसे दीवान कहते थे। रक्षा मन्त्री को बख्शी कहते थे। इसी तरह जो गृह मन्त्री होता था उसे खान-ए-खाना कहते थे। जो राशन पानी से सम्बन्धित मन्त्री होता था उसे मोदी कहा करते थे।

''भाई लहणा जी, आप मोदी का काम कर रहे थे पर एक दिन आप अचानक स्नान करने जाते हैं। उस समय आप जी दास को वस्त्र पकड़ा देते हैं और प्रतिदिन की तरह पानी में गोता लगाते हैं और पहले तो प्रतिदिन पानी से बाहर आ जाया करते थे, परन्तु आज बाहर नहीं निकले, न कोई आवाज़ या खटका हुआ। बाहर दास इन्तज़ार कर रहा है कि अब बाहर आने वाले हैं, अब आयेंगे। मन

में ख्याल आया कि कहीं पार न निकल गये हों। फिर सोचा है कि कोई खटका भी नहीं हुआ, अनुमान लगाता है, गोता ही ऐसा लगाया हो कि कहीं दूसरे किनारे पर चले गये हों। दिन निकलने तक इन्तज़ार करता रहा। जिधर बेई नदी का पानी का बहाव था उस ओर एक दो मील तक चला गया, कभी दूसरी ओर तो कभी इधर भटकता रहा। शायद कहीं तैरते-तैरते इधर न आ गये हों। जब कुछ भी समझ में न आया तो उस समय रोने लग गया, बड़े ज़ोर-ज़ोर से रोया। उसी तरह रोता हुआ जब शहर में गया तो लोगों ने पूछा, ''तू क्यों रो रहा है?''

कहता है, ''नानक जी आज बेई में से बाहर नहीं निकले पानी के अन्दर घुसे हैं, मुझे वस्त्र पकड़ाए हैं पर आप पानी में से बाहर नहीं निकले।''

उस समय सभी की रूचि इस ओर बढ़ गई क्योंकि आपकी महिमा बहुत फैल चुकी थी और चलते-चलते यह बात नवाब दौलत खान के पास पहुँच गई।

नवाब कहने लगा, ''गुरू नानक! गुरू नानक (पातशाह) जैसा इन्सान तो मैंने कभी देखा ही नहीं। वह तो खुदा का नूर है और पूरा ईमानदार है। माल लुटाये जाता है फिर भी अधिक निकलता है, कम नहीं होता। इनसे पहले जो थे वे तो घाटा, हानि ही दिखाते थे और उनसे वसूली करने के लिये, उन्हें 'काठ' लगाना पड़ता था।'' 'काठ लगाना' एक सजा हुआ करती थी। एक पहिये के अन्दर एक पैर और दूसरा पैर दूसरे पहिये में फंसा देते थे। एक पहिया एक ओर घुमा देते थे और दूसरा दूसरी ओर, टांगे टूटने वाली हो जाया करती थीं।

नवाब फिर बोला, ''नानक जी तो बहुत अच्छे हैं। यह तो बहुत बुरा हुआ।'' उस समय आकर बेई नदी में इधर उधर ढूँढते हैं, गोताखोर, तैराक भी ढूँढते हैं, कहीं पता न चला, जाल भी पानी में फैंके गये फिर भी पता न चला।

साध संगत जी! आज के लेखक ऐसा कहते हैं कि नानक साहिब बेई के दूसरी ओर तैर कर निकल गये और वहाँ कोई जंगल होगा और वहाँ बैठ गये होंगे क्योंकि इन्हें इन बातों का कोई अता-पता नहीं है और गुरू महाराज जी की क्रिया को अपनी अक्ल से मापते हैं। अब बताओ, क्या वहाँ अन्धेरा था? चारों ओर तालाश हो रही थी, पैडुए (पैरों के चिन्ह देखने वाले) लगे हुए थे, कहीं पार न निकल गये हों। इतना उन्हें ज्ञान न आया? वह अनजान थे कि वे पानी में ही खड़े हैं? किसी ने तो कहा होगा कि उस ओर देखो, कहीं दूसरी ओर न चले गये हों? कहीं भी कोई पैर के निशान नहीं मिलते, कोई चिन्ह नहीं मिलता? दूर दराज़ तक तालाश की। जाल डाले गये, बड़े-बड़े मच्छ जाल में फंस गये, काट-काट कर भी देखे, पर आप कहीं न मिले। अन्त सभी निराश हो गये। भाई जय राम जी बहुत उदास हैं। नवाब ने मोदीखाने को ताला लगवा दिया और बहुत अफसोस मना रहे हैं।

केवल एक बेबे नानकी ही हैं जो अपने विश्वास पर अडिग रहीं और कहने लगी, ''नहीं! मेरे भाई को कोई दरिया डुबो नहीं सकता, आग जला नहीं सकती, कोई शस्त्र उन्हें काट नहीं सकता क्योंकि उसके भय में सभी कुछ घटित हो रहा है -

भै विचि पवणु वहै सदवाउ। भै विचि चलहि लख दरिआउ।
भै विचि अगनि कढै वेगारि। भै विचि धरती दबी भारि।
भै विचि इंदु फिरै सिर भारि। भै विचि राजा धरमु दुआरु।
भै विचि सूरजु भै विचि चंदु। कोह करोड़ी चलत न अंतु॥ *पृष्ठ - 464*

कहती हैं जब सारी सृष्टि भय में है और वह तो स्वंय ही निरंकार का रूप हैं, उन्हें कोई डुबा

नहीं सकता। निश्चय रखो, यह उनका कोई कौतुक है।''

उधर आप जी (गुरू नानक पातशाह) दरगाह में पहुँचते हैं जिसका पता आपने अपनी बाणी में दिया है –

धारना – सचखंड 'च बुलाइआ निरंकार ने,
जगत गुरू नानक नूं – 2, 2
मेरे प्यारे, जगत गुरू नानक नूं – 2, 2
सचखंड 'च बुलाइआ निरंकार ने,......... – 2

आपको सन्देशा आया, आप बाणी में फ़रमान करते हैं–

हउ ढाढी वेकारु कारै लाइआ। राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ॥ पृष्ठ – 150

यहाँ से नहीं, दरगाह में से भी फ़रमान आया था –

ढाढी सचै महलि खसमि बुलाइआ॥ पृष्ठ – 150

मालिक ने मुझे सच्चे महल में बुलाया और वहाँ परमेश्वर ने पूछना चाहा क्योंकि दोनों ही एक रूप हैं। एक बार तो प्रकाश ही प्रकाश दिखाई देता है, दूसरी बार साकार रूप में निरंकार तथा गुरू नानक पातशाह नज़र आते हैं।

कहते हैं, ''हे नानक! आप संसार में गये थे परन्तु आपने अभी तक काम शुरू नहीं किया।''

गुरू नानक जी कहते हैं, ''निरंकार जी! संसार बुरी तरह से जल रहा है। अमावस्या की अन्धेरी काली रात पड़ गई है, धर्म कहीं दिखाई नहीं देता, चारों ओर झूठ की अन्धेरी रात फैल चुकी है –

कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।। पृष्ठ – 145

कलयुग में राजा लोग कसाई हो गये हैं। जितने साधु सन्त, आचार्य हैं सभी तेरे असली रूप से हीन होकर केवल भेषों, रूप, रेख आदि में फंसे हुए हैं। सत्य कहीं नहीं मिलता, वाद–विवाद करते हैं –

सचु किनारे रहि गइआ खहि मरदे बाहमण मउलाणे॥ भाई गुरदास जी, वार 1/21

केवल लड़ाई है। तेरे नाम की बात चलती है पर प्रभु! तेरे साथ किसी का प्यार नहीं। जो योगी हैं, वे शक्ति प्रदर्शन में फंसे हुए हैं। जो बड़े–बड़े डेरों के मालिक हैं, वे माया से ग्रसित हैं, यही योजना बनाते रहते हैं कि माया कहाँ से आये। वे माया के पुजारी हैं, तेरे नहीं। सो पातशाह! अन्धेरा ही अन्धेरा छाया हुआ है। राजे, कर्मचारियों का खून पी रहे हैं।''

''दूसरा आपकी यह मर्यादा है कि जब तक गुरू धारण न किया जाये तब तक यह मिशन नहीं चल सकता। मैंने संसार में नज़र लगाकर देखा –

बीजउ सूझै को नही बहै दलीचा पाइ॥ पृष्ठ – 936

मुझे कोई दिखाई न दिया जो दलीचा पा बैठ जाये। मैं आपको, निरंकार को गुरू धारण करने के लिये आया हूँ।'' आपने फ़रमान किया है –

अपंरपर पारब्रहमु परमेसरु नानक गुरु मिलिआ सोई जीउ॥ पृष्ठ – 599

कहते हैं, ''वही मुझे गुरू मिला।''

आदि अंति एकै अवतारा। सोई गुरू समझियहु हमारा।। (चौपई)

अत: गुरू निरंकार है तथा निरंकार से यह सम्प्रदा चलती है, जिसे सिख–मत कहते हैं।

गुरू महाराज जी कहने लगे, ''मुझे दीक्षा दो, आपका स्वरूप संसार को क्या बताया जाये। जिसकी आराधना करके संसार आप तक पहुँच सके।''

निरंकार जी कहते हैं, ''हे नानक! मुझे प्राकृतिक लोगों ने प्रकृति की तरह देखने का यत्न किया है। कोई चार बाजुओं वाला मुझे देखता है, कोई गदा, शंख तथा चक्र वाला देखता है, कोई किसी तरह की भावना से देखता है तो कोई किसी तरह की। मेरा असली स्वरूप १ओंकार का हैं। औंकार का जो मेरा स्वरूप है, वह शबद धुन है, जिसे शबद ब्रह्म कहते हैं। वह रूप, रंग, रेख, भेष, चक्र चिन्ह, जात-पात से न्यारा केवल अस्तित्व मात्र है।

जो मेरा ऐकंकार का स्वरूप है वह केवल '(१) ओंकार (ओं) सतनाम, करता पुरखु, निरभउ, निरवैरु, अकाल मूरत, अजूनी, सैभं गुर परसादि।' यहाँ मैं ऐकंकार ही हूँ। मेरा यह रूप, मेरा अस्तित्व सत्य है, नाम शक्ति है, मैं स्वंय ही एक से अनेक हुआ, एक कर्ता हूँ। सारे दृष्टिमान में, मैं व्याप्त हुआ पुरुष हूँ, मेरे सिवाय और कोई न होने के कारण निरभउ निरवैर हूँ। मैं काल रहित अस्तित्व (हस्ती) हूँ। मैं यौनियों से रहित हूँ। मैं ज्ञान हूँ पर मैं अपने में पूरी तरह से अभेद हुए, मेरा ही रूप बने हुए, गुरू की कृपा होने पर ही साक्षात्कार होता हूँ। सारा दृश्य-अदृश्य मैं स्वंय ही हूँ।''

सारा कुछ समझा दिया कि यह मेरा स्वरूप संसार को बताना। अब आप इस पर अपनी मोहर लगाओ क्योंकि आपका सिक्का चलेगा इस संसार में, मोहर आपकी होनी चाहिए।''

उस समय गुरू नानक पातशाह ने दोनों हाथ जोड़े तथा निरंकार के सामने खड़े होकर कहा, ***'आदि सचि जुगादि सचु है भी सचु नानक होसी भी सचु'*** हे प्रभु तू अनादि हैं, जब संसार का आदि हुआ उस समय भी आप ही थे, तेरे सिवाय और कुछ भी नहीं था। जब समय का अस्तित्व आया, उस समय भी तू ही था, अब भी आप ही हो; माया प्रसार कर, रचना भी अपने आप से की है। जब यह रचना तुम्हारे अन्दर लय हो जायेगी, उस समय भी तुम आप ही होंगे। अपनी खेल आप ही कर रहे हो। जब इस खेल को संकोचते हो तो भी आप ही अपनी महिमा में स्थित हो जाते हो। तू स्वंय ही पसर कर दृष्टिमान हो जाता है और सिकुड़ कर भी आप ही रह जाता है।

हुक्म हुआ कि कलयुग का जो तारक मन्त्र है वह 'वाहिगुरू मन्त्र' है। वाहिगुरू मन्त्र में मेरा अद्वैत रूप सम्मिलित है तथा उस समय निरंकार जी एक प्याला ले आए। कैसा प्याला है, वह हमारे प्यालों जैसा नहीं है। हमें बताने के लिये इस शब्द का प्रयोग किया गया है - जन्म साखियों में। वह 'नाम अमृत' से लबालब भरा हुआ प्याला था।

निरंकार जी कहते हैं, ''हे नानक! यह मेरे 'नाम अमृत' का प्याला है, मैं तुझे यह देता हूँ, इसे पी ले।''

उस समय गुरू नानक पातशाह ने 'नाम अमृत' का प्याला पीया तथा पीते ही वाहिगुरू जी का परिपूर्ण हुक्म प्रकट हो गया।

फिर निरंकार जी ने वचन किया, ''हे नानक! तेरी सारी पवित्रता मेरी होगी और तेरे सारे चरित्र, मेरे होंगे, जितने भी तू काम करेगा वह मैं करने वाला होऊँगा तथा तुम्हें कोई लेप नहीं लगेगी-

सरब सील ममं सीलं सरब पावन मम पावनह।
सरब करतब ममं करता नानक लेप छेप न लिप्यते॥ ***पृष्ठ - 1357***

अत: अब तुम संसार में जाओ। हे नानक! जो तुझ पर विश्वास करेगा, यह मेरा वचन है कि मैं उसे काल चक्र में से निकाल लूंगा। जो तेरे पर भरोसा करेगा, तेरी बाणी पर विश्वास करेगा वह मेरे तक पहुँच जायेगा। जो मैंने तुझे मन्त्र दिया है, इसका जो जाप करेगा, समझेगा, वह मेरे हुक्म को समझ जायेगा। वह हउमैं के चक्र में से निकल जायेगा –

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ॥ पृष्ठ - 1

इस तरह से महाराज जी कहते हैं कि मुझे निरंकार ने सिफत सलाह (स्तुति) का कपड़ा बख्शा है –

राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ।। पृष्ठ - 150

मैं तो बेकार था। हमें बेकार कहते हैं। हम बेकार हैं, महाराज बेकार नहीं थे। हम बेकार फिरते हैं, दुनियां के काम करते फिरते हैं, परमेश्वर के काम की ओर से बिल्कुल बेकार हैं। परमेश्वर हमें काम लगाता है, हम लग जाते हैं। भाग्यशाली व्यक्ति होता है जो माया में से निकलकर परमेश्वर की ओर लग जाता है लेकिन माया इसे परमेश्वर की ओर नहीं लगने दे रही। बार-बार फिर वहीं आ जाता है क्योंकि 'मेरा-मेरा' तथा 'ममत्व' यह नहीं छोड़ता। मैं तथा मेरी को छोड़ने के लिये तैयार नहीं, मुर्दा बनने को तैयार नहीं, ज़िन्दा रहना चाहता है। बेकारी में रहना चाहता है, कार में नहीं लगना चाहता। महाराज जी कहते हैं –

हउ ढाढी वेकारु कारै लाइआ।।
राति दिहै कै वार धुरहु फुरमाइआ॥
ढाडी सचै महलि खसमि बुलाइआ॥
सची सिफति सालाह कपड़ा पाइआ॥
सचा अंम्रित नामु भोजनु आइआ॥
गुरमती खाधा रजि तिनि सुखु पाइआ॥
ढाढी करे पसाउ सबदु वजाइआ॥
नानक सचु सालाहि पूरा पाइआ॥ पृष्ठ - 150

मुझे तो काम पर लगा दिया। अब दिन रात मैं निरंकार की कार कर रहा हूँ। मुझे सच्चे महल बुलाकर सरोपा दिया। सिफत सलाह का मुझे वस्त्र बख्शा, सरोपा बख्शा और अमृत नाम का भोजन मुझे वहाँ से प्राप्त हुआ। जो इस भोजन को लेने के लिये हमारे पास आयेगा, वह गुरू मत धारण करके, भर जायेगा, उसे सुख की प्राप्ति होगी। हमने यहाँ पर आकर परमेश्वर का अनहद-नाद बजाया है, निरंकार औंकार का, वाहिगुरू शबद का।

उस समय गुरू नानक पातशाह जी क्या देखते हैं कि अन्त ही नहीं, जिधर भी देखते हैं, उधर सृष्टियां ही सृष्टियां केवल पदार्थों की नहीं, पता नहीं किस की बनी हुई, बेअन्त खाणियों, बेअन्त बाणियां, बेअन्त पानी, बेअन्त अग्नियां, कोई भी अन्त नहीं क्योंकि हुक्म की पहचान हो गई, हुक्म की पहचान होते ही देखते हैं कि –

पाताला पाताल लख आगासा आगास।
ओड़क ओड़क भालि थके वेद कहनि इक वात।
सहस अठारह कहनि कतेबा असुलू इकु धातु।
लेखा होइ न लिखीऐ लेखै होइ विणासु॥ पृष्ठ - 5

आवाज़ आई, "हे नानक! तूने मेरे हुक्म को समझा है, इसे प्रकट कर।" उस समय महाराज

जी ऐसा फ़रमान करते हैं –

धारना – कीमत तेरी जी, ना पैंदी,
कीमत तेरी जी, ना पैंदी – 2, 2
हउ केवड आखा नाउ मालका, ना पैंदी
कीमत तेरी जी, ना पैंदी – 2

कोटि कोटी मेरी आरजा पवणु पीअणु अपिआउ।
चंदु सूरजु दुइ गुफै न देखा सुपनै सउण न थाउ।
भी तेरी कीमति न पवै हउ केवडु आखा नाउ॥ पृष्ठ – 14

"निरंकार जी! कोई भी यत्न संसार में ऐसा नहीं है जिससे तेरी कीमत बताई जा सके, तेरे हुक्म का मूल्य लग जाये तथा तेरा मूल्य पता चल जाये।"

उस समय निरंकार जी ने वचन किया, "हे नानक! तुझे मेरा हुक्म, पूरी तरह से समझ आ गया है और मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तू गुरू परमेश्वर। जो कोई तुझ पर विश्वास करेगा, उसके गुनाह मैं माफ कर दूंगा, रियायत कर दूंगा और जो तेरी बाणी पर अमल करेगा, उसे दरगाह में वास मिल जायेगा।"

इस प्रकार आप जी सारा दृश्य देख रहे हैं क्योंकि महापुरुष सभी पहुँचे हुए हैं। मोहम्मद साहिब को चालीसवें साल में जाकर एक गार (गुफा) में ऐसा अनुभव हुआ था तथा ईसा जी को काफी लम्बी उम्र के बाद ऐसा अनुभव हुआ था। पहली आयु तो उनकी भी साधारण व्यक्तियों की तरह बीती थीं, लेकिन गुरू नानक पातशाह तो पहले दिन से ही इस ओर थे, यानि आप गुरू अवतार थे। सतगुरू रूप होकर निरंकार स्वंय ही प्रकट हुये थे, तथा जब निरंकार जी की दरगाह में हुक्म का ज्ञान हुआ तो आप बेअन्त-बेअन्त देखते हैं, एक दो चार, दस नहीं, गिनती से बाहर, इस प्रकार फ़रमान करते हैं –

धारना – ब्रह्मा बिशन ते महेश पीर औलीए,
सच्चे दर खड़े प्यारिओ – 2, 2
सच्चे दर जी, खड़े प्यारिओ – 2, 2
ब्रह्मा बिशन ते महेश पीर औलीए,...............– 2

दरगाह का विवरण, जन्म साखी में इस प्रकार अंकित किया गया है कि लाख लाख, जब करोड़-करोड़ कह दें तो इसका मतलब होता है कि यह सही रकम नहीं है, यह इससे भी अधिक है। सभी महापुरुष वहाँ गये हैं।

मोहम्मद साहिब को जिस समय दरगाह में बुलाया गया तो उन्होंने सात अर्श (पृथ्वियां) सात कुरश (पाताल) बताये तथा पाँचवे के अन्दर उन्हें ईसा जी मिले, चौथे में इब्राहिम पैगम्बर मिले, कुछ अन्य भी मिले, कुछ तीसरे में मिले, कुछ पहले में से मिले, और फिर आप सातवें में पहुँचते हैं तब अल्लाह ताला के साथ बात-चीत होती है, लेकिन एक पर्दा बीच में पड़ा हुआ है। हुक्म आता है, ऐसा उल्लेख आता है कि सांगोपांग आमने सामने नहीं हुए और हुक्म आया करता था। वह जो हुक्म आता था, उसी के मुताबिक कुरान शरीफ की रचना हुई।

गुरू नानक पातशाह जब आप पहुँचते हैं तो आपने बगदाद में यह बात बताई थीं – पीर दस्तगीर को, "पीर जी! जितनी दृष्टि परमेश्वर प्रदान करता है, उतना दिखाई देने लग जाता है। जिसने सात देखे, उसने सात कह दिये, जिसने बेअन्त देखे, उसने बेअन्त बता दिये।" गुरू नानक पातशाह ने, बेअन्त-बे-शुम्मार, कोई अन्त ही नहीं है, देखा –

जितु दरि लख मुहंमदा लख ब्रहमे बिसन महेस।
लख लख राम वडीरीअहि लख राही लख वेस।
लख लख ओथै गोरखा लख लख नाथा नाथ।
लख लख ओथै आसणा गुर चेले रहिरास।
लख लख देवी देवते लख दानों लख निवास।
लख पीर पैगंबर अउलीए लख काज़ी मुला सेख।
किस ही सांति न आईआ बिनु सतिगुर के उपदेस।
साधक सिध अगनत है केते लख अपार।
एतड़िआ अपवित है बिन सतिगुर के सबद बीचार।
सिर नाथा कै इक नाथ सतिनाम करतार।
नानक ताकी कीमत न पवै बेअंत बेसुमार॥ **जनमसाखी**

एक दो-चार नहीं हैं, बेअन्त ही बेअन्त है लेकिन जो हम जानते हैं हमें पता है, वह गिनती के अन्दर है क्योंकि इस संसार के बाद जो सूक्ष्म है उसे 'गन्धर्व लोक' कहते हैं, उसे पहला अर्श कह लो। दूसरा जो है उसे 'देव गन्धर्व' कहते हैं। गिनते जाना। तीसरा 'पितृ लोक' है। चौथा 'स्वर्ग लोक', पाँचवा 'इन्द्रलोक' है, छठा 'कर्म देव लोक, है' सातवां 'अजान देव लोक' है, आँठवा 'प्रजापति लोक' है, नौवां 'ब्रह्मलोक' है, दसवां 'शिव लोक' है, ग्यारहवां 'वैकुंठ धाम' है, बाहरवां 'सचखण्ड' है।

लेकिन गुरू नानक साहिब कहते हैं गिनती मत करो, वहाँ पर ये संख्याएं फेल हो जाती हैं-

लेखा होइ ता लिखीऐ लेखै होइ विणासु॥ **पृष्ठ - 5**

वहाँ तो लाखों आकाश, लाखों पाताल हैं, कोई अन्त नहीं, किसी ओर भी कोई अन्त नहीं। इससे क्या होता है, 'विस्माद' में आ जाता है और गिनना छूट जाता है। जो स्वर्ग में हैं, जब लाखों ही स्वर्ग हैं तो कहीं न कहीं कोई टिका हुआ है। ऐसी दृष्टि गुरू नानक को प्राप्त हुई क्योंकि निरंकार ने कहा, "हे नानक! तुझ में और मुझ में जो अन्तर समझेगा वह परवान नहीं होगा और मैं पारब्रह्म परमेश्वर तथा तू गरू परमेश्वर, तू संसार का उद्धार कर।" इस तरह से गुरू नानक पातशाह -

अनिक कला लै ठाकुर चड़िआ।

चौदह कला लेकर श्री राम जी आये थे, सोलह कला सम्पूर्ण अवतार श्री कृष्ण जी महाराज थे। उस समय दुनियाँ इतनी बुरी नहीं थी। भुल्लकड़ों की दुनियाँ बहुत कम थी। रावण ही था अकेला जो गलत चलता था, बाकी अधिकतर अपने कर्म धर्म वाले थे। उन्हें चौदह कला लेकर ही काम चल जाता था। जो हरिणाक्ष को मारने वाला नरसिंह अवतार हुआ उसे भी एक ही ताकत की जरूरत थी, ज्यादा कलाओं की जरूरत नहीं थी। कृष्ण महाराज जी को सोलह कलाओं की जरूरत थी लेकिन अब संसार में इतना अनर्थ होने लग गया था कि पाप को धर्म कहते थे। लाख-लाख लोगों को खड़ा करके एक दिन में मार देना, उसे पुण्य कहते थे, 'सबाब' कहते थे। बाबर लिखता है अपनी ताजुके-ए-बाबरी में कि आज मैंने एक लाख काफिर मथुरा के अन्दर मार कर नज़ारा देखा और वहाँ पर बहने वाला खून इतना ऊँचा उठ गया, मेरे खेमे (तम्बू) में दाखिल होने लगा फिर मैंने दूसरी जगह लगवाया। आज मैंने तीन बार अपना तम्बू बदलवाया, इतना खून बहा।" अब इसे धर्म कहा जाता था फिर अधर्म किसे कहेंगे। महाराज जी कहते हैं -

जीअ बधहु सु धरमु करि थापहु अधरमु कहहु कत भाई॥ **पृष्ठ - 1103**

जीवों को मार कर तुम कहते हो कि हम धर्म कर रहे हैं फिर अधर्म किसे कहोगे तुम? फिर

तो कोई बात रह ही नहीं जाती जब जीव मार कर धर्म की स्थापना करनी है –

आपस कउ मुनिवर करि थापहु का कउ कहहु कसाई॥ ***पृष्ठ - 1103***

और कसाई किसे कहोगे? इस प्रकार गुरू नानक ने परमेश्वर के हुक्म को समझा तथा भाई जोध ने कहा, ''भाई लहणा जी! क्या प्रशंसा की जाये आप जी की, तथा आपने उनकी सत-बाणी को सुना है। आपके भाग्य जाग गये हैं और फिर आपने उनकी कथा सुनी है।''

सो अब समय इजाजत नहीं देता।

– ***आनन्द साहिब*** –

– ***गुर सतोतर*** –

– ***अरदास*** –

□ □

4

शान...।

सतिनाम श्री वाहिगुरू
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289

धारना - कवनु अनाथु बिचारा,
प्रभ मोहि कवनु अनाथु बिचारा - 2, 2
कवनु अनाथु बिचारा,
प्रभ मोहि कवनु अनाथु बिचारा - 2, 2

प्रभ जी मोहि कवनु अनाथु बिचारा।
कवन मूल ते मानुखु करिआ इहु परतापु तुहारा॥
जीअ प्राण सरब के दाते गुण कहे न जाहि अपारा।
सभ के प्रीतम स्रब प्रतिपालक सरब घटां आधारा॥
कोइ न जाणै तुमरी गति मिति आपहि एक पसारा।
साध नांव बैठावहु नानक भवसागरु पारि उतारा॥ पृष्ठ - 1220

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए........ - 2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ पृष्ठ - 855

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलना 'सतनाम श्री वाहिगुरू' परमेश्वर के प्यारों की, जो परमेश्वर को रूच जाते हैं, उनकी कथाओं में और हमारी कथाओं में बहुत अन्तर होता है। हमारी जो कथा है यह क्रोध पैदा करती है, ईर्ष्या पैदा करती है, निन्दा, हउमै पैदा करती है, अभिमान पैदा करती है जिसके फलस्वरूप हम यमों के द्वार पर जाकर धक्के खाते हैं क्योंकि महाराज जी ने वाद को गाना प्रवान नहीं किया। झगड़े-लड़ाईयों की बातें सुनाने से, उसमें तमोगुण प्रधान हो जाता है। सतोगुण वृति अलोप हो जाती है। भजन बन्दगी आस पास नहीं फटकती। मनुष्य खुश्क हो जाता है, अन्दर क्रोध पैदा हो जाता है तथा और ही तरह का बन जाता है। उससे पहले भी व्यक्ति बहुत नीचे स्तर में पहुँचा हुआ होता है, इसे ऊँचा उठाना है, इस डूबते हुए को बहाना नहीं है। जो परमेश्वर के प्यारे होते हैं, जब उनकी कथाएं की जायें, वे सुनी जायें। ***'बाबाणीयां कहानियां पुत्र सुपुत करेनि'*** बहुत अधिक प्रभावित करती हैं, पुत्रों को सुपुत्र बना देती हैं, कुपुत्रों को पुत्र बना देती हैं।

इस प्रकार की एक वार्ता पिछले तीन दिवानों से चल रही है, जो प्रेमी नहीं आए उनकी जानकारी के लिये प्रार्थना है कि गुरू नानक पातशाह को रिझाना सबसे कठिन था क्योंकि न तो कोई इतनी तपस्या कर सकता था, न ही कोई संसार में ऐसा हुआ जो उनके समान कष्ट सह सकता और न ही सारी दुनियां में प्रचार करने वाला कोई आया और न ही उनके मुकाबले में आज तक कोई विद्वान हुआ है। बड़े-बड़े दर्शन शास्त्र उनकी जपुजी साहिब से एक पंक्ति के सामने फीके पड़ जाते हैं। हमें इसका क्यों नहीं पता? हमें इसलिये नहीं पता क्योंकि हम गुरू नानक को कहते हैं कि हमारे ही थे, अपने बाप दादा की जो प्रभुता होती है, उसे पोते नहीं जाना करते, बाहरी लोग जानते हैं। उन्हें पता है कि वह बुर्जुग कैसा था। जब मर जाता है, दूसरे के मुख से वचन सुनता है, फिर उसे थोड़ा सा अहसास होता है कि हमारा बुर्जुग इतना महान था, हमने तो उसका कद्र मान ही नहीं समझा।

हमें गुरू नानक की बाणी का मान नहीं करना आता। हम जपुजी साहिब नहीं समझ सकते। बेशक सारी ज़िन्दगी लगे रहें, पहले तो जपुजी साहिब को पढ़ते ही नहीं हैं। गुरू दसवें पातशाह ने वचन किया कि जिस घर में जपुजी साहिब का पाठ नितनेम शुद्ध हृदय से होता रहेगा, उस घर में कोई विघ्न नहीं आयेगा, क्लेश नहीं आयेगा, झगड़े-लड़ाईयां नहीं होंगी। क्यों नहीं होंगे? क्योंकि वहाँ कलयुग पैर नहीं रख सकता। कलयुग जो हैं कलह तथा क्लेश का युग है। गुरू दसवें पातशाह जी के पास एक सिख ने आकर प्रार्थना की, ''महाराज! मेरी पत्नी ने सिक्खी धारण की हुई है, उसे पता नहीं क्या हो जाता है? एक दम हार श्रृंगार करके चल पड़ती है और एक तांत्रिक मुल्लां के पास चली जाती है। उसे समझाते भी हैं, पर वह कहती है कि मैं सभी बातें जानती हूँ तथा मैं अपने इस कर्म से कभी भी सहमत नहीं हूँ पर समझ में नहीं आता कि मुझे क्या हो जाता है? मुझे कोई चीज़ खींच कर ले जाती है, मेरी होश खत्म हो जाती है। जब मैं घर वापिस आ जाती हूँ तो बहुत पछताती हूँ।'' महाराज कहते हैं, ''उसने उसे मन्त्रित किया हुआ है।'' वह बोला, ''महाराज बहुत इलाज करवाये हैं, पर कोई फर्क नहीं पड़ता। जब वापिस आ जाती है तो वह स्वंय ही कहती है, हैरानी की बात है कि मुझे कुछ पता नहीं होता कि मैं कब चली? मुझे कब ले गये? कहाँ ले गये? पश्चाताप करती है, रोती है। जब उसे बताया जाता है कि तू तो मुल्ला के पास चली गई थी।'' महाराज जी कहते हैं, ''प्यारे! सभी मन्त्रों से बड़ा तथा श्रेष्ठ मन्त्र 'जपुजी साहिब' है। अत: तू भी और वह भी, जपुजी साहिब पढ़ा करो। यह बता, ''भाई! जपुजी साहिब पढ़ता है?'' मैं भी यहाँ पूछा करता हूँ, ''प्यारे! तू जपुजी साहिब पढ़ता है?'' कहता है, ''याद नहीं है। कमाल की बात है, मनुष्य का जामा, गुरू की सिक्खी, तुम्हें प्राप्त है, तुम कहते हो, हम गुरू के सिख हैं फिर जपुजी साहिब तुम्हें याद नहीं? ऐसा फ़रमान है -

बिन जपु जाप जपै जो जेवे प्रसादि।
सो बिसटा का जंत होइ जनम गवावै बादि॥ *रहितनामा*

जो जपुजी साहिब तथा जापु साहिब पढ़े बिना भोजन करता है, कहते हैं, वह विष्ठा का कीड़ा बन जाता है। अत: महाराज कहते हैं जपुजी साहिब पढ़ते हो? कहता है, जी नहीं, महाराज जी याद नहीं है।''

कहने लगे, फिर तुम्हारी कैसी सिक्खी है, यदि तुम्हें जपुजी साहिब ही याद नहीं। कौन सी बात के कारण तुम सिख हो? कोई मुश्किल नहीं होता, यदि कोई कहे कि मैं तो पढ़ा लिखा नहीं हूँ। ये पढ़े लिखों को कौन सा याद है? पढ़े लिखों को पूछ लो। कालिज में चले जाओ, सिखों के लड़कों से पूछ लो कि उसे जपुजी साहिब याद है? कहते हैं, हमने तो देखा ही नहीं, जपुजी साहिब क्या होता है? क्यों कहते हो हम सिख हैं, असल में सिख नहीं है, सिख तो कोई विरला-विरला है। सभी नहीं हुआ करते। यह तो वोट लेने वालों को सिखों की ज़रूरत है। इन्हीं के कारण दूसरे भी दुखी हो रहे

हैं।

गुरसिखी का मार्ग तो बहुत आसान है। अभी आपने विवाह देखा, बारात आ गई है, सभी सत्संगी बन कर आए हैं। गुरू घर में श्रद्धा के साथ आये हैं और बीबी का परिवार है और वह भी श्रद्धा के साथ गुरू घर में आये हैं। कोई आडम्बर नहीं, कोई दिखावा नहीं। गुरू महाराज जी की हज़ूरी में आकर प्रण कर लिया और विवाह हो गया। कितना आसान है। कोई बाजे नहीं बजाने, कोई दहेज, कुछ भी नहीं देना बल्कि संगत की खुशियां तथा साथ ही गुरू की खुशियां और उनकी अकीदत (विश्वास, भरोसा) की, जब भी कोई बड़ा काम करना हो तो गुरू के द्वार पर आकर करो। संगत में आकर करो। संगत के स्थान पर जब शराबी-कबाबी इकट्ठे हो जाते हैं, गुरू ग्रन्थ साहिब की हाज़री में रात को शराब पीकर या पहले पीकर आते हैं, महाराज जी का कितना निरादर करते हैं। फिर बताओ क्या वह विवाह निभ सकेगा? गलत हो जायेगा। अतः यह बहुत ही सरल तरीका था गुरू महाराज जी का। सहज में चलने का हमें हुक्म था। किसी भी काम के लिये कष्ट मत उठाओ, दिखावा मत करो। नक-नमूज़ (बेइज्जती कराना) की बात मनमुख किया करते हैं। गुरमुख ऐसी बातें नहीं किया करते। गुरमुखों का गुरू से प्यार हुआ करता है। जब भी कोई काम करना हो -

कीता लोड़ीऐ कंमु सु हरि पहि आखीऐ॥ *पृष्ठ - 91*

अपने गुरू के पास आ जाते हैं, गुरू की खुशियां प्राप्त हो जाती हैं। इस प्रकार हमारी जिन्दगी में आडम्बर बहुत आ गया है। हम सिख हैं नहीं, अपने आप को कहते हैं, हम सिख हैं। जब तक अमृत पान नहीं करता, पाँच प्यारों से नाम नहीं लेता, तब तक कुछ भी नहीं है। महाराज जी तो इस तरह कहते हैं -

बिन पाहुल धरे केस भेखी मूरख सिख। मेरा दरसन नाही तिस............................।

कहते हैं, एक तो भेखी है दूसरा मूर्ख भी है। मेरा दर्शन उसे नहीं होगा, न ही नाम फल लगेगा क्योंकि वह निगुरा नाम जपता है। जब तक बाणी हमें याद नहीं होती, हम गुरू के सिख कैसे कहलवा सकते हैं?

मुझे याद है कि तुम्हारे बीजी के माता जी कोई एक अक्षर भी नहीं जानती थीं। उन्होंने गर्मियों के महीने में अमृत बेला में उठकर दो बजे स्नान करके, कोठे पर बैठ जाना, चारपाई से उतर कर, बनेरे (मुंडेर) के पास बैठ जाया करतीं, फिर उन्होंने गा-गाकर बाणी पढ़नी, जपुजी साहिब सुनातीं, जापु साहिब सुनातीं तथा आनन्द साहिब सुनातीं, सवैये सुनातीं, शब्द हज़ारे आसा जी की वार शबद छक्कों सहित सुनातीं, कितनी बाणी हो गई? आठ-नौ बाणियां रोज़ बोलतीं। हमने पूछना, ''बेबे जी! आपको कैसे याद है?'' कहने लगीं, ''मैं एक-एक दो-दो तुकें पढ़े लिखों से पूछ-पूछ कर याद कर लेती थीं।''

जिसके मन में लगन है, शौक है कि दरगाह में जाकर डण्डे न पड़ें, हमारा आदर हो, वह तो प्राप्त कर लेता है, जैसे दुनियांवी वस्तुओं के लिए भागे फिरते हो, इसी तरह गुरू की बाणी रतन, जवाहर तथा लाल हैं। जिन्हें इसकी कद्र है वही जानते हैं। वे हर समय बाणी पढ़ते हैं या वाहिगुरू मन्त्र जपते हैं हुक्म है कि -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरिनामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रितसरि नावै।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै....................॥ *पृष्ठ - 305*

जो पाँच प्यारे नाम देते हैं, फिर वह जपना -

.... सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥ पृष्ठ - 305

सभी पापों का खातमा हो जाता है। जब दिन निकल आया बाणी पढ़ते रहो –

फिर चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि सो गुरसिखु गुरू मनि भावै॥ पृष्ठ - 306

वह भा (रुच) जाता है, गुरू को बाकी नहीं रूचा करते। हम अपना कर्तव्य पूरा नहीं करते। गुरू से मांगते हैं, ''मेरा यह काम हो जाये, मेरा वह काम हो जाये, मेरा रोग दूर हो जाये, मेरा लड़का शराब पीना बन्द कर दे, मेरा पति शराब पीना बन्द कर दे।'' मैं पूछता हूँ, ''बीबी! जपुजी साहिब याद है।'' कहती है, ''नहीं जी, वह तो याद नहीं। बीमारी दूर हो जाये बाबा जी।'' मैंने कहा, ''तुम जपुजी साहिब याद कर लो तुम्हारा रोग दूर हो जायेगा। चलो, इतना ही सही, मैंने कोई आर्शीवाद तो नहीं देना, सिर पर कोई हाथ नहीं रखना। तुम गुरू की शरण में ही आ जाओ। गुरू का पल्ला पकड़ लो, बिमारियाँ अपने आप ही हट जायेंगी।''

इस प्रकार हमारा गुरू के साथ प्यार नहीं है। अतः गुरू दसवें पातशाह कहने लगे, ''गुरसिख! जपुजी साहिब याद है।'' कहते हैं, ''महाराज! अच्छी तरह से याद नहीं है।'' कहते हैं, यह तो बहुत बुरी बात है। जपुजी साहिब तो याद कर लेता। ऐसे करना, पाँच पाठ जपुजी साहिब के करके इसे यह जल पिला देना और साथ ही जो जल इसके सामने रखा होगा, वह इसके सिर में डाल देना अर्थात उसके साथ यह केशों सहित स्नान कर ले, उसे होश आ जायेगी। उस समय वह घर आया, गुरमुख को साथ ले आया, जपुजी साहिब के पाँच पाठ करवाए, उसके बाद जल तैयार किया, उसे पिलाया, फिर केशों सहित स्नान करवाया। एक दम होश आ गई, जैसे किसी ने छोड़ दिया हो। कहने लगी, ''मुझे महाराज जी के पास ले चलो।'' वह बोला, ''आज तक तो तूने कभी नहीं कहा, मुझे महाराज जी के पास ले चलो? जब हम कहते थे कि तू चल, तो तू कहा करती थी कि मैंने नहीं जाना, मेरा मन नहीं करता।'' वह बोली, ''आज पता नहीं क्या हो गया है, मेरे सिर से बोझ उतर गया है, मुझे किसी चीज़ ने जकड़ा हुआ था।'' देखो कितना बड़ा जपुजी साहिब का फल है। यहाँ पर बीमार क्या ठीक नहीं होते। हम कहते हैं, जपुजी साहिब के पाठ करो, 25 पाठ रोज करो, सभी महापुरुष कहते हैं, गुरू की बाणी पढ़ने से ठीक हो जाता है। सेवा करने से ठीक हो जाता है। इस प्रकार जब तक हम बाणी नहीं पढ़ते, तब तक कोई बात सिद्ध नहीं होती।

गुरू अंगद साहिब महाराज जी की वार्ता का उल्लेख कर रहे थे। आप तो गुरू को मानते हो, बाणी पढ़ते हो, सिर झुकाते हो, गुरूद्वारे आते हो परन्तु उस समय तक भाई लहणा जी बिल्कुल भी नहीं आया करते थे। भाई लहणा जी, उनका नाम था और भाई फेरू मल उनके पिता जी थे। माता का नाम दया कौर था। अच्छे खाते-पीते खुशहाल परिवार से सम्बन्ध रखते थे, व्यापारी थे, काफी दूर-दूर तक इनका व्यापार फैला हुआ था। पैसे की कोई कमी न थी। आपने एक दिन देवी की भेटों का जगराता किया। उसके पश्चात अमृत बेला में मन किया कि स्नान करें। तालाब में स्नान करने चले गये। वहाँ एक गुरसिख स्नान कर रहा था और उस गुरसिख ने बाणी पढ़ी। इन्होंने ध्यान से सुनी। मन में इतना आकर्षण हुआ, अनायास ही पीछे जाकर बैठ गये ताकि यदि सामने बैठ गया तो कहीं बन्द न कर दें। जपुजी साहिब का पाठ सुना, आसा जी की वार सुनते ही मन में ख्याल आया कि यह बाणी तो बहुत ऊँची है। आज तक मैंने ऐसी बात नहीं सुनी। उस समय भाई जोध को, जो वहाँ का जाट था, कहने लगे, ''भाई जोध! यह अमृत तूने कहाँ से लिया है। जब तुम अमृत बाणी की वर्षा कर रहे थे, इसने मेरे हृदय को प्रफुल्लित कर दिया और मेरा मन बहुत प्रसन्न हुआ।'' उसने बताया कि यह गुरू नानक पातशाह की बाणी है। वह बोला, कौन है गुरू नानक पातशाह? अभी तक उनके बारे में सुना नहीं था क्योंकि खडूर साहिब तथा करतारपुर के बीच कोई

खास फासला नहीं है, जिले दो हैं पर पास-पास हैं। वह अमृतसर में है, वह गुरदास पुर में है। गुरू नानक देव जी को सारा संसार जानता था, लेकिन जो पास रहते थे उन्हें पता नहीं था, गुरू नानक साहिब कौन थे। लहणा जी बोले, वह कौन है? उनके बारे में उसने बहुत पूछा, उनकी रहन-सहन मर्यादा कैसी है? जीवन कैसा है? जब तक किसी की बात नहीं करते तब तक उसका पता नहीं चलता और कीमत देने के लिये जिसके मन में शौक है, वह कहता है, मुझे उसकी बातें सुना। ज्यों-ज्यों शौक बढ़ता है, त्यों-त्यों और अधिक बातें सुनता है। हमारा महाराज जी (राड़ा साहिब वाले महापुरुषों) के साथ प्यार था, हर समय हमारे घर में उनकी ही बात चलती रहती। एक बार कर लेना, दोबारा कर लेना, दस बार, सौ बार वही बात सुनकर हमें आनन्द आता था क्योंकि प्यारे की बात सुनने के लिये जी करता है कि एक बार फिर कोई और बताए। तुम्हारा लड़का इग्लैण्ड गया हो, उसके पास कोई व्यक्ति मिल कर आया हो, उसने कुछ सन्देशे दिये, कुछ आपकी बात चीत की, जैसे माता जी को ऐसे कह देना, बापू जी को ऐसे कहना आदि-आदि, जब सारी बात सुन लेंगे फिर भी पूछ ही लेते हैं और क्या कहता था। हांलाकि सारी बातें बता चुका होता है। वह वही बताई हुईं बातें फिर दोहरा देता है। उन्हें सुनकर फिर भी उन्हें वही आनन्द आता है, फिर उसे दूसरे दिन मिलें, तब भी यही कहेगा फिर क्या कहा उसने? मतलब बार-बार अपने प्यारे की बातें सुनने को मन करता है। एक काफिला ईरान से आ रहा था। मजनू को पता चला कि ये लैला के शहर से आ रहे हैं। उसी समय काफिले वालों को जाकर मिलता है। मजनू अकेले-अकेले को पूछता है, ''और, लैला क्या कहती थी? तुमने देखी थी? कहां घूम रही थी? क्या कर रही थी?'' बातें सुन-सुन कर अनुमान लगाये जाता है। दिल्ली जा पहुँचा। रोज़ पूछ लिया करता। आखिर पूछता-पूछता उसके पास चला गया। महाराज जी कहते हैं, ''प्यारे की बातें यदि कोई सुनाता है, तो उसका कोई मूल्य नहीं हुआ करता, उसका तो बहुत मूल्य देना पड़ता है।

धारना - सीस वढ्ढ के बणा दिआं मूड़ा,
गल्लां जो सुणावे तेरीआं - 2, 2
मेरे पिआरे, गल्लां जो सुणावे तेरीआं - 2, 2
सीस वढ्ढ के बणा दिआं मूड़ा .... - 2, 2

तै साहिब की बात जि आखै कहु नानक किआ दीजै।
सीसु वडे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै॥ पृष्ठ - 558

प्यार की जो बात सुनाता है, कहते हैं क्या दें उसे? चौगिर्दा देखता है। सोना दे दें, चांदी दे दें क्योंकि वह प्यारे की बात सुना रहा है। महाराज कहते हैं, ''नहीं, उसके बैठने के लिये अपना शीश काटकर दे दो यानि अभिमान छोड़ दो, उसके चरणों के दास बन जाओ, जो प्यारे की बात सुनाए।''

अपने बुजुर्गों की ऐसी बातें हुआ करती हैं। हमें अपने प्यारों की राह दिखाया करती हैं। भाई लहणा जी, भाई जोध को बार-बार पूछते हैं कि गुरू नानक की बात बताओ। अत: आपने बचपन की सारी बातें बताईं। पान्धे को कैसे पढ़ाया, वैद्य को कैसे बताया, कि सारे रोगों की दारू नाम हुआ करता है और सभी बातें बताते हुए फिर अन्त में बताया कि गुरू नानक पातशाह जब सुलतानपुर में मोदी का काम करते थे, उस समय आप अकाल पुरुष की दरगाह में पहुँचते हैं। निरंकार जी ने सन्देशा भेजकर बुलाया। उस समय गुरू महाराज जी से पूछा, ''हे नानक जी! आपने वह कार्य शुरू नहीं किया।'' नानक जी कहने लगे, ''सच्चे पातशाह! संसार में आप की मर्यादा है कि जब तक गुरू धारण नहीं किया जाता, तब तक मनुष्य निगुरा कहलाता है, निगुरे की गति नहीं हुआ करती -

........................निगुरे का है नाउ बुरा॥ पृष्ठ - 434

जहाँ निगुरा बैठेगा, वहाँ सवा गज धरती भ्रष्ट हो जाती है। फिर गुरू धारण कर लेना था। पातशाह! संसार में सभी जगह नज़र दौड़ा कर देखा है –

बीजउ सूझै को नही बहै दुलीचा पाइ॥ *पृष्ठ - 936*

पातशाह! ऐसा कोई भी नज़र नहीं आया, जो बिल्कुल पवित्र हो। ऐसा कोई नहीं मिला जो गुरू नानक का गुरू बन जाये। इसलिये मैं आपकी शरण में आया हूँ। आप गुरू बनकर मुझे उपदेश दीजिये, दीक्षा दीजिये। उस समय निरंकार जी ने मूल मन्त्र का पाठ गुर परसादि तक अपने मुखारविन्द से उच्चारण किया। गुरू नानक पातशाह से कहा, ''मोहर लगाओ।'' आपने, 'आदि सचु, जुगादि सचु है भी सचु नानक होसी भी सचु' कहा। कहने लगे, ''नानक जी! इस मन्त्र को जो पढ़ेगा, मन चित्त लगा कर मूल मन्त्र का पाठ करेगा, वह मेरी दरगाह में वास प्राप्त करेगा। मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तू गुरू परमेश्वर। हम दोनों में जो भेद मानेगा, उसका कल्याण नहीं होगा। गुरू तथा परमेश्वर में कोई भेद नहीं हुआ करता। अत: नानक, जिस पर तेरी नदरि, उस पर मेरी नदरि, जिस पर तेरी कृपा, उस पर मेरी कृपा।''

उस समय एक प्याला मंगवाया, गुरू नानक पातशाह को स्वंय अकाल पुरुष ने अपने हाथों से दिया और बोले, ''नानक, इसे पी लो।'' अपने नाम का प्याला अमृत का प्याला पिलाया। पीते ही सारे हुक्म का ज्ञान हो गया। परमेश्वर कहने लगे, ''हुक्म की व्याख्या कर।'' उस समय महाराज जी ने दो शब्द उच्चारण किये और निरंकार जी ने प्रसन्न होकर कहा, ''अब आप जाओ, जाकर संसार का उद्धार करो।'' गुरू नानक पातशाह ठीक उसी समय जब वेई नदी में गोता लगाया, तीन दिनों के बाद बाहर निकल आये। जो उनका दास, सेवादार था, विरले-विरले सेवादार होते हैं, सभी सेवादार नहीं हुआ करते, न महापुरुषों के और न ही गुरूओं के होते हैं। जिस पर अत्याधिक कृपा हो, वह सेवा कर सकता है, दूसरा नहीं कर सकता। सारी दुनियाँ कहती थी, गुरू नानक डूब गया। उसे कोई मच्छ खा गया। बेबे नानकी जी कहा करती थीं, ''नहीं, मेरे भाई को कुछ नहीं हो सकता। यह उनका कोई कौतुक है।'' गुरू महाराज जी का सेवादार, यह भी रोज़ अमृत बेला में दो बजे, वेई नदी पर चला जाया करता था, जहाँ महाराज जी ने वस्त्र पकड़ाए थे, वहीं पर ही पहुँच जाया करता और आज तीसरे दिन गुरू नानक पातशाह वेई में से बाहर निकले। देखते ही इतने प्रसन्न हुए कि यह कैसा दास है, तीन दिन हो गये। हमें यहाँ से गए हुए, फिर यह यहीं पर नदी किनारे तथा इधर-उधर वस्त्रों को उठाए घूमता रहता है। उस समय महाराज जी ने नदरि निहाल कर दिया। जब तप करने की जरूरत ही नहीं पड़ी, दृष्टि की और ब्रह्म ज्ञान दे दिया, अगम निगम का ज्ञान प्रदान कर दिया। घट-घट में व्याप्त परमेश्वर के दर्शन करवा दिये।

कहने लगे, ''हे भद्र पुरुष! हम तुझ से अति प्रसन्न हैं। तूने हमें प्रसन्न कर लिया।'' उसके मन में निश्चय था कि आप जरूर बाहर निकलेंगे। इस प्रकार आप बाहर आए तथा ऊपर की ओर जिधर गुरूद्वारा बना हुआ है, उस स्थान पर सन्त घाट पर जाकर मसानों के बीच बैठ गये। कब्रिस्तान के बीच में जाकर बैठ गये और सभी ने कहा, नानक जी निकल आए, मोदी निकल आया, दर्शन करने के लिये जाते हैं। गुरू नानक कोई बात नहीं करते बस एक ही वचन करते हैं –

न हम हिंदू न मुसलमान। अलह राम के पिंड परान॥ *पृष्ठ - 1136*

हिन्दुओं ने सुना, मुसलमानों ने गुस्सा किया कि यह कहता है कोई मुसलमान नहीं है। नवाब के पास शिकायत पहुँच गई। नवाब के यहाँ पेशी हुई। गुरू नानक पातशाह कचहरी में जाते हैं। नवाब कहने लगा, ''नानक जी! आप जी की शिकायत की गई है कि आप कहते हैं न कोई हिन्दू है न कोई मुसलमान और शिकायत करने वाला कहता है यहाँ सभी हिन्दू और मुसलमान हैं और कोई है ही नहीं,

इनके अतिरिक्त तीसरा और कोई है ही नहीं। इस्लाम वालों ने इस बात का गुस्सा किया कि नानक जी हमारे मत की धज्जियाँ उड़ा रहे थे। हमारे कुरान शरीफ के अनुसार हम सही मुसलमान हैं। महाराज कहते हैं, ठीक है नवाब साहिब! नाम रखवाया जा सकता है लेकिन –

मुसलमाणु कहावणु मुसकलु जा होइ ता मुसलमाणु कहावै।
अवलि अउलि दीनु करि मिठा मसकल माना मालु मुसावै।
होइ मुसलिमु दीन मुहाणै मरण जीवण का भरमु चुकावै।
रब की रजाइ मंने सिर उपरि करता मंने आपु गवावै।
तउ नानक सरब जीआ मिहरंमति होइ त मुसलमाणु कहावै॥ पृष्ठ - 141

गुरू नानक पातशाह जी ने नवाब से कहा, ''किसी भी धर्म का धारणी यदि वह बताए हुए नियमों पर चलता है, तभी उस धर्म का अनुयायी कहलवा सकता है।''

मुसलमान कहलवाना बहुत मुश्किल है, यदि उसके अन्दर मुसलमानों वाले गुण हों, तभी मुसलमान कहलवा सकता है, जो पहले औलिया, पीर, सन्त फकीरों का दीन मीठा करके माने। सन्त फकीर, सारी सृष्टि में एक ही खुदा देखते हैं, फिर जिस प्रकार लोहे से जंग उतार दिया जाता है, ऐसे अपना धन माल लुटा दे। इसका भाव यह है कि अपना विकार रूपी धन खर्च करके उतार दे जैसे मुशकलां जंग उतार देता है। अपने दीन के अगुआ का वचन, जन्म मरण का भ्रम मिटा दे। परमात्मा की रज़ा को पहचाने तथा धुर हृदय से मानकर अपना आपा मिटा दे क्योंकि सभी कुछ परमात्मा की रज़ा में हो रहा है।

फिर सभी जीवों पर दया करे। यदि ये गुण हों, फिर अपने आपको मुसलमान कहलवा सकता है –

मुसलमाणु मोम दिल होवै। अंतर की मलु दिल ते धोवै।
दुनीआ रंग न आवै नेड़ै जिउ कुसम पाटु घिउ पाकु हरा॥ पृष्ठ - 1084

मुसलमान का दिल मोम जैसा नर्म होना चाहिये पर ये सभी इसके विपरीत आचरण करते हैं हिन्दुओं से नफरत, धक्केशाही, जोर-जुलम कर रहे हैं। मुसलमान के अन्दर पापों की मैल नहीं होनी चाहिये। इबादत करके दुनियाँ में आकर्षित होने की बजाये, अल्लाह के साथ प्रीत होनी चाहिये तथा दिल फूल, रेशम तथा घी के समान शुद्ध होना चाहिये।

कहते हैं इनके मोम दिल हैं? ये तो पत्थरों से भी अधिक कठोर है, मनुष्य को मारते समय बिल्कुल भी धौल (दया) नहीं करते और तुम्हारे राजाओं ने कितने व्यक्ति मरवा दिये। एक दिन में 30-30 हज़ार ब्राह्मण मरवा दिया। मथुरा में बाबर जैसों ने एक लाख लोगों को मौत के घाट उतरवाया। उस समय आपने सारी बात समझाई, नमाज़ की बातें भी समझाईं कि असली नमाज़ क्या होती है? नवाब कहने लगा, ''हे नानक! मैंने यह सही मान लिया कि तू सारी दुनियाँ का सांझा रहबर है और हमारा चित्त तभी खुश होगा यदि तू हमारे साथ चलकर मस्जिद में नमाज़ पढ़े, तेरी जाति हिन्दू है। हिन्दू होने के नाते, मन्दिर तो जरूर चला जायेगा, कोई रूकावट नहीं पर हमारा भी मन करता है, तेरे जैसा आदमी हमारे साथ नमाज़ में हों, हमें ज्ञान हो, अल्लाह ताला खुश हों।'' गुरू नानक पातशाह ने कहा, ''कब?'' नवाब बोला, ''आज की जुम्मारात (शुक्रवार) को नमाज़ पढ़ी जायेगी।'' नानक ने कहा, ''ठीक है, मस्जिद में नमाज़ पढ़ेंगे।'' वहाँ चले जाते हैं। नमाज़ में खड़े हो जाते हैं। इल-इलला, अभी इतना ही पढ़ा जाता है, आगे अभी कलमा नहीं पढ़ा था। बड़े लम्बे रहाउ में उसने कहा। गुरू नानक पातशाह खड़े रहे तथा जब ला-इल्लाह कहा, उस समय आप निकल कर बाहर चले गये। तब नमाज़ शुरू हो चुकी थी। मुसलमानों का ऐसा नियम है कि यदि ये नमाज़ पढ़ने लग जायें, इसे कज़ा नहीं करते यानि खण्डित नहीं करते। इसके विपरीत हमारा यह हिसाब है कि हम जपुजी साहिब पढ़ते-पढ़ते जब तक बीस लोगों

से बात नहीं कर लेते, हमारा जुपजी साहिब का पाठ भी पूरा नहीं होता। बातें करेंगे, बीच-बीच में किसी को बुलायेंगे।

एक मेरा काफी मिलनसार प्रेमी था। मैं सुबह ही उनके घर चला गया। सुखमनी साहिब पढ़ रहा था। बच्चे साथ ही खेल रहे थे। स्कूल का कोई काम था, गुटका हाथ में था जब उसे बहुत अधिक गुस्सा आया, वहाँ पर गिलास पड़ा था, उसने वहीं फैंक कर मारा और साथ ही माँ, बहन की गालियाँ सुना दीं।

यह इस्लाम वालों की खूबी है कि फिर नहीं बोलते चाहे धक्के मारो, कुछ भी कहे जाओ। अतः नमाज़ पढ़ी गई। काज़ी ने कहा कि गुरू नानक ने हमारे साथ नमाज़ नहीं पढ़ी। महाराज जी कहते हैं, ''हमने तो पढ़ी है, यहाँ कोई पढ़ने वाला और तो है नहीं, हमने तो पढ़ ली।'' कहने लगे, ''महाराज जी! हम सभी थे। नवाब कहने लगा, ''मैंने पढ़ी है, काज़ी साहिब ने पढ़ी है।'' महाराज जी ने कहा, तूने नमाज़ नहीं पढ़ी, तू तो कन्धार में घोड़े खरीद रहा था। तेरी हाज़िरी अल्लाह के दर पर नहीं थी।'' कौन-कौन से विचार उस समय मन में से निकल जाते हैं। एक चित्त होकर जपुजी साहिब का एक पाठ कर लिया जाये, उसका तो कोई हिसाब किताब ही नहीं है।

गुरू छठे पातशाह महाराज! जब करतार पुर का युद्ध हुआ, वहाँ पर बहुत से लोग मारे गये और उन्होंने हज़ारों मुसलमानों की कब्रें बनवा कर दबा दिया और दूसरे लोगों का संस्कार करवा दिया। महाराज कहने लगे, ''भाई! यह इतने जीवों की रूहें भटक रही हैं, इनका उद्धार करना है।'' कहने लगे कि संगत में से एक सिख उठे जो मन चित्त लगाकर शुद्ध जपुजी साहिब का पाठ कर दे। उस पाठ के करने से इन सभी रूहों का उद्धार हो जायेगा। उस समय सभी ने सिर झुका लिये क्योंकि पता था कि एक चित्त होना बहुत कठिन है, जिसमें एक भी फुरना न आये। पूरा जुपजी साहिब प्यार से पढ़ दे। एक गुरसिख हाफज़ाबाद का खड़ा हो गया। वह कहने लगा, ''महाराज! यदि आपका हुक्म हो और पीठ पर आपका हाथ रहे तो मैं सेवा करना चाहता हूँ।'' गुरू महाराज जी ने कहा कि आ जा। उसी समय जपुजी साहिब का पाठ शुरू कर दिया गया। जब वह गुरसिख पढ़ रहा था, महाराज कह रहे थे, 'शाबाश!' महाराज कहीं-कहीं इस प्रकार के शबद उच्चारण किया करते थे, 'बलिहार, बलिहार।' पौड़ियाँ पढ़ता चला जा रहा है। अन्त में जब आखरी श्लोक पढ़ने लगा, उस समय महाराज जी खिसकते-खिसकते अपने सिहांसन से पीछे चले गये और जब इसने श्लोक शुरू किया –

पवणु गुरू पाणी पिता माता धरति महतु।
दिवसु राति दुइ दाई दाइआ खेलै सगल जगतु।
चंगिआईआ बुरिआईआ वाचै धरमु हदूरि॥ *जपुजी साहिब*

जब यहाँ पर पहुँचा तो इसके मन में विचार आया कि गुरू महाराज क्यों उठ रहे हैं, आप तो बैठे थे। बैठे-बैठे खड़े क्यों हो रहे हैं? साथ ही दूसरा फुरना आ गया कि यदि महाराज जी ने कहा कि क्या इनाम दें फिर मैंने महाराज जी से सवा लाख वाला घोड़ा मांगना है। जब सवा लाख घोड़े वाली बात कही उस समय महाराज जी ने एक चरण तो धरती पर लगा दिया था और दूसरा चरण अभी ऊपर था, आप नीचे वाले पैर को उठाकर पुनः आसन पर बैठ गये तथा बिराजमान हो गये। तब पाठ का भोग पड़ा। गुरू महाराज ने कहा, ''बलिहार सिखा! बलिहार! कुर्बान जाते हैं, तेरे सामने। हमें भी नमस्कार करनी चाहिये। तूने शुद्ध चित्त, अर्थों सहित विचार करके जपुजी साहिब का पाठ किया है, पर बात यह है कि हम विचार कर रहे थे कि तुम्हें क्या दें। गुरू नानक की बख्शी हुई सबसे बड़ी चीज़, हम तुझे देना चाहते थे। वह है गुरू गद्दी और ज्यों-ज्यों तुम पाठ करते गये, हम पीछे हटते चले गये'' –

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥ *जपुजी साहिब*

भाई गोपाला! जब तूने जपुजी साहिब का पाठ समाप्त कर लेना था, हमने उस समय एक दम सामने होकर, नमस्कार कर देनी थी और इस गद्दी पर तुम्हें बिठा देना था। हे भद्र पुरुष! आज हमने तुझे गुरू नानक की गद्दी देनी थी पर तेरी किस्मत हल्की होने के कारण तूने हमसे घोड़ा मांग लिया। केवल आधी तुक रह गई थी। ***नानक ते मुख उजले..........।*** यहाँ तक तो पूरा का पूरा रह गया। ***.............केती छुटी नालि।*** कहते-कहते घोड़े का ख्याल दिमाग में आ गया। महाराज कहते हैं, ''जाओ, सवा लाख वाला घोड़ा लाओ।'' सोने की काठी तथा ज़री सहित बादले के झूल सहित सजाया हुआ घोड़ा लाया गया। महाराज जी ने कहा, ''ले भाई! तूने तो पाठ किया है, तू घोड़ा ले ले। हम तो प्यारे! तुझे गुरू नानक की गद्दी देने लगे थे।''

अत: महाराज बार-बार कहते हैं कि तुम जपुजी साहिब पढ़ा करो, कच्चे मत बनो, पक्के हो जाओ। साध संगत जी, आप संगत में आते हो, सत्संग करने का फल बहुत अधिक है। बाणी में फ़रमान है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ *पृष्ठ - 546*

गाकर, सुनकर, कई यज्ञों का फल प्राप्त करते हो पर इससे आगे बढ़ो, बाणी याद करो, जपुजी साहिब पढ़ा करो।

इस प्रकार एक चित्त भजन करने का फल होता है। महाराज कहने लगे, ''हमने तो नमाज़ पढ़ी है पर तुमने नहीं पढ़ी।'' नवाब कहता है, ''महाराज! मैं तो यहीं था। महाराज कहते हैं, ''नहीं, नवाब साहिब, नमाज़ शरीर नहीं पढ़ा करता, नमाज़ मन पढ़ा करता है। यह ठीक है कि तुमने घुटने टेक लिये, कभी सिजदा करते रहे, कभी माथा झुका दिया फिर खड़े हो गये फिर सिर झुका दिया, कभी घुटनों के बल खड़े हो गये फिर शीश झुका दिया। यह शारीरिक क्रिया तो आप सभी ने कर ली, तुम्हारे शरीर ने तो साथ दिया है यह ठीक है, लेकिन मन ने साथ नहीं दिया। वह तो काबुल कन्धार में घोड़े खरीद रहा था।'' नवाब ने मुँह में दांतों तले अंगुली दबा ली और कहने लगा, ''काज़ी साहिब! गुरू नानक वली अल्लाह है, यह अन्दर की बातें जानता है। मैं सचमुच घोड़े खरीद रहा था।'' काज़ी ढीठ था। गुरू पातशाह से कहने लगा, ''फिर मेरे साथ नमाज़ पढ़ लेते।'' महाराज कहते हैं, ''तू तो पहले भी यहाँ नहीं था। यह तो आधे कलमें के समय था, पर तू तो था ही नहीं।'' कहने लगा, ''मैं कहाँ था?'' महाराज कहते हैं, ''तेरे घर घोड़ी प्रसूति हुई और आंगन में कुआं है जिसकी मुंडेर नहीं है, तू तो नमाज़ के समय उधर भागा जा रहा था। उसी समय से सोचता था कि बछेरी कुएं में न गिर जाये। तू तो कुएं पर खड़ा बछेरी को बार-बार रोक रहा था, नमाज़ कब पढ़ी थी तूने?'' यह सुनकर सभी ने गुरू नानक के चरणों में नमस्कार कर दी। दौलत खान नवाब ने गुरू चरणों में प्रार्थना की, पातशाह! मन स्थिर नहीं रहता, मन कैसे काबू किया जाये?

अदभुत रस नर भए कछुक रस हास सों
हो तब निबाब गहि चरन रहयो ह्वै दैस सोनात।
सिर पीरन के पीर! पीर हरि मेरीआ
गुनी गहीर सरीर, शरन मैं तेरीआ
भ्रम करि भूले भनयो, भेव नहिं जानिआ
हो बखशहु औगुन मोह अजान बखानिआ
पूरब औगन बखश कै अब दिहु निज उपदेश

बंदि हाथ बिनती करत दौलत खान नरेश
तुम खुदाइ को रूप हो, अंतरजामी सरब
मैं अति मूढ न लखि सकयो निज अस्वरजहिं गरब
हौं समीप चिरकाल के छूछ न छोरहु आप
बिबसि मनि को बस करो हरीए तीनहु ताप।
बिशय अधीनहिं दीन मैं, हरख शोक अनुसारि।
अस सुनकै तिह के बचन बोले गुर उदार॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 398*

गुरू नानक पातशाह जी ने फ़रमान किया कि मन को वश करना अति कठिन है क्योंकि यह वासनाओं की अनेक तरंगों पर नाचता है। मन को रोके बिना प्यार, वैराग पैदा नहीं होता तथा रस से हीन रहता है। पारा कभी भी अंगुली के नीचे नहीं दबाया जा सकता चाहे कितना यत्न क्यों न कर लें। जब गन्धक जैसी औषधि का प्रयोग करके मार लिया जाये फिर अंगुली के नीचे आता है। जैसे चंचल घोड़ा अनजान सवार को भगा-भगा कर गिरा देता है, दुखी करता है, परन्तु यदि सवार घोड़े के मुँह में लगाम डाल दे, लगाम कस दे तथा हाथ में चाबुक ले ले, फिर घोड़ा काबू हो जाता है।

इसी प्रकार मन सतगुरू मिलने पर स्थिर होता है। दोजख का ध्यान करे, बुरे कर्मों में प्रवृत्त न हो और गुरू के शबद का कन्डियाला लगाये। विषयों में से वृत्ति बाहर निकाले, प्रभु की रज़ा माने और प्रतिदिन वाहिगुरू का सिमरण करे। सतगुरू के उपदेश को हृदय में धारण करे। राग द्वैष से बच कर रहे।

अतः महाराज जी ने फ़रमान किया, ''प्रेमियो! यदि भजन करने आते हो, नाम जपते हो, बन्दगी करते हो, जपुजी साहिब पढ़ते हो तो एक काम किया करो। उस समय को सम्भाल कर परमेश्वर के लेखे में लगाया करो तथा चित्त एकाग्र करके हरि यश किया करो।'' इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - जस करो वाहिगुरू दा, पिआरिओ,
चित्त नूं इकागर करके - 2, 2
चित्त नूं इकागर करके पिआरे - 2, 2
जस करो वाहिगुरू दा पिआरिओ, ... -2

प्रभ की उसतति करहु संत मीत। सावधान एकागर चीत॥ *पृष्ठ - 295*

इस प्रकार जब जपुजी साहिब पढ़ते हो, सुखमनी साहिब पढ़ते हो, थोड़ा पढ़ लो पर चित्त को एकाग्र करो। जब तक चित्त एकाग्र करने की युक्ति नहीं आती, तो फल पूरा-पूरा प्राप्त नहीं हुआ करता, फिर कहते हो, पढ़ते तो हैं, मैं तो 25 पाठ जपुजी साहिब के बताया करता हूँ कि 25 पाठ में कहीं बाणी में मन एकाग्र हो जायेगा। जब हो गया, उसी समय इसका काम बन जाना है। उसी समय इसने सन्तुष्ट हो जाना है? बिमारी दूर हो जायेगी, कार्य सिद्ध हो जायेगा। कभी तो इसका मन, थोड़ा बहुत लग ही जायेगा, कभी किसी तुक पर एकाग्र हो गया, कभी किसी तुक पर एकाग्र हो गया, मान लो यदि सारे जपुजी साहिब पर नहीं होता। बाणी ने तो फल देना ही देना है।

अतः महाराज जी ने यह बताया, यदि परमेश्वर का यश करना है, नमाज़ पढ़नी है, गायत्री पढ़नी है, सन्ध्या करनी है तो चित्त की एकाग्रता जरूरी है। साथ ही विधि भी बताई है कि चित्त एकाग्र कैसे होता है? इसके पश्चात भाई जोध कहने लगे, ''लहणा जी, गुरू नानक पातशाह ने फ़रमान किया कि संसार परमेश्वर को भूल गया है बिल्कुल नहीं पता, दुनियाँ नास्तिक है। वाहिगुरू हाज़िर नाज़िर है, सभी के अन्दर है। कोई मानता है कि मेरे अन्दर वाहिगुरू है। हर समय भूले ही रहते हैं-

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई॥ पृष्ठ - 677

महाराज जी कहते हैं, जिधर तू देखता है, उधर ही वाहिगुरू है। वह दूर नहीं जाता।

रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई॥ पृष्ठ - 677

वह सभी के अन्दर बाहर रमा हुआ है, उसका ध्यान कर, इतनी ही बात थी। यदि इतनी बात समझ में आ जाये, उस सिख के चरणों में मस्तक नवा दो, शीश नवा दो, कोई हर्ज़ नहीं होता क्योंकि वह बहुत ऊँचा हो गया। उसने दो बातें बहुत अच्छी तरह से समझ लीं, एक तो यह कि मैं जिधर देखता हूँ, वाहिगुरू है, दूसरा वह मेरे साथ रहता है-

ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ॥ पृष्ठ - 677

वह वाहिगुरू जी हर एक के साथ है पर हम वाहिगुरू को भूल गये। इतना भूल चुके हैं कि हमारे ध्यान में ही नहीं आता। एक उदाहरण द्वारा बात समझ में आ जायेगी। वह यह है कि जब सृष्टि नहीं बनी थी, जितना भी तुम महसूस करते हो, चान्द, तारे, सूर्य जितना भी देखते हो, हवा महसूस करते हो, अग्नि देखते हो, मिट्टी देखते हो, आकाश देखते हो, यह एक समय था जब यहाँ कुछ भी नहीं था, अपनी मौज में वाहिगुरू अकेला ही था, जो पढ़े लिखे हैं उस समय को यह कह देते हैं कि उस समय सुन्न समाधि थी, अफूर अवस्था में था, ठीक है इनकी बात मान लेते हैं कि अफूर अवस्था में होगा, परन्तु वाहिगुरू के अन्दर की बात तो कोई जान ही नहीं सकता क्योंकि वह अकेला ही था, उस अवस्था में था, जिसके बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। यह तो गुरू महाराज जी ने लिखा है, वह अपने आप में था, अकेला था, वह कैसा था, उस समय उसकी बात कोई नहीं जानता। मेरे मन की बात यदि कीड़ा जानना चाहे तो वह नहीं जान सकता। रात को जब हम सोते हैं या यहाँ बैठकर भजन करें, कीड़े को क्या पता है कि क्या कर रहा है? इसी तरह हमें नहीं पता कि वाहिगुरू उस समय किस प्रकार की अवस्था में था? पर यह है कि जब संसार नहीं होता था, यह पदार्थ (matter) नहीं होता था, प्रकृति रूप सृष्टि नहीं होती थी, उस समय निरंकार अवस्था में प्रभु मौज आई कि प्रकृति की सृष्टि रचें। उस समय जब मौज आई जैसे बैठा हुआ व्यक्ति उठकर काम में लग जाता है, इसी प्रकार अकाल पुरुष ने ऐकंकार का रूप धारण कर लिया। साकार रूप, उसके बारे में तो कोई बता नहीं सकता। कुछ ने तो अनुमान लगा लिया कि उसकी चार भुजाएं हैं, उसके एक हाथ में चक्र है, एक हाथ में शंख है एक में गदा है, एक में कमल का फूल है। ठीक है चित्त टिकाने के लिये अपना अनुमान बहुत सुन्दर है। लेकिन महाराज कहते हैं, रूप, रंग, रेख, भेख, चक्र, चिन्ह, जात-पात उसकी कोई नहीं बता सकता -

नहीं जान जाई कछू रूप रेखं। कहां बासु तां को, फिरि कउन भेखं।
कहा नाम तां कै, कहां कै कहावै। कहा कै बखानो, कहे मो ना आवै॥अकाल उसतति

कहते हैं, कोई नहीं कह सकता लेकिन यह हो गया कि वह हस्ती हो गया, ऐकंकार सच हो गया। सच को कहते हैं 'हस्ती' जैसे मैं बैठा हूँ, यह मेरी हस्ती है। यह सत है, यह ठीक है, मैं जो कुछ बैठा नज़र आ रहा हूँ। यह ऐसे ही है। एक मायिक करिश्मा है।

इसी प्रकार वाहिगुरू सगुण हो गया तथा सगुण होने से हस्ती बन गया, लेकिन कोई बता नहीं सकता, वह कैसा था। उसने अपना रूप आगे और धारण किया, औंकार स्वरूप हो गया, ऐकंकार से शबद धुन बन गया। इसका यह मतलब नहीं कि पहले वाला ऐकंकार रूप खत्म हो गया और औंकार हो गया। शबद रूप होकर फिर वह खत्म हो गया। अब ऐकंकार नहीं रहा, वह शबद रूप है। वह सभी रूपों में है, फिर वह सृष्टि बन गया। वह सारा ही स्वंय है, माया कहीं से नहीं ली? एक फुरना किया। हमारे सपने में तथा इस बात में काफी अन्तर है। यदि मैं कहता हूँ कि सपना देखा, सपना नहीं -

सचे तेरे खंच सचे ब्रहमंड॥ पृष्ठ - 463

ये तो सच्ची चीज़ें दिखाई देती हैं। हाथ लगाने पर हम महसूस करते हैं। छांई-माई (छुई-मुई) तो नहीं है पर ऐसे जैसे सत्य नहीं रहतीं, सभी बदल जाती हैं। एक रस नहीं रहतीं। न शरीर रहता है, न कोई सगा सम्बन्धी, न घर, न ज़मीन, न सूर्य, न चन्द्र, न तारे, ये सभी अपने-अपने समय पर समाप्त हो जाते हैं लेकिन ऐसा करने से वाहिगुरू जी बंट नहीं जाता। वह अपनी शक्तियों सहित उसी तरह रहता है। निर्लेप रहता है। यह बदलते रहने की सारी क्रिया, उसके अगंमी हुक्म की क्रिया है। सभी जगह उसका हुक्म ही चल रहा है। हुक्म में सृष्टि के अनेक रूपों, रंगों में समष्टि, व्यष्टि की क्रिया हो रही है। शबद शक्ति कहो या नाम शक्ति ही हुक्म है। नाम प्रकृति की उत्पत्ति तथा तीनों गुणों, रजो, सतो, तमो का स्त्रोत है, नाम सभी जगह परिपूर्ण है। यहाँ निरंकार ही ऐकंकार है तथा औंकार रूप में शबद तथा नाम शक्ति है जो सत का ही एक अनन्य करिश्मा है तथा कर्ता है, सारे घट-घट में रमा हुआ पुरुष है, सदा सत की मूरत है, पूर्ण ज्ञान है।

माया स्वतन्त्र अनादि तत्व नहीं है। इसका प्रसार भी प्रभु हुक्म में ही है। माया को सत्ता देने वाला वाहिगुरू ब्रह्म ही है। गुरमत के प्रकाश से पहले, अस्तित्व में आये विचारों में चिन्तकों ने वाहिगुरू जी से अलग, उसी की एक शक्ति, जो शुद्ध माया के संग के कारण अस्तित्व में आई, उसे ईश्वर कहा जो सर्व कला समरथ कर्मों के फल भुगताने तथा सृष्टि का मालिक अनुमानित किया गया पर गुरमत वाहिगुरू जी को ही सर्व कला समर्थ करन-कारण तथा कर्ता मानती है और केवल १ओंकार को माया की त्रिगुणी सृष्टि से निर्लेप बताती है। वाहिगुरू जी की शक्ति माया सहित (जो उसी की ही शक्ति है) नाना रूप धारण कर क्रिया कर रही है तथा आदि शक्ति न्यारी है, निर्लेप है, प्रकृति, माया का उस पर कोई असर नहीं है। वह माया का संग नहीं करता क्योंकि माया की वाहिगुरू जी के बिना कोई हद नहीं है। माया उसकी शक्ति है, जो हुक्म में क्रिया कर रही है। इस प्रकार वाहिगुरू घट-घट व्यापक होते हुए निर्लेप है। अछोह है, अपने आप में ही स्थित है। सांसारिक खेल उसी तरह है, जैसे एक जादूगर (बाजीगर) एक होता हुआ अपने फुरने से नाना रूप में प्रकट हुआ दिखाई दे रहा है। उसकी इस गति को अल्पज्ञ जीव किसी प्रकार की, कल्पना करके, समझने में असमर्थ है। 'कर्ता' की खेल को 'कीता' (जिससे खेल करवाई गई है वह) नहीं जान सकता। कुम्हार बर्तन बनाता है, बर्तन कुम्हार की कोई भी क्रिया समझने में असमर्थ है -

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा।
नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥ पृष्ठ - 537

जब सृष्टि की रचना हो गई, मनुष्य बन गये, प्रत्येक वस्तु बन गई, 84 लाख यौनियाँ ये तो अकेली हमारी ही धरती की हैं। ऐसी अरबों, खरबों, सारी जिन्दगी कहते चलें, फिर भी इससे अधिक पृथ्वियाँ हैं, कोई नहीं कह सकता -

लेखा होइ त लिखीऐ लेखै होइ विणासु॥ जपुजी साहिब

यह केवल वाहिगुरू जी ही जानता है कि कितना बड़ा प्रसार है और कोई नहीं जान सकता। कर्ता की बात को कोई नहीं जान सकता। वह जो वाहिगुरू है, हर एक के अन्दर है, हर एक की बात सुनता है, हर एक की बात मानता है। पर यदि उसे मनुष्य के समान देखना है, तो वह वैसा रूप भी धारण करके दिखा देता है। गुरू नानक जैसा देखना है वैसा ही दिखाई दे जायेगा। गुरू दसवें पातशाह जैसा देखना है, वैसा ही दिखाई दे जायेगा। कृष्ण महाराज जैसा देखना हो, वैसा भी दिखाई दे जायेगा। वह तुम्हारी भावना के साथ दिखाई देता है। साथ यह भी कह देता है, यह मेरा रूप नहीं है, तुम्हारी भावना का रूप है। मैं इससे अलग हूँ। जब नामदेव जी से यही बात कही, नाम देव जी कहने लगे,

''प्रभु फिर मुझे बता दो आपका कौन सा रूप है? आप कहाँ रहते हो?'' भगवान कहने लगे, ''नामदेव! यदि मैं यह बात बता दूँ तो फिर न तू रहेगा, न मैं रहूँगा, न संसार रहेगा।'' यह बात समझ में आना बहुत कठिन है कि क्या कह दिया। वाहिगुरू जी के साकार रूप हैं कि न मैं रहूँ। वाहिगुरू तो रहते ही हैं, सदा ही रहते हैं। इसमें सवाल क्या हो गया कि मैं न रहा और दूसरा यह कि न दुनियाँ रहे। दुनियाँ तो है ही, इतना बताने से ही खत्म हो जायेगी कहते हैं, मैं स्वंय अपने मुँह से नहीं बताया करता, मेरे सन्त बताया करते हैं। मैं कैसा हूँ? नाम देव बोले, ''मैं सन्तों को कहाँ ढूँढू?'' उत्तर मिला, ''सन्त तेरे पास ही हैं। उनका नाम ज्ञानेश्वर है। उनके पास चला जा।'' नामदेव जी विट्ठल को मानते थे। विट्ठल एक पत्थर होता है, जिसमें सफेद धारी हुआ करती है, उसे सालिग्राम भी कहते हैं। नदी में चले जाओ, वहाँ पर इस प्रकार के कई मिलेंगे और उन्हें मानता था। ज्ञानेश्वर नदी में स्नान करके उस पत्थर पर पैर रख कर खड़े थे। नाम देव जी जब गये कहते हैं, ''मेरे इष्ट देव पर पैर रख कर खड़े हैं।'' इसे बड़ी ग्लानि हुई। तर्क किया और वापिस लौट आया। जब वापिस आया तो प्रभु भी आ गये, कहते हैं, ''नामदेव! तूने कितनी भक्ति की हुई गवाँ दी?''

कहता है, ''महाराज क्यों?''

कहते हैं कि तूने ब्रह्मज्ञानी पर तर्क किया है। ब्रह्मज्ञानी पर तर्क करने से 6 कलाएं वैराग की उसी समय खत्म हो जाया करती हैं। तू फीका पड़ जायेगा। श्रद्धा धारण करके, फिर जा। उससे पूछ फिर तुझे वह बतायेगा। कहता है, ''हे प्रभु! वह तो तेरे ऊपर पैर रख कर खड़ा है।''

भगवान कहते हैं, ''नामदेव! तुझे पता नहीं, मैं कौन हूँ? यदि पता चल गया तो फिर तुझे अपने आप ज्ञान हो जायेगा।'' उस समय नामदेव जी दोबारा गये। ज्ञानेश्वर जी ने आवाज़ लगाई कहते हैं, ''आ जा, तेरी सिफारिश पहुँच गई मेरे पास, आ जा तेरा भगवान तुझे बता दूँ, जो बात तुझे बतानी है।'' क्योंकि जहाँ ब्रह्मज्ञानी होगा, वहाँ पर सभी शक्तियाँ साथ होंगी, निशानी होती है। बातों से ज्ञानी नहीं बन जाया करता –

गिआनु न गलीई ढूढीऐ कथना करड़ा सारु॥ पृष्ठ - 465

उसकी अवस्था हुआ करती है –

जो नरु दुख मै दुखु नही मानै।
सुख सनेहु अरु भै नही जा कै कंचन माटी मानै।
नह निंदिआ नह उसतति जा कै लोभु मोहु अभिमाना।
हरख सोग ते रहै निआरउ नाहि मान अपमाना।
आसा मनसा सगल तिआगै जग ते रहै निरासा।
कामु क्रोधु जिह परसै नाहनि तिह घटि ब्रहमु निवासा॥ पृष्ठ - 634

ब्रह्म का उसमें निवास हुआ करता है, उसके अन्दर सभी शक्तियाँ हुआ करती हैं –

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ पृष्ठ - 649

कहने लगे, ''आ जा, आ जा। तुझे तेरा परमात्मा बता दूँ। जो बात पूछनी है। कल क्यों लौट गया था?'' कहने लगा, ''महाराज! आपने विट्ठल पर पैर रखा हुआ था।'' ज्ञानेश्वर जी बोले कि तेरे परमेश्वर ने तेरे साथ बात की है कि मैं कहाँ रहता हूँ। नामदेव बोले, कभी-कभी कहते हैं कि मैं सभी जगह रहता हूँ, हर जगह परिपूर्ण हूँ। ज्ञानेश्वर जी बोले कि फिर मेरे शरीर में भी रहता है न? कहते हैं, ''हाँ जी।''

ज्ञानेश्वर, ''फिर मेरे पैर में तो नहीं रहता?'' नामदेव, ''नहीं जी, पैर में भी रहता है।''

ज्ञानेश्वर, ''फिर इस पत्थर में भी रहता है।'' नामदेव, ''हाँ जी! इसे तो मैं शीश झुकाता हूँ, मेरा इष्ट है।'' ज्ञानेश्वर, ''फिर मेरे सारे शरीर में परमात्मा है, पत्थर में भी है, कौन किसके ऊपर पैर रखे खड़ा था?''

इतनी बात कहने की देर थी कि तड़ाक से ज्ञान का पर्दा, जिसे बज्र कपाट कहते हैं, वह खुल गये। खुलते ही क्या देखता है कि यह तो सारा संसार वाहिगुरू ही है। यहाँ तो और कोई है ही नहीं। उस समय आपके मुख से ऐसा उच्चारण हुआ -

धारना - राम बोले राम बोले राम बोलदा,
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै- 2, 2
राम बोले राम बोले राम बोलदै,
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै - 2, 2

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै। राम बिना को बोलै रे।
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे।
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे।
एकल चिंता राखु अनंता अउर तजहु सभ आसा रे।
प्रणवै नामा भए निहकामा को ठाकुरु को दासा रे॥ *पृष्ठ - 988*

कहते हैं, सभी के अन्दर परमेश्वर बोलता है, दर्शन हो गये उसके। दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई। यह संसार प्रभु रूप भासित हो गया जो सत अवस्था है -

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।
एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ।
गुर परसादी बुझिआ जा वेखा हरि इकु है हरि बिनु अवरु न कोई।
कहै नानकु एहि नेत्र अंध से सतिगुरि मिलिऐ दिब द्रिसटि होई॥ *पृष्ठ - 922*

क्योंकि नेत्र खुल गये, बन्द पड़े थे। खैर, हमारे नेत्र तो नहीं खुलते यह तो बहुत मुश्किल बात है। हम मान तो सकते हैं कि वाहिगुरू मेरे साथ है। जहाँ मैं जाता हूँ, वहीं वाहिगुरू साथ है। दरवाज़े बन्द कर लूँ, तो भी वाहिगुरू साथ है। पानी में गोता लगा दूँ तो भी वह मेरे साथ है। हवाई जहाज में बैठ जाऊँ तो भी मेरे साथ है। इस बात को याद रख लो -

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई।
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई॥ *पृष्ठ - 677*

सभी के अन्दर रमा हुआ है। इसका ध्यान रख, सदा-सदा यह ध्यान रखने से यह काम बन जायेगा -

ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ॥ *पृष्ठ - 677*

जो साँस बाहर निकल गया, कोई उसे अपने आप लौटाकर दिखा दो। जब वाहिगुरू ज्योति को खींच लेता है फिर लगा लो जोर, सांस कभी अन्दर नहीं जाता, पम्प भी करते हैं, तब भी नहीं जाता, पानी भी अन्दर नहीं जाता, कुछ भी नहीं जाता। महाराज कहते हैं, तभी दिल को मोड़ता है, पहले तो चलाए रहता है। हर समय सारी जिन्दगी मनुष्य का बनाया तो ईंजन नहीं चलता, मनुष्य चाहे कितना भी धन इकट्ठा कर ले, अपने आपको खूब बना ले। वह एक बार बना देता है, ऐसा सैल लगा देता है, सारी जिन्दगी दिल का कार्य चलता रहता है। चलता भी कितना तेज़ है। एक मिनट में 35 गैलन, खून घुमा

देता है। 35 गैलन! एक गैलन देख लो, कितना होता है? इतना खून इतनी जल्दी घुमा देता है। भागा ही फिरता है। खून वाली नब्ज़ देखते हैं, भागा ही रहता है। फिर खून कितना जल्दी उसे साफ कर देता है। जब पैरों की ओर से होता हुआ वापिस आता है, इसका रंग नीला हो जाता है, नीली नाड़ियों में से आता है। पहले लाल में जाता है। वहाँ से दिल में जाता है, दिल में आते ही साफ कर देता है। उसी समय फिर भेज देता है। महाराज कहते हैं –

सासि सासि संमालता मेरा प्रभु सोई॥ *पृष्ठ - 677*

मेरा वाहिगुरू जो तुझे सांस-सांस सम्भालता है, इतनी बात याद रख ले। बाबा जी के पास आकर कहते हैं, जी दुखी है, दुख तो उसके भूलने में है –

दुखु तदे जा विसरि जावै॥ *पृष्ठ - 98*

दुख तभी आते हैं जब –

परमेसर ते भुलिआं विआपनि सभे रोग॥ *पृष्ठ - 135*

सारे रोग, सभी नुक्सान, परेशानियाँ, परमेश्वर को भूलने पर ही आती हैं। यदि तुम अभ्यास द्वारा, वाहिगुरू को सदा याद रख लो, सभी परेशानियाँ खत्म हो जायेंगी।

इसलिये गुरू नानक पातशाह जी ने बताया कि नवाब साहिब नमाज़ जरूर पढ़ो, पर नमाज़ अक्षरों की मत पढ़ो, नमाज़ ध्यान की पढ़ो। उसमें ध्यान रखो, जपुजी साहिब जरूर पढ़ो, पर जपुजी साहिब किसके सामने पढ़ रहे हो, उसे भी तो ध्यान में रखो। इस प्रकार महाराज जी ने उपदेश दिये। भाई जोध ने भाई लहणा जी को समझाया, बात समझ में आ गई। भाई जोध कहते हैं कि तू बहुत गूढ़ मतलब की बातें करता है, मेरी इतनी आयु हो चुकी है, यह तो मैंने आज तक सुना नहीं। 1561 में आपका जन्म हुआ था। कहने लगे कि मेरी इतनी आयु बीत गई और यह मैं जो उल्लेख कर रहा हूँ, 1589 का है। 28 वर्ष की मेरी आयु हो गई। कहते हैं कि 28 साल की उम्र में मैंने ऐसे वचन नहीं सुने, बस भेंटे ही चढ़ाते रहे हैं। हम गाते ही रहे हैं, मस्त होते रहे हैं और घुंघरू बान्ध कर नाचते रहे हैं। हम खड़तालें पकड़ कर, झुनझुने हाथों में लेकर, बजाते हुए, वज़द में आ जाते हैं पर ऐसा आनन्द कभी नहीं आया जैसा तुमने बताया है। यह तो हमारी समझ में भी नहीं आया। भाई जोध कहने लगे कि गुरू नानक पातशाह ने और भी आकर बताया, ''भाई लहणा जी, मान लो, एक को जो सभी का शिरोमणी है, छोटे मोटों को क्यों मानते हो? यदि किसी का राष्ट्रपति जानकार हो, मिलनसार हो, फिर वह एक चपड़ासी को आकर चापलूसी करे फिर तो गलत बात है क्योंकि जब बड़े को पकड़ लिया, हाथी के पैर में सभी का पैर आ जाता है। शेर की शरण में जाकर गीदड़ों की क्या खुशामद करनी है। वाहिगुरू जी सदा ही अदृश्य रूप में हर एक के साथ रहते हैं। देवता देव लोक में रहते हैं, वह हर समय के साथी नहीं हुआ करते।''

जो देवता हैं, ये पदार्थ, भौतिक वस्तुएं तो दे देते हैं। इनके पास एक ही पदार्थ होता है, बहुत नहीं हुआ करते। जिसे जो वस्तु सम्भाल कर दी हुई है, उसके पास वही है, सभी नहीं हुआ करतीं। देवताओं के पास न तो नाम है, न मुक्ति है। दो चीज़ें हैं, पदार्थ हैं, माया है।

भाई जोध कहने लगे, गुरू नानक पातशाह ने कहा कि जिसने संसार बनाया है, उसे तो बिल्कुल भूल गया और उसकी बनाई हुई शक्तियाँ थीं, उन्हें हर समय याद रखता है –

धारना - दुनिआं भुल्ल के हरी दे नाम नूं,
देवी देव पूजण लग गए - 2, 2
मेरे पिआरे देवी देव पूजण लग गए - 2, 2

दुनीआं भुल्ल के हरी दे नाम नूं....... - 2, 2

देवी देवा पूजीऐ भाई किआ मागउ किआ देहि॥ *पृष्ठ - 637*

क्या माँगोगे? क्या देगा, कोई है?

पाहणु नीरि पखालीऐ भाई जल महि बुडहि तेहि॥ *पृष्ठ - 637*

पत्थर को पानी में रख दो, कहते हैं क्या तैरेगा? कहते हैं, 'जल महि बूड़त' वह तो पानी में डूब जाता है, तुझे कैसे तार देगा? बनाई हुई वस्तुओं को हम पूजने लग गये, जो बनाने वाला है, उसे भूल गये।

गुरू नानक पातशाह इस बात पर ज़ोर देते हैं कि अकाल पुरुष ने, जिसने शक्तियां बनाई हैं, उसे क्यों नहीं पूजते? उसे क्यों भूले फिर रहे हो? फिर मागोंगे क्या, यह देंगे क्या? ये परमात्मा नहीं दिखा सकते, न ही मुक्ति दे सकते हैं -

गुर बिनु अलखु न लखीऐ भाई जगु बूडै पति खोइ॥ *पृष्ठ - 637*

अपनी पत खोने में लगे हुए हैं, गुरू के बिना परमात्मा के दर्शन नहीं होते -

मेरे ठाकुर हाथि वडाईआ भाई जै भावै तै देइ॥ *पृष्ठ - 637*

यह जो देवता हैं, बड़े से बड़े देवता, जहाँ सत्संग हो रहा होगा, परमेश्वर के प्यारों के दर्शन करने आते हैं उस स्थान पर, ठीक है, हम आदर करते हैं, किसी का निरादर नहीं करते, पर जब बराबरी करते हैं, तुलना करते हैं तो अकाल पुरुष की रीस, बराबरी कोई देवता, कोई नहीं कर सकता। सांसारिक जीवों को, परमेश्वर को ही मानना चाहिये, न कि बनाई हुई चीज़ों को मानना चाहिये। करतार को मानो, पूजो, प्यार करो। कृत्रिम की ओर रूख रखकर समय क्यों बर्बाद किया जा रहा है।

एक बार गुरू दसवें पातशाह महाराज ऐसे ही वचन कर रहे थे कि जहाँ प्रभु का यश होता हो, वहाँ बैकुण्ठ धाम के सभी देवता आ जाया करते हैं। साथ ही साखी भी सुनाई। एक बार नारद जी ने व्रत रखा। उनके मन में फुरना आया कि आज मैं बैकुण्ठ धाम में जाकर विष्णु जी के सामने जाकर व्रत खोलूंगा। आप उसी समय बैकुण्ठ धाम चले गये। वहाँ पर पहुँच कर लक्ष्मी जी से पूछा, "भगवान कहाँ गये हैं?" लक्ष्मी जी बोली, "पता नहीं, पर नारद जी, आप तो त्रिकाल दर्शी हो, देख लो, किसी भगत का उद्धार करने गये होंगे।" नारद जी ने सभी ओर दिव्य दृष्टि दौड़ाई, समुद्र में भी देखा, जोगियों के हृदयों में देखा, स्वर्ण मन्दिरों में देखा, बड़े-बड़े स्थानों पर, पूजनीय स्थानों पर, सैकड़ों तीर्थों में देखा, कहीं भी नज़र न आए। मन ही मन कहने लगे, मेरा व्रत उदयापन का समय हो रहा है और प्रभु कहीं भी नज़र नहीं आ रहे। जब मनुष्य का यत्न समाप्त हो जाये, उस समय प्रार्थना, अरदास काम किया करती है। लक्ष्मी जी ने कहा, "आप प्रार्थना करो।" उस समय नारद जी ने प्रार्थना की, "हे भगवान! कहाँ चले गये? आप दर्शन तो दीजिए।" क्या देखते हैं कि सामने सत्संग हो रहा है। टूटे फूटे टाट बिछाये हुए हैं और संगत बैठी है। हरि यश हो रहा है और सबसे पीछे जहाँ टाट खत्म हो गये थे, धरती पर ही मिट्टी पर बैठे हैं। उस समय आपने फुरना किया और वहाँ पहुँच गये। भगवान ने देख लिया कि नारद भी आ गये, भेदी आ गया। नारद जी बोले, "हे भगवान! संसार ने आपके लिये इतने बड़े-बड़े स्वर्ण मन्दिर बनवाए हैं, इतने पलंग आपके सिंहासन के लिये बनवाए हैं, आप यह क्या करते हो? टाट फर्श पर भी नहीं बैठे, नीचे धरती पर ही बैठे हो, जहाँ मिट्टी पड़ी हुई है।" भगवान ने कहा, "नारद! संसार यह कहता है कि मेरी कोई माँ नहीं, मेरा कोई पुत्र नहीं, मेरा कोई भाई नहीं, मेरा कोई स्थान नहीं। पर संसार को इस बात का पता नहीं है कि जहाँ हरि का यश होता है, वह मेरा प्यारा स्थान होता है,

सत्संगी मेरे सम्बन्धी होते हैं। वहाँ मैं तथा सारे देवता आ जाते हैं -

निज घर मेरो साध संगति नारद मुनि,
दरसन साध संग मेरो निज रूप है।
साध संग मेरो माता पिता औ कुटंब सखा,
साध संग मेरो सुत स्रेसट अनूप है।
साध संग सरब निधान प्रान जीवन मै,
साध संग निज पद सेवा दीप धूप है।
साध संग रंग रस भोग सुख सहज मै,
साध संग सोभा अति उपमा औ ऊप है॥ ३०३॥ *कबित भाई गुरदास जी*

हरि की कथा होत है जहाँ, गंगा भी चल आवत तहाँ।

सभी देवता आ जाते हैं और अपना-अपना फल निकाल कर बैठे होते हैं कि कौन सा सत्संगी क्या मांगता है और मैं जल्दी से दे दूँ। सेवा करके खुश होते हैं। एक बार ऐसे ही वचन, मैं रतनगढ़ में कर रहा था। वहाँ मेरे मुख से निकल गया, यहाँ सारे देवता बैठे हैं। गुरू साहिब भी हैं, माँग लो क्या माँगते हो? किसी ने भी कुछ न मांगा। एक माई ने माँग लिया। वह चालीस दिनों के बाद मेरे पास चण्डीगढ़ आई। एक रूमाला और 50 रूपये उसके पास थे। तुम्हारे बीजी को आकर कहने लगी, ''मैं सुखना (मनौत) देने आई हूँ।'' उन्होंने पूछा कि किस चीज़ की मनौत लाई है? कहने लगी, ''रतनगढ़ दीवान सजा हुआ था, वहाँ बाबा जी ने कहा कि जो मांगना है मांग लो, तुम्हें मिल जायेगा। कहती है कि मुझे बचपन से दमा लगा हुआ था। किसी का कोई भी इलाज काम नहीं कर रहा था। मैंने कहा और तो मैं कुछ नहीं मांगती, मेरा दमा रोग दूर हो जाये। कहती उसी समय रोग दूर हो गया। दूसरे दिन हुआ ही नहीं। आज तक नहीं हुआ और मैं 40 दिन इन्तज़ार करके फिर यहाँ आई हूँ कि कोई कसर तो नहीं है।'' जहाँ वास्तव में सत्संग हो रहा हो, तो संगत में शक्ति प्रकट होती है। इसलिये यहाँ सारी मुक्त आत्माएं, देवी देवता सभी आकर बिराजमान हो जाते हैं। हरि यश सुनते हैं। गुरू ग्रन्थ साहिब कोई छोटी-मोटी चीज़ नहीं है। यह औंकार का स्वरूप है, आप ही अकाल पुरुष हैं। यह बात हर एक की समझ में आने वाली बात नहीं है। इसे शबद ब्रह्म कहते हैं।

औंकार का स्वरूप दुनियाँ भी है पर यह तीन गुणों से मिश्रित है। यह प्रदूषित हो गई है। मैली हो गई है। जो शबद है, गुरू ग्रन्थ साहिब का, यह बिल्कुल निर्मल तथा शुद्ध निरंकार, औंकार का स्वरूप ही है। यह बड़ा विस्तार हो गया है, इसे Menifestation कहते हैं। This is the menifestation of onkar. इसके दरबार में सारे देवता अपना पहुँचना गर्व समझते हैं। जब महाराज जी ने यह वचन किया, एक सिक्ख कहता है, ''सच्चे पातशाह! कभी हमें भी दर्शन करा दो।'' महाराज जी ने फ़रमान किया -

सरब भूत आप वरतारा। सरब नैन आपि पेखनहारा॥ *पृष्ठ - 295*

एक दम सभी के नेत्र खुल गये। दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई। माया का पर्दा ही पड़ा हुआ है। माया ने मोतियाबिन्द का पर्दा डाला हुआ है। आँखें तो हैं देखने के लिये, पर मोतियाबिन्द हो गया है। गुरू ने पर्दा हटा दिया। क्या देखते हैं, झिलमिल-झिलमिल होती है। प्रकाश ही प्रकाश नज़र आने लग गया। देवता बैठे हैं इतनी देर में एक राजा सत्संग में आया। उसने शीश झुका दिया। उसके साथ दो तीन अफसर थे। महाराज जी कहते हैं, ''भाई केऊड़ा लाओ। सुगन्धियां लाओ, छिड़काव करो, संगत पर छिड़काव करो।'' एक दम छिड़कना शुरू कर दिया पर वे जो देवता थे, उनमें भगदड़ मच गई। भागे ही चले जा रहे हैं। देखते ही देखते सारे चले जाते हैं। सारी संगत हैरान हो गई और पूछा, ''पातशाह!

ऐसा क्या हुआ? दर्शन भी हुए फिर इतनी भगदड़ क्यों मच गई?''

महाराज ने कहा, ''यह जो राजा आया है, इसने तीन दिन पहले तम्बाकू पीया था। एक व्यक्ति भी संगत में तम्बाकू पीकर आ जाये फिर देवता नहीं आया करते क्योंकि वे इस दुर्गन्ध को बहुत बुरा मानते हैं।'' यह तम्बाकू तीन सौ या साढ़े तीन सौ साल से हिन्दुस्तान में आया है। इससे पहले कोई-कोई बौद्धी जो पीया करता था। अर्जनटाइना में यह जड़ी बूटी थी, वह देश भ्रष्ट था, वहाँ से यह बूटी उठा लाये। भिक्षु बुद्ध धर्म के अनुयायी वे साईबेरिया में से गुज़र कर जाया करते थे, अलासका में से, बर्फीली चोटियों को पार करके अमेरिका जाया करते थे, वे इसे लाकर पीने लग गये। लेकिन इसे भारत वर्ष के आर्य लोग जानते थे कि यह तो बहुत बुरी चीज़ आ गई। उन्होंने पहले ही सुगन्ध पुराण में इसके बारे में लिखना शुरू कर दिया।

नारद जी तथा ब्रह्मा जी की आपस में बातें होती हैं। नारद जी पूछते हैं, ब्रह्मा जी जवाब देते हैं। नारद जी ने कहा, ''जब कलयुग आयेगा, फिर कैसा बर्ताव होगा?''

ब्रह्मा जी ने कहा, ''पुत्र! एक निखिद्ध बूटी है उसका धूम्रपान किया करेंगे, उसका हुक्का पीया करेंगे।''

नारद, ''उसका क्या प्रभाव पड़ेगा?''

ब्रह्मा, ''जो सारी रूहानियत है, वह एक दम खत्म हो जायेगी। कर्म धर्म का किसी को कोई फल नहीं लगेगा। वह व्यक्ति नर्क में जायेगा और ब्राह्मण भी पीने लग जायेंगे।''

नारद, ''महाराज! ब्राह्मणों के पीने पर कर्म धर्म का क्या बनेगा?''

ब्रह्मा, ''धर्म कर्म को छोड़ कर जो तम्बाकू पीने वाले ब्राह्मण को दान देगा, वह सात जन्म तक गाँव का सूअर होकर विष्ठा खायेगा।''

आप यह बात संकट पुराण में पढ़ लो। उसमें बार-बार ऐसी बातें लिखी हुई हैं। अपने रहतनामें में भी आता है -

तनक तमाकू सेवीऐ देव पितर तजि जाइ।

कहते हैं, मामूली सा भी यदि मुँह में चला जाये, तम्बाकू को हाथ भी लग जाये जो स्वर्गों में बुजुर्ग बैठे हैं, वे उस समय बेदावा दे देंगे। फिर हम भूतों के वश में आ जायेंगे। हमारे घर में क्लेश रहेगा, झगड़े रहेंगे, लड़ाईयां रहेंगी क्योंकि भूतों का वास हो गया। आदमी शराबी कबाबी बन जायेंगे।

ब्रह्मा जी ने कहा, उसके हाथ का पानी भी जो पीया होगा ना?

पाणी ता के हाथ कउ मधरा सम अघदाइ॥

जैसा उसके हाथ का पानी पी लिया, वैसा ही समझो शराब पी ली।

आपने कहा, ''महाराज! फिर शराब का क्या बनेगा?

मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक।

जो शराब पीता है, वह सात कुलों का खातमा, बेड़ा गर्क कर देता है। तीन जो पीढ़ियां आने वाली होती हैं, तीन जो बीत गई होती हैं बाप, दादा तथा परदादा, एक अपना।'' जो भंग पीता है वह अपने तन का नाश कर लेता है -

जगत जूठ शत कुल दहै निंदा दहै अनेक।

तम्बाकू जो है वह सौ कुलों का नाश कर देता है। जो निन्दा करता है, वह तो गिनती से बाहर होता है पता नहीं कितने कुलों का नाश करता है।

बात सभी ने सुन ली, मान लेते हैं, पर हमारे आदमी नहीं मानते। महाराज कहते हैं, देखने में तो ये आदमी हैं। भ्रम पैदा हो जाता है कि मनुष्य है, पर असल में मनुष्य नहीं। यह तो मनुष्य के हड्डी और चमड़े के अन्दर पशु की रूह लपेटी हुई है, जो समझता ही नहीं, पशु तो समझ जाते हैं। जो सियाने बैल हैं, जब मैं खेती करता था, मेरे पास एक बैल था? हल चलाते समय यदि उसको डण्डी मार देते, सारा दिन नाराज़ रहता था। बहुत समझदार था। तुम्हारे बीजी (बीबी रणजीत कौर जी) उस बैल को बहुत प्यार किया करती थीं। इनका कहना मानता था, मुझे तो पहचानता ही नहीं था। मैं हल चला रहा होता और मैंने कहना कि कितना सियाना है, इसे पता है कि वह मुझे प्यार करती है। इनके पास आ जाता, पीठ तक हाथ बड़ी मुश्किल से पहुँचता था, इतना लम्बा चौड़ा था। यदि नौकरों ने कभी डण्डी मार देनी तो हमें बताने आया करता था कि इसने मुझे डण्डी मारी है। बोल ही नहीं सकता, पर वह भी सियाना था। कुत्ता भी सियाना है। मंगलवार को रोटी नहीं खाया करते कुत्ते। जलेबियां डाल दो। कुछ भी डाल दो, नहीं खाते लेकिन यह मनुष्य है, जिसे इतना भी पता नहीं है। महाराज जी कहते हैं, उसे मनुष्य मत कहो। कहते हैं, फिर क्या कहें? महाराज इस प्रकार फ़रमान करते हैं –

धारना – आवन नूं जग विच आ गए ने – 2, 2
बिन बूझै पस ढोर,
आवन नूं जग विच आ गए ने – 2, 2

आवन आए स्रिसटि महि बिनु बूझे पसु ढोर॥ ***पृष्ठ – 251***

दुनियाँ में पैदा तो हो गये माँ के गर्भ से, मनुष्य की शक्ल धारण कर ली। महाराज कहते हैं कि यदि परम सत्त की बात ज्ञात नहीं हुई –

.... बिनु बूझे पसु ढोर॥ ***पृष्ठ – 251***

कहते हैं कि उन्हें मनुष्य मत कहो, वे तो पशु हैं, पशुओं में भी ढोर, गधे को कहते हैं –

नानक गुरमुखि सो बुझै जा कै भाग मथोर॥ ***पृष्ठ – 251***

इस प्रकार महाराज कहने लगे, ''देखो प्रेमियो! तम्बाकू का कितना बुरा प्रभाव है और साथ ही आपने फरमाया, एक दिन हमारा घोड़ा चले ही न। पैर अड़ा कर खड़ा हो गया। हम चलाते पर चले ही न? क्योंकि गुरू महाराज जी का घोड़ा और बाज ऐसे ही नहीं थे। उन्हें सारा ज्ञान था।'' उस शरीर के साथ दरगाह में गए हैं। गुरूओं की कृपा से घोड़े भी सचखण्ड में पहुँच गये। प्रकाश का घोड़ा। कहते हैं, भाई! घोड़ा चले ही न। हमने भाई दया सिंघ से कहा, यह राका अड़ कर खड़ा हो गया, देख क्या बात है?''

भाई दया सिंघ जी बोले, ''सच्चे पातशाह! इस खेत में तो पहले तम्बाकू बोया हुआ था।''

कहते हैं कि देखो साध संगत जी! तम्बाकू के खेत में से हमारा घोड़ा नहीं निकला और जो तम्बाकू पीता हो, उसका क्या हाल होगा?

डाक्टरों की और सांईस वालों की भी सुन लो। डाक्टरों को यह पता चल गया है कि यदि लोग मारने हों, जो यह तम्बाकू है, यह पिलाते जाओ अपने आप ही मर जायेंगे। न किसी बम्ब की जरूरत और न ही किसी अन्य चीज़ की जरूरत है। अपने आप ही खातमा हो जायेगा। दो सौ साल में सभी मर जायेंगे, जैसे आजकल पीते हैं। अमेरिका तथा यूरोप में पीते हैं। उन्होंने कहा, बहुत बुरा काम

हुआ अब इन्हें कैसे हटाएं। डाक्टरों के पास बात पहुँची। उन्होंने खोज करनी शुरू कर दी और यह परिणाम निकला कि जो तम्बाकू खाता है, जिसे जर्दा कहते हैं यह पहले तो दांतों का कैंसर करता है, फिर जीभ पर कैंसर करता है। डाक्टर जीभ काट देते हैं। फिर कहते हैं, उसके पश्चात कैंसर मैदे में चला जाता है फिर बलैडर में असर करता है। जहाँ सांस लेते हैं, उन फेफड़ों में असर करता है। चार कैंसर तम्बाकू खाने वाला पैदा कर लेता है। जो पीता है उसके मैदे में होता है क्योंकि धुआं अन्दर लेकर जाता है। उन्होंने चित्र बनाये। एक तम्बाकू पीने वाले का और एक दूसरा लिया। प्रतिदिन उनके एक्सरे लिये जाते। एक्सरे रंगीन खींच-खींच कर उन्होंने सिद्ध करके दिखाया कि तम्बाकू पीने वाले का फेफड़ा काला हुआ पड़ा है और दूसरा सोने की तरह चमकता है। वहाँ सरकार की समझ में बात आ गई और सरकार ने तम्बाकू तथा नशीली दवाईयों के विरूद्ध घोषणा कर दी तथा पाबन्दी लगा दी जैसे दूसरा विश्व युद्ध हुआ था, इसी तरह कहते हैं, युद्ध करो। जहाँ Drug दूसरे देश में बनती थी, जाकर बम्ब बारी शुरू कर दी, फौज़ें भेज दीं। अमेरिका ने लड़ाई मोल ले ली। कम्बोडिया में जाकर वृक्ष उखाड़ने शुरू कर दिये, वहाँ यह सुख बेअन्त था। सभी जगह खुदाई शुरू कर दी, ट्रैक्टर ले गये। उन्होंने पूछा कि तुम यह क्यों कर रहे हो? उन्होंने उत्तर दिया कि पैसा तो तुम्हारे देश में आता ही है, पर आदमी हमारे मरते हैं। हुक्म कर दिया कि कोई भी Local flight (स्थानीय उड़ान) जो जहाज अमेरिका में घूमते हैं, उनमें कोई भी व्यक्ति सिगरेट नहीं पी सकता। सभी कारखाने वालों ने हुक्म कर दिया कि कोई भी व्यक्ति drug (नशीली दवाई) नहीं खा सकता, यदि पता चल जाये कि तीन महीने पहले इसने Drug खाई है, यह पेशाब से पता चल जाता है, बेशक वह कितना बड़ा मैनेजर ही क्यों न हो, उसे तुरन्त नौकरी से निकाल दो। किसी Public place (सार्वजनिक स्थान,) सांझा स्थान में, गाड़ी में, बसों में कोई भी सिगरेट नहीं पी सकता।

अब उन्होंने तो समझ ली, अब मुश्किल से हमारी बारी आई है और हमने ज़ोर लगा रखा है, जर्दा खाने पर। खाये जाओ, मर जाओगे। बाबा जी ने तो बात ठीक कहनी है, तुम रोज़ देखो, कितने मरते हैं। शराब पीने वाले मरते हैं। ये चीज़ें आखों के सामने नुकसान कर रही हैं। डक्के (सरकण्डे) की तरह हिलता है, कोई काम नहीं कर सकता, यदि जर्दा खायेगा तभी कोई काम होगा? मैं कहता हूँ भाई इन्हें चार किलो घी खिलाओ। इसकी ललक सी हट जाये अन्यथा यह बुरी तरह नशे के काबू में आ गया हैं ये जो brown sugar खा लेते हैं, यदि दो दिन न खायें तो फिर खाये बिना नहीं रह सकते। फिर चीखें मारते हैं, यदि न मिले तो पुलिस उन्हें सवा महीने अन्दर रखती है, किसी से नहीं मिलने देती, तब जाकर वे ठीक होते हैं। अपने शरीर का वैरी बनाता है, तम्बाकू, और शराब इनका बुरा परिणाम निकलता है, फिर भी पीये चले जाते हैं।

महाराज जी कहते हैं कि फिर इन्हें आदमी कहते हो? आदमी मत कहो। यह तो ढोर हैं, पशु हैं। मनुष्य न समझें, ये लोग अपने आपको पशु समझा करें। खुरलियों में खाना खाया करें।

इस प्रकार दशमेश पिता जी कहते हैं, ''देखो प्रेमियो! जहाँ हरि यश होता है, वहाँ पर सारे देवता भी हरियश सुनने के लिये आते हैं।'' दूसरा जो प्रभु का प्यारा है, बन्दगी करता है, नाम जपता है, उन्हें देवता भी ढूँढते फिरते हैं कि कहीं कोई प्रभु का प्यारा सत्संग कर रहा हो, हमें पता चले और वहाँ जाकर उसके वचन सुनें, उसके दर्शन करें। गुरू महाराज जी अपने मुखारविन्द से इस प्रकार कहते हैं -

धारना - शिव जी खोजदे फिरदे, ब्रह्मगिआनी नूं -2, 4

ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर।
नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ *पृष्ठ - 273*

जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ।

भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥ पृष्ठ - 397

हरि का सेवकु सो हरि जेहा। भेदु न जाणहु माणस देहा।
जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती फिरि सललै सलल समाइदा॥ पृष्ठ - 1076

कहते हैं कि वह बन्दगी करके, नाम जप कर -

सोई फिरि कै तू भइआ जाकउ कहता अउरु॥ पृष्ठ - 1369

वह स्वंय ही परमेश्वर हो गया। फिर दर्शन करने के लिये फिरते हैं कि परमेश्वर के दर्शन करें क्योंकि देवताओं को प्रभु के दर्शन नहीं होते। हम रोज़ पढ़ते हैं -

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ *(जपुजी साहिब)*

कहते हैं तीन बड़े महान देवता हैं - एक पैदा करने वाला, एक रोज़ी रोटी देने वाला और एक संहार करने वाला। एक को ब्रह्मा जी कहते हैं, दूसरे को विष्णु जी तथा तीसरे को शिव जी कहते हैं। महाराज जी कहते हैं, देखो, हुक्म में चलते हैं, वही काम करते हैं जो इन्हें सौंपा गया है। ब्रह्मा जगत की उत्पत्ति कर रहे हैं, एक-दो-चार नहीं, अनेक हैं-

कोटि ब्रहमे जगु साजण लाए॥ पृष्ठ - 1156

लाखों ब्रह्मा हैं पर वे निरंकार के दर्शन नहीं कर सकते, विष्णु जी दर्शन नहीं कर सकते, शिव जी दर्शन नहीं कर सकते -

नारद से चतुरानन से, रुमना रिख से, सभ हू मिलि गाइओ।
बेद कतेब न भेद लखिओ, सभ हारि परे हरि हाथ न आइओ।
पाइ सकै नही पार उमापति, सिध सनाथ सनंतन धिआइओ।
धिआन धरो तिह को मन मैं, जिह को अमितोजि सभै जगु छाइओ॥ *अकाल उसतति*

एक जगह पर महाराज जी लिखते हैं कि शिव जी अभी तक ध्यान लगाये बैठे हैं, पर प्रभु के दर्शन नहीं हो रहे, फिर प्रभु के दर्शन करने के लिये जो ब्रह्मज्ञानी स्वंय ही परमेश्वर है -

नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ पृष्ठ - 273

फिर उसके दर्शन करने आते हैं कि चलो उस ज्योति के दर्शन तो नहीं होते, शरीर में दर्शन करेंगे, प्रभु के वचन सुनेंगे। खोजते फिर रहे हैं। एक बार शिवजी तथा पार्वती जा रहे हैं। चलते-चलते एक उजाड़ स्थान पर पहुँचते हैं, झाड़ियाँ उगी हुई हैं, जंगल बना हुआ है। वहाँ पर शिवजी अपने वाहन से उतरे और शीश नवाया। जब दो चार बार शीश झुकाया, पार्वती जी देख रही हैं कि न तो वहाँ कोई मन्दिर है, फिर ये किसे शीश नवां रहे हैं?

तब पार्वती जी ने पूछा, ''महादेव जी! आप कृपा करके यह बताइये। यहाँ पर सामने तो कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा, आप किसे शीश झुका रहे हैं?''

शिव जी बोले, ''पार्वती! काफी समय बीत गया, यहाँ पर एक परमेश्वर के प्यारे ने, परमेश्वर के प्यार में, अपनी सारी आयु व्यतीत कर दी थी, उसके फलस्वरूप कण-कण में से प्यार की सुगन्ध आ रही है, मैं उसे नमस्कार कर रहा हूँ क्योंकि यह पवित्र स्थान है, यहाँ परमेश्वर का प्यारा बैठा था।''

अतः महाराज जी कहते हैं कि वे देखते फिरते हैं, ढूँढते फिरते हैं प्रभु प्यारों को -

आतम रस जिह जानही, सो है ख़ालस देव।
प्रभ महि, मो महि, तास महि, रंचक नाहन भेव॥ — *सरब लोह ग्रन्थ*

वे तो प्रभु का रूप होते हैं। वाहिगुरू जी कहते हैं कि जो मेरे बन जाते हैं, हर समय मेरा ही ध्यान धरते हैं और मुझे ही प्रसारित हुआ परिपूर्ण देखते हैं, उनमें और मुझ में कोई अन्तर नहीं हुआ करता। आप ऐसे समझ लो कि मैं निरंकार हूँ, निर्गुण हूँ और मेरे प्यारे सगुण हैं। अत: उन्हें मेरा ही रूप समझो, इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – मेरा ही रूप है, मेरे ही बण गए जिहड़े – 2, 2
मेरे ही बण गए जिहड़े – 2, 2
मेरा ही रूप है, ... – 2

दास अनिंन मेरो निज रूप॥
दरसन निमख ताप त्रई मोचन परसत मुकति करत ग्रिह कूप। — *पृष्ठ – 1252*

कहते हैं, मेरा ही साकार रूप हैं जो मेरे प्यारे, हर समय मेरे साथ अभेद अवस्था में रहते हैं। उनके चरण पखारने से गृहस्थ के अन्धे कुएं में से प्राणी मुक्त हो जाता है –

अब तउ जाइ चढे सिंघासनि मिल है सारिंगपानी।
राम कबीरा एक भए है कोइ न सकै पछानी॥ — *पृष्ठ – 969*

कबीर साहिब कहते हैं, न तो मेरा और न ही राम का, पता ही नहीं चलता। एक ही रूप हो गये हैं, कहते हैं, मामूली सा भी अन्तर नहीं होता। उसके दर्शन करने के लिये देवता आया करते हैं। दशमेश पिता जी कहते हैं, ''उन्हें पूजते हो?'' मनुष्य कहाँ चला गया? माता एक बीमारी है जिसे शीतला कहते हैं। अग्रेज़ी में small pox कहते हैं। हिन्दुस्तान के लोग मानते हैं और दुनियाँ का कोई देश नहीं मानता यदि माता निकल आती तो फिर भागे फिरते थे। गधा इसका वाहन बताते हैं और इसे देवता मानते थे। विदेशियों ने तो मान लिया कि ये बेकार की बातें हैं, बीमारी भी कभी देवता होती है? अमेरिका वासियों ने खोज की। विश्व स्वास्थ्य संस्थान ने भी खोज की। उनका मानना है कि यह एक छोटा सा कीटाणु है, जो एक जगह उड़कर दूसरी जगह जा बैठता है, वही यह रोग फैलाता है। वह कीटाणु 100 मील, हज़ार मील यहाँ तक कि दस हज़ार मील तक उड़ कर जा सकता है। किसी न किसी चीज़ के साथ चिपट कर जाता है। हिन्दुस्तान में small pox फैल जाये और यहाँ के तन्दरूस्त व्यक्तियों ने जहाज में बैठना हो, तो उनके कपड़ों के साथ चिपक कर चला जायेगा। पहले तो वह काफी प्रबन्ध करते, जैसे disinfection रोगाणुओं से शुद्धि करना, दवाईयां छिड़कना तब निकलने देते थे। वे कहते कि तुम्हारे देश में माता फैली हुई है। फिर उन्होंने एक Injection (टीका) ढूँढ निकाला और सारी दुनियाँ में वह टीका लगा दिया और साथ ही यह भी कह दिया कि अब माता कभी नहीं निकलेगी। यदि किसी को माता दोबारा निकले जो यह बतायेगा, उसे हज़ार रूपये इनाम मिलेगा फिर माता नहीं निकली। हमारे लोग ऐसे हैं, बार-बार उसे याद करते रहते हैं।

मैं एक दीवान सजाने के लिये दुभरी नामक गाँव से गुज़र रहा था। वहाँ मैंने देखा कि दो-दो ईंटें रख कर उनके नीचे एक दीया जलाकर रखा हुआ था। दीवाली के दिनों के आस-पास की बात होगी। हमने कहा, ''भाई इतने दीपक रखे हुए हैं, लगभग 100-200 दीपक होंगे और इनमें कितना तेल डाला गया होगा। ये क्यों रखे हैं?'' कहने लगे, ''जी, ये माता रानी के स्थान हैं।'' दीवान भी पास सजा हुआ था। मैंने कहा, ''क्या तुम माता को याद करते हो फिर आ जाये? तुम्हारे बच्चों से मिल जाये? जिसे याद करोगे, उसने तो आना ही है। छोड़ दो इसका पीछा। उसका बिस्तर गोल करके आसमानी दुनियाँ

में भेज दो। अब दुनियाँ में नहीं रही।'' यह बीमारी कैसे लगती है? यह एक viral disease छूत की बीमारी है। आज कल लोग समझने लग गये हैं कि वायरल क्या होता है? मैंने एक बार सोयाबीन बोईं। उसका पत्ता पीला हो गया। मैं बहुत हैरान हुआ कि इसका पत्ता पीला क्यों हो गया? वह यूनिवर्सिटी का बीज था और मुझे पता था कि वह Reject (रद्द) कर देंगे क्योंकि पत्ता पीला हो चुका है। वे आये और कहने लगे, ''यह सोयाबीन तो किसी काम का नहीं इसका पत्ता पीला हो गया।''

मैंने कहा, ''ऐसा क्यों हुआ। मुझे कारण बताओ?''

कहते हैं, ''तीन सौ गज की दूरी पर किसी ने माँह बोये हुए हैं। हमारे ही भाई ने बोए हुये थे।

मैंने कहा, ''हाँ! माँह तो बोए हुए हैं।''

कहने लगे, ''वहाँ से उड़कर बीमारी आ जाती है।''

इसी तरह से कल्याण गेहूँ होती है, उसके पत्ते लाल हो जाते थे, उसकी बीमारी उड़कर दूसरे खेतों में चली जाती थी। जब मैंने बीज बोना, तो उन्होंने यह शर्त रखना कि 100 गज़ की दूरी तक किसी और का खेत बीमार न हो। सौ गज़ छोड़कर खेतों के बीच में बोना, यह माता छूत का रोग है। कपड़ों के साथ चिपक कर, चिट्ठियों के साथ अर्थात कागज़ आदि के साथ, जानवरों, पंछियों के साथ, हवा द्वारा, सारी दुनियाँ में फैल सकता है। हमने इसे देवता बना लिया और देवता बना कर पूजना शुरू कर दिया। इसके गीत गाने शुरू कर दिये और जो सूझबूझ वाले व्यक्ति थे, वे कहते हैं, क्या आप इसे मानते हो? जिसे मानोगे वह तो दर्शन बार-बार देगा। उन्होंने इसका इलाज भी ढूँढ लिया और संसार में इसे खत्म ही कर दिया।

इसी तरह से साँप को मानते हैं। मैंने काफी कहानियाँ सुनी हुई हैं। कहते हैं जी हम गुग्गा माड़ी को मानते हैं। गुग्गा क्या था इसका पता ही नहीं है। गुग्गा चौहान था, वह हांसी हिसार जिले का रहने वाला था। एक बार उसकी माँ नाराज़ हो गई। माँ को छोड़कर जरग आ गया। विवाह हो चुका था। जरग में जगदेव रहता था, औलख गोत्र का एक बुजुर्ग था। वे दोनों आपस में मित्र थे। जगदेव भी सिद्ध था और गुग्गा भी सिद्ध था। दोनों ने काफी हठयोग किये, जिससे उनके अन्दर सिद्धियाँ आ गईं। वे बैठे-बैठे गायब हो जाते थे। जब गुग्गा घर से निकलने लगा तो गुग्गे की घरवाली कहने लगी, ''मेरा तो कोई कसूर नहीं है। तुम माँ को छोड़कर जा रहे हो, मैंने तो कुछ नहीं कहा, मेरे बारे में तो कुछ सोचो।'' वह बोला, ''अच्छा, मैं आ जाया करूंगा पर जिस दिन तूने यह बात किसी और को बता दी फिर मैं नहीं आऊंगा।'' वह उदास ही नहीं हुई और वह रोज़ उसके पास आ जाया करता। एक दिन माँ कहने लगी, ''तेरे पति को गये हुए कितने महीने बीत गये, तुझे ज़रा सी भी चिन्ता नहीं है। तू तो वैसे ही कपड़े पहनती है, नेत्रों में काजल डालती है, श्रृंगार करती है।'' उसके मुँह से निकल गया, ''वह तो कहीं भी नहीं गये। वह तो मेरे पास रोज़ आते हैं।'' माँ ने सोचा कोई गलत बात लगती है। मैं नहीं मानती। उसने माँ को पर्दे के पीछे छिपा दिया। इतनी देर में गुग्गा आया और जब माँ के पास से निकलने लगा तो माँ ने उसकी बाजू पकड़ ली कहने लगी, ''बेटा तू इतना नाराज़ है?'' वह सिद्ध था, उस समय वह बाजू छुड़वा कर गायब हो गया और इधर उसके जाने के पश्चात जगदेव ने शरीर त्याग दिया। उसके दो पुत्र बोपा राय और छप्पा राय थे। छप्पा राय का छपार है, बोपा राय गाँव है। बोपा राय घुढाणी का गोत्र है। वे वहाँ बैठे थे। जहाँ छपार का मेला लगता है तो वहाँ मिलने आया, वही पर ही एक मढ़ी बनी हुई है। वह वहाँ बैठा था। गुग्गा कहता है, ''मेरा मित्र कहाँ है?'' वह बोले तो नहीं पर मढ़ी की

ओर इशारा कर दिया कि इसके अन्दर है। गुग्गा कहने लगा यदि मित्र ही चला गया तो हमने भी नहीं रहना। वह उसी में ही समा गया। उसे मानना शुरू कर दिया और लोगों ने साँप का नाम गुग्गा रख लिया। सांप के सामने ही सेवियाँ डालते चल रहे हैं, सांप को ही दूध पिलाये जा रहे हैं। साँप कभी तटस्थ रहता है? जब मौका मिलता है, उसी समय डंक मार देता है –

सपै दुधु पिआलीऐ विहु मुखहु सटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 35/1*

इस प्रकार हम परमेश्वर को तो भूल गये तथा अन्य चीज़ों को मानने लग गये। गुरू नानक पातशाह ने संसार को आकर बताया कि –

देवी देवा पूजीऐ भाई किआ मागउ किआ देहि॥ *पृष्ठ - 637*

तुम्हें वह क्या देगा?

पाहणु नीरि पखालीऐ भाई जल महि बुडहि तेहि॥ *पृष्ठ - 637*

पत्थर को पानी में फैंक दो, पानी में ही डूब जायेगा–

गुर बिनु अलखु न लखीऐ भाई जगु बूडै पति खोइ॥ *पृष्ठ - 637*

संसार अपनी पत (इज़्ज़त) खो कर डूबता है। गुरू के बिना परमेश्वर नहीं मिलता –

मेरे ठाकुर हाथि वडाईआ भाई जै भावै तै देइ। *पृष्ठ - 637*

ब्रहमा बिसनु महेसु त्रै मूरति त्रिगुणि भरमि भुलाई॥ *पृष्ठ - 909*

माया के तीनों भ्रमों में पड़े हुए भ्रमित रहते हैं। ब्रह्मज्ञानी जो सन्त हैं, वह माया से ऊपर निकल जाते हैं –

कोटि सूर जा कै परगासु। कोटि महादेव अरु कबिलास॥ *पृष्ठ - 1162*

करोड़ों ब्रह्मा, करोड़ों शिव जी, करोड़ों सूर्य, वाहिगुरू के द्वार पर हाथ जोड़कर खड़े हैं –

दुरगा कोटि जा कै मरदनु करै॥ *पृष्ठ - 1162*

दरगाह में करोड़ों देवियाँ सेवा कर रही हैं –

ब्रहमा कोटि बेद उचरै॥ *पृष्ठ - 1162*

करोड़ों ब्रह्म वेद का ब्रह्मज्ञान उच्चारण करने में लगे हैं –

जउ जाचउ तउ केवल राम॥ *पृष्ठ - 1162*

कहते हैं हमारा दूसरे देवताओं से क्या काम? हमने जब भी मांगना है, परमेश्वर से मांगना है, नाम मांगना है फिर कहते हैं इनकी भक्ति का क्या फल होता है –

सिव सिव करते जो नरु धिआवै। बरद चढे डउरू ढमकावै॥ *पृष्ठ - 874*

कहते हैं शिव का उपासक बैल पर चढ़ेगा और डमरू बजाता फिरेगा –

महा माई की पूजा करै। नर सै नारि होइ अउतरै॥ *पृष्ठ - 874*

महा माई देवी की पूजा कर लो तो कहते हैं, आदमी की यौनि से निकल कर औरत की यौनि में चला जायेगा –

तू कहीअत ही आदि भवानी। मुकति की बरीआ कहा छपानी॥ *पृष्ठ - 874*

जब मुक्ति माँगी थी, तब तू कहाँ छिप गई थी –

गुरमति राम नाम गहु मीता॥ *पृष्ठ - 874*

पाँच प्यारों से जो नाम मिलता है, उसे पकड़ लो, या किसी पूर्ण महापुरुष से जो नाम लिया हुआ है, उस नाम को पकड़ लो -

प्रणवै नामा इउ कहै गीता॥ *पृष्ठ - 874*

कहते हैं, प्रेमी! हम यह बात कह रहे हैं।

अत: भाई जोध ने बताया, ''भाई लहणा जी! गुरू नानक साहिब दरबार से ही पूर्ण आए हैं। वे गुरू परमेश्वर हैं, परमेश्वर निर्गुण रूप है, गुरू नानक सगुण रूप है, वहाँ पर धरती ने जाकर पुकार की -

कलमलि होई मेदनी अरदासि करे लिव लाइ॥ *पृष्ठ - 1281*

धरती दुखी हो गई क्योंकि लाखों व्यक्तियों का कत्ल होना शुरू हो गया। अयोध्या में एक दिन के अन्दर 2700 पढ़े लिखे ब्राह्मण, कुतुब दीन ऐबक ने कत्ल करवा दिये थे। मथुरा में एक ही दिन में बाबर ने एक लाख लोगों को कत्ल करवा दिया और साथ ही ऐसा लिखता है कि मैं तम्बू लगाकर उसमें बैठा देख रहा था कि कैसे मारे जा रहे हैं? आज मैंने उन लोगों को मुसलमान नहीं बनाना था, बल्कि मेरे मन में आया कि आज इन्हें मार दें। बच्चे बूढ़े, जवान, स्त्रियाँ, सभी बारी-बारी मार दिये और मारने के लिये सैकड़ों जल्लाद जुट गये। अड्डे बने हुए हैं, मार-मार कर फैंके चले जा रहे हैं। कहता है, खून की धारा इतनी बह चली कि मुझे अपना तम्बू भी पीछे हटाना पड़ा। खून मेरे तम्बू के अन्दर घुसने लगा। फिर और लोग मरे, खून की नदी और ऊँची हो गई और फिर मेरे तम्बू में घुस आई। कहता है मैंने तीन बार तम्बू बदल-बदल कर अपने तम्बू में खून को अन्दर घुसने से बचाया। मैं आज अल्लाह ताला के पास प्रार्थना करता हूँ कि हे अल्लाह! तू तो आज मुझ पर इतना प्रसन्न होगा जितना पहले कभी नहीं हुआ क्योंकि मैंने लाख काफिर मार दिये। इस्लाम यह कभी नहीं कहता कि किसी को मारो। इस्लाम के बारे में तो महाराज जी कहते हैं -

मुसलमाणु मोम दिलि होवै॥ *पृष्ठ - 1084*

मुसलमान तो मोम दिल होता है वह तो जकात (धर्म, अर्थ, पैसा, दसवन्ध) निकालता है। दान करता है जैसे हम दसवन्ध निकालते हैं। सारे संसार का भला मांगता है पर यह तो धर्म का काम है ही नहीं, ये तो पागलों के काम थे। जब धर्म के नाम पर इतना अधिक उपद्रव करके लोगों की हत्याएं की जाएं, फिर गुरू महाराज दशमेश पिता जी कहते हैं कि धर्मराज को फिर चिन्ता हो जाती है कि मैं इनके लिये कौन सा नरक बनाऊँ -

पाप करै परमारथ कै..................॥

कहते हैं परमार्थ के नाम पर पाप करते हैं। कहते हैं फिर धर्मराज डर जाता है और अकाल पुरुष से पूछता है, ''सच्चे पातशाह! ये धर्म के नाम पर पाप कर रहे हैं, इनके लिये मैं कौन सा नर्क बनाऊँ? मेरे चौरासी नरकों में तो कोई नरक नहीं, जहाँ मैं इन्हें फैंकू। सबसे भयानक कुम्भी नरक है, वह बेमुखों और मनमुखों के लिये है। ये तो उनसे भी आगे निकल गये तुझे मानते भी हैं और पाप भी करते हैं।''

अत: दरगाह में पुकार हुई। धरती ने ब्रह्मा जी से पुकार की। ब्रह्मा जी कहते हैं कि उनका वश नहीं चलता, शिव जी के पास जाओ। शिव जी के पास जाकर पुकार की। शिव जी कहते हैं, ''मेरे पास इतना दिमाग नहीं है, यह तो हालात बहुत ही बिगड़ गये हैं।'' हमारे अवतार हुए पर उनके छोटे-छोटे काम थे। अवतार 6 प्रकार के हुआ करते हैं। पहला होता है अंशा अवतार। अंशा अवतार वह राजा होता है जिसे सारी प्रजा परमेश्वर के रूप में माने। दूसरा होता है आवेशा अवतार। आवेशा अवतार वह

होता है कि पहले साधारण व्यक्ति था, बाद में साधना की, नाम जपा, महान प्राप्तियाँ मिलीं, फिर महापुरुष बन गया। उसे आवेशा अवतार कहते हैं, उसके अन्दर शक्तियाँ आ जाती हैं।

तीसरा होता है कला अवतार, जो विशेष काम करने के लिये आता है जैसे प्रहलाद की रक्षा करनी थी, नरसिंह रूप धारण करके आये थे। बावन रूप धारण करके आये थे। इस प्रकार जब केवल एक ही काम करने के लिये आते हैं उसे कला अवतार कहते हैं जैसे मतस्य, कच्छप, वाराह अवतार आदि अपना काम करने के लिये एक कला लेकर अवतरित हुए।

चौथा होता है नित्य अवतार। नित्य अवतार कहते हैं महापुरुषों को। उनका हर समय युद्ध चलता रहता है कि लोगों के मनों में से ईर्ष्या दूर करना, निन्दा, चुगली आदि निकालना जो गलत नशे करते हैं, उन्हें उनसे हटाना, संसार को सुखी करना। वे परमेश्वर का काम करते हैं और नित्य अवतार हुआ करते हैं, वे साधु हुआ करते हैं।

पाँचवा हुआ करता है– पूर्ण अवतार। पूर्ण अवतार कला लेकर आता है। कला को शक्ति कहते हैं। श्री राम चन्द्र जी, श्री कृष्ण जी पूर्ण अवतार थे। राम चन्द्र जी 14 कला सम्पूर्ण थे तो श्री कृष्ण जी 16 कला सम्पूर्ण अवतार थे। जब धरती को शिव जी ने भी जवाब दे दिया तो धरती विष्णु जी के पास गई। विष्णु जी कहते हैं, ''देखो, जब मैंने कृष्ण अवतार लिया, उस समय बहुत अधिक हालात नहीं बिगड़े थे। धर्म कायम था, इतना अधर्म नहीं फैला था जितना अब फैल चुका है। ये तो पाप भी परमार्थ के लिये कर रहे हैं और मैं अब कोई अवतार नहीं भेज सकता। मेरा अवतार एक होगा जिसे कल्कि अवतार कहते हैं। जिस समय कलयुग समाप्त होगा, उस समय मैंने तबाही मचा देनी है और सभी को भस्म कर देना है, परन्तु अभी मैं नहीं जा सकता। इसके पश्चात निरंकार के द्वार पर पुकार पहुँची। निरंकार ने पुकार सुनी, कहने लगे, ''ठीक है, अब समय ऐसा आ गया है कि मुझे स्वंय ही सतगुरू रूप होकर प्रकट होना पड़ेगा।'' इसे सतगुरू अवतार कहते हैं। पहले संसार में सतगुरू अवतार नहीं हुआ था। गुरू ज़रूर आते रहे, वशिष्ट जी आये, विश्वामित्र, सन्दीपन, दुर्वासा आदि आए तथा और भी अनेक गुरू आये और आते रहेंगे पर सतगुरू नहीं आया। उस समय सतगुरू स्वरूप केवल सतगुरू नानक पातशाह प्रकट हुए। उन्होंने दस जामों में सतगुरू रूप धारण करने के पश्चात सतगुरू श्री गुरू ग्रन्थ साहिब जी को बना दिया क्योंकि सारा शब्द पुनः अकाल पुरुष को ही सौंप दिया, औंकार को सौंप दिया, शबद ब्रह्म को सौंप दिया। शबद ब्रह्म जो अवतार है इस रूप में हो गया। कहने लगे, ''कितनी कलाएं धारण करके आये?'' बोले, अब शक्तियों की कोई गणना नहीं है? ऐसा फ़रमान है –

आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ।
निरंकारि आकारु जोति जग मंडलि करियउ॥ *पृष्ठ - 1395*

अनिक कला लै ठाकुर चड़िआ।

ठाकुर जी आये क्यों? क्योंकि पुकार सुनी और पुकार सुनकर सतगुरू नानक रूप में प्रकट हुआ–

धारना - दरगाह सुण के पुकारां निरंकार ने,
सतिगुर नानक रूप धारिआ - 2, 2
मेरे पिआरे, सतिगुरू नानक रूप धारिआ - 2
दरगाह सुण के पुकारां निरंकार ने.......... - 2

कहने लगे, ''जाओ! सतगुरू रूप होकर मैं प्रकट होऊंगा। अब मैं इस रूप में किसी को नहीं भेज सकता कि एक का नाश करना है या दो का नाश करना है। नरसिंह रूप विष्णु जी ने प्रहलाद का

उद्धार करने के लिये धारण किया था। अब मैं सतगुरू का रूप धारण करके आऊंगा -

सुणी पुकारि दातार प्रभु, गुरु नानक जग माहि पठाइआ।
चरन धोइ रहरासि करि चरणाम्रितु सिखां पिलाइआ।
पारब्रहमु पूरन ब्रहम, कलिजुग अंदरि इकु दिखाइआ॥ **भाई गुरदास जी, वार 1/23**

समस्त विश्व में अद्वैत सिद्धान्त का प्रचार किया कि यहाँ पर परमेश्वर के अतिरिक्त और कोई नहीं है -

चारे पैर धरम दे, चारि वरनि इकु वरनु कराइआ॥ **भाई गुरदास जी, वार 1/23**

नाम के आधार के चारों पैर धर्म के कायम कर दिये। चारों वर्णों में जो मनुष्यों के अन्दर भेद था कि यह ब्राह्मण है, खत्री है, वैश्य है और क्षूद्र है, ऊँच नीच को खत्म कर दिया -

राणा रंकु बराबरी, पैरी पवणा जगि वरताइआ॥ **भाई गुरदास जी, वार 1/23**

चरणों में नमस्कार करना सिखा दिया -

उलटा खेलु पिरंम दा, पैरा उपरि सीसु निवाइआ।
कलिजुगु बाबे तारिआ, सतिनामु पढ़ि मंत्रु सुणाइआ।
कलि तारणि गुरु नानकु आइआ॥ **भाई गुरदास जी, वार 1/23**

जब आपने इस प्रकार के वचन सुने, उस समय भाई जोध कहने लगे, ''गुरू नानक साहिब बड़े-बड़े स्थानों पर गये और लहणा जी, आपको पता ही है कि सबसे अधिक बोल-बाला सिद्धों का है। जब मैं (वक्ता शरीर) छोटा सा होता था उन दिनों बताया करते थे कि ये मण्डलियां आया करती थीं। महिलायें डर जाया करती थीं कि सिद्ध आये हुए हैं, नाथ आए हुए हैं। इन्होंने गाँव में आ जाना और दूध से भरी हुई काढ़नियाँ उठा लेनीं, बच्चे बीमार कर देने, पशु बीमार कर देने, करामातें दिखाया करते थे। इसलिये इनसे सभी डरते थे।

सतगुरू नानक पातशाह इन्हें सुमति देने के लिये सुमेरू पर्वत पर पहुँचे, जहाँ पर बर्फ के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं था। वहाँ पर जब सिद्धों ने देखा कि तीन आदमी आ गये। वे सोचने लगे कि ये बर्फीले पहाड़ों को पार करके यहाँ कैसे आ गये? हम तो उड़ कर आ जाते हैं। जब पास आये तो यह देखते हैं कि गुरू नानक पातशाह जी की शारीरिक आयु बहुत छोटी है और वे सिद्ध हज़ारों-हज़ारों साल के थे। वे महाराज जी को बाला कहते हैं, बालक कहते हैं, वह कैसे पहुँच गया? कौन सी शक्ति लेकर आया है? महाराज जी कहने लगे, ''हमारे अन्दर शक्ति तो कोई नहीं है, हमारे पास तो गुरबाणी तथा नाम की शक्ति है या फिर साध संगत की सेवा की शक्ति है। तुम्हारी तरह हमने साधना करके, सिद्धियां प्राप्त नहीं की हैं कि जिनसे उड़ कर आ जाते।''

सिद्धों के साथ गोष्ठी की काफी लम्बी चौड़ी वार्ता हुई, जब उन्होंने वचन सुने -

सिधी मने बीचारिआ, किवै दरसनु एह लेवै बाला॥ **भाई गुरदास जी, वार 1/31**

यह सोचा कि यह किसी विधि से हमारा सेवक बन जाए, जोगी बन जाये और फिर हमारा पंथ पुनः रोशन हो जायेगा क्योंकि इतना योग्य और विद्वान हमने और कोई नहीं देखा? जब उन्होंने नाम पूछा तो महाराज जी ने जब शबद में अपना नाम 'नानक' बताया तो वे कहते हैं, ''क्या तू वही नानक तो नहीं जिसने कलयुग में उद्धार करने के लिये आना था?'' सिद्धों के मन में यह विचार दृढ़ हो गया कि यह तो वही आ गया और अब इसे अपना चेला जरूर बनाओ। उस समय गोरख नाथ ने अपनी चिप्पी दे दी और बोले, ''हे नानक! वह देखो, नीचे, पहाड़ के नीचे पानी दिखाई दे रहा है?''

महाराज जी कहते हैं, ''हाँ जी।''

गोरख नाथ बोले, ''जाओ, वहाँ से एक चिप्पी पानी की भर कर ले आओ।''

लेकिन जब गुरू नानक जी वहाँ पहुँचे तो उन्होंने रिद्धि सिद्धि द्वारा वहाँ हीरे, लाल, जवाहारात बना दिये। पानी है ही नहीं और महाराज जी वापिस लौट आये तब गोरख नाथ ने पूछा, ''आप पानी नहीं लाये?''

महाराज कहते हैं, ''वहाँ पर पानी है ही नहीं।''

सिद्ध बोले, ''देखो नानक! एक फुरना ही किया कि सारी झील हीरे, लालों, जवाहारातों की बना दी। योग में कितनी शक्ति है। इसलिये तू योग सीख ले।''

महाराज जी ने दृष्टि कर दी और बोले, ''कौन सी झील बना दी?''

नाथ कहता है, ''वह।''

महाराज जी कहते हैं, ''देखो तो।''

जब नाथ जी ने देखा, तो वहाँ पानी था। गोरख नाथ ने पूरा जोर लगा दिया पर दोबारा हीरे जवाहारात न बना सका। वह समझ गया कि वह मेरे से भी अधिक महाबली कोई आ गया है। उस समय गुरू नानक पातशाह ने शबद द्वारा नाम की चर्चा की और बताया कि नाम सभी का आधार है। सभी चीज़ें नाम के सहारे पर खड़ी हैं। नाम हर व्यक्ति के अन्दर है -

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ *पृष्ठ - 293*

अन्त में उन्होंने हार मान ली। महाराज जी कहने लगे, ''तुम समाधियाँ लगा सकते हो, सम्प्रज्ञात समाधि भी तुम लगा लोगे, राजमेध समाधि भी लगा लोगे, पर इनसे ज्ञान तो नहीं होगा। जब तक ज्ञान नहीं होता, तब तक मुक्ति नहीं होती। नाथ जी, वास्तविक समस्या तो मनुष्य के सामने हउमै की है जिसके प्रभावाधीन यह पैदा होता है, मरता है और चौरासी लाख यौनियों के चक्कर में अनन्त काल से गोते लगाता फिर रहा है। हउमैं का नाश नाम के बिना नहीं होता। नाम द्वारा प्रत्यक्ष ज्ञान, अनुभव में प्रकाश होता है। समरथ गुरू के बिना ज्ञान नहीं प्राप्त होता जैसा कि -

भाई रे गुर बिनु गिआनु न होइ। पूछहु ब्रहमे नारदै बेद बिआसै कोइ॥ *पृष्ठ - 59*

तुम तो ज्ञान के रास्ते पर ही नहीं चले, तुम तो नाटक चेटकों में ही फंसे पड़े हो -

नाटक चेटक कीए कुकाजा। प्रभ लोगन कह आवत लाजा॥ *बचित्र नाटक*

शक्तियाँ दिखाने में प्रभु के लोगों को लज्जा आती है, रिद्धि सिद्धि करामातें माया मण्डल के चमत्कार हैं, इनका आकर्षण मोह पैदा करता है और नाम मन में नहीं बसने देता। पूर्ण ज्ञान नहीं हो सकता। तुम्हारे साधन कुण्डलनी, 6 चक्र बीन्ध कर, प्राण दसवें द्वार तक ले जाना, आयु बढ़ा लेना, नाटक चेटक कर लेना, ये माया मण्डल की खेल है, जिनसे अज्ञान का नाश नहीं हो सकता। अविद्या का नाश केवल प्रभु नाम ही कर सकता है। अत: नाम सबसे श्रेष्ठ है, नाम अमृत पूरे गुरू से प्राप्त होता है और वह अभ्यास द्वारा अन्दर रमे हुए नाम तक पहुँच करवा देता है। यह कलयुग का सबसे आसान रास्ता है। महाराज जी ने जब यह सिद्ध कर दिया कि -

कलिजुगि नानक नामु सुखाला॥ *भाई गुरदास जी, वार 1/31*

केवल नाम ने ही फलीभूत होना है। एक बार भी यदि वाहिगुरू मुख से निकल जाये और

चित्त एकाग्र हो –

एक चित जिह इक छिन धिआइओ। काल फास के बीच न आइओ॥

गुरू महाराज कहने लगे, ''फिर यह बताओ कि यह मार्ग श्रेष्ठ है या तुम्हारा हठ योग। नेती, धोती, बसती, कपाल भाती ये साधना करते हो, फिर एकान्त स्थान ढूँढना पड़ता है। कलयुग का समय है। तुम्हें एकान्त कौन दे देगा? तुम तो पहाड़ों पर आकर बैठ गये। नाथ जी! अब ऐसा नहीं हो सकता। हम नाम लेकर आये हैं। निरंकार के नाम ने संसार का उद्धार करना है।'' अतः सिद्धों ने हार मान ली। गुरू नानक साहिब के चरणों पर सभी ने शीश नवां दिया। उस घटना को भाई गुरदास जी इस प्रकार लिखते हैं –

धारना – बाबे जित लई सिधां वाली मंडली,
शबदां दे बाण मार के – 2, 2
मेरे पिआरे, शबदां दे बाण मार के – 2
वाहवा-वाहवा, शबदां दे बाण मार के – 2
बाबे जित लई सिधां वाली मंडली – 2

सिधी मने बीचारिआ किवै दरसनु एह लेवै बाला।
ऐसा जोगी कली महि हमरे पंथु करे उजिआला।
खपर दिता नाथ जी पाणी भरि लैवणि उठि चाला।
बाबा आइआ पाणीऐ डिठे रतन जवाहर लाला।
सतिगुर अगम अगाधि पुरखु केहड़ा झले गुरू दी झाला।
फिरि आइआ गुर नाथ जी पाणी ठउड़ नाही उसि ताला।
सबदि जिती सिधि मंडली, कीतोसु अपणा पंथु निराला।
कलिजुगि नानक नामु सुखाला॥ *भाई गुरदास जी, वार 1/31*

भाई जोध लहणा जी को बता रहे हैं, 'इतने बड़े सिद्धों के पास जाकर गुरू नानक पातशाह ने नाम का डंका बजाया और सभी को जीत लिया। मक्का में गये, वहाँ पर जितने भी मक्का में सेवा करने वाले थे, बड़े-बड़े इमाम, सभी ने गुरू नानक पातशाह का उपदेश सुना। उन्हें बताया कि केवल मक्का में ही खुदा नहीं है, खुदा का तो सारा ही संसार है, जितनी दुनियाँ है, सारी परमेश्वर की है, वह तो सभी जगह परिपूर्ण है। इस प्रकार आपने बहुत बड़ी व्याख्या करके, लहणा जी को सच्चे पातशाह गुरू नानक देव जी के वचन सुनाये। पहले बाणी सुनाई, फिर उनके कौतुक सुनाये। फिर पूछते हैं कि वह सर्व व्यापी हैं, एक देशी नहीं हैं। अब वह क्या करवाते हैं?

भाई जोध जी ने कहा, ''भाई लहणा जी! गुरू नानक पातशाह के सारे ही कौतुक निराले हैं और उन्होंने चार उदासियाँ (यात्राएं) करके, जहाँ तक सृष्टि थी, वहाँ तक उपदेश देने के बाद करतारपुर में पक्का निवास कर लिया है।''

अब बेअन्त संगते हो गई हैं। इसलिये संगत कहाँ-कहाँ ढूँढती फिरे कि अब लंका में हैं गुरू साहिब या अरब में हैं या बर्मा में हैं या चीन में गये हुए हैं? उन दिनों ढूँढना कौन सा आसान था? कहते हैं फिर उन्होंने आकर एक गाँव बसाया जिसका नाम करतारपुर है। यहाँ से ज्यादा दूर नहीं है, पास ही है। जब मक्का गये थे न, तब भेष मुसलमानों जैसा बनाया हुआ था। हरे कपड़े पहन लिये थे। जब जोगियों से मिलने गये तब उस समय कमर के चारों ओर छाती तक रस्से लपेट लिये थे। जब हिन्दुओं के मन्दिरों में गये फिर उन जैसा पहरावा धारण कर लिया। पूरा भेष नहीं बनाया करते थे। एक पैर में खड़ाऊं तो दूसरे में जूती पहनते हैं। हाथ में छड़ी पकड़ी हुई है और ऊपर से हिन्दुओं का वेश है, अब

वह सारा वेश उतार दिया -

फिरि बाबा आइआ करतारपुरि भेखु उदासी सगल उतारा॥ भाई गुरदास जी, वार 1/38

यात्राओं के समय जो वेश था, जो यात्राओं के दौरान बनाया करते थे, वह सभी कुछ उतार दिया-

पहिरि संसारी कपड़े मंजी बैठि कीआ अवतारा॥ भाई गुरदास जी, वार 1/38

जब महाराज जी ने पुनः सांसारिक वस्त्र पहने तो इतने सुन्दर लगते कि वही रूप हमारे मन में बस गया और अब वहाँ बैठ कर उपदेश करते हैं। इतने वचन सुनने के पश्चात भाई लहणा जी के मन में 100 प्रतिशत आकर्षण पैदा हो गया। फिर देवी मन से निकलती चली गई। जैसे-जैसे वचन सुनते गये, त्यों-त्यों गुरू अन्दर बसता चला गया, यह कोई साधारण बात नहीं है।

भाई जोध कहने लगे, ''भाई लहणा जी! गुरू नानक पातशाह जी का सिद्धान्त बहुत ही आसान है, बहुत ही सीधा है। इसमें न तो पढ़ा लिखा होने की जरूरत है, न किसी दर्शन शास्त्र की, न ही संस्कृत तथा अन्य कुछ जानने की ज़रूरत है। बेशक कोई अनपढ़ हो या पढ़ा लिखा हो। बिल्कुल सीधा सा सिद्धान्त है कि धर्म की कमाई करना, दसों नाखूनों से परिश्रम करना फिर उसके बाद नाम जपना। फिर नाम ने सारी दुनियाँ के साथ सांझ पैदा कर देनी फिर मिलकर खाना। किरत तो आप करते हो ही, पर नाम न जपने के कारण दुनियाँ से साँझ पैदा नहीं हो रही। अपने लिये ही तुम किरत (काम धन्धा) करते हो। जितना कमाते हो, अपने घर के लिये ही कमाते हो, व्यापार और भी बढ़ा लेते हो पर गुरू का सिख अपने लिये नहीं करता। गुरू नानक साहिब ने तो यह वचन भी कह दिया -

घालि खाइ किछु हथहु देइ। नानक राहु पछाणहि सेइ॥ पृष्ठ - 1245

जो किरती (मेहनती) व्यक्ति होता है, उसे परमेश्वर के राह का ज्ञान हो जायेगा।

किरत (व्यापार, काम धन्धा) एक तो होता नहीं, किरत अनेक प्रकार की होती है। किसान खेती बाड़ी करता है। अनाज पैदा करता है, जो अध्यापक है वह बच्चों को पढ़ाने का कार्य करता है, जो डाक्टर है, वह दवाईयों द्वारा मरीज़ों की सेवा करके कार्य करता है। गुरू के सिखों को जो भी गुरू जी ने दात दी है, कीर्तन की, प्रचार की आदि-आदि वह प्रचार करके, किरत (कार्य) करते हैं। जिसे साज बजाने की सेवा दी गई है, वह साज बजाकर किरत करते हैं। यह सारी धर्म की किरत कमाई है। इसे ही दसों नाखूनों की कमाई कहते हैं, पर गुरू का सिख अपने पास कुछ नहीं रखता। सभी कुछ सांझा करता है और फिर वह नाम जपता है। अमृत बेला का सदुपयोग करता है। जब सारा संसार सोया हुआ होता है, तब वह जागता है। वह उस समय अमृत बेला में एक चित्त होकर, परमेश्वर का भजन करता है। जब भजन करता है तो उसके अन्दर प्यार पैदा होता है, प्यार जो है वह सांझ पैदा करता है। जब सांझ पैदा होती है फिर दुखी को देख नहीं सकता, फिर उसके दिल में आता है कि मैं इसे क्या दूँ? इसकी क्या सहायता करूं? फिर जो वह सहायता करता है, उसके साथ मोह लगाव नहीं रखता। वह शुक्र करता है, ''हे वाहिगुरू! तेरा शुक्र है कि मेरे द्वारा तूने इस प्रेमी की सहायता करवा दी, मैंने नहीं की, तूने ही करवाई है। तेरा दिया हुआ ही मैं आगे दे रहा हूँ, अपनी ओर से तो मैं कुछ नहीं दे रहा।'' कहते हैं, फिर बांट कर, मिलकर खाता है। इसका दूसरा पक्ष बताते हैं -

गुरमुखि नामु दानु इसनानु॥ पृष्ठ - 942

नाम जपता है, बाणी पढ़ता है। रसना से नाम जपता है, श्वांस से नाम जपता है, कंठ से नाम जपता है, हृदय में नाम जपता है, नाभि में नाम जपता है, आज्ञा चक्र में नाम जपता है, त्रिकुटी में नाम

जपता है, दसवें द्वार में नाम जप कर परमेश्वर को प्राप्त कर लेता है। यह तो है उसका पहला काम। दूसरा यह है कि नाम जपने से घर के विघ्न दूर होने शुरू हो जाते हैं और घर में ही रंग लगने लग जाता है, प्यार पैदा हो जाता है। जिन्होंने भी ऐसे किया है, यहाँ संगत में भी बहुत से प्रेमी करते रहे हैं, दस साल से मैं यहीं बताता आ रहा हूँ। संगत के साथ सम्बन्ध रखने वाले सैकड़ों प्रेमी, अमृत बेला सम्भालते हैं, अभ्यास करते हैं। मूल मन्त्र के लाखों पाठ करते हैं। नाम जपते हैं, पवित्र एवं शुद्ध नेक कमाई करते हैं, प्रभु निमित्त माया भी निकालते हैं, देवताओं जैसा जीवन प्राप्त हो गया है। गुरमुख के तीन मुख्य काम हैं – नाम-दान-स्नान –

धारना – गुरमुख नाम दान इशनान – 2, 2
गुरमुख नाम दान इशनान – 2, 2

भाई जोध कहने लगे, ''भाई लहणा जी! गुरू महाराज जी ने बहुत झंझन्टों में नहीं डाला। जीवन को इस तरह बना दिया कि किरत करना अर्थात नेक कमाई करना, नाम जपना और मिलकर बांट कर खाना। यह तो एक पक्ष समझो।'' दूसरा पक्ष यह है कि *'गुरमुखि नामु दानु इसनानु।'*

नाम जपना और दान करना। दान के लिये मैं प्रार्थना कर रहा था कि एक तो कामना सहित दान होता है – उसका फल मिलता है। जैसा खेत वैसा फल। यदि तो ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों द्वारा पैसा खर्च होता है, वहाँ पर दान लाखों गुणा बढ़ जाया करता है और जहाँ कल्लर वाली धरती हो, वहाँ पर दिया गया दान, स्वंय को भी फंसा दिया करता है। दान ले लिया, शराब पी ली, पार्टीबाजी कर ली, लड़ाई-झगड़े कर लिये और परमेश्वर के निमित्त धन लगाना नहीं, फिर वह दान कैसे फलीभूत होगा? उस दान का तो दाता (देने वाला) भी साथ ही मरता है सो –

खेतु पछाणै बीजै दानु॥ *पृष्ठ – 1411*

कहते हैं, खेत पहचान कर दान दो। तुरन्त दान महा कल्याण। जहाँ जल्दी ही दान लग जाये, वह ठीक हुआ करता है। अत: दान बहुत जरूरी चीज़ है क्योंकि जब दान दिया जाता है तो वह विघ्न दूर करता है। सन्तों को दान की कोई जरूरत नहीं हुआ करती। उन्होंने क्या करना होता है? वे तो सभी चीज़ों के मालिक होते हैं। उनके पास सभी कुछ होता है। लोग तो उनके पास आ कर मांगते हैं, माया उनके पीछे लगी रहती है, इसलिये वे उन्हें ठोकरें मारते हैं कि मुझे नहीं चाहिये पर परोपकारी सन्त कहते हैं कि इनका भी भला करना है। जो पैसा-दो-पैसा दे देते हैं, उसे इकट्ठा करके ऐसी जगह लगा देते हैं, जिससे एक तो इन्हें पता ही न चल सके। जैसे रतवाड़ा साहिब में डिस्पैन्सरी चल रही है। यहाँ पर दस या ग्यारह हज़ार रूपयों की दवाईयां हर महीने मुफ्त दी जाती हैं। अकेली डिस्पैन्सरी का एक लाख 20 या 25 हज़ार रूपया वार्षिक खर्च है। यह पैसा कहाँ से आता है? किसी ने एक, किसी ने दो, किसी ने बान्ध कर दान के रूप में दिये होते हैं। पैसा आता है, साथ ही साथ लगा दिया जाता है। कोई एक व्यक्ति नहीं कह सकता कि वह डिस्पैन्सरी चलाता है। एक व्यक्ति को तो मान हो जायेगा –

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।
नानक निहफल जात तिह जिउ कुंचर इसनानु॥ *पृष्ठ – 1428*

यह तो फिर ठगी का मामला हो गया कि अमीर व्यक्ति ही डिस्पैन्सरी चलाये जा रहा है। कोई कह सकता है कि उसे मान नहीं होगा? जिस दिन उसका निरादर हो गया, उसी दिन पैसे देने बन्द कर देगा। अत: यह दान गुप्त रूप में फल देता रहता है। लंगर चलता है, किसने दिया? कहाँ से आया? वाहिगुरू ही जानता है। खाने वाले, गुरू नानक साहिब का रूप धारण करके खाये जाते हैं और खिलाने वाले सेवा

करके, अपनी सेवा का फल लिये जाते हैं। इस दान से समाज के बड़े-बड़े काम चलते हैं, भाईचारे के काम चलते हैं। रूहानियत के काम चलते हैं। कहते हैं, गुरू महाराज जी ने ऐसे नहीं कहा कि पैसे को ऐसे फैंकते चले जाओ बल्कि उसे शुभ कार्यों में लगाओ। इस प्रकार अपने गुरसिखों की सेवा में लगा दो। इससे संसार की दरिद्रता दूर हो जाती है और उनके घरों से विघ्नों का खातमा हो जाता है। जब विघ्न दूर होते हैं तो समाज का कल्याण होता है।

तीसरा काम है स्नान। गुरू महाराज जी ने केवल शरीर धोने को कोई महत्व नहीं दिया। आपका फ़रमान है -

मनि मैलै सभु किछु मैला तनि धोतै मनु हछा न होइ॥   ***पृष्ठ - 558***

जब तक मन में मैल है, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, क्रोध, दूसरे से घृणा करना, छोटा समझना वैर करना है। कहते हैं जहाँ मर्ज़ी जाकर स्नान कर ले, पर शरीर धोने से कुछ नहीं बनता। तेरी हालत कड़वी तुम्बी की तरह ही रहेगी। कबीर साहिब जी के पास कुछ प्रेमी आए। उन्होंने कबीर साहिब से प्रार्थना की कि आप भी हमारे साथ तीर्थ स्नान करने चलो, हमने अड़सठ तीर्थों का स्नान करके आना है। उन्होंने कहा कि तीर्थों का स्नान करके सारे पापों का नाश हो जाता है। कबीर जी ने कहा, ''मैं तो जा नहीं सकता, हमारी यह तुम्बी ले जाओ और सभी तीर्थों पर स्नान करवाते रहना।'' जब वे सभी तीर्थों का स्नान करके वापिस लौट आये, कबीर साहिब की तुम्बी उन्हें लौटा दी। कबीर जी ने तुम्बी तोड़कर उसका प्रसाद सभी को बाँट दिया। जो भी मुँह में डालता, थू-थू करके फैंक देता और कहता बड़ी कड़वी है। कबीर साहिब बोले कि अड़सठ तीर्थों का स्नान करवाने के बाद भी कड़वी रह गई? इससे यदि तुम्हारे मन पर फर्क न पड़ा तो ऐसे स्नान का क्या लाभ? नहा आओ, जितना तुम्हारा मन करता है पर यदि मन निर्मल न हुआ फिर नहाने का क्या लाभ?'' महाराज जी कहते हैं शरीर का स्नान और है, वचनों का स्नान अन्य चीज़ है, बुद्धि और आत्मा का स्नान अलग बात है? अतः पाँचों प्रकार की युक्ति आनी चाहिये। शरीर का स्नान तो सभी जानते हैं परन्तु इसके लिये भी समय का ध्यान रखना जरूरी है। जो पहर रात रहते, विधि पूर्वक स्नान करता है, उसकी विधि होती है, तरीका होता है स्नान करने का। वह सवा मन सोना रोज़ पुण्य करता है। इतना हो जायेगा हमसे? केवल स्नान करने से हो जाता है। जो दो घड़ी बाद करता है, उसे सवा मन चांदी का फल मिलता है जो एक घड़ी और देर से करता है उसे सवा मन तांबे का फल मिलता है जो उसके बाद दिन निकलने पर स्नान करता है, थोड़ा सा एक घड़ी पहले उसे सवा मन दूध पुण्य करने का फल मिलता है। जो दिन निकलने पर नहाता है, पौ फूटने पर वह न तो पुण्य करता है और न ही पाप करता है। वह अपने शरीर की शुद्धि करता है अतः यह शरीर का स्नान है -

जाम जामनी न्हावन करि ही। कंचन भार दान फर फरिही।
चतुर घटी निस ते जो नावै। तितनो दान रजत फल पावै।
घटी रैन ते करहि शनान। फल ह्वै खीर सवामन।
प्रातिकाल उठ करि जो न्हावै। मन जल दान करे फल पावै।
दिवस चरे ते नावहि जोऊ। तां को ह्वै न पुंन फल कोऊ।
फल एतो ही देहि पनीता। निस ते न्हावन आदी रीता॥ श्री नानक प्रकाश, पृष्ठ - 496

वचन का स्नान यह है कि कभी भूल कर भी कड़वा वचन, ताना, उलाहना, कोई बुरी लगने वाली बात न करे। इससे जुबान झूठी हो जाती है, वचन झूठा हो जाता है, महाराज जी कहते हैं -

नानक फिकै बोलीऐ तन मन फिका होइ॥   ***पृष्ठ - 473***

तन भी फीका और मन भी फीका –

फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ।
फिका मूरखु आखीऐ पाणा लहै सजाइ॥ **पृष्ठ - 473**

और फीके को मूर्ख कहते हैं। कहते हैं रसना को वाहिगुरू नाम का स्नान करवाओ, वाहिगुरू–वाहिगुरू–वाहिगुरू मूल मन्त्र, बाणी पढ़ो, सुखमनी साहिब पढ़ो, जपुजी साहिब पढ़ो, इससे तुम्हारा बोल, रसना पवित्र हो जायेगी। फिर यह मीठे बोल बोलेगी। मीठे बोल दरगाह में भी अच्छे लगते हैं –

जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कहीदा॥ **पृष्ठ - 1384**

देखना कड़वा वचन बोल कर किसी का दिल मत तोड़ देना। परमात्मा को मिलने की इच्छा रखता है तो याद रखना यदि किसी का दिल टूट गया तो परमात्मा नहीं मिलेगा।

कहने लगे तीसरा स्नान मन का होता है। मन के अन्दर मैल पड़ी हुई है –

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु।
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥ **पृष्ठ - 651**

भाई लहणा जी ने पूछा, भाई जोध जी, मन का भी स्नान होता है?

भाई जोध, ''हाँ।''

भाई लहणा, ''गुरू साहिब ने बताया है?''

भाई जोध, ''हाँ, आपने जपुजी साहिब सुना था न?''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''सुना था पर मेरे ध्यान नहीं रहा क्योंकि मुझे बाणी इतनी अच्छी तरह नहीं आती। एक बार सुनी हुई सारी बात समझ में नहीं आई इसलिये मुझे कृपा करके आप फिर बता दो।''

भाई जोध बोले, ''गुरू नानक पातशाह इस प्रकार बताते हैं –

भरिऐ हथु पैरु तनु देह। पाणी धोतै उतरसु खेह।
मूत पलीती कपड़ु होइ। दे साबूणु लईऐ ओहु धोइ।
भरीऐ मति पापा कै संगि। ओहु धोपै नावै कै रंगि॥ **पृष्ठ - 4**

कहते हैं, प्यार के साथ जब हम नाम जपते हैं, बाणी पढ़ते हैं फिर हमारा मन निर्मल हो जाता है, मैल उतर जाती है। बुद्धि का स्नान इस तरह से करवाते हैं कि विचार करो, मैं कौन हूँ? मैं शरीर हूँ या शरीर में रहने वाला हूँ? कहते हैं, यह जो ब्रह्म विचार है, इसे बुद्धि का स्नान कहते हैं। आत्मा निर्मल है पर जीव आत्मा का स्नान करवाना पड़ता है, भक्ति भाव और सेवा भाव से स्नान करवाना पड़ता है।

गुरू नानक देव जी कोई रस्म पूरी नहीं करते कि बगल में छुरी मुख में राम राम। ऐसी बात नहीं है। सही अर्थों में यदि देखना चाहते हो – नाम भी जपो, दान भी करो और स्नान भी करो।

ऐसे वचन जब आपने सुने तो आप गम्भीर हो गये। उसके बाद कहने लगे यदि आपके पास समय हो तो कभी कभी मैं, समय निकाल कर आपसे मिलता रहूँ? भाई जोध कहते हैं, ''जरूर आओ क्योंकि गुरू साहिब ने संगत का रूप बताया है कि सत्संग जो है –

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूं ते आध।
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ **पृष्ठ - 1377**

और संगत को बहुत महान महत्ता दी है –

इकु सिखु दुइ साध संगु पंजीं परमेसरु॥ *भाई गुरदास जी, वार 13/19*

जब दो गुरसिख इकट्ठे हो जाते हैं तो साध संगत शुरू हो जाती है, सत्संग शुरू हो जाता है। दो गुरसिख मिल जायें तो ठीक रहता है। भाई जोध कहते हैं, ''लहणा जी आप आ जाया करें, इस तरह सत्संग भी हो जाया करेगा।'' अत: अब लहणा जी बार-बार आते हैं। बेअन्त वचन सुनते हैं, कितने वचन बतायें। सारी जिन्दगी भी यदि वर्णन करते रहें तो भी गुरू नानक साहिब के वचन नहीं बताये जा सकते।

इस प्रकार सुनते-सुनते आपके दिल में ऐसा आकर्षण हुआ कि गुरू नानक साहिब के दर्शन जल्दी-जल्दी हों। अभी गुरू धारण नहीं किया, परन्तु प्यार पैदा हो गया। अनदेखा प्यार जाग पड़ा। एक तो देखने पर प्यार पैदा होता है, एक बिना देखे ही प्यार होने लग जाता है। उसे अनदेखा प्यार कहते हैं। अभी देखा नहीं, केवल सुनकर ही प्यार हो गया। अब आपके मन की हालत हर समय ऐसी रहती है कि वह कौन सी शुभ घड़ी आये कि वह गुरू नानक पातशाह के जाकर खुले दर्शन दीदार करें। तब आपने देवी के दर्शनों को जाने वाले समूह में ही आपने वचन करना शुरू कर दिये। कुछ ने बहुत बुरा मनाया और कहने लगे, ''लहणा जी! तपी नानक को हम अच्छी तरह जानते हैं। आप देवी के भक्त हो, वे देवताओं को मानते नहीं और ऐसी ही बातें करते हैं, वहाँ जाने के लिये हमारा मन नहीं मानता।'' परन्तु भाई लहणा जी के मन में हर समय यही ख्याल रहता है –

धारना - गुरां दे दर्शन ताईं मेरा मन लोचदै - 2, 2

मै मनि तनि प्रेमु अगम ठाकुर का.........॥ *पृष्ठ - 836*

कहते हैं जो देखा ही नहीं, उसके प्रति मेरे मन तथा तन में, प्यार पैदा हो गया है –

.....................खिनु खिनु सरधा मनि बहुतु उठईआ॥ *पृष्ठ - 836*

ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है त्यों-त्यों श्रद्धा और प्यार मन के अन्दर बढ़ता चला जाता है।

गुर देखे सरधा मन पूरी जिउ चात्रिक प्रिउ प्रिउ बूंद मुखि पईआ॥ *पृष्ठ - 836*

पपीहा बादलों को देखता है -पिहु-पिहु की रट लगा देता है। उस पर दया आती है कि बेचारा पानी की एक बूंद के लिये तरसता है। वर्षा हो रही है पर उसका पेट नहीं भरता। जब तक स्वाति बूंद उसके मुँह में नहीं जाती, तब तक उसकी प्यास नहीं बुझती। एक बार स्वाति बूंद उसके मुँह में चली जाये फिर साल बिता देता है। कहते हैं इस तरह से –

गुर देखे सरधा मन पूरी जिउ चात्रिक प्रिउ प्रिउ बूंद मुखि पईआ।
मिलु मिलु सखी हरि कथा सुनईआ॥ *पृष्ठ - 836*

आपस में मिल मिल कर गुरू नानक पातशाह की कथा सुनाते हैं –

सतिगुरु दइआ करे प्रभु मेले मै तिसु आगै सिरु कटि कटि पईआ॥ *पृष्ठ - 836*

जो मुझे गुरू मिला दे, मैं सिर काट-काट कर उसके चरणों में गिरा दूँ –

रोमि रोमि मनि तनि इक बेदन मै प्रभ देखे बिनु नीद न पईआ।
बैदक नाटिक देखि भुलाने मै हिरदै मनि तनि प्रेम पीर लगईआ॥ *पृष्ठ - 836*

मेरे तो रोम-रोम में पीड़ा है। दूसरे की वेदना, पीड़ा को कोई नहीं जान सकता। साध संगत जिसे वेदना होती है, वही जानता है –

धारना - जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे,
किसे दी लग्गी कौण जाणदै - 2, 2

मेरे पिआरे, किसे की लग्गी कौण जाणदै - 2, 2
जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे......... - 2

लागी होइ सु जानै पीर॥ *पृष्ठ - 327*

दूसरे को तो पता ही नहीं कि कितनी वेदना है। पीड़ा वही जानता है जिसके तन को लगी हो -

राम भगति अनीआले तीर॥ *पृष्ठ - 327*

अणिआले तीर हैं जिसके हृदय को बीन्धते हैं वह लोट-पोट हो जाता है। सो महाराज जी कहते हैं -

रोमि रोमि मनि तनि इक बेदन मै प्रभ देखे बिनु नीद न पईआ।
बैदक नाटिक देखि भुलाने मै हिरदै मनि तनि प्रेम पीर लगईआ॥ *पृष्ठ - 836*

मेरे हृदय में पीड़ा लग गई -

हउ खिनु पलु रहि न सकउ बिनु प्रीतम
जिउ बिनु अमलै अमली मरि गईआ।। *पृष्ठ - 836*

जैसे नशई, नशे के बिना तड़पता है, कहते हैं, ऐसे ही मैं एक क्षण भी नहीं रह सकता -

जिन कउ पिआस होइ प्रभ केरी
तिन्ह अवरु न भावै बिनु हरि को दुईआ॥ *पृष्ठ - 836*

जिनके हृदय में प्यास लगी हुई है, वे तो नाम जपते हैं। वे समय नहीं देखा करते, हर समय लगे रहते हैं -

सीने खिच जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥ *डा. भाई वीर सिंघ जी*

जिन कउ पिआस होइ प्रभ केरी तिन्ह अवरु न भावै बिनु हरि को दुईआ॥ पृष्ठ - 836

उन्हें और कोई भी वस्तु प्यारी नहीं लगती, केवल प्रभु की बात ही अच्छी लगती है -

कोई आनि आनि मेरा प्रभू मिलावै......................॥ *पृष्ठ - 836*

कहते हैं, कोई आए और मुझे परमेश्वर के साथ मिलाए -

.....................हउ तिसु विटहु बलि बलि घुमि गईआ।
अनेक जनम के विछुड़े जन मेले जा सति सति सतिगुर सरणि पवईआ॥ *पृष्ठ - 836*

ऐसी अवस्था आपके मन की है। सभी ने देखा कि पता नहीं लहणा जी को दिन प्रति दिन कुछ होता जा रहा है। जगरातों में जाना कम कर दिया। व्यापार बहुत फैला हुआ है, काम इतना ज्यादा है कि एक सैकिण्ड के लिये भी फुर्सत नहीं मिलती। आखिर देवी के दर्शनों को चलने का समय आ गया। प्रबन्ध करना था जो कमेटी बनी हुई है, उसके मुखिया हैं। सभी कहने लगे, ''भाई लहणा जी प्रबन्ध करो।'' सभी चीज़ें साथ ले जानी पड़ती थीं क्योंकि जब कैम्प चला करते थे तो दो चार दरियां आदि फालतू ले लिया करते थे। कुछ गड्डे (बैल गाड़ियां) पहले आगे जाकर कैम्प लगा देते और कुछ पिछले कैम्पों को उठाकर अगले पड़ाव पर लाकर रख देते। दस या पन्द्रह मील की दूरी पर जाकर ठहरा करते थे। सारा संग पैदल चलकर धीरे-धीरे चलता हुआ, भेंट गाता हुआ जाया करता था।

आज आपका मन नहीं कर रहा जाने के लिये परन्तु जबरदस्ती चले जा रहे हैं क्योंकि संग

(समूह) के मुखिया थे। मुखिया होने के नाते चले जा रहे हैं और अपने साथियों से कहते हैं, ''देखो भाई, मैंने तुम से एक बात कहनी है।'' वे बोले, ''बताओ।'' लहणा जी ने बताया, ''इस बार हमने करतार पुर की तरफ से होकर जाना है और वहाँ गुरू नानक पातशाह रहते हैं।'' साथी कहने लगे, ''हमने भी गुरू नानक तपस्वी का नाम सुना हुआ है।'' लहणा जी ने कहा ''उनके दर्शन करके चलेंगे। वो कहने लगे, ऐसे ही दर्शनों का क्या लाभ? साधु सन्तों को ऐसे ही मिलने से क्या लाभ? हम तो देवी को प्रसन्न करें, हमने तो देवी माता की ही भक्ति करनी है, सन्त कोई इनसे ऊँचे होते हैं?'' लहणा जी ने कहा, ''नहीं भाई, मैं तो जरूर जाऊँगा।'' सारा जत्था चल पड़ा और करतार पुर के पास बाहर की ओर डेरा लगा लिया। भाई लहणा जी कहने लगे, ''प्रेमियो, मैं तो चला अब, हमने तो आज यहीं ठहरना है और फिर कल प्रोग्राम बना लेंगे।'' उस समय आप घोड़े पर सवार होकर गुरू नानक पातशाह के दर्शन करने जा रहे हैं। गुरू नानक पातशाह भी समझ गये कि आज उनके भेद (राज) का धनी आने वाला है। महापुरुषों को पहले ही पता होता है।

जब महाराज जी (सन्त ईश्ऱ सिंघ जी राड़ा साहिब वाले) बाबा अतर सिंघ जी रेरू साहिब वालों के दर्शन करने गये तो उस समय आप दसवीं जमात में पढ़ते थे और 18 साल से कम आपकी आयु थी। बड़े ही शानदार वस्त्र, आपने रेशमी सूट पहना हुआ था पर आपके मन में लगन थी, वचन सुन-सुन कर इतना प्यार हो गया, बाबा बीर सिंघ जी को साथ लेकर कहने लगे, महापुरुषों के दर्शन करवाओ क्योंकि बिचौले के बिना दर्शन नहीं हुआ करते। यदि बिचौला ताकतवर हो फिर तो दर्शन आराम से हो जाते हैं यदि ठीक न हो तो फिर बेचारा स्वंय भी रह जाता है। महापुरुषों को मिलना कोई खेल नहीं हुआ करता, बहुत कठिन होता है क्योंकि वे मर्ज़ी के मालिक होते हैं -

रंगि हसहि रंगि रोवहि चुप भी करि जाहि।
परवाह नाही किसै केरी बाझु सचे नाह॥ ***पृष्ठ - 473***

जब महाराज जी से जाकर मिले, उस समय रेरू साहिब वाले महापुरुषों ने एक दम इस आये नये युवक यात्री की ओर देखा, नेत्रों की ओर दृष्टि दौड़ाई, कहते हैं, ''आ गया, तूने यहाँ पहुँचने में काफी देर लगाई।'' इस बात को कोई न समझ सका कि क्या कहा है महापुरुषों ने रमज़ लगा दी और महाराज जी समझ गये।

बाबा जी कहते हैं, ''अब क्या विचार है?''

कहने लगे, ''महाराज! अब मैंने कहीं नहीं जाना।''

एक बार दर्शन करके नमस्कार की है, कोई उपदेश नहीं सुना। दिल से दिल मिल गया उसी समय बोले, ''अब मैंने नहीं जाना, जहाँ आना था वहीं पहुँच गया।'' महापुरुष कहने लगे, ''घर के लोग ढूँढते फिरेंगे, यहाँ आयेंगे, हमें तंग करेंगे। जाओ दसवीं की परीक्षा दे आओ।'' महाराज जी बताते थे कि हमारा चित्त इतना उदास हुआ कि जैसे हमें किसी ने राज्य देकर फिर लूट लिया हो। कहते हैं, परीक्षा क्या देनी थी? आप दो बजे उठा करते थे, सुधासर के तालाब पर जाकर पांच घंटे समाधि लगाया करते थे, तेरह साल की आयु में जब आठवीं कक्षा में पढ़ते थे। उन दिनों की बातें आपने मुझे बताई थीं कि किस तरह से उनकी समाधि लगती थी और कैसी हालत हो जाया करती थी। लगन थी पर पूरा कोई नहीं मिला था। जब पूरा मिला तो पूरे ने कहा, ''दसवीं की परीक्षा दे आओ।'' वे वियोग के दिन बिताने कितने कठिन होते हैं। यह तो जिज्ञासु या वैरागी पुरुष ही जान सकता है और कोई नहीं जान सकता। महाराज जी आगे बताते कि फिर हमारा दिल नहीं लगा, हमने किताबें पढ़नी छोड़ दीं। क्लास में जाना,

किताब के अन्दर गुटका रख लेना, पिछली सीटों पर बैठने लग गये। मास्टर जी ने बहुत कहना कि तुम आगे की सीटों पर बैठा करते थे, तुम प्रथम आया करते थे, पर हमारे ऊपर कोई असर न होता। मास्टर जी को क्या पता था कि उन्हें कोई और बड़ा मास्टर मिल गया है। कहने लगे, फिर परीक्षा हुई और हमने किसी सवाल का कोई जवाब न लिखा। सारे पेपरों पर वाहिगुरू-वाहिगुरू लिखते जाते। जब मास्टर कहते फिर हमने खड़े हो जाना, वाहिगुरू के नाम की इतनी धुन लगी। इस तरह से जिसने भी ऐसे दर्शन किये हों, वही जान सकता है साध संगत जी। जिनका प्यार हो जाता है और फिर दर्शन हो जायें, वहीं जानते हैं।

सो गुरू नानक पातशाह ने अर्न्तात्मा से देख लिया और देखते ही काफी दूर रोही में चले गये। अकेले ही खड़े हैं और गुरू अंगद साहिब (भाई लहणा) के रूप में जाते हैं और उनके पास जाकर खड़े हो गये। दर्शन किये, दर्शन करते ही एक बार तो सारे शरीर में झरनाहटें पैदा हो गईं कि कोई बहुत अच्छा आदमी है। उनके मन में यह ख्याल था कि गुरू नानक कोई लंगोटी पहनने वाला साधु होगा और आठ दस आदमी आगे पीछे फिरते होंगे किसी ने लोटा हाथ में लिया होगा, किसी ने चिप्पी पकड़ी होगी क्योंकि वे तो मशहूर होते हैं? उन्हें क्या पता था कि गुरू नानक साहिब तो परमात्मा की मौज मस्ती में अकेले ही विचरने वाले हैं, किसी को भी साथ नहीं रखते, कोई गड़वई साथ नहीं रखते यदि साथ रखा भी है तो सितार वाला भाई मरदाना साथ रखा। आप रोही में दूर जाकर खड़े हैं। उनके पास आकर भाई लहणा ने घोड़ा रोक लिया, देखा। देखकर, मन में सोचा कि मैं इनसे कैसे बात करूं?

कहने लगे, ''हे बुर्जुग जी! यहाँ जो महापुरुष हैं गुरू नानक जी, जिन्हें नानक तपी कहते हैं, मेरे मन में बहुत तीव्र लालसा पैदा हुई है कि मैं उनके दर्शन करूं। क्या कृपा करके आप मुझे बता देंगे कि जिस रास्ते से मैं जा रहा हूँ, वह ठीक है?''

इधर नानक साहिब आगे बढ़कर मिलते हैं। भाई गुरदास जी इस तरह कहते हैं। पढ़ो प्यार से –

धारना – सतिगुरू कोट पैंडा अग्गे होइ मिलदे ने,
सिखा तेरा पिआर देख के – 2, 4

चरन सरन गुरु एक पैंडा जाइ चल,
सतिगुरु कोटि पैंडा आगे होइ लेत है।
एक बार सतिगुर मंत्र सिमरन मात्र,
सिमरन तांहि बारंबार गुरु हेत है।
भावनी भगति भाइ कौडी अग्रभाग राखै,
ताहि गुरु सरब निधान दान देत है।
सतिगुरु दया निधि, महिमा अगादि बोध,
नमो नमो नमो नमो नेति नेति नेति है॥ ***कबित***

एक बार पूरी भावना के साथ कदम बढ़ा कर तो देख, गुरू आगे बढ़कर मिलता है। गुरू नानक पातशाह घर से चलते हैं, कहते हैं, ''मेरे राज का धनी आ रहा है। ले आऊं जाकर।'' ये वचन थे गुरू नानक पातशाह के और जब भाई लहणा जी दर्शन करने आये, इन्होंने गुरू नानक जी को अकेले खड़ा देख कर समझा कि वह कोई भला आदमी है। यह यहीं का रहने वाला है और यहाँ के निवासी सारे ही अच्छे हैं। उस समय भाई लहणा जी ने पूछा –

धारना – दसीं पिआरिआ, रसता गुरां दे दुआरे दा – 2, 2
गुरां दे दुआरे दा – 4, 2

कहने लगे, ''प्यारे बुजुर्गो! मैं गुरू नानक साहिब को मिलना चाहता हूँ जिन्हें लोग 'नानक तपी' कहते हैं। पहली बार आया हूँ और आज तक यहाँ पहले कभी नहीं आया, मेरा किसी के साथ कोई परिचय भी नहीं है, अच्छा होगा यदि आप मुझे रास्ता बता दें।''

भाई लहणा जी का विचार था कि वे मुझे रास्ता दिखा देंगे। महाराज जी कहते हैं, ''हे पुरुखा! तूने गुरू से मिलना है।''

कहता है, ''हाँ जी।''

महाराज जी बोले, ''आजा, तुझे रास्ता दिखाएं।''

उस समय आप, गुरू नानक पातशाह आगे-आगे चलते हैं। घोड़े की चाल मनुष्य की चाल से अधिक तेज़ होती है। यदि बहुत तेज़ चला जाये तो घोड़े के साथ चला जा सकता है, धीरे-धीरे चलने से कभी साथ नहीं हो पाता। गुरू नानक पातशाह कभी चार कदम भाग कर चलते हैं, फिर घोड़े के साथ-साथ मिलकर चलने लगते हैं फिर आप तेज़ी से भागते हैं, बड़ी तेज़ी-तेज़ी के साथ चल रहे हैं।

यह नक्शा अपने मनों में रखो। अगले इतवार को इससे आगे विचार करेंगे। अब सारे प्रेमी पहले आनन्द साहिब में बोलो, उसके बाद गुर सतोतर फिर अरदास होगी।

- ***आनन्द साहिब*** -

- ***गुर सतोतर*** -

- ***अरदास*** -

5

शान.. ।

सतिनाम श्री वाहिगुरू
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा।
ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा।
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा।
आपे ही राजनु आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा।
का कउ दुराउ का सिउ बल बंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा।
साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नही अन हेरा॥ *पृष्ठ - 827*

धारना - प्रभ सभ किछु तेरा जी,
मैं किछु नाही, मैं किछु नाही - 2, 2
मैं किछु नाही, मैं किछु नाही - 2, 2
प्रभ सभ किछु तेरा जी,........ - 2

धारना - नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े,
सेवा करके माण पाईदै - 2, 2
मेरे पिआरे, सेवा करके माण पाईदै - 2
नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े....... - 2

कलयुग में सत्संग का बहुत भारी महात्मय है। सत्संगत केवल उसे कहा जाता है, जहाँ पारब्रह्म, गुरू की बन्दगी करने वाले गुरसिख, सन्त, महापुरुष, ऋषि मुनि तथा अन्य उच्च कोटि की जीवनियों पर विचार की जाती है। वह समय परमेश्वर की दरगाह में लेखे में लगता है परन्तु इसमें भी कुछ खास बातों का ध्यान रखना पड़ता है। पहली बात श्रद्धा हुआ करती है। जब श्रद्धा धारण करके, हम घर से चलते हैं, उसी वक्त से ही हमारा समय, प्रभु के दरबार में गिनती में लगने लग जाता है। इसके साथ-साथ यदि हम वाहिगुरू मन्त्र या किसी महापुरुष द्वारा दिये हुए प्रभु के नाम का जाप करते हुए चलें तो यह समय पूरी तरह से सफल हो जाता है। जब तुम सत्संग में पहुँच गये, उस समय पूर्ण विनम्रता के साथ नमस्कार करो। नमस्कार एक प्रकार की भक्ति हुआ करती है जो नवधा भक्ति में गिनी जाती है। इसके बारे में महापुरुषों का ऐसा मत है कि मनुष्य के उलटे लेख सीधे हो जाते हैं। जीवन में आने वाले विघ्न, दुख नर्म हो जाते हैं। सूली का सूल बन जाता है। नमस्कार भक्ति के लिये बाणी में बार-बार बताया गया है -

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

नमस्कार करके जो भी हम अपने सतगुरू से मांगते हैं उसकी रहमत से प्राप्त हो जाता है तथा

अन्य कई प्रकार की मुसीबतों के जाल में से निकल जाते हैं। जब हमारा मस्तक गुरू चरणों के साथ लगता है तो हमारे सोये हुए भाग्य, इस प्रकार जाग पड़ते हैं, जैसे धरती में बोया हुआ बीज उगना शुरू हो जाता है और पापों का थर (घड़ा) फूट जाता है और हमें प्रभु चित्त आने लग जाता है।

तीसरा साधन हुआ करता है, अपने मन में पूरी तरह से विनम्रता धारण करके, स्व-अभिमान को कोई स्थान न देते हुए, जब आप सत्संग में बैठ जाओ फिर उसका पूरा प्रभाव पड़ता है। चित्त को एकाग्र किया जाये। चित्त एकाग्र करके, जब हम बन्दगी करते हैं तो उसका बहुत महान फल प्राप्त हुआ करता है। चित्त एकाग्र करने का सरल तरीका, कानों से गुरू की बाणी श्रवण करो, बुद्धि से विचार करके मनन करो, हृदय में धारण करो फिर रसना के साथ जो बाणी पढ़ी जाती है, खूब गर्ज़ कर बोलो क्योंकि यहाँ पर धारनाओं द्वारा कीर्तन किया जाता है। इसलिये पढ़े लिखे और अनपढ़, जानने वाले और अनजान सभी धारना को समझ सकते हैं, बोल सकते हैं। गुरबाणी में से बाणी सुनकर गाने और मनन करने का महात्म बताया गया है -

सेवक सिख पूजन सभि आवहि सभि गावहि हरि हरि ऊतम बानी।
गाविआ सुणिआ तिन का हरि थाइ पावै
जिन सतिगुर की आगिआ सति सति करि मानी॥ पृष्ठ - 669

गुरू ग्रन्थ साहिब की बाणी धुर दरगाह से, गुरूओं द्वारा प्रकट हुई है। यह औंकार का शब्द रूप है। अतः इसमें जो कुछ भी फ़रमान किया गया है, हम उस पर किन्तु-परन्तु नहीं कर सकते, सत्य-सत्य करके ही मानना है। इस प्रकार सत्संग करते हुए हम कई करोड़ों यज्ञों का फल अपने पल्ले में बान्ध लेते हैं -

कई कोटक जग फला सुण गावणहारे राम॥ पृष्ठ - 546

कई दिनों से आप अनेक विचार श्रवण करते आ रहे हो। ये विचार गुरू के प्रवान हुए गुरसिखों की, गुरू के इतिहास की, बाणी के सिद्धातों की कथा जो आपने श्रवण की है, इनके प्रकाश में आपने जीवन बिताना है। जैसा कि हम पढ़ते हैं कि नाम जपने से सारे दुखों का खातमा हो जाता है, सेवा करने से दरगाह में मान प्राप्त होता है -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ। ता दरगह बैसणु पाईऐ।
कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ पृष्ठ - 26

सेवा करने वालों की दरगाह में जय-जयकार होती है, नाम जपने वाले को संसार में दुख परेशान नहीं करते। अनेक प्रकार के दुख हैं। दरगाह में जाते समय पूरा मान प्राप्त होता है जैसा कि फ़रमान है -

रे रे दरगह कहै न कोऊ। आउ बैठु आदरु सुभ देऊ॥ पृष्ठ - 252

जैसे आप सत्संग में आए हो और अब आप बैठ कर सुन रहे हो, इसे बहिरंग सत्संग कहते हैं। इस बहिरंग सत्संग को काफी देर तक याद-दाश्त में स्थान नहीं दे सकते, पर जिसे अन्तरंग सत्संग की जांच आती है, उसके अन्दर सत्संग के भाव बैठ जाते हैं, गुरू का सिद्धान्त याद-दाश्त में चला जाता है, जो हमारे जीवन को शुद्ध मार्ग दर्शन करवाता है। बहिरंग की अपेक्षा अन्तरंग सत्संग का फल बहुत होता है। विचार चल रहा है कि नाम जपने से सुखों की प्राप्ति होती है और सेवा करने से यहाँ तथा दरगाह में, दोनों स्थानों पर मान प्राप्त होता है।

कलयुग का समय बहुत भयानक है। इसमें वृत्तियों का फैलाव इतना हो गया है कि उस

जानकारी का बोझ उठाने में हमारी शक्ति डांवाडोल हो रही है। प्राचीन साधन महापुरुषों ने प्रचलित किये थे, जिनमें तप, यज्ञ, पूजा, दान, तीर्थ स्नान तथा योग साधनाएं, इस कलयुग के समय में कर पाना असम्भव हैं क्योंकि गुरमत मार्ग दुनियाँ को त्यागने के पक्ष में नहीं है। संसार से अलग होकर एक ओर बैठ जाना गुरमत ने प्रवान नहीं किया बल्कि बाल बच्चों का पालन करते हुये, सारे काम काज करते हुये, हमें इस संसार रूपी भवजल में से तरने का बहुत ही सरल मार्ग गुरू महाराज जी ने बताया है जिसे नाम मार्ग, सुरत शबद मार्ग भी कह सकते हैं। कलयुग में गुरमत सिद्धान्त के अनुसार केवल नाम जाप ही फलीभूत होता है। प्राचीन समय में बहुत बड़े-बड़े कठिन साधन किये जाते थे। बड़ी लम्बी-लम्बी आयु हुआ करती थीं, सतोगुणी स्वभाव वाले लोग थे, उस समय सभी कठिन से कठिन साधन कर सकते थे क्योंकि मनुष्य का मन सतोगुणी था, भोजन सतोगुणी था, आचार-विचार शुद्ध थे, परन्तु कलयुग में इन चीज़ों का अभाव है। गुरू महाराज जी ने कलयुग के लोगों की मानसिक स्थिति भूत प्रेतों जैसी बताई है। सतयुग में सत्य का ज्ञान हुआ करता था। वे परमेश्वर को हर स्थान पर हाज़िर नाज़िर देखा करते थे। तृष्णा न होने के कारण कल्पना (तड़पना) बेअन्त कम थीं और नाम में वृत्ति लगी रहती थी। उस समय महापुरुषों के मत अनुसार धर्म के चार पैर कायम थे। जिनमें राजा भी पूरी तरह से धर्मात्मा था, वेद शास्त्र पर विचार करने वाले पण्डित, कर्म धर्म में पूर्ण थे। साधु, महापुरुष, ज्ञानवान, पूर्ण त्यागी थे, तीर्थ भी अपना फल दिया करते थे, तीर्थों पर ब्रह्मज्ञानी महापुरुषों के सत्संग आम हुआ करते थे। परन्तु कलयुग में धर्म लंगड़ा हो गया है, सिर्फ एक पैर रह गया है। महाराज जी ने तो यहाँ तक फ़रमान किया है कि धर्म अलोप ही हो गया जैसा कि -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ।
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।
हउ भालि विकुंनी होई। आधेरै राहु न कोई।
विचि हउमै करि दुखु रोई।
कहु नानक किनि बिधि गति होई॥ ***पृष्ठ - 145***

राजा जो धर्म के रक्षक थे, न्याय किया करते थे। उन्होंने प्रजा का शोषण शुरू कर दिया। अनेक प्रकार के टैक्स, अनेक प्रकार की पाबन्दियां, प्रजा पर लगा दीं। जो विद्वान थे, वेदों का प्रकाश करने वाले, उनके अन्दर अज्ञान का अन्धेरा छा गया। वेदान्त के असली सिद्धान्तों को न जानते हुए, कर्म काण्ड की ओर अधिक ध्यान देने लग गये। जब साधु महापुरुष तितिक्षा से खाली हो गये, ज्ञान केवल बातों का रह गया, साधना, तप करने वाले महापुरुष अलोप हो गये, तीर्थ अपवित्र हो गये, धर्म अधर्म के अन्धकार में लुप्त हो गया। जिस सत्य का प्रकाश दुनियां पर पड़ रहा था, वही अलोप हो गया।

गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि सत्य का मार्ग कहीं भी नज़र नहीं आ रहा। आपने सारी सृष्टि का भ्रमण किया। आजकल के विद्वान गुरू महाराज जी की यात्राओं का उल्लेख करते हुए केवल इतना ही बताते हैं कि आपने 24000 मील का पैदल सफर किया, 24 साल चलते रहे। भाई बाला जी और भाई मरदाना जी गुरू जी के अति निकटवर्ती रहे थे और भाई गुरदास जी इनसे थोड़ा सा समय बाद में हुए हैं। आपने कहा गुरू नानक पातशाह जहाँ तक भी सृष्टि थी, दुनियां थी, वहाँ तक पहुँचे। जिस देश में गये, वहाँ की बोली में उपदेश दिया। अरब देश में गये तो अरबी में बात की। लंका में गये तो वहाँ की भाषा में उपदेश दिया।

कई प्रेमियों का विचार होता है कि क्या गुरू नानक पातशाह सारी बोलियां जानते थे? इसके

बारे में प्रार्थना है कि भजन बन्दगी करते हुए, एक ऐसी अवस्था आती है, जहाँ पर सर्व विद्याओं का ज्ञान हो जाता है। बोली की चार अवस्थाएं हैं। पहली बोली जो सब की सांझी बोली कहलाती है, उसे परा बोली कहा जाता है। वह नाभि में से शुरू होती है। दूसरी बोली जो हृदय की बोली कहलाती है, इसे पसन्ती कहते हैं, वह भावों की बोली हुआ करती है। तीसरे स्तर की बोली को मधमा कहते हैं जो कंठ में से निकलती है। चौथी बोली को बैखरी कहते हैं जो जुबान से बोली जाती है। साधना सम्पन्न पुरुष पशुओं, वृक्षों आदि की बोली, जिसे परा बोली कहते हैं, वहाँ तक भी पहुँच रखते हैं। वे उसे decipher करके समझ लेते हैं। पसन्ती बोली को टैलीपैथी कहते हैं। अत: मधमा बोली में फुरना हुआ करता है, अक्षरों का रूप धारण नहीं किया होता। बैखरी बोली समय के अनुसार, देश के अनुसार, अलग-अलग रूप धारण कर लेती है। सर्व विद्या योग को जानने वाला, सभी बोलियों में बात-चीत कर सकता है। इस सम्बन्ध में एक बार डा. स्वामी वेद भारती जी ऋषिकेश वालों ने बताया कि आपने हालैण्ड से डी. लिट की थी। हालैण्ड वालों ने कहा कि आपने हमारे देश की बोली तो पढ़ी नहीं? आप पढ़ाई किस प्रकार पूरी करोगे? उन्होंने उत्तर दिया कि बोली मेरे लिये कोई समस्या नहीं है, थोड़े से दिनों की छूट दे दीजिए। आपने बताया कि 10 दिनों के बाद आपने, उनकी बोली की परीक्षा दी और डी. लिट् कर ली। उन्होंने बताया कि गुरू नानक पातशाह, वे स्वंय ही परमेश्वर थे। उन्हें भाषा, बोली की कोई कठिनाई नहीं थी। भाई गुरदास जी ने निर्णय करके बताया कि जहाँ तक सृष्टि थी, वहाँ तक गुरू नानक पातशाह गये। गुरू नानक पातशाह जी ने संसार के उद्धार के लिये सेवा तथा सिमरण का मार्ग बताया। जिस प्रकार हवाई जहाज उड़ता है उसके दो पर होते हैं, जिसके फलस्वरूप जहाज का सन्तुलन बना रहता है, इसी प्रकार गुरसिखों के जीवन का सन्तुलन बहुत ऊँची उड़ान भर सकता है। एक व्यक्ति गोशा नशीन (एकान्त) होकर नाम जपता है, बहुत अच्छी बात है परन्तु संसार को उसका कोई लाभ नहीं। उसने अपनी खेती को सींचने के लिये कुआं लगा लिया, यदि साथ ही टयूब्वैल लगा ले, तो साथ वाले खेतों की भी सिंचाई कर सकता है। जो व्यक्ति अकेली सेवा करता है, सभी उसका आदर मान करते हैं, हर जगह उसे आदर मान प्राप्त होता है। परन्तु इससे आन्तरिक रोग दूर नहीं होता और उसे शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। यदि वह सेवा के साथ नाम जप भी करता है तो वह नाम को इतनी ऊँचाई पर ले जाता है, जहाँ पर हउमैं का लेश मात्र भी नहीं रह जाता। वह स्वंय भी तर जाता है और दुनियाँ को भी पार करा देता है।

केवल सेवा करने से ज्ञान की प्राप्ति नहीं हुआ करती। एक व्यक्ति गुरूद्वारा बनवाता है या अन्य कोई सांझी वस्तु का निर्माण करता है, यदि उसे संगत ने मान न दिया या उसके स्थान पर किसी और को प्रधान बना दिया तो उसका दिल इतना टूट जाता है कि वह गुरूद्वारे में आना ही बन्द कर देता है। इसमें रहस्य यह था कि वह सेवा से मिले रस का आनन्द लूट रहा था। सेवा की पदवी छिन जाने पर वह झुंझलाहट में पड़ गया। गुरू महाराज जी ने परमेश्वर का नाम सभी बीमारियों का इलाज बताया है।

जब गुरू नानक पातशाह अभी तलवन्डी में ही थे, उस समय आप मौन रह कर लेटे रहते थे। कभी-कभी कोई वस्त्र ऊपर ले लेते और अचानक ही तलवण्डी की जूह में चले जाते, जंगल में चले जाते, जहाँ पर उन दिनों बहुत से साधु आकर निवास किया करते थे। आप हर समय प्यार रस लूटते और अधिकतर चुपचाप रहते। पिता ने समझा कि पुत्र बीमार है। उन्होंने हरिदास वैद्य को बुलवाया। उन्होंने गुरू नानक पातशाह को कई आवाज़ें लगाईं, परन्तु आप चारपाई पर वैसे ही विराजमान रहे। वैद्य जी ने आकर आपके हाथ की कलाई पकड़ कर, रोग देखना शुरू कर दिया क्योंकि सियाने वैद्य नब्ज़ देखकर रोग का अनुमान लगा लिया करते हैं। गुरू नानक पातशाह ने अपनी कलाई खींच लीं और कहा,

"वैद्य जी! क्या बात है? आपने मेरी कलाई क्यों पकड़ी है?" वैद्य जी बोले, "नानक जी! आपके पिता जी ने बताया है कि आप बीमार हैं। हम शरीर के तीन तत्व, पित्त, वाय, कफ का सन्तुलन देख कर बीमारी का पता लगा लेते हैं।" महाराज जी ने कहा, "वैद्य जी! आप कितनी बीमारियों का इलाज जानते हो?" वैद्य जी ने कहा, "99 रोग जिनका चिकित्सा ग्रन्थों में वर्णन है, वे सभी रोग मैं दूर करने की समर्थ रखता हूँ।" गुरू नानक देव जी ने कहा, "मुझे इन रोगों में से कोई भी रोग नहीं है। मेरा रोग आप नहीं पहचान सकेंगे क्योंकि मुझे परमेश्वर के प्यार की धुन लगी हुई है और मैं उस धुन में रहता हूँ।" ऐसा फ़रमान आता है -

वैदु बुलाइआ वैदगी पकड़ि ढंढोले बांह।
भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि॥ पृष्ठ - 1279

वैद्य जी! मेरे सीने में आकर्षण पड़ा हुआ है, इसकी निशानियां महापुरुष बताया करते हैं -

आशकारा नव नीशानी ऐ पिसर, आह सरदो, रंग ज़रदो चशमतर।
कमगु.फ़तनो, कम खुरदनों, खुआबश-हराम, इंतज़ारी, बेकरारी, दसतसर।

प्यार करने वाले, वैरागी पुरुषों की 9 निशानियां हुआ करती हैं। ठण्डे सांस लेते हैं, रंग पीला, नेत्रों में से हर समय प्यार के आंसू बहते रहते हैं, कम बोलते हैं, कम खाते हैं, हर समय प्रतीक्षा में रहते हैं, चित्त सदा बेकरार रहता है, बार-बार मस्तक पर हाथ रखता है। भाई वीर सिंघ जी ने इसके बारे में लिखा है -

सीने खिच जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी,
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥ डा. भाई वीर सिंघ जी

आपने स्वाभावतया की पूछ लिया, "वैद्य जी! आप तो ठीक हैं?" वैद्य जी बोले, "नानक जी! आपने यह प्रश्न मुझ से क्यों किया?" आपने कहा, "इस सृष्टि में गुरू के अतिरिक्त कोई ऐसा नहीं है, जो रोग से बचा हो -

जो जो दीसै सो सो रोगी। रोग रहित मेरा सतिगुरु जोगी॥ पृष्ठ - 1140

परिन्दे, पशु, उड़ने वाले पन्छी, पतंगे सभी रोगी हैं। वैद्य यह सुनकर हैरान रह गया कि आपका शरीर अभी बचपन का ही है परन्तु कितनी महान बात कह रहे हैं। महाराज जी बोले, "वैद्य जी! यह दुनियाँ आपको नज़र आती है। इस दुनियाँ के ऊपर जो सूक्ष्म मण्डल है जिनमें, देव, दानव निवास रखते हैं, वहाँ के वासी भी रोगी हैं। सियानों ने एक ब्रह्मण्ड में 14 तबक गिनाये हैं। 14 तबकों में ही सूक्ष्म, स्थूल तथा कारण किस्म की सृष्टि अस्तित्व में आई है। अत: देवता भी रोगी हैं। राक्षस भी रोगी हैं, सभी मनुष्य भी रोगी हैं। यदि कोई इस संसार में निरोगी है तो केवल सतगुरू है, ब्रह्मज्ञानी महापुरुष हैं।" वैद्य दंग रह गया और कहने लगा, "जहाँ आपने यह भेद भरे रहस्यवादी वचन कहे हैं तो वहाँ पर यह भी बताने की कृपा करें कि मैं कौन से रोग का शिकार हूँ?" महाराज जी ने कहा, "रोग मन से शुरू होते हैं। पहले मन रोगी होता है फिर तन रोगी हो जाता है। जब परमेश्वर ने सृष्टि की रचना की तो सबसे पहले 'मैं' तत्व (अहम्भाव) की उपज हुई, जिसमें महतत्व की उपज होकर हउमैं कहलाया। उसके पश्चात जो कुछ भी पैदा हुआ, वह सारा हउमैं तत्व से ही वजूद में आया। हउमैं एक रोग है। हउमैं रोग होने के कारण सारी सृष्टि रोगी है। समुच्वता में से अलगपन महसूस करना जिसे

माया तथा मेरी की भावना कहते हैं, हउमैं रोग कहलाता है। हउमैं रोग के कारण ही मनुष्य जन्मता और मरता रहता है और भटकता फिर रहा है। जब तक हउमैं रोग का इलाज नहीं होता, तब तक माया के बन्धनों से छुटकारा नहीं हो सकता –

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि॥
हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि॥ पृष्ठ – 466

जब हउमैं का नाश हो जाता है तो अज्ञान का मोतियाबिन्द जो नेत्रों में आकर दिव्य दृष्टि बन्द कर देता है, वही दिव्य दृष्टि पुनः प्राप्त हो जाती है। जैसा कि फ़रमान है–

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।
एहु विसु संसारु तुम देखदे एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ॥ पृष्ठ – 922

मेरा ख्याल है, वैद्य जी! आप यह बात समझ गये होंगे, वाहिगुरू का रूप होता हुआ भी संसार इसीलिये भासित होता है। इस सूझ के कारण देखने वाले नेत्रों को मोतियाबिन्द हो गया और दिव्य दृष्टि बन्द हो गई। कहा जाता है कि सावन के महीने में अन्धे हुए व्यक्ति को सभी कुछ हरे रंग का ही दिखाई देता है। वैद्य जी! मोतिया का इलाज ज्ञान अंजन है। जो समरथ सतगुरू के पास होता है। जब गुरू की कृपा द्वारा हउमै का अन्धापन दूर हो जाता है तो यहाँ एक ही वाहिगुरू जी का अपने आप से ही किया गया प्रसार ही भासित होता है। जब असली वस्तु ब्रह्म ही सभी जगह रमा हुआ, सभी रूपों, रंगों, जीवों में दिखाई देना शुरू हो जाये। वैद्य जी, इसे दिव्य दृष्टि की प्राप्ति कहा जाता है। महाभारत के युद्ध में कृष्ण जी ने अपना विराट रूप अर्जुन को दिखाया क्योंकि उसे दिव्य दृष्टि प्राप्त हो चुकी थी। इसी प्रकार संजय ने महाभारत का सारा हाल धृतराष्ट्र को बताया था। दृष्टि का दोष दूर हो जाने पर सभी कुछ एक ही दिखाई देता है।

गुरू नानक पातशाह कहने लगे, ''इस तरह से वैद्य जी! दूसरा रोग निन्दा का हुआ करता है। किसी की उन्नति देखकर या उसके प्रताप को देखकर, उसके बारे में किसी दूसरे के पास जाकर उसके खिलाफ बोलना।'' महापुरुषों की निन्दा का दोष बहुत हुआ करता है –

साध का निंदकु कैसे तरै। सरपर जानहु नरक ही परै॥ पृष्ठ – 875

परन्तु किसी आम व्यक्ति की निन्दा करना भी गुरू घर में वर्जित है –

निंदा भली किसे की नाही मनमुख मुगधु करंनि।
मुह काले तिन निंदका नरके घोरि पवंनि॥ पृष्ठ – 755

कोई व्यक्ति चाहे कितने ही हस्पताल क्यों न बना ले, लंगर चला ले, बेअन्त दान कर ले, बेअन्त धन दौलत बांट दे, उसका जो पुण्य प्राप्त होता है, वह निन्दा करने से पूरी तरह से खत्म हो जाता है –

जे ओहु अठसठि तीरथ न्हावै। जे ओहु दुआदस सिला पूजावै।
जे ओहु कूप तटा देवावै। करै निंद सभ बिरथा जावै।
साध का निंदकु कैसे तरै। सरपर जानहु नरक ही परै।
जे ओहु ग्रहन करै कुलखेति। अरपै नारि सीगार समेति।
सगली सिंम्रिति स्रवनी सुनै। करै निंद कवनै नही गुनै।
जे ओहु अनिक प्रसाद करावै। भूमि दान सोभा मंडपि पावै।
अपना बिगारि बिरांना सांढै। करै निंद बहु जोनी हांढै।

निंदा कहा करहु संसारा। निंदकु का परगटि पाहारा।
निंदकु सोधि साधि बीचारिआ। कहु रविदास पापी नरकि सिधारिआ॥ पृष्ठ - 875

इसलिये यह भी बहुत भयानक रोग है। यहाँ तक बताया है कि निन्दक की कोई औषधि भी नहीं है। निन्दा करने वाले का तो कुम्भी नरक में वास होता है। इसी प्रकार चुगली भी बड़ी बीमारी है। चुगलियों के कारण ही बहुत सी लडाईयां हो जाती हैं। इन रोगों को वमन का रोग कहते हैं। जिस प्रकार किसी को हैज़ा हो जाता है, वह उलटियां करने लग जाता है, इसी तरह से यह कै (उलटी) की तरह की बीमारी है। चुगली निन्दा की छोटी बहन है। हउमै को कोढ़ कहा गया है। वैद्य जी! इनके साथ की मिलती जुलती बीमारी ईर्ष्या हुआ करती है। किसी को उन्नति करता देखकर सहन न होना, किसी के पुत्र अच्छी पढ़ाई करके, अच्छे पद पर पहुँच जायें, उन्हें देखकर खींझते रहना और अपना नुक्सान करते जाना। यह बहुत बड़ी भूल है। एक तरफ तो पाठ करते हैं, बाणी पढ़ते हैं तथा ऐसे बहुत से धर्म कर्म करते हैं, दूसरी ओर किसी दूसरे को ऊँचा उठता देखकर ईर्ष्या से जलते रहते हैं। इस प्रकार ये बीमारियां पुण्य कर्म, फल नहीं दिया करतीं बल्कि पुण्यों का नाश हो जाता है।

ईर्ष्या करने वालों का हृदय कमल उलटा हो जाता है तथा हृदय जलता रहता है। शरीर के नरोए अंगों में जलन पैदा हो जाती है, चेहरे की सुन्दरता नष्ट होकर झुर्रियां पड़ जाती हैं। इस जलते हुए हृदय में प्रभु ज्ञान, प्यार पैदा होना तो एक तरफ रहा, वह किसी से भी प्यार नहीं कर सकता। अन्दर ही अन्दर जलता रहता है, जीवन केवल 'जलन' ही बन जाता है -

जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला॥ पृष्ठ - 308

महाराज जी कहते हैं कि ईर्ष्या करने वाले का कभी भी भला नहीं हुआ करता। ये जो हुक्म हैं, ये धुर दरगाह के हुक्म हैं। इन्हें आखों से ओझल करके, हम उनके दोषों से बच नहीं सकते और न ही कभी भला होता है।

सो वैद्य जी! जरा विचार करो, कितनी भयानक बीमारियां हैं। इनके बाद जिसे High fever (तेज़ बुखार) कहते हैं, वह तृष्णा का रोग है। मनुष्य वासनाओं के अधीन है, वासनाओं की पूर्ति के लिये मांगता रहता है। कोई पुत्र मांगता है। जिसके लड़के या लड़की को वधु या वर प्राप्त नहीं हुआ, वह वधु और वर मांगता फिरता है। धन कमाता है, उसे सन्तोष नहीं होता। जैसा कि बाणी में फ़रमान है -

एह तिसना वडा रोगु लगा मरणु मनहु विसारिआ॥ पृष्ठ - 919

इसी प्रकार आशा, तृष्णा, नफरत करना आदि अनेक बीमारियां हैं, जिनका बोझ मन सहन नहीं कर सकता और बीमार हो जाता है। मन के बीमार होते ही, शरीर में भी रोग लग जाते हैं। इस प्रकार गुरू महाराज जी ने मानसिक बीमारियों तथा अन्य दोषों, कमियों का उल्लेख किया है। तब वैद्य जी श्रद्धा से भर आए तब कहने लगे, "हे नानक जी! आप पान्धे के पास पढ़ने गये, उसे विद्या पढ़ा आये, आप मौलवी के पास गये तो उसे सच का राह बता दिया। अब मुझ पर भी कृपा करो। बीमारियों के बारे में तो आपने बता दिया, अब यह भी बताओ कि इनका कोई इलाज भी है?"

गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया, "वैद्य जी! सभी रोगों की जड़ मन में हुआ करती है। ऐसे कह लो अन्तसकरण में हुआ करती है, जिसके फलस्वरूप चित्त भी दुख महसूस करता है, बुद्धि भी पीड़ित रहती है, मन में अनेक प्रकार की परेशानियां रहती हैं और मन के विचार नकारात्मक हीनता की ओर बढ़ने लगते हैं और मन उदास रहने लग जाता है। जब मन रोगी हो गया तब फिर शरीर का नम्बर

आता है। शरीर को शक्ति प्रदान करने वाला आनन्द, चाव, हुलारा, खुशियों का इन पर बहुत प्रभाव पड़ता है। जब खुशी के स्थान पर मन में सोग (दुख) रहना शुरू कर दे, उदासी रहने लग जाये, तो मन गिरावट में प्रवेश कर जाया करता है, उस समय आत्मिक शक्ति या चढ़ती कला की भावना कम हो जाया करती है और शरीर में अनेक बिआधि पैदा होने लग जाती हैं। यह केवल, जो मन के रोग मैंने तुम्हें बताए हैं, मन में उदासी पैदा करते हैं, इसके अतिरिक्त भाईचारे के रोग तथा सामाजिक रोग हैं, आर्थिक कमी के रोग हैं, कारोबार में सफलता न होने के कारण मन पर असर पड़ता है। राजसी प्रभाव मन को सदा घेरे रखता है, शारीरिक चाल में, दुनियावीं कारोबार में विघ्न खड़े हो जाते हैं, कोई इलाज नहीं हो पाता। आधि, बिआधि, उपाधि अर्थात आध्यात्मिक, आदिभैतिक, आदि दैविक तीन प्रकार के दुख हैं। अव्यक्त हस्तियों द्वारा डाले गये विघ्न तथा अन्य अनेक प्रकार की परेशिानियाँ, जब मनुष्य के सामने आकर खड़ी हो जाती हैं, इनका प्रभाव पहले चित्त पर पड़ता है, फिर बुद्धि पर और मन पर पड़ता है। मन पर पड़ने से प्राणों का सन्तुलन बिगड़ जाता है, प्राणों का सन्तुलन बिगड़ने से शरीर के तत्व, पित्त, वाय, कफ, गर्मी मर्यादा छोड़ देते हैं। इन सभी बातों का प्रभाव दिमाग पर पड़ता है। जब दिमाग का सन्तुलन बिगड़ जाता है तो उस समय नियन्त्रण करने की शक्ति क्षण भंगुर हो जाया करती है। उस समय इनका प्रत्यक्ष अनुभव शरीर के रोगों में प्रकट हो जाता है। वैद्य जी! इसलिये मैं यह कहता हूँ कि सारे रोग दिमाग की कमज़ोरी के कारण ही होते हैं जिसे हम आम बोली में कह देते हैं कि पहले मन रोगी होता है फिर तन रोगी होता है। प्रभु ने सृष्टि बनाते समय इन सभी रोगों का इलाज भी इसी शरीर में रखा हुआ है और उस समूची दवाई को हम 'नाम' कहते हैं। फ़रमान है –

हरि अउखधु सभ घट है भाई। गुर पूरे बिनु बिधि न बनाई।
गुरि पूरै संजमु करि दीआ। नानक तउ फिरि दूख न थीआ॥ *पृष्ठ - 259*

नाम का मार्ग समरथ गुरू के बिना प्राप्त नहीं हुआ करता और समरथ गुरू जब नाम मार्ग पर जिज्ञासु को डालता है, उस समय इस मनुष्य को संयम में आना पड़ता है। इस संयम में कुछ ऐसे कर्म हैं, जिन्हें करने से बुरा प्रभाव पड़ता है। ऐसे कर्म करने की मनाही कर दी जाती है, पूरी तरह से पाबन्दी लगा दी जाती है कि ऐसा काम कोई नहीं करना। जैसे हिंसा है, – शारीरिक दृष्टि से दूसरे को नुकसान पहुँचना, बाणी द्वारा, मन द्वारा, बुद्धि की चतुराईयों द्वारा और अपनी आत्मिक सत्ता द्वारा जो प्रभाव है, वह जीवन के सन्तुलन को पूरी तरह से बिगाड़ कर रख देता है। चोरी करना है, चोरी केवल पदार्थो की ही नहीं हुआ करती, किसी कि विद्वता की चोरी करना, किसे के वचनों की चोरी कर लेना, पुस्तकों में से विचारों की चोरी करके अपने बना कर लिखना, धन चोरी करना। दूसरे के रूप को मन्द भावना से देखना, ये सभी चोरी में ही आ जाते हैं। इन्हीं के साथ मिलती-जुलती चीज़ें, काम, क्रोध, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली में प्रवृत्त हो जाना। इसी तरह से मनुष्य का फीका बोलना, मर्यादा के विपरीत भोजन करना, मन में वैर भाव रखना, अपवित्र विचार रखना तथा अन्य बहुत से कुकर्म इसमें शामिल हो जाते हैं। यह संयम है जिसका पालन करना बहुत ही जरूरी होता है। जैसा कि वैद्य लोग आम कहा करते हैं कि जो दवाई मैं तुम्हें दे रहा हूँ, इसके साथ खट्टी चीज़ नहीं खानी, मिर्च, अचार आदि का परहेज़ रखना है। इनमें जो 'नहीं' पक्ष है, उन पर पूरी तरह से ध्यान रखना है। इसके उलट जिस पक्ष का पालन किया जाता है, जो इस नाम दवाई को पूरी तरह से प्रयोग में लाता है, उसे मैं चन्द शब्दों में तुम्हें बताता हूँ। वह पक्ष है कि मन, तन, चित्त, वचन में हिंसा न आने देना। अपने जीवन को सत्य वृत्ति बनाना। किसी की पराई वस्तु को अपनी बनाने की भावना न रखना, मोटे शब्दों में चोरी न करना, मन में से काम वासना

खत्म करके, *'एका नारी जती होइ, परनारी धी भैण वखाणै'* का व्रत पालन करना, सुख दुख में जल्दी न करना इसके विपरीत धैर्य धारण करना, शान्त चित्त होकर अपनी कठिनाई का हल ढूँढना। एक और सुनहरी गुण है जिसे क्षमा कहते हैं। दूसरे के अवगुण देखकर अपने मन में मन्द वासना न आने देना बल्कि यह सोचना कि इसका भला कैसे हो सकता है। संसार में बहुत से लोग कई मन्द (बुरे) कर्मों के कारण दुखी होते हैं, कुछ वैसे ही अपने हालातों के अनुसार, कोई रास्ता न मिलने के कारण दुखी हो जाते हैं। जहाँ तक भी हो यथा शक्ति हमदर्दी दिखाना। बहुत से लोगों का स्वभाव है कि बोलते समय वे यह नहीं देखते कि मेरी बातों से किसी का दिल तो नहीं दुखी होगा। बोलने का भी एक दूसरे पर बहुत प्रभाव पड़ता है। आप किसी को बुरा कह दो, उसके ऊपर कोई दोष लगा दो, उसके साथ फीका बोल दो, उसका दिल टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा। वैद्य जी! आपको तो पता होगा कि महाभारत के युद्ध में परस्पर वैर भाव बढ़ाने वाला एक कारण, द्रौपदी का दुर्योधन से फीका बोलना भी था। फीका बोलने वाला स्वंय फीका हो जाता है, उसके अन्दर नाम का प्रभाव खत्म हो जाता है। इसलिये मीठा बोलना चाहिये जो दूसरे के मन को शान्त करे। मन में कठोरता न आने देना, मीठा बोलना चाहिये। उसके अन्दर सबके भले की भावना होनी चाहिये। यह कोमल हृदय की निशानी होती है। इसके अतिरिक्त जीवन में सोना, जागना, काम करना, पढ़ाई लिखाई का काम करना, भोजन खाना, व्यायाम करना, ये सभी कार्य मर्यादा के अनुसार करने चाहियें। बुद्धि में पवित्रता लाने के लिये तत्ववेत्ता महापुरुष की संगत करना तथा सत-शास्त्रों का विचार करना। सत-शास्त्र उन हृदयों में से साकार होते हैं जो सत्य से जुड़े रहते हैं और सत्य को परिपूर्ण प्यार करने वाली महान शक्ति समझते हैं, उनकी संगत सत्संग कहलाती है।

ये जो उपयुर्क्त संयम आपको बताए हैं, उन्हें शास्त्रीय भाषा में यम कहा जाता है। इसी तरह से नेम हुआ करते हैं। उनके अन्दर तप हुआ करता है। तप केवल आग सेकना या पानी में घन्टों खड़े रहना, भूखे रहना, काटों के ऊपर सो जाना, बिना मर्यादा के बातें करना आदि को ही नहीं कहते। तप शरीर, मन, बुद्धि, चित्त के साथ सम्बन्ध रखता है। शारीरिक नियमों को समक्ष रखते हुए भजन बन्दगी करना। मानसिक तप में मन को कुकुर्मों तथा बुरे विचारों से रोकना। बेकार की उड़ानों से रोक कर शबद में स्थिर करना, वृत्ति को नाम में टिकाना समरथ गुरू जो मन्त्र देता है, उसकी साधना, एक मन, एक चित्त लगाकर करना। दूसरे के लिये वैर भाव, मन्द भावना अन्दर न रखना, इसे मानसिक तप कहा जाता है। मन में तृष्णा की आग जलती रहती है जो किसी विरले की ही बुझती है। यह शरीर को जलाकर, राख बना देती है। शरीर केवल 'ईंधन' बन जाता है। इसका केवल एक ही इलाज सन्तोष है। जी तोड़ परिश्रम करना, प्रभु की रज़ा से जो कुछ हाथ में आ गया, उसी में सन्तुष्ट रहना। मन को अन्य प्रकार की इच्छाओं में भटकनें न देना। आखों का भी सन्तोष हुआ करता है कि पराई वस्तुओं, पराया रूप देख कर, पराये तन को प्राप्त करने के लिये ललचाते रहना, इससे मन को रोके रखना, यह मन का सन्तोष हुआ करता है। अपनी सारी इन्द्रियों को मर्यादा में रखना तथा इनसे यथा शक्ति कार्य लेना यह मन तथा शरीर का तप हुआ करता है। वैद्य जी! सबसे जरूरी जो नियम है, वह यह है कि मनुष्य को परमेश्वर पर पूरा भरोसा होना चाहिये और उसे पता होना चाहिये कि परमेश्वर कौन है? कैसा है? उसका हमारे साथ क्या सम्बन्ध है? यह ज्ञान, पूर्ण महापुरुषों की संगत करने से प्राप्त हो जाता है और आस्तिक बुद्धि हो जाया करती है। नास्तिक बुद्धि मन को किसी तरह से भी सन्तुलन में नहीं आने देती, ऐसे समझ लो कि यह एक प्रकार से बारूद का गोला है, जब वह फटता है तो बहुत भयंकर नुकसान कर देता है। नाम मार्ग पर चलने के लिये आस्तिक बुद्धि, होना आवश्यक है। जिस प्रकार वेदों, शास्त्रों, कुरान शरीफ,

उपनिषदों तथा अन्य महापुरुषों की मत से सम्बन्ध रखने वाली शिक्षाओं को सत्य-सत्य करके मानना। इन पर किन्तु तथा सन्देह करना, नास्तिक बुद्धि हुआ करती है। इनको पूर्ण आदर भाव से मानना, आस्तिक बुद्धि हुआ करती है। इसके आगे और भी संयम है जो बहुत जरूरी है। मेहनत द्वारा जो धन प्राप्त हो, उसे अपनी जरूरत के अनुसार खर्च करके जो कुछ बचता हो, उससे दूसरे की सहायता करना दान कहलाता है। भूखे को भोजन खिलाना, बीमार को दवाई दिलवाना, किसी मज़बूर व्यक्ति की धन आदि से सहायता करना। मानसिक दान में - किसी को विद्या देना, शुभ मति देना आदि हुआ करती है। यदि परमेश्वर ने कोई सत्ता दी है, सूझ बख्शी है, उसका प्रयोग करके जीवों को सीधे रास्ते पर चला देना, नाम मार्ग पर चला देना श्रेष्ठ दान हुआ करता है, इसे जीअ दान भी कहते हैं। वैद्य जी! ये संयम हैं जिनका पालन करना बहुत ज़रूरी हुआ करता है। वैसे आम विश्वास तो यह होता है कि पैसे-टके के दान को ही दान कहते हैं। परन्तु इसके भी कई भेद हैं। एक दान वह होता है जो दूसरे के कहने पर अपनी समर्थ से अधिक दान कर देना और मन में विचार आना कि ऐसे ही दान कर दिया, इसे क्रोध दान कहते हैं, यह तमोगुणी दान होता है, इससे चित्त में क्रोध आता है, चित्त अशान्त हो जाता है। दूसरा - मनुष्य में लालसा छिपी रहती है कि मेरा नाम बड़ा हो, उसे पाने के लिये कोई बड़ा दान करना, माया की सहायता देना और यह आशा रखना कि मुझे दान लेने वाले याद रखें। धार्मिक मन्दिरों में दान करके पत्थर लगवाने, यह भावना हुआ करती है कि मुझे लोग बहुत अच्छा कहें। यह भावना भी नाम मार्ग पर नहीं चलने देती। यह राजसी दान हुआ करता है। एक सान्तकी दान हुआ करता है। यह केवल धन का ही नहीं हुआ करता, इसमें मधुर भाषा बोलना जैसे किसी बीमार को अच्छा उपदेश देकर उसके डांवाडोल मन को शान्त करना। इसे बाणी का दान कहते हैं। आम तौर पर महापुरुष यही दान प्रायः करते रहते हैं। मन का यह स्वभाव है कि दिखाई देने वाली वस्तुओं में, किसी से तो प्यार करता है, किसी से द्वैष रखता है। समष्टि रूप में यह भावना मन में रखते हैं कि हे वाहिगुरू! बेअन्त मत हैं जो अनेक आचार्यों, महापुरुषों ने प्रचलित किये हैं, तू इन सभी पर दया कर और इन सभी का उद्धार कर। जैसा कि फ़रमान है -

जगतु जलंदा रखि लै आपणी किरपा धारि।
जितु दुआरै उबरै तितै लैहु उबारि॥ *पृष्ठ - 853*

इससे भी श्रेष्ठ नियम है कि किसी का बुरा न मांगे। पवन, पानी, हवा, बैसन्तर सभी का भला चाहता हुआ, अपना जीवन व्यतीत करे। प्रार्थना करता रहे कि सर्वस्व का भला हो। अनाज पैदा हो, वातावरण दूषित न हो, सभी जीवों को शुद्ध वायु मिले, ये बातें सरबत (सर्वस्व) के भले में आ जाती हैं। जब ये भावनाएं मन में आ जाएं, फिर संसार से प्यार हो जाया करता है। बहुत अधिक सुन्दर हो, उच्च कुल का हो, मुख से ज्ञान की बातें करने वाला है, यदि उसके अन्दर जीवन की रौ नहीं रूमकती तो वह मुर्दा हुआ करता है। मुर्दा सड़ान्ध पैदा करता है, दूसरों को भी दुखी करता है -

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत।
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥ *पृष्ठ - 253*

ये सारी बातें दान में आ जाती हैं। आत्मिक दान सबसे श्रेष्ठ है। किसी जीव को आत्मिक ज्ञान करवा कर उसका जन्म मरण कटवा देना, यह अति उत्तम दान है। वैद्य जी! इसी तरह और भी कई संयम हैं, जिनमें पूजा करना भी शामिल है। वह यह है कि अन्तर्तात्मा में गुरू का ध्यान धरना और गुरू

की मानसिक पक्ष से पूजा करना। इसी प्रकार बाहरी पूजा भी हुआ करती है परन्तु आन्तरिक पूजा अधिक श्रेष्ठ होती है, जिसे आम बोली में उपासना भी कहते हैं। हम सत शास्त्रों का अध्ययन करें, जो पूरी तरह से जो सत्य सिद्धान्त हैं, उनको अपने जीवन में अपना कर, उनका पालन करें। सत शास्त्र और बाणी का पाठ करें। सबसे आवश्यक संयम है जिसका पाखंड के साथ वासता पड़ता है। मनुष्य के अन्दर यह रूचि होती है कि मुझे सभी जानें। धार्मिक व्यक्ति चाहते हैं कि मेरा सभी जगह आदर मान हो। इस मान की प्राप्ति के लिये वे एक खास रूप रेखा तैयार कर लेते हैं। भेष धारण कर लेते हैं, जीवन रौ से रिक्त रहकर भेष धारण करना, दम्भ करना, पाखण्ड करना इसमें शामिल है। दम्भ रहित जीवन व्यतीत करना, सहज से जैसा व्यक्ति है, उसी तरह का जीवन व्यतीत करना। कोई विशेष रूप, भेष धारण न करना। यह मानसिक सन्तुलन की निशानी हुआ करती है। ऐसा करने से नाम मार्ग में उन्नति होती है। अन्य आन्तरिक गुण हैं कि वृत्ति राजसी भी होती है, तामसी भी होती है। ये नाम में विघ्नकारी हैं। इसके विपरीत सान्तकी वृत्ति रखना, विनम्र रहना, प्यार की भावना रखना, ये सान्तकी वृत्ति के लक्षण हैं। वैद्य जी! जब पूरा सतगुरू मिलता है तो वह संयम के बारे में बताता है। जब परमेश्वर का नाम लेना है तो मन स्थिर एवं दृढ़ रहना चाहिये। मन में किसी प्रकार का कोई फुरना नहीं आना चाहिये। मन को फुरनों से रोक कर अडिग अवस्था में रखना, यह नाम मार्ग पर चलने के लिये सहज साधन है। इस प्रकार संसार में कोई भूखा है, दुखी है, उनके दुख की निवृत्ति के लिये, भूखे को अन्न देना, बीमार को दवाईयां देना, नंगे को वस्त्र देना, दुखी व्यक्तियों को नाम की महिमा सुनाना तथा हउमै रोग को दूर करने के लिये नाम मार्ग के प्रयोग का सही रास्ता बताना होम कहलाता है। इसी संयम में सुनना, फिर मानना और फिर साधन सम्पन्न होना, लक्ष्य की प्राप्ति करने के लिये, सभी को नाम मार्ग से सम्बन्धित कहा जाता है। जब भी कोई प्राणी पूरी तरह से संयम धारण करके नाम मार्ग पर चलेगा तो उसे सपने में भी रोग नहीं लगेगा। अत: वैद्य जी! समुच्चय तौर पर यदि इसका सैद्धान्तिक रूप में निर्णय लेना हो तो इसे ही नाम कहते हैं। नाम की जो आखरी सीमा है वह है नाम का ज्ञान हो जाना। अपने छोटे से अपनत्व (आपे) को परम अपनत्व में लीन कर देना और माया के छल से ऊपर उठकर आत्म आनन्द लूटना। सदा ही परमेश्वर में लीन रहना, प्रभु को हाज़िर-नाज़िर समझना, यही नाम है। यहाँ पर एक बात और बतानी बहुत जरूरी है कि यह जीव है तो परमेश्वर का रूप, पर यह परमेश्वर का रूप होता हुआ, परमेश्वर नहीं हो सकता। उस समय तक जब तक प्रभु इस पर कृपा दृष्टि का करिश्मा न कर दें और इसे खींच कर अपने आपे में अभेद न कर लें। केवल यह कहना कि मैं ही ब्रह्म हूँ, यह एक छोटे से निजित्व (आपे) की सूझ है, परम आपे (निजित्व) की सूझ नहीं। जब यह परम आपे में लीन हो जाता है, फिर नहीं कहता कि मैं ब्रह्म हूँ क्योंकि वहाँ पर ज्ञान होने से प्रकाश हो जाता है। अन्धेरे में पड़ी हुई रस्सी जो साँप प्रतीत हो रही थी, वह सत्य प्रतीत होने लगती है। रस्सी को साँप कहना, यह अनुपयुक्त बात है, रस्सी तो रस्सी ही है। इसी प्रकार यह जीव जब हउमै रोग से मुक्त होकर, परमतत्व में लीन हो जाता है, फिर यह ऐसे नहीं कहता कि मैं ब्रह्म हूँ क्योंकि वह तो है ही ब्रह्म, उसे क्या सन्देह हो गया कि मैं ब्रह्म हूँ। वैद्य जी! जो वचन मैंने आपके साथ किये हैं, उन पर पूरी श्रद्धा धारण करो।''

ये बातें सुनकर वैद्य जी पूर्ण श्रद्धा से भर गये। तब उसने पूर्ण श्रद्धा के साथ गुरू नानक के चरणों में नमस्कार की और प्रार्थना की, ''जिस प्रकार आपने औरों को सही रास्ते पर लगाया, मुझ पर भी कृपा करो। नाम मार्ग पर चलने की युक्ति अनुसार सूझ-बूझ तथा शक्ति प्रदान करो ताकि मैं भी सभी रोगों से मुक्त हो जाऊँ।''

साध संगत जी! हमें इस विषय पर और विचार करने की जरूरत है क्योंकि यह तो एक साधन पक्ष बताया था, इससे संशय निवृत्त नहीं होते। यदि मनुष्य में पूर्ण श्रद्धा आ जाये फिर तो सारे दुखों का खातमा कर सकता है पर मन में बहुत सा कूड़ा कर्कट भरा पड़ा है। जब तक वह साफ नहीं होता तब तक हम नाम मार्ग पर नहीं चल सकते। अन्तसकरण एक हौज़ की तरह होता है, जिसमें अनेक प्रकार की गन्दगी की तहें ही तहें जमा हो जाती हैं और जीव को हउमै रोग लग जाने से ये जीवन में अज्ञान पैदा कर देती हैं। महाराज जी ने फ़रमान किया है -

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु॥
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥ पृष्ठ - 651

सृष्टि की रचना के बारे में सभी विद्वान पुरुष अपने-अपने विचार प्रकट करते हैं -

आपु आपुनी बुधि है जेती। बरनत भिंन भिंन तुहि तेती।
तुमरा लखा न जाइ पसारा। किह बिधि सजा प्रथम संसारा॥ कबयो बाच बेनती चौपई

परन्तु आम राय जो शास्त्रों में प्रचलित है, वह यह है कि इस संसार में दो अनादि तत्व हैं, एक को चेतन तत्व कहा गया है, दूसरा इसके विपरीत स्वभाव वाला प्रकृति तत्व है। चेतन तत्व की परछांई (शक्ति), जब जड़ तत्व पर पड़ती है, उस समय उसमें से तीन चीज़ें पैदा होती हैं। पहला, जड़ तत्व में से सूझ पैदा होती है, जिसे महतत्व कहते हैं, बुद्धि कहते हैं, जाग्रत कहते हैं। इस बुद्धि तत्व में से मैं और मेरी की भावना पैदा होती है, जिसे हउमै कहा जाता है। हउमै प्रकृति का अभिन्न अंग है, इस प्रकृति को माया, अज्ञान, अविद्या आदि भी नाम दिये गये हैं। ये सभी जड़ तत्व हैं। इन विद्वानों का मत है कि महतत्व से पाँच सूक्ष्म भूत शब्द, स्पर्श, रूप, रस गन्ध अस्तित्व में आते हैं। पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियां, पाँच प्राण, पाँच स्थूल भूत अस्तित्व में आते हैं, जिनके द्वारा अनेक रूपों, रंगों की सृष्टि की रचना होती है पर गुरू महाराज जी का यह सिद्धान्त नहीं है। उनका सिद्धान्त केवल एक ही तत्व जिसे वाहिगुरू कहते हैं या ऐकंकार कहते हैं, वही है, दूसरा कोई नहीं। इसे प्रकट करने के लिये आपने मूल मन्त्र में कहा -

१ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरु।
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥ जपु॥
आदि सचु जुगादि सचु।
है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ पृष्ठ - 1

यह सारी रचना परमेश्वर ने स्वंय अपने आप में से की, स्वंय ही नाम प्रकट किया, स्वंय ही माया प्रकट की, जैसा कि फ़रमान है -

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ।
दाता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ।
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ।
करि आसणु डिठो चाउ॥ पृष्ठ - 463

सबसे पहले हउमै तत्व की उपज हुई। हउमै तत्व से त्रिगुणी माया प्रकट हुई जिसमें रजो, तमो, सतो तीन लहरें शामिल हैं, फिर क्रमवार सृष्टि की रचना हुई। इस हउमै ने समिष्टता (समुच्चता) को व्यष्टिता (विभिन्नता) में बदल दिया। इस समुच्चय प्रभु के प्रसार को एक रूप न देखते हुए, अलग-अलग देखना, हउमै के कारण ही होता है। यह हउमै ही सारे दुखों का मूल है। यदि हउमैं का नाश हो जाये

तो कोई भी दुख नहीं रह जाता। ऐसी दृष्टि प्राप्त हो जाती है कि अपने आप भी और सारा संसार भी पारब्रह्म परमेश्वर का रूप अनुभव होता है जो कि सत ज्ञान है।

गुरू नानक पातशाह, जब सुमेरू पर्वत पर सिद्धों के पास गये तो वहाँ गोरख नाथ, चरपट नाथ तथा अन्य सिद्धों के पास भी गये, जिन्होंने अपनी आयु रिद्धियों-सिद्धियों, प्राणायामों के साधन करके बहुत बढ़ा ली थीं। उनका मत प्राणायाम पर आधारित था। गुरू नानक पातशाह नाम मार्ग को सही बताते थे। नाम मार्ग की सीढ़ी हर स्थान पर प्रभु को देखने की हुआ करती है। उन्होंने गुरू नानक पातशाह से सवाल किया, ''हे नानक! तुम कहते हो कि यहाँ पर सभी जगह परमेश्वर है और कोई है ही नहीं, ऐकंकार का ही प्रसार है, हम तेरे इस मत से सहमत नहीं हैं। हम कहते हैं कि दो तत्व हैं एक चेतन और एक प्रकृति। प्रकृति में चेतन की परछाई पड़ने से एक महतत्व हुआ जिसमें से अहमभाव पैदा हुआ। प्रकृति तत्व जिसमें से जब awareness आती है, उस समय वह जाग्रत हो जाती है। दूसरी क्रियाशीलता है, तीसरा उसमें नियम आ जाता है, वह इस तरह नियम बद्ध हो गई। प्रकृति जो दुखों का कारण है, वह परमेश्वर के विपरीत तत्व है और तुम जो यह कहते हो कि एक ही प्रभु अनेक रूपों में खेल रहा है तो यह बताओ कि संसार कैसे बन गया और दुख कैसे बन गये? आपने कहा, ''नाथ जी! संसार हउमै तत्व के कारण प्रतीत हो रहा है। सत अवस्था यह है कि परमेश्वर स्वंय ही अपनी महिमा में प्रवृत्त हुआ खेल कर रहा है। इस ज्ञान को भूल कर शरीर में जो ज्ञान है उसने 'मैं' का अलगपन रूप धारण कर लिया जिसे हम हउमैं कहते हैं। हउमैं के कारण ही सारे दुख पैदा हो गये। प्रश्न यह था -

कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा कितु कितु दुखि बिनसि जाई।
हउमै विचि जगु उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखु पाई॥ *पृष्ठ - 946*

दुखों का मूल कारण हउमै है, जब तक इस शरीर में से नाम प्रकट नहीं होता, तब तक दुखों का खातमा नहीं हुआ करता। हउमै के नाश होने पर ही दिव्य दृष्टि प्राप्त हुआ करती है, जिसे तीसरा तिल, बिअन्न अखंड़ियां, त्रिनेत्र आदि-आदि अनेक नामों से बताने का यत्न किया जाता है। ऐसे समझ लो कि एक आदमी को मोतियाबिन्द हो गया है। उसके नेत्रों की चमक जाती रही, दिखाई देना बन्द हो गया। वह अपने अनुमान से ही चीज़ों की चितवना करता है। उनकी विलक्षणता को देखता है, जैसे हाथी को कई सूरमाओं (अन्ध दृष्टि वालों) ने देखा और बहस करने लगे कि हाथी तो थम्ब की तरह होता है क्योंकि उस व्यक्ति ने हाथी की टांग को ही हाथ लगाकर देखा था। जिसके हाथ में सूंड लगी, उसने कहा हाथी बहुत कोमल होता है। जिसके हाथ में दाँत आयें, वे कहते हैं हाथी तो बहुत कठोर चीज़ है। जिसने पेट को हाथ से स्पर्श किया उसने कहा कि हाथी तो एक ढेर की तरह है। यह सब इसलिये हुआ क्योंकि दृष्टि प्राप्त नहीं थी। जब गुरू का ज्ञान अन्जन नेत्रों में पड़ जाता है तो दोष दृष्टि दूर हो जाती है, सत दृष्टि प्राप्त हो जाती है और सत अवस्था प्राप्त हो जाती है और हर स्थान पर पमेश्वर ही रमा हुआ नज़र आता है। इसकी प्राप्ति को नाम कहा जाता है।

हउमै तत्व के कारण ही संसार दिखाई देता है। हउमै का नाश हो जाये तो यही संसार परमेश्वर का रूप दिखाई देता है। जब तक हउमै तत्व है, तब तक अपने पराये, अच्छे बुरे दृष्टि में आते ही रहते हैं पर जब इसका नाश हो जाता है तो उस समय एक ही परमेश्वर नज़र आता है या ऐसे कह लो अपना आपा ही नज़र आता है। अत: सारी विचार का सार यह है कि हउमै तत्व के कारण ही संसार दिखाई देता है, जब हउमै का नाश हो जाता है फिर -

गुरहि दिखाइओ लोइना।
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना॥ *पृष्ठ - 407*

महापुरुषों का ऐसा मत है –

अवलि अलह नूरु उपाइआ कुदरति के सभ बंदे।
एक नूर ते सभु जगु उपजिआ कउन भले को मंदे।
लोगा भरमि न भूलहु भाई।
खालिकु खलक खलक महि खालिकु पूरि रहिओ स्रब ठांई।
माटी एक अनेक भांति करि साजी साजनहारै।
ना कछु पोच माटी के भांडे ना कछु पोच कुंभारै।
सभ महि सचा एको सोई तिस का कीआ सभु कछु होई।
हुकमु पछानै सु एको जानै बंदा कहीऐ सोई।
अलहु अलखु न जाई लखिआ गुरि गुड़ु दीना मीठा।
कहि कबीर मेरी संका नासी सरब निरंजनु डीठा॥ *पृष्ठ - 1350*

जब यह भावना पैदा हो जाती है, तत्व ज्ञान हो जाता है, तब कोई भी बुरा नज़र नहीं आता। इस तरह फ़रमान है–

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता।
तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥ *पृष्ठ - 610*

इसके विपरीत जब तक भले–बुरे, पापी पुण्यी अपने पराये नज़र आते हैं, तब तक उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ करता, केवल रास्ते पर चलने वाला राही है, मंजिल पर नहीं पहुँचता। गुरू महाराज जी का फ़रमान है –

वडभागी घरु खोजिआ पाइआ नामु निधानु।
गुरि पूरै वेखालिआ प्रभु आतम रामु पछानु।
सभना का प्रभु एकु है दूजा अवरु न कोइ।
गुरपरसादी मनि वसै तितु घटि परगटु होइ।
सभु अंतरजामी ब्रहमु है ब्रहमु वसै सभ थाइ।
मंदा किसनो आखीऐ सबदि वेखहु लिव लाइ।
बुरा भला तिचरु आखदा जिचरु है दुहु माहि।
गुरमुखि एको बुझिआ एकसु माहि समाइ॥ *पृष्ठ - 757*

अतः नाम भूलने के कारण ही दुख पैदा हुआ, परन्तु परमेश्वर ने दवाई अन्दर रखी हुई है। कोई ऐसा जीव नहीं है जिसके अन्दर दवाई न रखी हो। जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि ***'हरि अउखधु सभ घट है भाई'*** नाम की दवाई हर एक शरीर में रखी हुई है। उस दवाई का प्राणी मात्र को कुछ भी पता नहीं चलता क्योंकि सूझ नहीं है, न ही इस बात को पूछने का यत्न करता है कि दवाई कैसे मिलती है? बड़े–बड़े हस्पतालों में जाकर, इलाज के लिये लाखों रूपये खर्च कर देता है, परन्तु फिर भी पूरी तरह से ठीक नहीं हो पाता। ठीक हो भी जाता है, बीमारी दूर हो जाती है, परन्तु फिर दोबारा हो जाती है। गुरबाणी का सिद्धान्त कोई अटकल पच्चु बात नहीं है, बिल्कुल प्रत्यक्ष हैं। गुरबाणी के अन्दर जो कुछ प्रकाशित है, वह सभी कुछ सत्य है। परख कर देख लिया है कि नाम साधन से बड़े–बड़े रोग, जिनका डाक्टरों के पास इलाज नहीं होता, वे दूर हो गये हैं। परन्तु याद रखने वाली बात यह है कि

जो संयम हैं जैसे पहले विस्तार पूर्वक बताये जा चुके हैं, वह संयम अवश्य अपनाने पड़ते हैं। डाक्टरों की राय है कि संयम का प्रयोग करके बीमारी दूर हो सकती है, परन्तु जब नाम रूपी औषधि का प्रयोग करने की जाँच आ जाये फिर सभी रोग दूर हो जाते हैं। विधि बताने वाला पूर्ण सतगुरू होना चाहिये। इस पर काफी लम्बी चौड़ी विस्तार पूर्वक विचार की जा सकती है, परन्तु हमारे निश्चय ही ऐसे बन गये हैं कि हम अपने ही गलत निश्चयों के कारण उस दवाई को प्राप्त नहीं कर सकते। इस दवाई को गुरू महाराज जी नाम कहते हैं। जब तक समरथ महापुरुष अपनी कृपा से उस स्थान तक न पहुँचा दें, जहाँ पर यह दवाई परमेश्वर ने सुरक्षित स्थान पर रखी हुई है, तब तक इसका असर नहीं हुआ करता। बाणी में फ़रमान है –

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद।
तिनि देखिआ जिसु आपि दिखाए। नानक तिसु जन सोझी पाए॥ पृष्ठ - 293

देखता कौन है? जिस पर पूरे गुरू की कृपा हो जाये और वह ज्ञान दे दे। पहले समरथ गुरू, मन्त्र की दात देता है। गुरू घर में पाँच प्यारे अमृत पान कराते समय मन्त्र देते हैं। पाँच प्यारों के बारे में अलग-अलग अपनी-अपनी मतानुसार विचार हैं, जो आपस में नहीं मिलते, परन्तु जो रहतें है, उसमें ऐसे विचार आते हैं कि गुरू महाराज जी ने पाँच प्यारों को महत्व देते हुए खालसा का दर्ज़ा दिया है –

ख़ालसा मेरो रूप है ख़ास। ख़ालसे महि हौ करौ निवास॥ सरब लोह ग्रन्थ में से

इन पाँचों को खालसा कहा गया है परन्तु इन पाँचों में जो ज्ञान है, यह एक महात्मा में भी आ सकता है, परन्तु इसे मर्यादा अनुसार पाँचों में सीमित कर दिया गया है। इनके द्वारा जब अमृत तैयार किया जाता है, जो इनके अन्दर गुरू ज्योति प्रकट हो रही होती है, कोई भी दोष दृष्टि इनके अन्दर नहीं हुआ करती, ये उन पाँच प्यारों का रूप हुआ करते हैं जो गुरू महाराज जी ने बहुत कठिन परीक्षा लेकर चुने थे। जिन्हें गुरू महाराज जी ने नया जीवन, नया उत्साह, बख्शा था। अतः आपने एक के स्थान पर ब्रह्म स्त्रोती, ब्रह्म वक्ता, पाँच प्रवानों को प्रधानता दी और प्यार से इनका नाम पाँच प्यारे रखा। गुरसिखी मार्ग में इस नाम खजाने तक पहुँचने के लिये, पहले इन पाँच प्यारों के पास पेश होना पड़ता है। वह कार्य करने के पश्चात मन्त्र की दात देते हैं। उस मन्त्र को जपने की विधि बताते हैं। उस समय संयम भी साथ बताते हैं, जिन्हें हम रहत कहते हैं। ऐसे ज्ञानवान पुरुषों के हाथों अमृत की दात प्राप्त होती है। उस समय रूहानी नेत्रों पर आये मोतियाबिन्द का आप्रेशन होना शुरू हो जाता है और आन्तरिक दृष्टि उसके बल से शुद्ध होनी शुरू हो जाती है, फिर धीरे-धीरे उन्नति करके यह जीव वहाँ तक पहुँच जाता है, जहाँ पर हर जगह परमेश्वर ही नज़र आता है। वहाँ पर यह आनन्द प्राप्त होता है जो जीव के रोम-रोम में आत्म आनन्द प्रदान करता है। जीवन के सारे सैल (कोशिकाएं) ठीक हो जाते हैं और रोग का नामोनिशां भी नहीं रहता। यहाँ तक ही नहीं, जब मनुष्य इस मण्डल में पहुँच जाता है, वहाँ नाम अन्दर बस जाता है। सभी रिद्धियां-सिद्धियां पीछे लग जाती हैं –

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ पृष्ठ - 649

अतः नाम प्राप्ति समरथ सतगुरू के बिना नहीं हो सकती। जब गुरू पूरी विधि से नाम प्राप्ति के बारे में बताते हैं, तो सपने में भी रोग पास नहीं फटकते। नाम के बिना, प्राणी मात्र का कल्याण नहीं हो सकता।

गुरू महाराज जी ने समय का विचार किया जो समय अब चल रहा है, इस समय के दौरान मनुष्य की मानसिक अवस्था, हालातों के आधीन, वैसी नहीं है जो प्राचीन युगों में थी। बाणी में फ़रमान आता है कि अब कलयुग में मनुष्य की बुद्धि भूतों-प्रेतों वाली हो गई है। जीवन में बहुत बड़ी कमज़ोरी आ गई है, मन एकाग्र नहीं होता और न ही मनुष्य के पास इतना समय है कि जो साधन, काफी समय तक किये जाते थे, उन्हें कर सके। अब कर्म धर्म से काम नहीं चलता क्योंकि अब नाम बोने की ऋतु है। जैसा कि फ़रमान है -

कलजुग महि बहु करम कमाहि। ना रुति न करम थाइ पाहि।
कलजुग महि राम नामु है सारु। गुरमुखि साचा लगै पिआरु।
तनु मनु खोजि घरै महि पाइआ। गुरमुखि राम नामि चितु लाइआ।
गिआन अंजनु सतिगुर ते होइ। राम नामु रवि रहिआ तिहु लोइ।
कलिजुग महि हरि जीउ एकु होर रुति न काई।
नानक गुरमुखि हिरदै राम नामु लेहु जमाई॥ **पृष्ठ - 1130**

इसी तरह से एक और फ़रमान है -

कलजुग महि राम नामु उरधारु। बिनु नावै माथै पावै छारु॥ **पृष्ठ - 1129**

कलयुग का समय नाम बीजने का समय है जैसा कि फ़रमान है -

वत लगी सचे नाम की जो बीजे सो खाइ।
तिसहि परापति नानका जिस नो लिखिआ आइ॥ **पृष्ठ - 321**

क्योंकि इस युग में धर्म के तीन पैर खत्म हो चुके हैं। धर्म के चार पैर हुआ करते हैं -

कलिजुगु हरि कीआ पग त्रै खिसकीआ पगु चउथा टिकै टिकाइ जीउ।
गुर सबदु कमाइआ अउखधु हरि पाइआ हरि कीरति हरि सांति पाइ जीउ॥ **पृष्ठ - 446**

गुरू महाराज जी ने कलयुग में नाम बोने के लिये आवाज़ लगाई है क्योंकि इस युग में कोई भी धर्म कर्म फल नहीं देता। अब कर्म किरत की कोई पेश नहीं चलती। अब सिमरण की ऋतु आई है। सिमरण याद को कहते हैं। यदि मुख से वाहिगुरू-वाहिगुरू कहता है, परन्तु चित्त में परमेश्वर का ध्यान नहीं बसाया तो वह सिमरण नहीं कहलाता। जैसे कूंज की याद में उसके बच्चे बसे रहते हैं, वह सिमरण शक्ति द्वारा हजारों कोसों से उनका पालन करती है -

उडै उडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ।
तिन कवणु खलावै कवणु चुगावै मन महि सिमरनु करिआ॥ **पृष्ठ - 10**

अत: नाम जपने का युग आ गया है। जब हमें इस खेती के बोने की युक्ति आ जायेगी, तब यही खेती लहलहाती हुई नज़र आयेगी।

गुरू नानक पातशाह ने इसके लिये कई संकेत दिये हैं। जब आप ऐमनाबाद से तलवन्डी राय भोंय, राय बुलार को दर्शन देने गये तो मेहता कालू के कहने पर राय बुलार जी ने कहा, ''मैं तुम्हें कुओं वाली ज़मीन खेती करने के लिये, मुआफीनामें में देता हूँ, बैल वगैरा भी देता हूँ, आप खेती बाड़ी करो।'' आपने असली खेती की ओर संकेत करते हुए कहा, ''मेरा मन तो किसानी कर रहा है, हल जोत रहा है, खेती को पानी दे रहा है। मैं खेत जोत कर, उसमें नाम का बीज डालकर सारी इन्द्रियों द्वारा सन्तोष का सुहागा दे रहा हूँ और भक्ति द्वारा इसकी नदीन (खरपतवार) निकाल रहा हूँ। इसकी खेती की गोड़ाई कर रहा हूँ जिसके फलस्वरूप मेरी फसल बहुत अच्छी होगी। वे घर भाग्यशाली हैं, जहाँ पर नाम की

खेती भरपूर हो जाती है। राय जी जिस खेती की तुम बातें करते हो, ये संसार की प्राप्तियां, संसार में ही रह जाती हैं, अन्त में हाथ झाड़कर यह जीव संसार से कूच कर जाता है, माया साथ नहीं जाती, जीव इस माया की चमक दमक से मोहित हो जाता है -

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु।
नामु बीजु संतोखु सुहागा रखु गरीबी वेसु॥
भाउ करम करि जंमसी से घर भागठ देखु।
बाबा माइआ साथि न होइ।
इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ॥ पृष्ठ - 595

अत: यह नाम की खेती, विनम्रता की बाड़ लगाने से फलीभूत होती है। इस प्रकार जब हम साधन करते हुए गुरू की कृपा, गुरू द्वारा बताये गये रास्ते द्वारा, नाम मंज़िल तक पहुँच जायेंगे, फिर केवल अपने ही दुख दूर नहीं होते, बल्कि संसार के दुखों को दूर करने की समर्थ आ जाती है। यदि वह वचन कर दें तो विघ्नों, दुखों का नाश हो जाता है। पुत्रहीनों को पुत्रों की दात प्राप्त हो जाती है।

साध संगत जी! यहीं पर ही मत रूक जाओ कि अमृत पान कर लिया, बाहरी रहतों का पालन कर लिया पर जीवन को संयमित न किया। जो रहतें हैं ये तो बाहर की हैं, जिनका शरीर के साथ बहुत थोड़ा सम्बन्ध होता है, जैसे ककार पहन लिये, परन्तु हाथ बुरे कर्म करते हैं, पैर गलत स्थान पर ले जाते हैं, कानों से दूसरों की निन्दा सुनता है, रसना द्वारा फीका बोलता है। इन रहतों (नियमों) का पालन न करने से कोई प्राप्ति नहीं होती। महाराज जी कहते हैं यदि ईर्ष्या भी मन में हो तो भी भला नहीं हुआ करता -

जिसु अंदरि ताति पराई होवै तिस दा कदे न होवी भला॥ पृष्ठ - 308

हमारे अन्दर स्वाभाविक ही ईर्ष्या पैदा हो जाती है, जब हम किसी को धन की दृष्टि से, परिवार की दृष्टि से फलता फूलता देखते हैं तो उसके बारे में बुरी चितवना करते हैं। इसे ईर्ष्या कहते हैं। जिसके अन्दर ईर्ष्या हो उसका भला कैसे हो सकता है। अत: नाम की भरपूर खेती के लिये बहुत ही मेहनत की ज़रूरत है, इसमें ऐसा नहीं है कि ठण्डे पानी में खड़े रहो, कांटों पर सो जाओ आदि-आदि ये सब फोकट कर्म हैं, इनसे तमोगुण बढ़ता है और क्रोध बढ़ जाता है। ठण्डे पानी के सौ-सौ मटकों में स्नान करने का कोई लाभ नहीं। शरीर को संयम में नरोया रख कर, हम नाम मंजिल पर, नाम के प्याले तक पहुँच सकते हैं -

अंम्रितु हरि हरि नामु है मेरी जिंदुड़ीए अंम्रितु गुरमति पाए राम।
हउमै माइआ बिखु है मेरी जिंदुड़ीए हरि अंम्रिति बिखु लहि जाए राम।
मनु सुका हरिआ होइआ मेरी जिंदुड़ीए हरि हरि नामु धिआए राम॥ पृष्ठ - 538

इस प्रकार इस सारे वृत्तान्त का निचोड़ निकालते हुए प्रार्थना की जाती है कि अब समय कलयुग का है। कलयुग में यदि कोई साधना फलीभूत होती है तो -

धारना - कल्लू आइओ रे, इक नाम बीज लओ - 2, 2
इक नाम बीज लओ - 4, 2
कल्लू आइओ रे, इक नाम बीज लओ - 2

महाराज जी फ़रमान करते हैं कि भाई! अब कलयुग आ गया है। अब और कुछ भी करने का मौसम नहीं, ऐसे ही भ्रम में मत भूलो -

अब कलू आइओ रे। इकु नामु बोवहु बोवहु।

अन रूति नाही नाही। मतु भरमि भूलहु भूलहु।। पृष्ठ - 1185

किसान अच्छी तरह जानता है कि बे-मौसम के बीज कभी नहीं फल देते। अब जो समय चल रहा है, यह कलयुग का है, हमारा वास कलयुग में है।

जनम साखी में ऐसा आता है कि गुरू नानक साहिब जी को कलयुग मनुष्य रूप में मिला। गुरू नानक पातशाह उजाड़ स्थान में बैठे हैं कि अचानक एक दम काली घनी अन्धेरी चल पड़ी, वृक्षों को जड़ों से उखाड़ती हुई, रौंदती चली आ रही थी, वृक्ष ऐसे उड़ रहे थे जैसे रूईं के फोए उड़ते हैं। बहुत ज्यादा ठण्ड पड़नी शुरू हो गई। मरदाना यह दृश्य देखकर बोला, ''महाराज! मुझे बहुत ठण्ड लग रही है। मेरी तो जान निकल जायेगी। इस उजाड़ में तो कोई कफन भी नहीं मिलेगा। वह कपड़ा लेकर लेट गया।'' महाराज जी ने कहा, ''मरदाना! डरता क्यों है। यह तेरा कुछ नहीं बिगाड़ेगा क्योंकि पवन, पानी, अग्नि सभी भय में चलते हैं। हम निरंकार के चाकर हैं। ये हमें कुछ नहीं कह सकते'' -

भै विचि पवणु वहै सद वाउ। भै विचि चलहि लख दरीआउ।
भै विचि अगनि कढै वेगारि। भै विचि धरती दबी भारि॥ पृष्ठ - 464

साध संगत जी! भय भी एक प्रकार की बीमारी है। बहुत से आदमी तो बड़े हठ के साथ कहते हैं कि उन्हें किसी से डर नहीं लगता परन्तु अन्दर से डरते रहते हैं। केवल तत्ववेता महापुरुष को डर नहीं लगता। जैसे प्रहलाद को भय दिखाये गये, उसे अन्धेरी कोठड़ियों में बन्द किया गया, पहाड़ों से गिराया गया, आग में बिठाया गया पर वह किसी भी चीज़ से डराने पर न डरा। जैसा कि फ़रमान है -

प्रहलादु कोठे विचि राखिआ बारि दीआ ताला।
निरभउ बालकु मूलि न डरई मेरै अंतरि गुर गोपाला॥ पृष्ठ - 1154

इसी तरह से कबीर साहिब के हाथ पैर बान्ध कर उन्हें गंगा में फैंका गया। उस समय आपने फ़रमान किया, ''प्यारे! मेरा मन तो डरता नहीं, तन को क्यों डराते हो?''

गंग गुसाइनि गहिर गंभीर। जंजीर बांधि करि खरे कबीर।
मनु न डिगै तनु काहे कउ डराइ। चरन कमल चितु रहिओ समाइ।
गंगा की लहरि मेरी टुटी जंजीर। म्रिगछाला पर बैठे कबीर।
कहि कबीर कोऊ संग न साथ। जल थल राखन है रघुनाथ॥ पृष्ठ - 1162

प्रहलाद को पानी में डुबोया गया, गर्म-गर्म थम्बे को अंक में भरने को कहा गया, परन्तु बालक प्रहलाद डरता ही नहीं, क्योंकि निर्भय का जप करने से सारे भय खत्म हो जाते हैं। महाराज फ़रमान करते हैं, ''मरदाना! तेरे अन्दर डर कहाँ से आ गया? हर घट में वाहिगुरू का वास है, उसकी पहचान कर।'' जैसा कि फ़रमान है -

ओहु अबिनासी राइआ।
निरभउ संगि तुमारै बसते इहु डरनु कहा ते आइआ॥ पृष्ठ - 206

जब दृढ़ता पूर्वक मन के अन्दर यह समाया हो कि वाहिगुरू जी मेरे साथ हैं और देखता है कि हर तरफ वाहिगुरू जी मेरे साथ हैं तो फिर डर का सवाल ही पैदा नहीं होता। होता यह है कि हमने वाहिगुरू जी को बूझा (पहचाना) तो है नहीं, कि वाहिगुरू मेरे अन्दर बाहर है, केवल अक्ल से ही समझा है जैसा कि फ़रमान है -

जिमी जमान के बिखै समसति एक जोत है।

न घाट है न बाढ है न घाटि बाढि होत है॥ *अकाल उसतति*

प्रत्यक्ष रूप से तो समझना नहीं, इसे बुद्धि मण्डल के बल पर समझ लिया कि वाहिगुरू मेरे साथ है। परन्तु निश्चय पूर्वक माना नहीं, बौद्धिक रूप में परमेश्वर को मान लेना –

जह जह पेखउ तह हजूरि दूरि कतहु न जाई।
रवि रहिआ सरबत्र मै मन सदा धिआई।
ईत ऊत नही बीछुड़ै सो संगी गनीऐ।
बिनसि जाइ जो निमख महि सो अलप सुखु भनीऐ।
प्रतिपालै अपिआउ देइ कछु ऊन न होई।
सासि सासि संमालता मेरा प्रभु सोई॥ *पृष्ठ - 677*

इसे मान लेना कि हर स्थान पर वाहिगुरू है। इसी बात पर निश्चय कर लेना कि –

आपे रसीआ आपि रसु आपे रावणहारु।
आपे होवै चोलड़ा आपे सेज भतारु।
रंगि रता मेरा साहिबु रवि रहिआ भरपूरि।
आपे माछी मछुली आपे पाणी जालु।
आपे जाल मणकड़ा आपे अंदरि लालु।
आपे बहुबिधि रंगुला सखीए मेरा लालु।
नित रवै सोहागणी देखु हमारा हालु।
प्रणवै नानकु बेनती तू सरवरु तू हंसु।
कउलु तू है कवीआ तू है आपे वेखि विगसु॥ *पृष्ठ - 23*

ये मिथ्या ज्ञान की अवस्थाएं हैं, इसे सत्य ज्ञान नहीं कहा जाता क्योंकि सत्य का अन्दर से ज्ञान नहीं, हम जहाँ पर खड़े हैं, वहीं पर ही खड़े हैं। इस बात को हम निश्चय पूर्वक मानने को तैयार नहीं कि जल थल में वाहिगुरू रमा हुआ है। यदि माना था तो कबीर साहिब ने, नामदेव, रविदास जी ने माना था। यह जानना बुद्धि मण्डल का काम होता है कि वाहिगुरू जी सभी जगह परिपूर्ण है। इसे बूझना (ज्ञान प्राप्त) नहीं कहा जाता।

एक उदाहरण द्वारा बात समझ में आ जायेगी। हमें पक्की तरह से पता है कि धरती में पानी है। कोई मनुष्य मरूस्थल में चलता जा रहा है। उसे पता है कि तीन फुट खोदने पर पानी निकल आयेगा। वह प्यास से व्याकुल हो रहा है, वह केवल जानता है पर उसके अनुभव में यह बात समाई हुई नहीं है। जैसे हम धरती में से पानी निकालते हैं तो फिर पानी को तल तक लाकर फिल्टर लगाते हैं Reflex valve लगाते हैं, मोटर फिट करके बटन दबाते हैं, फिर पानी पीछे नहीं जाता। Reflex valve तक भरा रहता है, जब जी चाहे पानी प्राप्त हो सकता है।

ये दो प्रकार की चीज़ें हैं। एक तो जानी पहचानी हुई बात है। एक तो इस प्रकार जान लिया कि –

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग॥ *जापु साहिब*

परन्तु इससे कोई प्यार नहीं पैदा होता। यह केवल जानना ही है, यह बुद्धि मण्डल का विषय है। एक प्रत्यक्ष रूप में परमेश्वर देख लिया क्योंकि वह तो है ही परिपूर्ण। इसी तरह से डर का प्रश्न है, जिसने प्रत्येक वस्तु के अन्दर परमेश्वर को देख लिया, उसके सामने फिर कोई डर नहीं। इसी प्रकार कबीर साहिब को बान्ध कर हाथी के सामने फैंक दिया जाता है। हाथी में भी परमेश्वर को देखते हैं। उन्होंने अपनी बाणी में लिखा है –

भुजा बांधि भिला करि डारिओ। हसती क्रोपि मूंड महि मारिओ।
हसति भागि कै चीसा मारै। इआ मूरति कै हउ बलिहारै।
आहि मेरे ठाकुर तुमरा जोरु। काजी बकिबो हसती तोरु।
रे महावत तुझु डारउ काटि। इसहि तुरावहु घालहु साटि।
हसति न तोरै धरै धिआनु। वा कै रिदै बसै भगवानु।
किआ अपराधु संत है कीन्हा। बांधि पोट कुंचर कउ दीन्हा।
कुंचरु पोट लै लै नमसकारै। बूझी नही काजी अंधिआरै।
तीनि बार पतीआ भरि लीना। मन कठोरु अजहू न पतीना।
कहि कबीर हमरा गोबिंदु। चउथे पदम महि जन की जिंदु॥ *पृष्ठ - 871*

इसमें कबीर जी हाथी को देखने की बजाये, परमेश्वर को देख रहे हैं कि मेरे परमेश्वर मुझे तेरा आसरा है। गुरू महाराज जी कहने लगे, ''हम निरंकार के चाकर हैं। डरने की कोई बात नहीं।'' मरदाना कहने लगा, ''सच्चे पातशाह! आपकी संगत करते हुए तो मैंने भी जान लिया है कि परमेश्वर सभी जगह है परन्तु लोगों में तो यह आम प्रचलित है कि बताओ घसून (मुक्का) पास है या वाहिगुरू। घसून तो सामने नज़र आ रहा है। अभी बातें कर ही रहे थे कि अचानक धरती पर आग की लपटें दिखाई देने लग गईं। गुरू महाराज ने कहा, ''मरदाना! घबरा मत।'' थोड़ी देर बाद बड़े-बड़े मोटे-मोटे ओले पड़ने शुरू हो गये। मरदाना ने कहा, ''सच्चे पातशाह! उनसे तो जैसे तैसे बच गये पर अब यदि एक भी ओला शरीर पर आ गिरा फिर तो मर ही जायेंगे।'' महाराज जी ने कहा, ''मरदाना! वाहिगुरू कह कर रेखा खींच दे।'' मरदाने ने रेखा खींच दीं। कोई भी ओला अन्दर न गिरा। बाहर ही गिरते रहे। फिर क्या देखते हैं कि बड़े-बड़े दाँतों वाला भयानक मुख वाला आदमी नग्न ही चला आ रहा है। उसे देखकर मरदाना फिर भयभीत हो उठा। कहने लगा, ''पातशाह! पहले तो बच गये पर यह राक्षस तो हमें खाने के लिये ही आ रहा है।'' आपने कहा, ''मरदाना! यह हमारे पास नहीं आयेगा। दूर ही रहेगा।''

गुरू भनै इह है किछु नांही। निकट न आवै जाइ पराही।
वाहिगुरू कहि धीरज करीए। किह ते तनक न त्रास बिचरीए॥ ३१॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 851

कलयुग ने अग्नि का रूप धारण किया हुआ है, उसमें से धुआं निकल रहा है। मरदाना भयभीत हुआ देख रहा है कि इसने कई रूप धारण किये, आग का रूप धारण किया। अनेक प्रकार से महाराज जी को परख रहा है। बिजली बहुत तेज़ कड़क रही है। मोटे-मोटे पत्थरों की तरह के ओले बरसा रहा है, गुरू महाराज जी आराम से बैठे हैं। मरदाना ने मुँह कपड़े से ढका हुआ है। कलयुग गुरू महाराज जी के पास नहीं आ सकता। जैसा कि लिखा है -

धरि धीरज गुर तहां सुहाए। निकट कछू छुहिना नहिं पाए।
तबि कलिजुग नै निशचै जानी। है अवतार रूप गुन खानी॥ ३५॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 851

उस समय कलयुग को यह निश्चय हो गया कि यह तो मेरे युग में अवतार आए हैं। तब वह मनुष्य का रूप धारण सामने प्रकट होता है और अन्दर से आग के लपटें निकालता आ रहा है। उसके उस रूप के बारे में लिखा है-

मानुख रूप धारि पुन आयो। अधिक बदन ते अगनि बमायो।
देहि कंचकी जांहि सवारी। एक हाथ मैं जिहवा धारी॥ ३६॥
गह्यो लिंग को दूसर हाथा। आवा सनमुख जहिं जगनाथा।

बिगसति मुख ते कहि सुखरासा। 'मरदाने! उठि देखि तमाशा॥ ३७॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 851

तब गुरू महाराज जी ने कहा, ''मरदाना उठ! देख तमाशा! सावधान होकर, धीरज धर। तुझे कोई भय नहीं है।'' कलयुग ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की तथा अपनी गलती की क्षमा मांगी और कहने लगा, ''मैं आपकी महिमा को न जान सका। मैंने कलयुगी लोगों के लक्षण बताये हैं। इसलिये मैंने ऐसा रूप धारण किया। यह सारा संसार इन दो इन्द्रियों में लिप्त हो जायेगा। मैंने निडर होकर आपके साथ छल किया है। मुझे क्षमा करो।'' जब महाराज जी ने पूछा, ''तू कौन है?'' तो उसने कहा, ''मेरा नाम कलयुग है। मैं इस युग का राजा हूँ। पहले मेरे भाई राजा थे। सबसे बड़ा भाई सतयुग था। उसने 17,28,000 साल अपना प्रभाव दिखाया। दूसरा त्रेता था, जिसने मनुष्य पर 12,96,000 साल अपना प्रभाव दिखाया। इससे छोटा द्वापर जो 8,64,000 साल की आयु वाला था। पातशाह! मेरी आयु भी बहुत कम है, 4,32,000 साल की। अब मेरा राज्य है। मेरी ताकत है।'' फिर आपने पूछा, ''तू अपने राज्य में क्या करेगा?'' कहने लगा, ''महाराज! मेरे युग में भूतों प्रेतों का जन्म होगा।'' जैसा कि बाणी में फ़रमान आता है -

कली अंदरि नानका जिंनां दा अउतारु।
पुतु जिनूरा धीअ जिंनूरी जोरू जिंना दा सिकदारु॥ पृष्ठ - 556

सतयुग में परम हंस, ज्ञानवान पुरुष निवास करते हैं द्वापर तथा त्रेता में इस धरती पर मनुष्य निवास करते हैं पर मेरे राज्य में तो प्रेतों का वास है।

इसके बारे में एक साखी आती है कि राजा जनक जब धर्मराज की पुरी में पहुँचे, उस समय सभी, देवताओं की सभा में जा रहे थे। पर यमपुरी में पहुँचते ही जीवों की चीख पुकार सुनीं, जैसा कि फ़रमान है -

पापी करम कमावदे करदे हाए हाइ।
नानक जिउ मथनि माधाणीआ तिउ मथे ध्रम राइ॥ पृष्ठ - 1425

उसने धर्मराज से कहा कि इन लोगों को छोड़ दो। तब धर्मराज बोले, ''मैं निरंकार का चाकर हूँ। किसी को नर्क में रखना या उसे छोड़ देना। यह मेरे बस की बात नहीं है।'' उस समय राजा जनक ने नाम का महात्म बताते हुए नाम को गिरवी रखकर, सारे नर्क खाली करवा दिये। ऐसा लिखा है कि नाम के मुकाबले में सारे पाप पासकी बनकर रह गये -

भगतु वडा राजा जनकु है गुरमखि माइआ विचि उदासी।
देव लोक नो चलिआ गण गंधरबु सभा सुखवासी।
जमपुरि गइआ पुकार सुणि विललावनि जीअ नरक निवासी।
धरमराइ नो आखिओनु सभनां दी करि बंद खलासी।
करे बेनती धरमराइ हउ सेवकु ठाकुर अबिनासी।
गहिणे धरिअनु एक नाउ पापा नालि करै निरजासी।
पासंगि पापु न पुजनी गुरमुखि नाउ अतुल न तुलासी।
नरकहु छुटे जीअ जंत कटी गलहु सिलक जम फासी।
मुकति जुगति नावै दी दासी॥ भाई गुरदास जी, वार 10/5

कलयुग ने प्रार्थना की, ''पातशाह! वे जीव नरकों में से तो छूट गये पर उन्हें किसी भी देव मण्डल में स्थान न मिला। त्रेता युग का समय था। त्रेता को कहा गया, पर उसने इन्हें अपने युग में जन्म

न लेने की आज्ञा दे दी। द्वापर युग ने भी मना कर दिया। हे नानक जी! राजा जनक ने मुझे कहा और मैंने बड़ी प्रसन्नता पूर्वक प्रवान कर लिया कि मुझे तो इन जैसे भूतों प्रेतों की ज़रूरत है अतः मेरी तो डयूटी लगी हुई है। इसलिये मेरे युग के अन्दर प्रेत ही आ रहे हैं।'' गुरू महाराज जी ने भी फ़रमान किया है -

कलि महि प्रेत जिनी रामु न पछाता सतजुगि परम हंस बीचारी।
दुआपुरि त्रेतै माणस वरतहि विरलै हउमै मारी॥ पृष्ठ - 1131

''हे गुरू नानक पातशाह! मैंने अपने युग के अन्दर सभी कर्मों धर्मों का फल नष्ट कर दिया है। मेरे युग में स्त्री पुरुष का प्यार केवल काम पूर्ति के लिये ही होगा। संसार अधर्म को धर्म का नाम देगा। अलग-अलग मत धर्म के नाम पर आपस में लड़ाई झगड़े करेंगे। बादशाह अन्यायी होंगे, लुटेरे होंगे। जैसे बाड़ खेत को खाती है, ऐसे ही अपनी प्रजा का भला करने की बजाए, जो माया उन्हें प्राप्त होगी, वह स्वंय ही खा जायेंगे। न्याय में रिश्वत प्रवेश कर जायेगी। रिश्वत लेकर बे-इन्साफी चलती रहेगी। मेरे युग में माया की इतनी तड़क-भड़क रहेगी कि किसी को भी भजन करने के लिये समय ही नहीं मिलेगा। आप जी के चरणों में मैं प्रार्थना करता हूँ कि मेरे राज्य में झूठ रूप सूरमा होगा और सच के आगे-आगे चला करेगा। मोह नाम का राजा होगा जिसका सेनापति हिंसा होगी। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार ये सभी योद्धा होंगे जो हाथियों पर सवारी करेंगे। ईर्ष्या, निन्दा, डाके मारने, चोरियां करना ये हाथों के सवार होंगे। आलस्य, शराब पीना, ये घुड़ सवार होंगे। दुराचार भी घोड़े की फौज़ होगा। विषयों की ममता, आशाओं में जन्म बर्बाद करना यह पैदल फौज होगी। यह मेरी चतुरंगिनी फौज जिधर भी कदम रखेगी, नाश करती चली जायेगी। करोड़ों में से कोई एक आध ही बचेगा जो दृढ़ तथा स्थिर रहेगा। मैं संसार के सारे धर्मं को नष्ट भ्रष्ट कर दूंगा। यह मेरी फौज दिग्विजयी कहलायेगी।''

''इस प्रकार गुरू नानक पातशाह! मेरी सरदारी चलेगी। साधु सन्त पैसे वाले होंगे और अनेक प्रकार के दम्भ करके नाम जपने की जगह पैसा कमाने की चितवना में रहा करेंगे। सभी धर्म, कर्म, मर्यादाएं तोड़ दूंगा। यदि कोई तप करेगा, उसका तप पूरा नहीं होगा। यदि कोई परमेश्वर का नाम लेने वाला होगा, मैं उसकी बदनामी करवाऊँगा'' -

जे को सतु करे सो छीजै तप घरि तपु न होई।
जे को नाउ लए बदनावी कलि के लखण एई॥ पृष्ठ - 902

उस समय गुरू नानक पातशाह ने कहा, ''कलयुग! तू बहुत बड़ा गुनाहागार होगा क्योंकि कलयुग में जितने भी जीव आयेंगे, उन्हें अवश्य ही नरकों में जाना पड़ेगा। जब सच्ची दरगाह में लेखा देना पड़ेगा, उस समय हम तुम्हें जंजीरों से बान्धेंगे।'' जैसा कि मुख्य वाक्य है -

जिसु सिकदारी तिसहि खुआरी चाकर केहे डरणा।
जा सिकदारै पवै जंजीरी ता चाकर हथहु मरणा॥ पृष्ठ - 902

जब हम विचार करते हैं तो ऐसा ही प्रतीत होता है कि कलयुग में मनुष्य, पर तन, पर धन में प्रवृत्त हैं, किसी को भी परमेश्वर का ज्ञान नहीं, विरले ही हैं जो नाम जपते हैं। निगुरों के समूह के समूह भागे फिरते हैं। यदि हम अपने मत में ही झांक कर देखें तो केवल गुरू ग्रन्थ साहिब को सिर झुकाने वाले ही सिख पन्थ के मुखिया कहलाते हैं। सिख, मुरीद, चेला तभी बनता है, जब विधि पूर्वक मुरशद की शिक्षा पर चल कर उसे गुरू धारण करे। जब तक किसी गुरू से मन्त्र नहीं लिया, तब तक

उस सम्प्रदा से तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं होता जैसे नामधारियों की सम्प्रदा से नाम ले लिया, तो नामधारी कहलाता है। यदि राधा-स्वामी सम्प्रदा से नाम ले लिया तो राधा स्वामी कहलाता है। सन्यासियों से नाम लेकर सन्यासी, उसी प्रकार जैनियों से नाम लेकर जैनी कहलाता है, बौद्धियों से नाम ले ले तो बौद्धि कहलाता है। गुरू घर में तो तभी सिंघ बनता है, जब पाँच प्यारों से अमृत पान करके, नाम की दात लेकर नाम जपता है।

गुरू महाराज जी जब मालवा में गये तो दयालदास नाम का प्रेमी मिला। उसने प्रार्थना करके गुरू महाराज जी को अपने घर, भोजन के लिये निमंत्रित किया। गुरू महाराज जी जब वहाँ गये तो घोड़े को प्यास लगी हुई थी। वहाँ पर एक बहुत बड़ी ढाब थी। गुरू महाराज जी ने अपने घोड़े को उस ढाब में घुसा दिया तो घोड़ा उस पानी को सूंघ कर पीछे हट गया और पानी न पीया। गुरू महाराज समझ गये कि यह गाँव निगुरों का है। हमारे घोड़े ने भी यहाँ पानी पीना ठीक नहीं समझा।

गुरू महाराज जी वापिस लौट आए। दयाल दास को खबर कर दी गई तो उसने अन्न बैलगाड़ियों में लदवा कर लंगर का बन्दोबस्त किया और गुरू महाराज से आकर प्रार्थना की, ''महाराज! आप बिना भोजन किये ही लौट आये?'' तब महाराज जी बोले, ''दयाल दास! हमारे तो घोड़े ने भी पानी प्रवान नहीं किया क्योंकि उसमें से निगुरेपन की बदबू आ रही थी। तूने सिखी धारण नहीं की। तेरे गाँव वालों ने भी सिखी धारण नहीं की।'' उसने कहा, ''हम तो पुश्त-दर-पुश्त दसवन्ध निकाल कर आनन्दपुर साहिब पहुँचाते रहे। दाढ़ी भी खुली रखते हैं फिर हम सिख कैसे न हुए? महाराज! कृपा करके विस्तार पूर्वक समझाओ?'' महाराज जी ने फ़रमान किया -

धरे केस पाहुल बिन भेखी मूरख सिख। *रहितनामा*

महाराज जी ने बताया, ''भेष धारण करना तो भेषी लोगों का काम होता है, ऐसा करने से तू सिखी का धारणी नहीं बन गया। हमारे साथ तेरा कोई सम्बन्ध नहीं जुड़ा।'' उस समय उसने अमृत पान करके, पांच प्यारों द्वारा नाम प्राप्त किया और अपने आपको सिख मण्डल का सदस्य बनाया।

इसी प्रकार एक और साखी आती है कि गुरू महाराज साबो की तलवन्डी गये तो वहाँ भाई डल्ला, उस समय गुरू महाराज की काफी सेवा कर रहा था। एक दिन सारी रात पहरा देता रहा। उस समय गुरू महाराज जी ने प्रसन्न होकर उसे कहा, ''भाई डल्ले! कुछ माँग ले।'' उसने कहा, ''पातशाह! आपके द्वारा दिये गये मायिक (भौतिक) पदार्थ तो बहुत हैं। यदि आप प्रसन्न हैं तो अपनी दरगाह में पीढ़ी जितनी जगह दे दो।'' गुरू महाराज ने कहा, ''डल्ले! यदि तू दुनियाँ की कोई भी चीज़ मांगता तो हम तुझे दे देते पर जो तू दरगाह में स्थान मांगता है, वह तब तक नहीं मिल सकता जब तक विधि पूर्वक सिखी धारण नहीं करता।'' कहने लगा, ''महाराज! मैं दसवन्ध भी देता हूँ, आप की सारी फौजों की रक्षा भी करता हूँ, लंगर के लिये अन्न भी देता हूँ, मैं इसीलिये कहता हूँ क्योंकि मैं आपका सिख हूँ।'' गुरू महाराज जी ने कहा, ''पीर का मुरीद ऐसे नहीं हुआ करता। मुरीद को विधि पूर्वक मुरश़द धारण करना पड़ता है। पीर उसे गुरू मन्त्र देता है। डल्ले! तूने अमृत पान नहीं किया। गुरू घर में गुरू मन्त्र की जिसे प्राप्ति नहीं हुई।'' उसके बारे में इस तरह कहा है -

गुरमंत्र हीणस्य जो प्राणी ध्रिगंत जनम भ्रसटणह।
कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह॥ *पृष्ठ - 1357*

यह सुनकर भाई डल्ला कुछ निराश हो गया तथा बाहर किसी गुरसिख से बात की तो उसने कहा,

"जब तक गुरू घर में अमृत पान करके नाम नहीं जपता, तब तक सिख नहीं बनता। उसी तरह जैसे गुरू दयालु होता है, सारे संसार को तारता है, पर जब तक गुरू के साथ सिख विधि पूर्वक जुड़कर गुरू मन्त्र नहीं ले लेता, अपना आपा भेंट नहीं करता, तब तक सम्बन्ध स्थापित नहीं हुआ करता" –

अंतरि गुरु आराधणा जिहवा जपि गुर नाउ।
नेत्री सतिगुरु पेखणा स्रवणी सुनणा गुर नाउ।
सतिगुर सेती रतिआ दरगह पाईऐ ठाउ।
कहु नानक किरपा करे जिस नो एह वथु देइ।
जग महि उतम काढीअहि विरले केई केइ॥ पृष्ठ – 517

इस प्रकार जब तक मनुष्य गुरू धारण नहीं करता, वह निगुरा ही रहता है। बहुत से प्रेमी ऐसे हैं कि गुरू तो धारण कर लेते हैं परन्तु गुरू के शबद की साधना करके अन्दर की खोज नहीं करते।

एक बार कबीर साहिब से पूछा, "महाराज! आप यह वचन कहा करते हो कि एक तो भूत प्रेत अव्यक्त होते हैं, दिखाई नहीं देते। एक ऐसे होते हैं जो खाते पीते हैं, व्यापार, काम धन्धे तथा और भी अनेक कर्म करते हैं क्योंकि वे हमारे जैसे ही हैं, उनकी पहचान कैसे होती है।" आपने फ़रमान किया कि –

कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि।
ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि॥ पृष्ठ – 1378

जिस घर में कभी किसी महापुरुष, पीर, पैगम्बर औलिया के चरण नहीं पड़े, जिस घर में से कभी बाणी की आवाज़ नहीं आती, जपुजी साहिब, गुरू मन्त्र का जाप नहीं होता और सबसे विशेष बात यह है कि उन घरों में महापुरुष कभी चरण नहीं रखते, वे घर चाहे कितने ही मंज़िलें क्यों न बने हों, बेशक वे घर चाहे कितने भी अच्छे ढंग से क्यों न सजाये गये हों, जहाँ पर महापुरुषों के चरण नहीं पड़ते वहाँ भूतों प्रेतों का निवास होता है। अव्यक्त भूत भी वहीं पर रहते हैं। शारीरिक रूप में भी भूत वहाँ रहते हैं। भूतों प्रेतों का निवास मड़ियों-मसानों में होता है पर ये शरीरधारी भूत इन्हीं लोगों के बीच में रहते हैं।" कलयुग कहने लगा, "महाराज! मेरे युग में किसी भी तपस्वी का तप फल नहीं देगा, कोई भी शुभ कर्म पूरी तरह से सफल नहीं होगा।" तब महाराज जी से कहने लगा, "पातशाह! मैं आपको कुछ भेंट करना चाहता हूँ क्योंकि आप मेरे युग में प्रभु रूप गुरू अवतार प्रकट हुए हो।" महाराज ने कहा, "तेरे पास भेंट करने को क्या है?" कहने लगा, "महाराज! मैं आपके लिये सोने के महल, मन्दिर, रतनों से जड़े हुए कस्तूर और कुंगू, चन्दन के साथ मिली हुई सुगन्धियाँ, चमचमाते हुए मन्दिर, आपको भेंट करना चाहता हूँ।" महाराज कहने लगे, "ये जो चीज़ें तुम अर्पण करना चाहते हो, इनमें सुरत रूचि जाती है और परमेश्वर भूल जाता है। *'मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ। कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ। मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥'* हे कलयुग! प्रभु को भूलने से आन्तरिक कमल फूल जल जाता है। माया का रूप जड़ तथा दुख से भरा है, सुख केवल प्रभु को याद रखने में है –

हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ।
मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ॥ पृष्ठ – 14

कलयुग कहने लगा यदि आपने ये चीज़ें स्वीकार नहीं करनी तो और अधिक सुन्दर चीज़ें अर्पण कर दूँ। सुन्दर पार्क जहाँ पर सुन्दर हीरे मोती जड़े होंगे तथा पलंगों पर रतन झिलमिल करते होंगे,

सेवा के लिये सुन्दर-सुन्दर मन मोहिनियाँ आपकी सेवा में हाज़िर करूँगा। महाराज कहने लगे, ''ये सभी कुछ प्रभु को भुलाने वाली चीज़े हैं।'' तब उसने कहा -नौ निधियां, 18 सिद्धियां चरणों में भेंट करता हूँ, इन्हें स्वीकार करो। जहाँ आपका मन चाहे जा सकते हो, सभी लोग आपसे भय खायेंगे और आपके चरणों में शीश झुकायेंगे।'' महाराज जी ने ये भी परवान न की -

कलिजुग बचना पुन भने 'जग पतिशाही लेहु।
हुकम करउ उर भावते चरन तखत पर देहु।
चरन तखत पर देहु जगत मानहिं सभि आना।
सेना संग अनंत करहु परताप महाना।
लेहु उपाइन इह अबै करहु क्रितारथ नाथ!
सबद भोग पउड़ी कही गुर कलजुग के साथ॥ ६१॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 854

उस समय कलयुग ने कहा, ''मैं तो बहुत भाग्यशाली हूँ आपने इस युग में नर-रूप धारण किया, महाराज! मेरी कोई तो भेंट आप स्वीकार करो। जब तक आप कोई भेंट अंगीकार नहीं करोगे तब तक मेरा मन शान्त नहीं होगा।'' तब गुरू महाराज जी ने कहा, ''यदि तू भेंट करना चाहता है तो यह वचन दे कि जो प्रभु भजन करते हैं, उनके नाम-दान-स्नान को कभी मत भुलाना। तेरी परछाईं उन पर न पड़े, जिन्हें मेरे वचनों पर पूरा भरोसा है।'' उस समय कलयुग ने कहा, ''मैं तुम्हारा हुक्म सिर माथे पर रखता हूँ।'' साथ ही बोला, ''मुझे ऐसा ही हुक्म हुआ है कि सभी को धर्म से विमुख कर देना। चोरी, निन्दा, लोभ तृष्णा बहुत बढ़ा दूँ, लुटेरे पैदा हो जायें, जो अपने आपको सूरमा कहलवायेंगे। चुगलखोर अपने आपको बहुत बड़ा मानेंगें। गुणवान लोगों का मैं निरादर करूंगा। राजसी नेताओं के पास मूर्खों का इकट्ठ होगा। घर पापों के मन्दिर होंगे। पुन्य दान से हीन कन्जूस उसमें रहेंगे; धर्म से विपरीत बातें करेंगे। ब्राह्मण लोग जो ब्रह्म की विचार करते हैं, वेदों का पाठ करते हैं, दान लेते हैं, दान देते हैं, यज्ञ करते हैं, यज्ञ करवाते हैं, मैं उन्हें इन कार्यों से हटा कर किसान बनाऊँगा। पर उनका आदर बहुत होगा, जो ब्रह्म की विचार करने वाले होंगे। राजा लोग हमेशा यही कहेंगे कि उनके पास पैसा नहीं है। गृहस्थियों के पास वस्त्रों के अम्बार लगे होंगे, परन्तु तृष्णा नहीं बुझेगी और महाराज जी मैं क्या बताऊं? सभी तप, व्रत, धर्म, उपासना, मैं एक ही बार अपनी फौज भेज कर नाश कर दूंगा। महाराज! मुझे दरगाह से हुक्म ही ऐसा मिला हुआ है जैसा कि लिखा है -

आइसु अस करतार की सो तुमरी ही होइ।
अब जिह बिधि उचरो प्रभू! मैं मानोंगा सोइ॥ ७६॥ श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 855

आपने मेरी कोई भी भेंट अंगीकार नहीं की। यदि आप कुछ भी ले लेते तो मुझे बहुत खुशी होती। महाराज जी ने कहा, ''हम तेरे सच को सुन कर बहुत प्रसन्न हुए हैं। यदि तूने भेंट देनी ही है, तो हम तुझ पर तभी प्रसन्न होंगे, सभी युगों से तेरा तेज़ बढ़कर होगा। यह हमारा हुक्म है। तेरे समय में वाहिगुरू, परमेश्वर के नाम की कीर्ति बढ़ेगी। सतयुग में 10 हज़ार साल में शुभ कर्म करता है, त्रेता में एक हज़ार साल, द्वापर के 100 साल के शुभ कर्म, जप तप तेरे युग में एक घड़ी भर किये गये सत्संग के बराबर होंगे। पर तेरे समय में बहुत ही कम समय में सारा सुख मिल जायेगा। तेरे समय में हरि का कीर्तन तथा नाम का जप बहुत अधिक फलीभूत होगा। जो इस रास्ते पर चलेगा, वह तत्काल ही भवजल से पार हो जायेगा।''

कलयुग के समय में और प्राचीन काल में काफी अन्तर है। सतयुग में रहने वाले प्रेमियों की कोई तृष्णा नहीं थी। किसी चमक-दमक की कोई ज़रूरत नहीं थी और काफी लम्बी-लम्बी आयु भी कच्चे मकानों में बिता देते थे। आज तो आयु बहुत ही छोटी है परन्तु कोठियां बहुत बड़ी-बड़ी बना लेते हैं। इस संसार से कब चले जाना है, इस बात का तो पता ही नहीं है पर -

गहरी करि कै नीव खुदाई ऊपरि मंडप छाए।
मारकंडे ते को अधिकाई जिनि त्रिण धरि मूंड बलाए॥ *पृष्ठ - 692*

कहते हैं मार्कण्डे जी ने सारी आयु एक छपरी में ही बिता दी थी। कलयुग ने कहा, ''मेरे युग में चमक दमक बहुत होगी। हर चीज़ उपलब्ध होगी। ऐसी-ऐसी वस्तुएं बन जायेंगी कि लोग देखते ही रह जायेंगे। टैलिविज़न, टैलिफोन, इन्टरनैट ऐसी-ऐसी चीज़ें आ जायेंगी कि मनुष्य उन्हें देखकर दंग रह जायेंगे। एक ही स्थान पर बैठा सारी दुनियाँ से बात कर लेगा। वह परमेश्वर का नाम ही नहीं लेगा। हम देखते हैं कि हमें टैलिविज़न ही दम नहीं लेने देता। इतने अधिक चैनल हो गये हैं यदि एक आध चैनल पर परमेश्वर का नाम आ रहा हो, तो उसे बहुत कम देखना पसन्द करते हैं। यदि किसी गाने वाले का प्रोग्राम हो तो इतना इकट्ठ हो जाता है कि पुलिस को प्रबन्ध करना कठिन हो जाता है। महाराज जी ने कलयुग की भेटों के बारे में उच्चारण किया -

धारना - किते भुल ना जाईं ओए मना मेरिआ,
मोतीआं दे मंदर देख के - 2, 2
मेरे पिआरे, मोतीआं दे मंदर देख के - 2, 2
किते भुल न जाईं ओए मना मेरिआ, ... -2

मोती त मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ।
कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ।
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ॥ *पृष्ठ - 14*

गुरू महाराज जी ने कहा, ''कलयुग! जो बादशाहीयां तू देता है, ये नरकों को ले जाने वाली हैं, इनमें फस जाने के बाद आदमी नाम को भूल कर, जन्म व्यर्थ गंवा देता है। नाम जपने वाला ही असली राजा है। उसकी समानता संसारी राजा, विद्वान कोई नहीं कर सकता -

पंडित सूर छत्रपति राजा भगत बराबरि अउरु न कोइ॥ *पृष्ठ - 858*

महापुरुष असली राजा हुआ करते हैं, जिनका कहना दरगाह में भी माना जाता है -

जा का कहिआ दरगह चलै। सो किस कउ नदरि लै आवै तलै॥ *पृष्ठ - 186*

उनका हुक्म सभी लोकों में मान्य होता है। धर्मराज भी मानता है। जैसे धर्म राज को, राजा जनक ने नरकों में से सारे पापियों को छोड़ने का हुक्म दिया था। जब जीव को संसार में भेजा जाता है, तो उस समय प्रारब्ध कर्म उसके साथ आते हैं। इन्हें कोई भी नहीं बदल सकता। महापुरुषों के पास veeto Power होती है जो बदल देते हैं। जैसे कि प्रारब्ध कर्म हैं पुत्र की प्राप्ति न होना, परन्तु पूर्ण महापुरुष इस होनी के तीखे दाँतों को काट देते हैं। कितने ऐसे महापुरुष हुए हैं जिन्होंने निस्संतानों को, प्रार्थना करने पर, सन्तानें वरदान में दीं, किसी को स्वास्थ्य, किसी को पुत्र और भी जो कुछ जिसने मांगा, दे दिया।

गुरू छठे पातशाह चब्बे गाँव के पास से गुज़र रहे हैं, वहाँ एक माई इस आशा से इन्तज़ार कर रही है कि जब गुरू महाराज आयेंगे, तो मैं पुत्र की दात प्राप्त करूंगी। बाबा बुड्ढा जी और भाई गुरदास जी

ने कहा, ''तेरी किस्मत में तो कई जन्मों से पुत्र की दात नहीं है। तेरे सात जन्मों तक पुत्र नहीं होगा। तू अपने साथ कलम दवात ले लेना और फिर गुरू महाराज जी से प्रार्थना करना।'' यदि महाराज कहें कि तेरे तो भाग्य में पुत्र की दात लिखी ही नहीं, तब तू प्रार्थना करना, ''पातशाह! यहाँ भी आप ही लिखते हो, वहाँ भी आप ही लिखते हो। यदि पहले नहीं लिखा तो अब लिख दो।''

जब गुरू छठे पातशाह वहाँ पहुँचते हैं, उस समय माता ने बेनती की, ''पातशाह! आप सारी दुनियाँ के मालिक हो कृपा करके एक पुत्र की दात बख्श दो।'' गुरू महाराज ने कहा, ''माता! तेरे भाग्य में तो पुत्र का लेख ही नहीं लिखा। सात जन्मों तक तेरे भाग्य में पुत्र का सुख नहीं है।'' तब उस समय उस भोली भाली माता ने कहा, ''महाराज! अब लिख दो।'' महाराज जी उसके भोले पन पर बहुत प्रसन्न हुए। उसने कलम दवात आगे कर दी। गुरू महाराज ने यह भी अनुभव कर लिया कि किसी गुरसिख ने युक्ति बताई है। गुरू महाराज जी काठी पर कागज़ रख कर जब १ लिखने लगे तो घोड़े ने पैड़ हिला दी और १ का मुँह खुला रह गया और ७ वाली शक्ल का सा रूप धारण कर गया। उस समय गुरू महाराज जी ने कहा, ''माता! घोड़े ने तेरी सहायता की है और १ की जगह ७ बन गया, अब तेरे सात पुत्र होंगे।'' कहने लगी, ''महाराज! मुझे सात पुत्रों की ही ज़रूरत थी। एक पुत्र घर की देख भाल करेगा, दूसरा पशुओं की देख भाल करेगा, तीसरा भाई चारे में जायेगा, चौथा राज दरबार में आया जाया करेगा, एक को मैं आपके चरणों में हाज़िर करना चाहती थी। बाकी दो और काम करेंगे। आपने तो मुझे सारे ही पुत्र दे दिए। बाणी में ऐसा फ़रमान आता है -

कहु कबीर भगति करि पाइआ। भोले भाइ मिले रघुराइआ॥ *पृष्ठ - 324*

दुनियाँ का बादशाह तो बादशाह ही होता है। दरगाह के बादशाह का नाम 'सच्चा पातशाह' होता है। बादशाहों के बादशाह गुरू नानक ने, इसीलिये कलयुग द्वारा भेंट की गई बादशाहियां स्वीकार न कीं। गुरू महाराज ने हवा के झौंके के समान बताई। सच्चा राजा वह है, जिसने अपने अन्दर के मन राजा पर विजय पा ली है, बुद्धि को, तत्व बुद्धि प्राप्त करवा कर, परमेश्वर को हाज़िर नाज़िर माना है, वही सच्चा पातशाह होता है -

राजा सगली त्रिसटि का हरि नामि मनु भिंना॥ *पृष्ठ - 707*

परमेश्वर के मुकाबले में कोई राजा नहीं -

कोऊ हरि समानि नही राजा।
ए भूपति सभ दिवस चारि के झूठे करत दिवाजा॥ *पृष्ठ - 856*

गुरू महाराज कलयुग से कहते हैं कि यह दुनियाँ का राज्य किसी काम का नहीं है। ये चीज़ें जो हमें भेंट कर रहा है, ये तो परमेश्वर को भुलाने वाली चीज़ें हैं जैसे कि-

राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु॥ *पृष्ठ - 811*

कलयुग, हमें तो निरंकार ने सच्ची पातशाही दी हुई हैं, जिस किसी के अन्दर सिफत सलाह बस जायेगी, वह बादशाहों का बादशाह होता है -

जिस नो बखसे सिफति सालाह। नानक पातिसाही पातिसाहु॥ *पृष्ठ - 5*

गुरू छठे पातशाह महाराज जहाँगीर के साथ जंगल में शिकार वगैरा के सम्बन्ध में गये। दोपहर का वक्त था। आपने सघन वृक्षों में कैम्प लगा दिये। जहाँगीर ने एक बार गुरू महाराज जी के पास शिकायती लिहाज़ में बात की, ''मैं हज़ारों एकड़ भूमि का मालिक हूँ, मुझे लोग बादशाह कहते हैं, परन्तु

मैंने सुना है, आपको सच्चा पातशाह कहते हैं।'' गुरू महाराज कहने लगे, ''जहाँगीर! हमने तो किसी को नहीं कहा कि हमें कोई सच्चा पातशाह कहे, परन्तु अपनी-अपनी भावना के अनुसार, प्यार वाले प्रेमी, सच्चा पातशाह कहते हैं।'' महाराज ने कहा कभी समय आयेगा प्रत्यक्ष रूप में हम तुम्हें समझायेंगे।

आज आप के कैम्प बाहर लगे हुए हैं। उस समय एक घसियारे को पता चला कि गुरू महाराज जंगल में आए हुए हैं। उसने महाराज जी के घोड़े के लिये बहुत बढ़िया घास की गठड़ी बान्धी और गुरू महाराज जी को भेंट करने के लिये चला गया। वहाँ पर दो कैम्प लगे हुए थे। उसे पता न चला कि इनमें से गुरू महाराज जी का कैम्प कौन सा है और इस तरह पहले वह जहाँगीर के कैम्प के सामने चला गया। उसने सिपाहियों से पूछा तो उन्होंने उसे रोक लिया और कहा कि तुम अन्दर नहीं जा सकते। जहाँगीर ने भी सुना कि उसे कोई सच्चा पातशाह कहने वाला आ गया है। कहने लगा, ''इसे मत रोको, मेरे पास भेज दो।'' जब वहाँ पहुँचा तो उसने घास की गठड़ी आगे रख दी और पाँच पैसे निकालकर रख दिये तथा प्रार्थना की –

धारना - जी मैं बहुड़ जनम न आवां,
इहो मेरी बेनती गुरा - 2, 2
इहो मेरी जी बेनती गुरा - 2, 2
जी मैं बहुड़ जनम न आवां - .... -2

एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा॥ ***पृष्ठ - 795***

जहाँगीर बड़ा हैरान हो गया कि जन्म मरण दरगाह का प्रबन्ध तो मेरे हाथ में नहीं है, जीव कर्मों के बन्धे हुए आते हैं, मैं तो स्वंय ही बेबस हूँ, मैं किसी का क्या जन्म मरण काटूंगा? मुझसे तो अपना ही जन्म मरण का बन्धन नहीं टूटता।'' जहाँगीर ने कहा, ''यह मत मांग, मैं इसके बदले पाँच गाँव दे देता हूँ, तेरी गरीबी दूर हो जायेगी।'' घसियारे ने ऐसा करने से मना कर दिया। यहाँ तक लिखा है कि उसे गवर्नर नवाब बनाने की पेशकश की, परन्तु वह न माना तब जहाँगीर को कहना पड़ा, ''मैं तो दुनियाँ का बादशाह हूँ, जब मेरी मौत आयेगी, वहाँ कब्रों में पड़ा हुआ रोऊंगा। अन्य लोगों की तरह मेरे ऊपर भी मिट्टी पड़ी होगी। यदि तू जन्म मरण का चक्कर खत्म करना चाहता है तो वह सामने गुरू महाराज बैठे हैं, वही जन्म मरण काट सकते हैं।''

वह घसियारा घास की गठड़ी और पाँच पैसे उठाकर गुरू महाराज के पास चला गया और ज़ोर-ज़ोर से रोये जा रहा है, कहता है, ''महाराज! मेरा सिर उसके सामने झुक गया, मैं तो यह घास की गठड़ी आपके घोड़े के लिये लाया था। महाराज कृपा करो, मेरा जन्म मरण काट दो।'' गुरू महाराज ने उसका भोलापन, श्रद्धा देखकर गुरसिख से कहा, ''निहाल-निहाल-निहाल।'' जहाँगीर भी देख रहा था कि गुरू महाराज ने तो इसके जन्म मरण काट कर, सच्ची दरगाह में प्रवेश करवा दिया। अतः इस प्रकार बन्दगी करने वालों का हुक्म दरगाह में भी चलाता है। यहाँ तक कि उनका कहा हुआ पानी, पवन, अग्नि भी मानते हैं।

गुरू नानक साहिब ने कलयुग से कहा, ''ये सांसारिक वस्तुएं सभी नाशवान हैं। हमें तो नाम की दात धुर दरगाह से प्राप्त हुई है। अन्य किसी सांसारिक वस्तु की जरूरत नहीं है।''

कुछ प्रेमी ईर्ष्या वश कह दिया करते हैं कि गुरू नानक पातशाह का गुरू, सन्त रैण था, जहाँ पर उन्होंने खरा सौदा किया। परन्तु गुरू महाराज जी ने अपने गुरू का कहीं भी उल्लेख नहीं किया। गुरू

महाराज तो फ़रमान करते हैं –

ततु निरंजनु जोति सबाई सोहं भेदु न कोई जीउ।
अपरंपर पारब्रहमु परमेसरु नानक गुरु मिलिआ सोई जीउ॥ *पृष्ठ - 599*

गुरू दशमेश पिता जी ने चौपई में फ़रमान किया है –

आदि अंति एकै अवतारा। सोई गुरू समझियहु हमारा॥ *कब्यो बाच बेनती चौपई*

गुरू नानक पातशाह को निरंकार जी, ऐकंकार रूप होकर मिले। जन्म साखी में आता है कि गुरू नानक पातशाह को मन्त्र ऐकंकार जी की दरगाह में से प्राप्त हुआ –

१ओंकार सतिनामु करता पुरुखु निरभउ निरवैरु
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुर प्रसादि॥

जन्म साखी में ऐसा भी आता है कि ऐकंकार जी ने नाम अमृत का प्याला दिया और कहा, ''यह मेरे नाम अमृत का प्याला है, यह तू पी ले। मेरे नाम अमृत की महिमा गा।'' शब्द उच्चारण हुआ–

कोटि कोटी मेरी आरजा पवणु पीअणु अपिआउ।
चंदु सूरजु दुइ गुफै न देखा सुपनै सउण न थाउ।
भी तेरी कीमति न पवै हउ केवडु आखा नाउ।
साचा निरंकारु निज थाइ।
सुणि सुणि आखणु आखणा जे भावै करे तमाइ।
कुसा कटीआ वार वार पीसणि पीसा पाइ।
अगी सेती जालीआ भसम सेती रलि जाउ।
भी तेरी कीमति न पवै हउ केवडु आखा नाउ।
पंखी होइ कै जे भवा सै असमानी जाउ।
नदरी किसै न आवऊ ना किछु पीआ न खाउ।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ।
नानक कागद लख मणा पड़ि पड़ि कीचै भाउ।
मसू तोटि न आवई लेखणि पउणु चलाउ।
भी तेरी कीमति ना पवै हउ केवडु आखा नाउ॥ *पृष्ठ - 14*

आपने फ़रमान किया, ''हे अकाल पुरुष! तेरा हुक्म अपार है, जिसका कोई पारावार नहीं पा सकता।'' अकाल पुरुष कहने लगे, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तू गुरू परमेश्वर। जो तेरे ऊपर विश्वास करेगा, उसे मेरी दरगाह प्राप्त होगी। जो इस मन्त्र का पाठ करेगा, वह मुझे प्राप्त होगा –

१ओंकार सतिनाम करता पुरखु निरभउ निरवैर
अकाल मूरति अजूनी सैभं गुरप्रसादि जपु॥ *पृष्ठ - 1*

इस मूल मन्त्र पर तुम अपनी मोहर लगाकर सम्पूर्ण कर दो। गुरू नानक पातशाह ने उच्चारण किया–

आदि सचु जुगादि सचु है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ *पृष्ठ - 1*

निरंकार जी ने कहा, ''हे नानक! यह मन्त्र पूरा हो गया। इसका जो ज़िन्दगी भर पाठ करेगा और इसे समझने का यत्न करेगा, वह मेरी दरगाह में अवश्य आकर प्रवेश करेगा, उसे दरगाह में स्थान मिलेगा।''

यदि किसी के पल्ले नाम की दौलत न हो, नाम धन न कमाया हो, अन्य हर प्रकार की प्राप्तियां हों, तो समझो उसे कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ।

जब मैं यू.पी. में था, अपने फार्म पर खेती करता था, गन्ना बोया करता था। गन्ने को रामपुर लेकर जाया करता था। एक बार ऐसा हुआ कि वहाँ पर कई मिलों का मालिक जिसे डालमियाँ कहते थे, उसे किसी कानून का उल्लंघन करने पर जेल भेज दिया गया। उसने प्रार्थना पत्र भेजा कि उसे चार डाक्टर देखने के लिये आएं। वे डाक्टर भी जेल में साथ ही गये। वे कभी Blood Pressure देखते हैं, कभी दिल की गति देखते हैं तो कभी पेशाब वगैरा चैक करते। इतना धन कमाने के बाद भी लाभ तो कुछ न हुआ? आनन्द तो बिल्कुल भी न आया? महाराज कहते हैं –

ऐसा जगु देखिआ जूआरी। सभि सुख मागै नामु बिसारी॥ *पृष्ठ - 222*

इसी प्रकार **नाम को भूलने पर अन्दर का कमल फूल जल जाता है** –

धारना - जल बल जावे जीउड़ा नाम तों बिना - 2, 2
नाम तों बिनां जीउड़ा, नाम तों बिना - 2, 2
जल बल जावे जीउड़ा नाम तों बिना - 2

अतः कलयुग की बात मैं दूसरी बार बताता हूँ कि जब गुरू महाराज ने कोई भी भेंट परवान न की तो आपने कहा, ''यदि तू हमारा वचन मान लेगा तो हम तुझ से प्रसन्न हो जायेंगे। आपने जो कुछ फ़रमान किया, वह इस प्रकार है –

जे सिख हैं मेरे हितकारी। तिन पर सैन न जाइ तुमारी।
नामु दान इशनान जे सभि ही। इन ते नहीं भुलावहु कबही॥ ६६॥
तव छाया नहिं बरतै तिन को। मोर बचन मैं निशचा जिनको॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 854

तेरी परछाईं भी इनके ऊपर नहीं पड़नी चाहिये जो गुरू की बाणी को सत्य-सत्य करके मानते हैं, जो अपनी नेक कमाई में से दान देते हैं, उन पर तू अपना प्रभाव मत डालना। दान खेत पहचान कर दिया जाता है, वहाँ पर दान सहस्त्र गुणा बढ़ता है। गुरू घर में गुरमुख नाम-दान-स्नान से बन्धा हुआ है। आत्म दान सबसे श्रेष्ठ होता है, भूले भटकों को बन्दगी करने में लगा देना, नाम जपना, दान करना और तीसरा कर्म स्नान हुआ करता है। पहर रात रहते जागना तथा सावधान होकर, स्नान करते समय ऐकंकार जी का ध्यान करना तथा मूल मन्त्र का पाठ करते रहना। इसका फल बहुत अधिक हुआ करता है।

एक बार गुरू अंगद साहिब महाराज जी से पूछा, ''स्नान करने का क्या लाभ होता है?'' तो ऐसा लिखा हुआ है कि गुरू महाराज जी ने कहा, ''हे पुरुष! जो पहर रात रहते हुए स्नान करता है, मन चित्त एकाग्र करके ऐकंकार जी का ध्यान करता है, वह सवा मन सोना दान करता है और जो दो घड़ी बाद स्नान करता है, उसे सवा मन चांदी दान करने का लाभ प्राप्त होता है। जो दो घड़ी और बाद स्नान करता है, उसे सवा मन तांबा दान करने का फल प्राप्त होता है। जो दो घड़ी रात रहते स्नान करता है, उसे सवा मन दूध या अन्न दान का फल प्राप्त होता है। इसलिये हमारा शरीर नाम-दान-स्नान के High Way पर चलता है परन्तु एक बात का ध्यान रखना पड़ता है कि पुण्य दान करके स्वर्ग की इच्छा न करे। अन्यथा स्वर्ग लोक भोग कर फिर धरती पर आ जाता है ऐसा करने से परम पद की प्राप्ति में रूकावट पैदा हो जाती है –

पुंन दानु जो बीजदे सभ धरमराइ कै जाई॥ *पृष्ठ - 1414*

फिर धर्मराज के पास जाना पड़ता है। गुरू का सिख धर्मराज के पास नहीं जाता। वह नरकों

में जाने से डरता है परन्तु वह नरकों स्वर्गों की कोई भी काण नहीं काटता –

कवनु नरकु किआ सुरगु बिचारा संतन दोऊ रादे।
हम काहू की काणि न कढते अपने गुर परसादे॥ पृष्ठ – 969

सो स्वर्ग की इच्छा न करे और नरक में गुरसिख जाता ही नहीं, सो उसे डरने की आवश्यकता नहीं है।

फिर इसमें प्रश्न उठता है कि हमें जो स्नान का इतना पुण्य मिलता है, फिर फल तो मिलेगा ही। यदि तो पुण्य की इच्छा है, फिर तो भोगना ही होगा। यदि कर्तापन गुरू के अर्पण कर दे, तब उसकी अवस्था कुछ और ही हो जाती है। उसका गुरू मालिक होता है। गुरू महाराज जी ने दान करने का भी विधान बान्ध दिया है। जैसा कि गुरू महाराज जी के एक सवैये में उल्लेख आता है –

सेव करी इनही की भावत, अउर की सेव सुहात न जी को।
दान दयो इनही को भलो, अरु आन को दान न लागत नीको।
आगै फलै इन ही को दयो, जग मै जसु, अउर दयो सभ फीको।
मो ग्रहि मै तन ते मन ते, सिर लउ धन है सभ ही इनही को॥
गिआन प्रबोध पातशाही १०

इस प्रकार स्नान करने में भी भेद हुआ करते हैं। एक तो शरीर का स्नान करते हैं, जिससे शरीर की मैल दूर हो जाती है तथा शरीर के कण-कण में पानी द्वारा आक्सीजन प्रवेश कर जाती है। जिससे हम आलस्य त्याग कर प्रभु के ध्यान में लीन हो सकते हैं। दूसरा बाणी का स्नान होता है जिसमें गुरबाणी पढ़ना है क्योंकि फीका बोलने से तन-मन फीका हो जाता है तथा गुरू महाराज जी की सख्त ताकीद है –

फिका दरगह सटीऐ मुहि थुका फिके पाइ॥ पृष्ठ – 473

सब का भला मनाना, किसी से भी वैर न करना, विरोध न करना, मन में कभी भी गुस्सा न लाना। चौथा स्नान बुद्धि का हुआ करता है। बुद्धि में निर्मल मत धारण करना, गुरू की बाणी पढ़ना, उसके अर्थों पर विचार करना, विचार करके हृदय में धारण करना, ऐसा करने से बुद्धि का स्नान हो जाता है।

पाँचवा स्नान सबसे श्रेष्ठ स्नान आत्म चिन्तन करना है। आत्मा और परमात्मा को एक रूप करने के लिये साधन करना, सिमरण करना होता है जिसे आत्मिक स्नान कहते हैं। गुरू महाराज का फ़रमान है –

सचु तां परु जाणीऐ जा आतम तीरथि करे निवासु॥ पृष्ठ – 468

ब्रह्म की परिपूर्णता में अपने आपको लीन करना। सो ये स्नान हुआ करते हैं। गुरू महाराज ने कलयुग को मना किया था कि जो गुरसिख इन कर्मों में प्रवृत्त हो, उन पर तू अपनी परछाईं मत पड़ने देना। ऐसे ही व्यर्थ में तू इन्हें मेरी संगत करने से भुला मत देना। उस समय दोनों हाथ जोड़कर, नमस्कार करके कलयुग ने कहा, ''आपकी कृपा चाहिए और मैं आपका हुक्म परवान करता हूँ।''

धारना – कर लिआ प्रवान जी, दिता जो हुकम गुरां ने – 2, 2
दिता जो हुकम गुरां ने – 2, 2
कर लिआ प्रवान जी,........2

उस समय कलयुग ने कहा, ''हे पातशाह! आपका हुक्म मान कर मुझे इससे अधिक और

किसी चीज़ की भी प्रसन्नता नहीं होगी। परन्तु मैं एक बेनती करता हूँ कि यदि हजूर का हुक्म हो तो इसके बारे में प्रार्थना करूं?'' गुरू महाराज जी ने कहा, ''कहो।'' कहने लगा, ''जो आपके पंथ में पाखण्डी लोग आ जायेंगे, दम्भ करेंगे, अपने आपको पूरा कहलवायेंगे लेकिन होंगे उलट वृत्ति वाले, अपनी महिमा के लिये ऐजेन्ट रखेंगे, आडम्बर दिखायेंगे। पातशाह! वहाँ तो मैं अपना पूरा जोर दिखाऊंगा। जो तेरी हजूरी में निरादर करें, चाहे वह मन्दिर हो या गुरूद्वारा या मस्जिद। यह आज्ञा मैं आपसे लेनी चाहता हूँ।'' गुरू महाराज ने कहा, ''हमने तो तुझे कहा है कि जो गुरसिख सच्चे दिल से बाणी पढ़ेंगे, उन्हें कोई नुकसान मत पहुँचाना। जो भेषी हैं, वे हमारे सिख नहीं हैं क्योंकि भेषियों के बारे में महाराज जी ने कहा है –

भेख दिखाइओ जगत कउ लोगन कउ बस कीन।
अंत काल काती कटिओ बास नरक मो लीन।

सो इस तरह कलयुग ने अति अधीनता के साथ सारे हुक्म मान लिये और चरण पकड़ लिये तथा प्रार्थना की, ''सतयुग में हंसा अवतार, त्रेता में 14 कला सम्पूर्ण श्री राम चन्द्र जी आए और द्वापर युग में 16 कला सम्पूर्ण कृष्ण महाराज आये। मैं कितना भाग्यशाली हूँ कि निरंकार आप स्वंय साकार रूप धारण करके मेरे युग में प्रकट हुए हैं –

आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ।। *पृष्ठ - 1395*

कलयुग ने फिर प्रार्थना की, ''हे परमेश्वर रूप सतगुरू नानक पातशाह जी! मुझे कितनी खुशी हुई है, आपके दर्शन करके जो डयूटी मेरे ज़िम्मे लगी है, जीवों को भ्रमित करने की, उन्हें सच्चे पथ से भटकाने की, उसमें मेरा दोष नहीं है। तीनों युगों से जीव प्रभु भक्ति में लगा हुआ है। सतयुग में सत्य बोलता था, सत का ध्यान करता था, त्रेता में यज्ञ आदि करता था, द्वापर में अनेक प्रकार की पूजा करते थे, मनुष्य को इस समय के लम्बे चक्र में उन्नति करनी चाहिये थी। वह मेरे युग में अपनी यात्रा खत्म कर लेता है, मेरी कोई ऐसी आशा नहीं है कि मैं जीवों को भ्रमित करूं। मुझे जो परमेश्वर जी ने मायिक पदार्थों में अनेक प्रकार की अक्ल, बुद्धि, दंग करने वाली खोजों में वरदान दिये हैं, वे इसके जीवों को मेरे युग में प्रालब्ध अनुसार प्राप्त होती हैं। चाहिये तो यह था कि वह इन वरदानों को प्राप्त करके परमेश्वर की महिमा में अपने आपको लिप्त करता, परन्तु यह जीव अनेक प्रकार के वरदानों, अनेक प्रकार की प्राप्तियों की वासनाओं में बुरी तरह से लिप्त हो गया है तथा और अधिक-अधिक मांगे जा रहा है। सर्व शान्ति जो सतयुग में थी, जो चरित्र त्रेता तथा द्वापर में थे, वे उससे छिन गया। कई लोग मेरे युग को कला का युग कहकर कलयुग कह देते हैं। मायिक पदार्थों की चकाचौंध में ग्रसित यह जीव, परमेश्वर को भूलकर अपना जीवन बिता रहा है। परमेश्वर को भूलने से सदगुण अलोप हो गये। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, वैर-विरोध, राग द्वैष में लिप्त हो गया। हे प्रभु जी! आप इसीलिये संसार में गुरू पातशाह का रूप धारण करके प्रकट हुए हो, मैंने अपनी बड़ी सख्त से सख्त कसौटी लगाकर परख की है जो मेरी बहुत बड़ी भूल थी। कृपा करो, मेरी भूल (गलती) क्षमा कर दो। परन्तु पातशाह जी! मैं कैसे बताऊं कि मेरे जैसा सौभाग्यशाली और कोई नहीं है और कोई युग नहीं है, जिसमें आपका प्रकाश इस युग में हुआ। मुझे लोक-शास्त्र तथा धार्मिक पुरुष बहुत बुरा कहते हैं। मैं किसी को भी बुरे कर्मों की ओर प्रेरित नहीं करता परन्तु जो प्राकृतिक उपलब्धियाँ हैं, उन्हें पाकर और परमेश्वर को भूल कर, स्वंय ही माया के चक्कर में फंस रहा है। मेरे धन्य भाग्य हैं कि आप मेरे युग में प्रकट हुए और मुझे भाग्यशाली बनाया।''

इन सभी प्रार्थनाओं को सुनकर सतगुरू नानक पातशाह जी बहुत प्रसन्न हुए तथा उसकी विनम्रता और अधीनता को देखकर एक बार फिर फ़रमान किया, ''हे कलयुग! तू मेरी संगत को दुखी मत करना, अपने तमोगुणी प्रभाव, अपनी शक्तिशाली फौज का हमला गुरसिखों पर मत करना'' –

जे तुम देणा तौ इह दीजै। मम संगत को दुखी न कीजै॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 855

कलयुग ने फिर प्रार्थना की, ''महाराज! मुझे एक आज्ञा जरूर दें कि मेरी सेना का बल पाखन्डियों, धोखे बाजों के ऊपर जरूर पड़ना चाहिये, जो धर्म का बुरका पहन कर, अधर्म की बातें करते हैं तथा आप द्वारा दिये गये ज्ञान के विपरीत बातें करते हैं। उन पर मेरा प्रभाव रहने दीजिये। मैं आपको यह वचन फिर देता हूँ कि मैं आपके प्रेमियों का सेवादार बन कर रहूंगा।'' गुरू महाराज जी ये वचन सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और कहने लगे, ''कलयुग! तू हमारा वचन मान लेगा तो याद रखना, हम तेरा तेज़ बीत चुके तीन युगों से अधिक बढ़ाते हैं –

सभि जुग ते बड तेज तुमारा। होवहिगो इह वाक हमारा॥ ७८॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 855

तेरे युग में नाम की महिमा, कीर्तन की महिमा प्रधानता प्राप्त करेगी। कीर्तन भक्ति, सिमरण भक्ति, श्रवण भक्ति करके जीव का कल्याण होगा। तेरे युग में नाम की महिमा अति उच्च हो जायेगी। उसकी महिमा तो यहाँ तक होगी कि यदि एक बार भी चित्त की एकाग्रता से परमेश्वर का नाम यह जीव जपेगा तो उसका कल्याण हो जायेगा। जब हम वाणी पर विचार करते हैं तो उसमें फ़रमान आता है –

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूँ ते आध।
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ *पृष्ठ - 1377*

संगत की महिमा बहुत महान है। ऐसा महापुरुषों का मत है कि सतयुग में यदि कोई 10,000 साल तपस्या करे तो उसका फल त्रेतायुग में की गई, 1000 वर्षों की तपस्या के बराबर होता है। परन्तु विधि पूर्वक किये गये सत्संग की एक घड़ी इन सभी से अधिक शिरोमणी होती है। कलयुग में नाम बोने का मौसम होता है। इसमें नाम ही फलीभूत होता है। निरंकार जी का कलयुग को, धर्मराज को, यमदूतों को हुक्म है कि जहाँ मेरे प्यारे हरि यश करते हों, वहाँ पर तुमने नहीं जाना यदि जाओगे तो सजा मिलेगी –

जह साधू गोबिद भजनु कीरतनु नानक नीत।
णा हउ णा तूं णह छुटहि निकटि न जाईअहु दूत॥ *पृष्ठ - 256*

कलयुग कितना अच्छा युग है। इसके अन्दर जो कोई कुकर्म करता है, वही जवाब देही हुआ करता है। सतयुग में एक व्यक्ति के गलती करने से सारे देश को सजा मिलती थी, त्रेता युग में पूरी नगरी को सजा मिलती थी। द्वापर में उस परिवार को सजा मिलती थी। कलयुग में जो गुनाह करता है उसी को सजा मिलती है। यह परमेश्वर का सिद्धान्त है।

एक बार दो महापुरुषों में यह चर्चा चली। विश्वामित्र जी ने वशिष्ट जी से कहा, ''तपस्या करने से बहुत फल प्राप्त होता है।'' वशिष्ट जी बोले, ''इससे भी महान फल सत्संग करने से मिलता है।'' विश्वामित्र जी ने पूछा, ''सत्संग का फल कैसे महान हो सकता है?'' वह बोले, ''जहाँ हरि की कथा हो रही हो,

प्यास लगी हो तो पानी मिल जाता है, गर्मी लग रही हो तो पंखों का प्रबन्ध होता है, हर जगह सुख ही सुख होता है। इसके विपरीत तपस्वी के साथ ऐसा नहीं होता।'' दोनों का फल कैसे एक दूसरे से अधिक है। यह मानने के लिये दोनों में कोई भी तैयार नहीं था। उस समय दोनों ऋषि ब्रह्मा जी के मण्डल में गये और वहाँ पर इस बात का निर्णय करने के लिये कहा तो ब्रह्मा जी ने कहा, ''मैं इसके बारे में कोई निर्णय नहीं दे सकता। शिवजी महाराज जी, हर समय ध्यान में रहते हैं, उनके पास जाकर निर्णय करवाओ।'' उन्होंने शिवजी महाराज से पूछा तो उन्होंने कहा, ''विष्णु महाराज के पास जाओ, मैं इस बारे में कुछ नहीं कह सकता वैसे भी ऐसी बातों का समाधान विष्णु जी के पास ही होता है।'' जब विष्णु जी के पास गये तो आपने कहा, ''ऋषि जनो! मैं संसार को रिज़क देने का प्रबन्ध कर रहा हूँ। मेरे पास समय नहीं है, आप इस प्रश्न का समाधान शेष नाग से करवा सकते हो।'' महापुरुषों का ऐसा मत है कि शेष नाग जी द्वारा दो हज़ार नये नाम रोज़ परमेश्वर जी के लिये उच्चारण किये जाते हैं। जब आप शेष नाग जी के पास गये तो उन्होंने कहा, ''मैं परमेश्वर का नाम जपकर सारे तारे, सितारे, धरती का सन्तुलन बनाने में लगा हुआ हूँ। आप इस सन्तुलन को बिगड़ने से बचाने के लिये 10,000 साल का तप दे दो।'' तब विश्वामित्र जी ने तप दे दिया लेकिन धरती फिर भी डगमगाने से बन्द न हुई। वशिष्ट जी की बारी आई, उन्होंने कहा, ''मैं केवल चार घड़ी किये गये सत्संग का फल अर्पण करता हूँ।'' धरती डगमगाने से बन्द हो गई। शेष नाग ने कहा, ''मैंने क्या निर्णय करना है, निर्णय तो अपने आप ही हो गया? 58,000 साल का तप सन्तुलन कायम न रख सका, परन्तु चार घड़ी किये गये सत्संग ने डगडमाती हुई धरती को डगमगाने से रोक दिया।''

गुरू महाराज जी ने इस युग में नाम की महिमा प्रकट की है। यदि एक दत्त चित्त होकर परमेश्वर का नाम थोड़े से समय के लिये भी हृदय में बैठ जाये, तो उसके गले से जन्म मरण की फांसी कट जाती है। गुरू दशमेश पिता जी का फ़रमान करते हैं -

एक चित जे इक छिन धिआइओ काल फास के बीच न आइओ।

इसीलिये गुरू नानक पातशाह ने यह आज्ञा दी है -

धारना - कल्लू आइओ रे, इक नाम बीज लओ -2, 2
इक नाम बीज लओ - 4, 2
कलू आइओ रे.......... -2

अब कलू आइओ रे। इकु नामु बोवहु बोवहु।
अन रूति नाही नाही। मतु भरमि भूलहु भूलहु॥ पृष्ठ - 1185

कई प्रेमियों का ख्याल होता है कि इसका कोई प्रत्यक्ष स्वरूप बाणी में दर्ज़ है? इस सम्बन्ध में ध्यान दिलाया जाता है -

धारना - गती मिल गई जोगीआं वाली,
इक वारी राम बोल के - 2, 2
मेरे पिआरे, इक वारी राम बोल के - 2, 2
गती मिल गई जोगीआं वाली,.......... -2

इस सम्बन्ध में गुरू महाराज जी ने वाणी में फ़रमान किया है -

अजामल कउ अंत काल महि नाराइन सुधि आई।

जां गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥ *पृष्ठ - 902*

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा॥ *पृष्ठ - 632*

कलयुग में किसी नगर में एक राज पण्डित रहता था। उसके घर एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम अजामल रखा गया। जब वह विद्या पढ़ने लायक हुआ तो उसे एक पूर्ण महात्मा के पास विद्या अध्ययन के लिये भेज दिया गया। इस बालक की याद-दाश्त ऐसी थी कि जो कुछ एक बार पढ़ लेता, वह इसे जबानी याद हो जाता था। ऐसा लिखा हुआ मिलता है कि चारों वेदों, 27 स्मृतियों, उपनिषदों का उसने अध्ययन कर लिया। सारे भारत वर्ष में उसके नाम की चर्चा होने लगी। एक दिन गुरू ने बुला कर कहा, ''मन का कोई भरोसा नहीं हुआ करता। बड़े-बड़े ऋषि मुनि, जपी, तपी सभी मन के द्वारा मारे जा चुके हैं, तुम 18 वर्ष के हो गये हो, जवानी में पैर रख रहे हो। यह ऐसी आयु है, इसमें मनुष्य वासनाओं के वशीभूत होकर पतित हो जाता है। मनुष्य में यौवनास्था में माया का प्रभाव जल्दी पड़ जाता है। सभी कुछ जानता हुआ भूल जाया करता है। उसमें जवानी का खून खौलने लगता है। इसमें पाँच विकार जागते हैं। सबसे पहली प्रधानता नाम की हुआ करती है। लोभ, मोह, अहंकार पूरे जोर से उठते हैं। बेटा! मैं तेरा गुरू होने के नाते, तुझे उपदेश देता हूँ कि तू मन का भरोसा मत करना। मन जायज़ बात को भी नाज़ायज़ बना देता है। इस शहर में वेश्याओं का जो अधर्म का बाज़ार है, उसमें से मत निकलना।''

अजामल ने मन में बहुत क्रोध किया, मन में बड़ा रोष आया, मन उदास हो गया क्योंकि उसे अपनी विद्या पर बहुत मान था। उसे यह भी मालूम था कि मेरे गुरू सदा मुझ पर विश्वास करेंगे पर इन्होंने मेरे निश्चय के विपरीत मेरे उस ज्ञान को स्थान नहीं दिया। मुझे पता है कि यदि कोई आदमी पर स्त्री गमी हो जाता है, तो उसे दरगाह में लोहे की स्त्रियां बना कर, गर्म करके उनके साथ चिपकाया जाता है। मैं सभी कुछ जानता हूँ, मैं इन बातों में कैसे प्रवृत हो सकता हूँ। मुझ पर इस प्रकार का शक क्यों किया? उसमें अभिमान उमड़ आया। जब भी किसी के अन्दर अभिमान जाग्रत हो जाये तो उसका सम्बन्ध वाहिगुरू जी से टूट जाया करता है-

धारना - हाकां मार के वेद पए दसदे,
भावे न हंकार हरी नूं - 2, 2
मेरे पिआरे भावे न हंकार हरी नूं - 2, 2
हाकां मार के वेद पए दसदे,........... -2

हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि।
अहंकारि मुए से विगती गए मरि जनमहि फिरि आवहि॥ *पृष्ठ - 1089*

गुरू के साथ जब गुरसिख प्रेम करता है, उस समय वह पूरी तरह से गुरू के साथ जुड़ा होता है। उसका आपा भाव बहुत ही अणगौली गुप्त अवस्था में कायम रहता है, परन्तु जब उसके अन्दर अभिमान आ जाये, तो गुरू से प्यार का रिश्ता टूट कर हउमै उत्पन्न हो जाती है। हउमैं सभी विकारों की जड़ है। मन में पूर्ण अन्धकार पैदा कर देती है।

गुरू इतिहास में ऐसा उल्लेख आता है कि एक बार गुरू दशमेश पिता जी का दरबार लगा हुआ था। एक छोटा सा बालक जिसका शरीर काफी सुन्दर था, वह दीवान में इधर उधर भागा फिर रहा था, कभी संगत में बैठ जाता है, कभी खाली जगह देखकर गुरू महाराज के चरणों में सिर झुकाता और

वहीं बैठ जाता। उस बच्चे को देखकर गुरू महाराज ने पूछा, ''बेटा! तेरा नाम क्या है?'' वह पश्तो बोलता था, पेशावर की ओर से आया था। उस बच्चे ने कहा, ''वत जोगा।'' गुरू महाराज ने कहा, ''किस दे जोगा?'' (जोगा पंजाबी में योग्य को कहते हैं अर्थात किसके योग्य हो) कहने लगा, ''वत गुरू जोगा।'' अर्थात गुरू के लायक हूँ। महाराज जी ने भी फ़रमान कर दिया, ''यदि तू गुरू जोगा तो गुरू तेरे जोगा।'' अर्थात यदि तू गुरू लायक है तो गुरू तेरे लिये है क्योंकि जिसके हृदय में केवल गुरू का प्यार बस जाये गुरू उसी का हो जाया करता है।

वैसाखी के समागम की समाप्ति पर, घरों को वापिस जाने के लिये संगतें आज्ञा ले रही थीं। तब उस बालक के माता-पिता को आपने कहा कि उस बालक को गुरू जी के पास ही छोड़ जायें ताकि वह इसे पूरी तरह से विद्या प्रदान करेंगे। जवान हो जाने पर तुम इसे घर ले जाना। माता-पिता बहुत प्रसन्न हुए कि उनका बच्चा जहाँ गुरू का आदर्श सिख बनेगा, वहाँ बहुत बड़ा विद्वान भी होगा। हमारा नाम रोशन करेगा, कुलों का उद्धार करेगा।

इस प्रकार जोगा गुरू जी के पास रह गया और खूब विद्या प्राप्त करता रहा। जब 18 वर्ष का हुआ तो समागम की समाप्ति पर माता पिता ने प्रार्थना की, ''महाराज! बच्चा जवान हो गया है जी, आपने कृपा की और गुरमत मार्ग में गृहस्थ धर्म को बुरा नहीं माना गया है। आपकी आज्ञा हो तो हम इसका विवाह कर दें।'' गुरू महाराज ने उसे पूछा तो उसने कहा, ''महाराज! मैं तो आपके चरणों से दूर रह कर जीवित ही नहीं रह सकता।'' जैसा कि भाई गुरदास जी ने फ़रमान किया है -

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै।
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै।
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै।
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥ **पृष्ठ - 708**

मैं आपके दर्शनों के बिना जीवित नहीं रह सकता।'' उस समय आपने कहा, ''जोगा सिंघ! कोई बात नहीं गृहस्थ जीवन में प्रवेश करना ही पड़ता है। जब हमें ख्याल आयेगा तो हम तुझे चिट्ठी भेज कर बुलवा लेंगे।''

अत: जोगा अपने रिश्तेदारों के साथ चला गया। रिश्ता पक्का हो गया। बारात सज-धज के चल पड़ी। जब आनन्द कारज (विवाह की रस्म) होने लगी तो पहली लावाँ (विवाह के समय वर और वधु द्वारा की गई परिक्रमा) पढ़ी गई। गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज को शीश झुकाया। फिर दूसरी लावाँ पढ़ी गई। जब तीसरी लावां में परिक्रमा करने के लिये वह चलने लगे, उस समय गुरू महाराज जी ने एक गुरसिख को भेजा था और उसे कहा तीसरी लावां जब होने लगे, तो यह चिट्ठी पकड़ा देना। उस समय बड़ी फुर्ती के साथ वह पत्री, भाई जोगा सिंघ को दे दी। जोगा सिंघ रूक कर उसे पढ़ने लग गया। उसमें लिखा था कि इस पत्री को पढ़ते ही कदम आनन्दपुर साहिब की ओर बढ़ाना और कोई काम मत करना।

भाई जोगा सिंघ ने कन्धे पर रखा पल्ला उतारा और आनन्द पुर साहिब की ओर कदम बढ़ाकर चलने को तैयार हुआ। सम्बधियों, रिश्तेदारों ने कारण पूछा तो कहने लगा, ''गुरू महाराज जी के हुक्म के सामने यदि मेरा सिर भी क्यों न चला जाये पर मैं अपने सिदक से कभी पीछे नहीं हटूंगा।'' बहुत समझाया, परन्तु उसने कहा, ''मेरे गुरू का हुक्म है कि पहला कदम मेरी ओर ही बढ़ाना, इसलिये अब मैं बची हुई दो लावां पूरी नहीं कर सकता।''

प्राचीन समय में यदि ऐसी घटना घटित हो जाती जैसे दूल्हा समय पर ब्याह में हाज़िर नहीं हो सका हो या युद्ध वगैरा में गया हुआ हो, तो उसके द्वारा पहने जाने वाले अस्त्रों शस्त्रों के साथ लावां पूरी कर दी जाती थीं और वह शादी परवान मानी जाती थी।

सभी कुछ वहीं पर छोड़, जोगा सिंघ चलता हुआ लाहौर आ पहुँचा। मन में ख्याल आया कि दरबार साहिब स्नान करता चलूं। रात उसने वहीं बिताई, स्नान किया और अढ़ाई घंटे सिमरण में बैठा तथा प्रार्थना की क्योंकि उन दिनों आनन्दपुर साहिब के लिये होशियारपुर से निकल कर ही आना पड़ता था। जब वह चलता-चलता होशियार पुर पहुँचा, उस समय दिन छिपने वाला था। दो घंटे का समय बाकी बचा था, उसने सराय में कमरा लेकर घोड़े को बान्ध दिया। आप शहर में घूम कर आने की तैयारी करने लगा। जब अमृतसर से चला था, उसने बहुत से सिखों को स्नान करते देखा था, उस समय उसके मन में विचार उठा कि ये बेशक अमृत सर सरोवर में स्नान कर रहे हैं, परन्तु मेरे जैसा इनमें से कोई नहीं, जिसने गुरू के हुक्म पालन में, सुन्दर कन्या के साथ विवाह होते हुए, दो लावां बीच में ही छोड़ दीं। एक ही विचार बार-बार मन में उठने लगा कि मुझ से बड़ा सूरमा और कोई नहीं है, मेरे जैसी कुर्बानी और कोई नहीं कर सकता? इतिहास में ऐसा आता है -

उर हंकार होइ कुछ आवा। बड उतम मैं करम कमावा।
अपर कौन इस बिधि करि सकै। प्रथम मिलि न त्रिय तजि गुर तकै॥ ११॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 5355

इस प्रकार जब अभिमान हृदय में उपजा तो उसके मन में विकार उत्पन्न हो गया। गुरू महाराज जी को यह अहंकार अच्छा न लगा। उन्होंने माया को प्रेरित करके उसकी शुद्ध मति छीन ली। जहाँ पर उसने डेरा डाला हुआ था, उसके सामने ही वेश्याओं का बाज़ार था। उसने एक खड़ी हुई वेश्या की ओर देखा और उसकी सुन्दरता पर मोहित हो गया। पाठ ही भूल गया, गुरू का प्यार भी भूल गया। गुरू महाराज का आदेश था -

एका नारी जती होइ, पर नारी धी भैण वखाणै॥ *भाई गुरदास जी, वार 12/4*

गुरू दशमेश पिता का फ़रमान है -

निज नारी के साथ नेहुं तुम नित बडयहु।
परनारी की सेज भूलि सुपने हूं न जैयहु॥ *रूप कुआर प्रथाइ, पाः १०*

सारे उपदेश भूल गया। काम से पीड़ित हुआ, बार-बार वेश्या के द्वार पर पहुँचता है। उस समय गुरू महाराज जी ने अपना बिरद पहचाना -

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल। सेवक कउ गुरु सदा दइआल।
सिख की गुरु दुरमति मलु हिरै। गुर बचनी हरि नामु उचरै।
सतिगुरु सिख के बंधन काटै। गुर का सिखु बिकार ते हाटै।
सतिगुरु सिख कउ नाम धनु देइ। गुर का सिखु वडभागी हे।
सतिगुरु सिख का हलतु पलतु सवारै।
नानक सतिगुरु सिख कउ जीअ नालि समारै॥ *पृष्ठ - 286*

आपने कहा कि इस समय सिख नरक कुण्ड में गोता लगाने को तैयार हो रहा है, हम यदि रक्षा नहीं करेंगे तो और कौन करेगा? बेशक वह भूल गया, परन्तु गुरू ने उसकी रक्षा की -

सिख की दशा गुरू तबि जानी। भरमयो करै धरम की हानी।
जे अबि हम न बचावहिं जाइ। अपर आनि को करै सहाइ॥ २६॥

धरम नसे, सिखी नहिं रहै। सिखी बिना नरक को लहै।
औचक जबि बिकार को होइ। उचिति बचावनि गुर को सोइ॥ २७॥

श्री गुर प्रताप सूरज ग्रंथ, पृष्ठ - 5356

गुरू महाराज ने वहाँ पर दरबान खड़ा कर दिया। जब भी वह वेश्या के द्वार पर जाता है, उसी समय दरबान उसे झिड़क कर पीछे हटा देता है। बार-बार वह जाता है और दरबान पीछे धकेल देता है। जब अमृत बेला हुई, दिन निकलने वाला हो गया, वह फिर भी उधर जाता। तब फिर चौबदार ने उसे झिड़का, ''प्यारे! देखने में तो तू सिख प्रतीत होता है, बन्दगी करने का समय तूने बर्बाद कर दिया। नरक में गिरने जा रहा है। जा, गुरू से अपनी गलती क्षमा करवा।''

सेज सोहनी चंदनु चोआ नरक घोर का दुआरा॥ *पृष्ठ - 642*

इस प्रकार गुरू, अपने सेवक को बचा लिया करता है। उस समय उसे होश आई। उसने कहा, ''मेरे सतगुरू ही मुझे चौबदार बनकर बचा रहे थे। अन्यथा मैं तो नरक कुन्ड में गिरने लगा था।'' अतः जिसके मन में अभिमान आ जाये, वह गुरू को नहीं रूचता और वह पतित हो जाता है।

अजामल ने गुरू के वचनों का मन में क्रोध किया कि वह इतना बड़ा विद्वान है और गुरू ने उस पर सन्देह किया। गुरू का प्यार, सिख के लिये बहुत ही आदर्शमयी होता है। माँ पुत्र से प्यार करती है, पर अन्दर छिपी हुई कोई न कोई वासना जरूर होती है। जैसे जब वह बूढ़ी हो जायेगी उसका शरीर काम नहीं करेगा, उसका पुत्र उसकी देख भाल करेगा। गुरू का प्यार विलक्षण होता है, वह सेवक को हमेशा जन्म मरण के चक्कर में से बाहर निकालने की इच्छा रखता है, जैसे माँ पुत्र को प्यार करती है, गुरू उससे भी ज्यादा प्यार करता है। यदि पुत्र गलती करता है तो माँ उसके अवगुणों को नहीं देखा करती। इसी प्रकार गुरू अपने सेवक को पापों से बचा लेता है। भूले भटके हुए को गले से लगा लेता है। गुरू कभी भी अवगुण नहीं देखा करता क्योंकि एक बार जब गुरू के बन गये, फिर गुरू नहीं छोड़ा करता। फिर वह अपना ही बना कर रखा करता है। सिख भूल गया, गुरू महाराज द्वार पर खड़े पहरा देते रहे फिर उसे सावधान किया, ''जाओ सिख, अमृत बेला हो गया है, नाम जपने का समय हो गया है।'' जोगा सिंघ ने जब ये वचन सुने तो उसके दिल को चोट लगी, इन वचनों ने उसे झकझोड़ दिया गया और कहने लगा, ''हैं! इतना जबरदस्त ताना, मुझे इस चौबदार ने मारा है। तू तो कहता था कि मेरे जैसा कोई सिख नहीं है और अब मैं ही कहता हूँ कि मेरे जैसा बुरा, कोई सिख नहीं है। एक दम गुरू को पीठ दिखाकर, यह जानता हुआ कि गुरू अर्न्तयामी है, हर स्थान पर देखता है -

घट घट के अंतर की जानत। भले बुरे की पीर पछानत॥ *कब्यो बाच बेनती चौपई*

मैं कितना बड़ा कुकर्म करने लगा था। गुरू की मुझ पर दृष्टि थी। गुरू ने ही मुझे बचा लिया।'' इस प्रकार जब सिख अपने गुरू पर शंका कर बैठता है, सिख के मन में अभिमान आ जाता है कि मैं विद्वान हूँ, इतनी महान करनी कमाई वाला साधक हूँ, उस समय गुरू बख्शीश, कृपा से अपने आपको दूर कर लेता है। अजामल के मन में अभिमान था कि वह इतना महान, विश्व प्रसिद्ध है, मेरे गुरू ने यह बात क्यों कही? गुरू के वचन कानों में बार-बार गूंजते हैं कि देख, तू सभी कुछ पढ़ा हुआ है, कितने बड़े-बड़े ऋषि, मुनि, साधक अभिमान के कारण कुकर्मों में फंस गये। अजामल के गुरू सब कुछ जानते थे और वह यह भी समझ गये कि अजामल को उनकी बात अच्छी नहीं लगी। इसे अपने पवित्र जीवन का बड़ा अभिमान है लेकिन अजामल की जो तार अपने गुरू के साथ जुड़ी हुई थी, वह टूट गई। एक दिन सोचने लगा कि देखूं तो सही क्या होता है? वेश्याओं के बाज़ार में से निकल गया।

बुरे स्थान से, कहीं से भी क्यों न निकल जाओ उसका प्रभाव पड़ेगा ही। धूल में से निकल जाओ, यदि कोई कहे कि उस पर धूल नहीं गिरेगी, यह उसकी भूल है। धूएं में से यदि कोई निकले और कहे कि उसका दम नहीं घुटता, वह गलत है। धूएं ने तो दम तोड़ना ही है। जिस प्रकार के प्रभाव में जायेंगे, वृत्ति पर उसके अनुकूल प्रभाव डालना ही होता है –

कबीर मनु पंखी भइओ उडि उडि दहदिस जाइ।
जो जैसी संगति मिलै सो तैसो फलु खाइ॥ पृष्ठ - 1369

इसीलिये प्रार्थना करते हैं, "हे सतगुरू, गुरू नानक पातशाह! कृपा करना, अपने गुरसिखों के दर्शन करवाना, गुरसिखों के दीदार, मनमुखों से दूर रखना। जिनके मिलने से तेरा नाम चित्त आता है, उन प्यारों से मेल करवाना, जिनके मिलने पर तेरा नाम भूले, कृपा करना, उसे स्वयं ही मत मिलाना।" रोज़ की प्रार्थना है सिख की, क्योंकि सिख अपने आप नहीं कहता कि वह बहुत अच्छा है। वह कहता है, "मैं अच्छा, मेरी अच्छाई गुरू की कृपा से है, मेरे अन्दर किसी भी प्रकार का बल नहीं है।" जब सिख के मन में यह बात बैठ जायेगी कि मेरे बल के कारण मेरे अन्दर यह अच्छाई है, उसी समय गुरू की कृपा का हाथ उसके सिर से दूर हो जाया करता है।

अब हुआ यह कि धीरे-धीरे अजामल एक वेश्या के चौबारे पर जाने लग गया। उस पर मोहित हो गया। घर में बदनामी होने लग गई। शहर में भी बदनामी होने लग गई। राजा के पास बात पहुँच गई। राजा ने उसके पिता से कहा। पिता ने बेदावा दे दिया। राजा ने शहर से बाहर निकाल दिया। उसने शहर के बाहर वेश्या के साथ रहना शुरू कर दिया –

पतित अजामलु पाप करि, जाइ कलावतणी दे रहिआ।
गुरु ते बेमुखु होइकै, पाप कमावै दुरमति दहिआ॥ भाई गुरदास जी, वार 10/20

खोटी मति होने के कारण पापों में पड़ गया। लगातार कई बच्चे हो जाते हैं। अब उससे कोई भी पण्डित के क्रिया कर्म तो करवाता ही नहीं है, सारी दुनियां में बदनाम हो गया –

अजामलु पापी जगु जाने निमख माहि निसतारा॥ पृष्ठ - 632

कहते हैं, केवल अकेले शहर में ही नहीं पता था बल्कि सभी विद्वानों में भी यह बात चल पड़ी कि देखो, इतना विद्वान होने के बावजूद भी अजामल पतित हो गया। जो महान होता है, वह जब अच्छा होता है तभी सभी की नज़रों में चढ़ा होता है। यदि मामूली सा भी अपराध या नुक्स हो जाए, सफेद चादर पर एक काली स्याही का धब्बा लगाकर देख लो, सभी की नज़रें उस पर जायेंगी, दूसरी ओर किसी काले कम्बल पर लगा दो, किसी को नहीं दिखाई देगा। अत: जो एक बार दुनियाँ में मशहूर हो जाये, जिसकी एक बार वाह-वाह हो जाये, जब वह गिरता है तो सभी को पता चल जाता है।

उस समय वह पाप की कमाई करनी शुरू कर देता है। एक जाल बना लिया। थोड़ी दूर जाकर जाल के नीचे चोगा डाल कर उस पर बैठ जाता है। दिन में जितने पन्छी जंगल में, उसके जाल में फंस जाते, उन्हें मार कर घर ले आता है। उनमें से कुछ घर में खाने के लिये रख लेता है और कुछ बाज़ार में बेचकर पैसे ले आता है। कबीलदारी बढ़ने लग गई और जन्म व्यर्थ बीतने लग गया –

बिरथा जनमु गवाइअनु भवजल अंदरि फिरदा वहिआ॥ भाई गुरदास जी, वार 10/20

लुढ़कता फिरता है भवजल में –

छिअ पुत जाए वेसुआ पापां दे फल इछे लहिआ॥ भाई गुरदास जी, वार 10/20

6 पुत्र हो गये, घर में रोज क्लेश होता है, रोज़ लड़ाई झगड़ा होता है। भोगों का अन्त जब आखरी बिन्दु पर आ जाता है, जिसे Saturation Point (संतृप्त बिन्दु) कहते हैं, उस समय मनुष्य को स्वंय भी भोगों से नफरत होने लग जाती है। शराब पीने वाला, जब बहुत ज्यादा शराब पीने लग जाता है, वह काबू तो आ जाता है, शराब से उसे अन्दर से नफरत होने लग जाती है। जब तक उसे कोई शराब छुड़ाने वाला न मिले, तब तक वह छोड़ नहीं सकता। इसी तरह भोगों का भी अन्त आ जाता है। अब अन्दर से दोनों खीझते हैं। उसकी पत्नी भी खीझती है कि देखो, वह कहाँ झोपड़ियों में आकर बस गई, ऐसे आदमी के पीछे लग कर मेरा क्या हाल हो गया? अजामल भी यही कहता है कि वह कितना महान विद्वान था, अब यहाँ आकर इन भोगों में पड़कर मुझे क्या मिला? क्या कमाया? अपने शरीर का नाश कर लिया, हर समय घर में लड़ाई रहती है। अन्त नौबत यहाँ तक आ पहुँची कि उसने फैसला कर लिया कि वह आत्म हत्या कर ले।

कई प्रेमियों का विचार होता है कि खुदकशी (आत्म हत्या) करने के पश्चात दुख खत्म हो जायेंगे। ऐसे दुख समाप्त नहीं हुआ करते बल्कि दुख पहले से भी बढ़ जाता है क्योंकि वह याद आगे भी साथ जाती है। रूह तो मरती नहीं, शरीर मरता है और जिन्दगी के अनुभव साथ जाते हैं, दुख भी साथ जाते हैं, फिर उसे कर्मों की सजा यह मिलती है कि मनुष्य जन्म उसे प्राप्त नहीं हुआ करता और वह महादुखी होता है। महाराज कहते हैं, उसे द्वैत मण्डलों में घनघोर अन्धकार में स्थान मिलता है, जहाँ पर महाप्रलय आने तक, निकलने के पश्चात किसी यौनि में देह प्राप्त नहीं कर सकता। ऐसा वेदों का मत सुना जाता है -

आतम घाती है जगत कसाई॥ *पृष्ठ - 118*

अजामल ने दुखी होकर आत्मघात करने का फैसला कर लिया। आत्म हत्या करने के लिये वह किसी पास बह रहे दरिया (नदी) की ओर जा रहा है, रास्ते में उसने कुछ धूल उड़ती देखी। मन में ख्याल आया, देखूं तो सही कौन है? जब स्पष्ट दर्शन हुए तो उसने देखा कि वह तो उसके ही महापुरुष थे, उसी के गुरू दाता थे। महापुरुषों के दर्शन करने का फल अवश्य मिलता है।

इतिहास में एक साखी आती है कि गुरू नानक पातशाह संसार का उद्धार करते-करते एक गाँव में गये जो ठगों का गाँव था। गुरू नानक पातशाह का दर्शन करके उन लोगों के मन में आया कि ये कोई बहुत धनी पुरुष हमारे गाँव में आ गये हैं। सभी ने सलाह की कि अकेले मत लूटना। हम सब अपने पीर की सौगन्ध खाकर कहें कि जो माल-ताल इनके पास से मिलेगा, हम सभी बांट कर खायेंगे। भाई बाला जी तथा मरदाना जी को मारने के लिये सारी रात तैयारियां करते रहे, परन्तु जब अमृत बेला में गुरू महाराज जी के पवित्र कंठ से बाणी का उच्चारण हुआ तो इन्हें नींद आ गई। दिन निकल आया। सारा गाँव सोया पड़ा है। गुरू महाराज जी चल पड़े। बाद में ठगों की नींद खुली। उन्होंने जब देखा कि तीनों मुसाफिर यहाँ से चले गये हैं। तब उन्होंने कहा, ''खुरां (पैर के निशान) का पीछा करते हुए, उन्हें ढूँढ निकालें। जवान आदमी जाकर उन्हें शस्त्रों से मार दो। जो कुछ उनके पास से मिलेगा, वह आपस में बांट लेंगे।'' पद चिन्हों का पीछा करते हुए उन ठगों ने जब कुछ मील दूर, गुरू महाराज जी को देखा तो दूर से ही आवाज़ें लगाते हैं, ''हमने तुम्हें जाने नहीं देना। तुमने हमारे ऊपर जादू करके, हमें सुला दिया।'' उन्होंने कहा कि हम तुम्हें मारकर तुम्हारी तलाशी लेकर धन लूट लेंगे। गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया, ''हम मरने से नहीं डरते, पर एक बात तुमसे कहते हैं, वह जरूर मानना।'' वे बोले, ''क्या बात है?'' महाराज जी ने कहा, ''तुम हमें, मारने के पश्चात हमारे शरीरों का संस्कार कर देना।

यह देखो लकड़ियों का कितना बड़ा ढेर पड़ा है।'' एक ठग ने कहा, ''आग कहाँ से लायेंगे?'' महाराज जी ने दूर इशारा करते हुए कहा, ''वह देखो, किसी मुर्दा को जलाने के लिये चिता जलाई हुई है, वहाँ से ले आना।'' उसने कहा, ''बात तो ठीक है, यदि इन्हें मार कर यहीं पर फैंक दिया तो सरकार के लोगों को पता चल जायेगा तो शोर मच जायेगा। अच्छा यही है कि इनका खोज पता ही मिटा दें।''

दो आदमी आग लेने चले गये। आगे जाकर क्या देखते हैं कि एक रूह को अति विकराल स्वरूप वाले लोगों ने पकड़ा हुआ है। उसे मार रहे हैं, उसकी पिटाई कर रहे हैं। उनके पश्चात दो और आ गये - बहुत सुन्दर। वह कहने लगे, ''इस रूह को मत मारो।'' यमों ने उस रूह को मारना बन्द कर दिया। वे ठग हैरान हो गये, उन्होंने पूछा, ''क्या बात है?''

एक ने कहा, ''यह पापी है। सारी जिन्दगी इसने पाप किये हैं और हम इन्हें नरकों में ले जा रहे हैं।''

दूसरे कहने लगे, ''पाप तो इसने किये हैं पर गुरू नानक पातशाह की दृष्टि पड़ गई है - इस पर। इसलिये इसके सारे पापों का खातमा हो गया। अब इसे वैकुंठ धाम लेकर जाना है। हमें भगवान ने भेजा है।''

कहते हैं, ''गुरू नानक पातशाह कौन हैं?''

जवाब मिला, ''वही हैं, जिन्हें मारने के तुम इरादे बना रहे हो। भले लोगो! वह तो दुनियाँ का तारक है। कहाँ जाकर लेखा दोगे? देखो, इधर अंगुली करके इशारा किया था जिसके फलस्वरूप यह पापी यमों की मार से छूट गया।''

वे ठग बिना आग लिये ही लौट गये। उन्होंने दूर से ही शोर मचाना शुरू कर दिया, ''इन्हें मत मारना।'' नगर वासियों को आकर बताया। अन्त में सभी ने गुरू महाराज जी के चरण पकड़ लिये।

इस तरह जब अजामल आत्म हत्या करने जा रहा था तो उसने सन्तों के दर्शन किये। जिस पर भी सन्तों की दृष्टि पड़ जाती है, उसके अन्दर परिवर्तन होना शुरू हो जाता है। अजामल ने जब दर्शन किये तो मन में आया कि महापुरुषों को नमस्कार भी कर दें, मरना तो है ही। आन्तरिक ज्ञान के पर्दे खुलने शुरू हो गये। जब महापुरुष और भी निकट आ गये, वृद्धावस्था में थे अजामल ने पहचान लिया कि वह तो उसके गुरू हैं, जिन्हें मैंने पीठ दिखाई और अब मेरी यह दुर्गति हो गई। मैंने इनका उस दिन क्यों नहीं कहना माना था? मैंने तो उस समय बड़ा अभिमान किया था कि मैं गिर नहीं सकता? उस समय चरणों पर दहाड़ मार कर गिर पड़ा, धरती पर ही। धूल के अन्दर ही गिर पड़ा और चरणों को छोड़ता नहीं है।

महात्मा जी झुके, कन्धे से पकड़ कर उठाया। कहने लगे, ''इतना वैराग किस बात का कर रहा है तू? कौन है तू?''

कहता है, ''महाराज! मैं पतित अजामल, महा पापी।''

महात्मा कहने लगे, ''अजामल! बेटा! ऐसे नहीं कहा करते। यदि तू महापापी होता तेरे पुण्य सारे खत्म हो गये होते, तो तू साधुओं के दर्शन नहीं कर सकता था। साधुओं के दर्शन तभी होते हैं यदि पुण्य बच रहे हों। पाप बढ़ जायें तो देखकर भी पीठ कर लेगा। पास नहीं आ सकता। अन्दर मन में

निन्दा का विचार करेगा। कोई भी बात करेगा उसमें ईर्ष्या भरी होगी क्योंकि इसके भाग्य मन्द हैं फिर साधुओं से घृणा करेगा, द्वैष करेगा, उन्हें दुखी करने का तरीका सोचेगा। अतः बेटा, ऐसा मत कहो। तू पापी नहीं है, तेरे पुण्य अभी बहुत बचे हुए हैं।''

अजामल बोला, ''नहीं महाराज! मैं पापी हूँ।'' और फिर सारी व्यथा सुनाई।

महात्मा बोले, नहीं, आत्म हत्या नहीं करना, ''जाओ तेरे सांतवा पुत्र होने वाला है, उसे हमारे पास ले आना, हम उसका नाम रखेंगे'' –

छिअ पुत जाए वेसुआ पापाँ दे फल इछे लहिआ।
पुतु उपंनाँ सतवाँ नाउ धरण नो चिति उमहिआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/20*

गुरू का वचन याद आ गया। पुत्र को गोदी में लेकर साथ ही वेश्या को लेकर तथा छहों पुत्र भी साथ लिये और जाकर गुरू के चरणों में मस्तक टिका दिया।

कहने लगा, ''महाराज! यह सांतवा पाप का फल पैदा हो गया।''

साधु बोले, ''अच्छा, अच्छा। हम इसका नाम रखते हैं –

गुरू दुआरै जाइकै गुरमुखि नाउ नराइणु कहिआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/20*

महात्मा कहते हैं, ''नारायण-नारायण कहते जाना, तुझे हम भजन करने को नहीं कहते क्योंकि पाप इतने अधिक हैं कि भजन करने में तेरी रूचि ही नहीं बनेगी।''

जिसके मन में पाप बढ़ गये हों, उसका भजन बन्दगी में चित्त नहीं लगा करता। उबासियां आयेंगी, नाम जपते समय नींद के झटके आयेंगे, इधर उधर करवटें बदलता रहेगा –

बुरे काम कउ ऊठि खलोइआ। नाम की बेला पै पै सोइआ॥ *पृष्ठ - 738*

उस समय सोता रहेगा और कहेगा कि मेरी नींद नहीं खुलती। भाई! तेरे पाप बढ़ गये हैं। अपने जीवन को तू शुद्ध कर। बाणी पढ़, सत्संग में आ, तेरे पाप झड़ जायेंगे।

महात्मा कहते हैं, ''बेटा अजामल! तेरे से नाम नहीं जपा जाना, एक काम कर ले। इस बच्चे का नाम नारायण है, तू नारायण-नारायण कहते रहना।''

आज्ञा मान ली, कहता है, ''ठीक है महाराज! छोटा बच्चा है, वह स्वाभाविक ही मुझे प्यारा है।'' जब देखता है, नारायण-नारायण कहने लग जाता है।

अन्त वह समय भी आ गया साध संगत जी! हम सभी पर भी वह समय आयेगा। वह फल खाना पड़ता है, जिसे मौत का फल कहते हैं। कईयों को कड़वा लगता है, कुछेक को बहुत मीठा लगता है जिन्होंने जन्म संवार लिया –

गुरमुखि जनमु सवारि दरगह चलिआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 19/14*

वह खुशी-खुशी अपने घर को जाता है –

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मेरै मनि आनंदु।
मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु॥ *पृष्ठ - 1365*

पूर्ण परमानन्द की प्राप्ति यह देह छोड़ने के पश्चात हुआ करती है –

कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ॥ *पृष्ठ - 1365*

वह तो अपने घर को जाता है -

रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाइ॥ पृष्ठ - 1365

निगुरे पुरुष के लिये रोना चाहिये, जिसने कुत्ते बिल्ले की यौनियों में जाकर पड़ना है। अत: उन्हें यह फल कड़वा लगता है। जो बन्दगी करने वाले हैं, वे तो इन्तज़ार करते हैं। दिन गिना करते हैं कि अब इतने दिन बाकी रह गये हैं फिर अपने घर को जायेंगे, निज घर में पहुँच जाना है। साध संगत जी, सन्त कहाँ रहते हैं? कोई देश ठिकाना है? कबीर साहिब से पूछा गया, ''सन्तों का कोई ठिकाना है कि वे कहाँ रहते हैं?''

कबीर साहिब बोले, ''भाई! वह सत्त-चित्त-आनन्द देश हुआ करता है।''

कबीर गंग जमुन के अंतरे सहज सुंन के घाट।
तहा कबीरै मटु कीआ खोजत मुनि जन बाट॥ पृष्ठ - 1372

सहज तथा सुन्न, अवस्था में फुरना भी नहीं हुआ करता, सहज अवस्था में सभी स्थानों पर परमेश्वर नज़र आता है। उस घाट पर सन्त वास किया करते हैं और उनका रास्ता दुनियाँ खोजती फिरती है। दुनियाँ सन्तों के पास नहीं पहुँच सकती। सन्त तो दुनियाँ से जाते समय खुश होते हैं। जो दूसरे पापी होते हैं, वे धक्के खाते हैं -

मनमुखि आवै मनमुखि जावै।
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै।
जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे॥ पृष्ठ - 1073

पातशाह! कितने नरक हैं? महाराज कहते हैं, ''कोई 84 कहता है, कोई 18 बताता है, हमारा कोई वाद-विवाद नहीं है। हम इस संख्या के चक्कर में नहीं पड़ते। हम यह कहते हैं कि जितने भी नरक हैं, मनमुख को सभी भोगने पड़ते हैं।''

अत: अब अन्त समय आ गया। अब कुछ का स्वागत करने के लिये देवगण आते हैं - विमान लेकर। कुछ एक को जैसे पुलिस पकड़ने आती है, जिन्होंने यहाँ पर आकर बन्दगी नहीं की, उनके बारे में फ़रमान है -

नानकु आखै रे मना सुणीऐ सिख सही।
लेखा रबु मंगेसीआ बैठा कढि वही॥ पृष्ठ - 953

और बही खाता निकाल कर बैठ जाता है -

तलबा पउसनि आकीआ बाकी जिना रही॥ पृष्ठ - 953

जिन्होंने गुरू की बात नहीं मानी, सन्तों के वचन नहीं माने, वे आकी (दुखी) पुरुष हैं, मनमुख लोग हैं, उन्हें फिर तलवें पड़ती हैं, सम्मन आते हैं, वारंट आते हैं और वारन्ट आने पर उन्हें पकड़ कर ले जाते हैं -

वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ॥ पृष्ठ - 464

गले में जन्जीर डालकर ले जाते हैं और उन्हें यमदूत कहते हैं। जो साधारण लोग हैं, स्वर्गों को जाने वाले उन्हें यमदूत लेने नहीं आते, उन्हें लेने के लिये दूत आते हैं, guide लेने आया करते हैं। जिन्होंने अपनी जिन्दगी पापों में बिताई है, वे दुखी होते हैं क्योंकि उन्होंने नाम नहीं जपा। फ़रमान है -

जह महा भइआन दूत जम दलै। तह केवल नामु संगि तेरै चलै॥ *पृष्ठ - 264*

यमदूत बड़े भयानक होते हैं। उन्हें जब मनुष्य देखता है तो सांस फूल जाता है और फिर -

अंतकाल जमदूत वेखि......................॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/20*

यमदूत देख लिये और पास ही पुत्र था। मुँह पर नारायण चढ़ा हुआ था। उस समय आवाज़ लगाता है। इस तरह पढ़ लो -

धारना - डर के हाक पुत्तर नूं मारी,
मुख तों नराइण बोलिआ - 2, 2
मेरे पिआरे, मुख तों नराइण बोलिआ - 2, 2
डर के हाक पुत्तर नूं मारी, ... - 2

अंतकाल जमदूत वेखि पुत नराइणु बोलै छहिआ।
जमगण मारे हरि जनाँ गइआ सुरग जमुडंडु न सहिआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/20*

यमदूत देख लिये, पुत्र को आवाज़ लगाई। कहता है, 'नारायण नारायण' इतना ही कह सका। महाराज कहते हैं -

अजामल प्रीति पुत्र प्रति कीनी करि नाराइण बोलारे॥ *पृष्ठ - 981*

कहते हैं नारायण कह कर आवाज़ लगा दी अपने पुत्र की प्रीत के कारण -

मेरे ठाकुर कै मनि भाइ भावनी जमकंकर मारि बिदारे।। *पृष्ठ - 981*

लेकिन उसका ध्यान परमेश्वर की ओर चला गया। पढ़ा-लिखा तो था ही, गुरू की कृपा थी, जिसने कहा था नारायण बोला कर। उसी समय ध्यान प्रभु की ओर चला गया। कितना समय लगा? कहते हैं कि एक सांस का आधा हिस्सा अन्दर गया है, बाहर आते-आते ध्यान परमेश्वर में चला गया। मेरे ठाकुर के भेजे हुए हरि जन आ गये और आकर यमदूतों को मार कर भगा दिया -

जमगण मारे हरि जनाँ गइआ सुरग जमुडंडु न सहिआ।
नाइ लए दुखु डेरा ढहिआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/20*

बड़ी पदवी प्राप्त हो गई -

धारना - गती मिल गई जोगीआं वाली,
इक वारी राम बोल के - 2, 2
मेरे पिआरे, इक वारी राम बोल के - 2, 2
गती मिल गई जोगीआं वाली.......... - 2

अजामल कउ अंत काल मै नाराइन सुधि आई।
जां गति कउ जोगीसुर बाछत सो गति छिन महि पाई॥ *पृष्ठ - 902*

एक पलक झपकने के समय के अन्दर-अन्दर वह गति मिल गई। महाराज फ़रमान कहते हैं कि परमेश्वर के नाम की महिमा अपर-अपार है। कलयुग में केवल प्रभु का नाम ही सफल साधन है। इसलिये -

अब कलू आइओ रे। इकु नामु बोवहु बोवहु।
अन रूति नाही नाही। मतु भरमि भूलहु भूलहु॥ *पृष्ठ - 1185*

इस तरह महाराज ने कलयुग को नाम की महानता बताई कि नाम जप कर सारे दुखों का खातमा हो जाता है। अत: अब नाम जपने की ऋतु आ गई है। अब जो कर्म-धर्म हैं अब उनकी पेश

नहीं चलती। इस तरह फ़रमान है -

धारना - नाम जपणे दी रुत्त हुण आई है,
जप लओ नाम वाहिगुरू - 2, 2

अब जो ऋतु है, कलयुग का समय चल रहा है। बहुत अधिक, हद से भी ज्यादा भयानक समय है। घर-घर में क्लेश है कोई ऐसा मन नहीं, जिसके अन्दर क्लेश न हो। महाराज कहते हैं कि केवल और केवल एक ही इलाज है -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ। कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ पृष्ठ - 262

यदि कलह और क्लेश मिटाना है तो परमेश्वर को याद करो -

हरि कीरति रुति आई हरि नामु वडाई हरि हरि नामु खेतु जमाइआ।
कलिजुगि बीजु बीजे बिनु नावै सभु लाहा मूलु गवाइआ॥ पृष्ठ - 446

नाम के अतिरिक्त जितने भी कर्म धर्म हैं - पहले तो मनुष्य कर्म करता ही नहीं, यदि कोई करता भी है तो महाराज जी कहते हैं, मूल भी जाता है और लाभ भी चला जाता है। कैसे जाता है? एक व्यक्ति ने तीर्थ यात्रा की, काफी समय उसमें बिता दिया, पैसा भी खर्च किया, पुण्य दान भी किया। किसी ने व्रत रखने शुरू किये। व्रत भी कई प्रकार के होते हैं, जैसे भूखा ही रहूँ। व्रत, प्रण को कहते हैं। मनुष्य ने कई प्रकार के व्रत किये और वह तीर्थ यात्रा भी करता है। महाराज कहते हैं-

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।
नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु॥ पृष्ठ - 1428

निष्फल जाते हैं क्योंकि केवल एक नाम ही है, जिसकी फसल खराब नहीं होती और सदा भरपूर होती है। यहाँ भी सहायता करता है। दरगाह में जाकर भी सहायता करता है। जहाँ पर कोई भी नहीं पहुँच सकता, वहाँ पर नाम सहायता करता है। महाराज जी इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - तेरी नाम ने सहाइता करनी,
औखी वेला-औखी वेला - 2, 2
औखी वेला-औखी वेला - 2, 2
तेरी नाम ने सहाइता करनी,....... - 2

जह मात पिता सुत मीत न भाई। मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई॥ पृष्ठ - 264

जब संसार से जायेंगे, न तो माँ ने साथ जाना है, न पिता ने साथ जाना है, न मित्र ने साथ जाना है, न भाई ने साथ जाना है, न पैसा साथ जाता है, न पद वगैरा साथ जाते हैं, जीव अकेला जाता है। वहाँ पर कोई सहायता नहीं करता। वहाँ पर जपा हुआ नाम, यह जो आप सत्संग कर रहे हो, वही साथ जाता है इस गुरू ग्रन्थ साहिब जी की हजूरी में बैठकर, मैं प्रार्थना करता हूँ और इसके फल का पता वहाँ जाकर चलेगा कि हमने कितना अधिक पुण्य प्राप्त किया है। यमदूतों की मज़ाल नहीं कि कुछ कह सके -

जह साधू गोबिंद भजनु कीरतनु नानक नीत।
णा हउ णा तूं णह छुटहि निकटि न जाईअहु दूतु॥ पृष्ठ - 256

धर्मराज कहता है कि जो परमेश्वर का नाम जपने वाले, हरि यश कीर्तन करने वाले हैं, बैठ कर श्रवण करते हैं, उनके पास मत जाना। यदि चले गये तो न तो मैं छूट पाऊंगा और न ही तुम छूट पाओगे, जवाब देना भी मुश्किल हो जायेगा।

बाबा साहिब सिंघ जी बेदी ऊना वाले, गुरू दसवें पातशाह के बाद हुए हैं। महाराज जी के समय ही भाई दया सिंघ जी ने बहुत से सिंघों को अमृत पान करवाया था, जो पाँच प्यारों के मुखिया थे। उन्होंने बाबा सोभा सिंघ जी को अमृत पान करवा कर, ब्रह्मज्ञान की दात देकर, आनन्दपुर साहिब की सेवा के लिये भेज दिया। उनसे बाबा साहिब सिंघ जी ऊना वालों ने अमृत पान किया। महाराजा रणजीत सिंघ के राज्य में यदि किसी ने सिखी का प्रचार किया तो वह केवल बाबा साहिब सिंघ जी ही थे। स्वयं अमृत पान करवाया करते थे। 13000 से 20,000 तक फौज उनके साथ हर समय रहा करती थी। सारे पंजाब में दौरा किया करते थे। आपके लंगर का जो श्रीमान (लांगरी सिंघ) था, उसका नाम भाग सिंघ था। उसकी माता एक दिन शरीर छोड़ गई। बाबा जी को बताया गया, ''बाबा जी! भाग सिंघ की माता ने शरीर त्याग दिया है।'' बाबा जी अन्तर्ध्यान हुए और बोले, ''कोई बात नहीं, उनके शरीर को जलाना मत। मृतक शरीर को कुछ समय रख लेना।''

कुछ पहर बीतने के बाद अर्थात 8-10 घंटों के बाद उस माता का पैर हिला, धीरे-धीरे सारा शरीर हिलने लगा और उठकर बैठ गई। वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू करने लगी। कहने लगी, ''मैंने बाबा जी के दर्शन करने हैं, मुझे वहाँ उनके पास ले चलो।''

सभी पूछने लगे, ''क्या हुआ?'' वह बोली, ''वहीं पर चल कर सभी को बताऊंगी।'' बाबा जी के पास ले आए। सभी मिलकर कहते हैं, ''बाबा जी! भाई भाग सिंघ की माता जिन्दा हो गईं।''

बाबा जी ने पूछा, ''माता! कैसे हुआ?''

कहने लगी, ''महाराज जी! मुझे कोई दूत लेने के लिये आया, यमदूत तो नहीं आया, कोई दूत आया और मुझे धर्मराज के पास ले गये। वहाँ पर जाकर उसने चित्र गुप्त से कहा कि इसका बही खाता निकालो। नाम देखते जा रहे हैं, पर मेरा नाम नहीं निकलता। जब मेरा नाम न निकला तो धर्मराज को चिन्ता हो गई'' -

दरगाह के दो पट्टे हैं जैसे इस जमीन का पट्टा लिखते हैं। यू.पी. में रिवाज है - पट्टे लिखने का। एक पट्टा तो धर्मराज का संसार में है और एक पट्टा गुरू वालों का अर्थात गुरूओं का है। दोनों पर ही संसार का नाम लिखा हुआ है। महाराज कहते हैं -

धरमराइ नो हुकमु है बहि सचा धरमु बीचारि।
दूजै भाइ दुसटु आतमा ओहु तेरी सरकार॥ *पृष्ठ - 38*

जो निगुरे पुरुष हैं - बुरे कर्म करने वाले, पाप करने वाले, ठगी करने वाले, धोखा देने वाले, गुरू की आज्ञा की उल्लंघना करने वाले, ये सभी धर्म राज के पट्टे पर लिख दिये और शेष जो बन्दगी करने वाले हैं, वे गुरू के पास जाया करते हैं।

कहने लगी, ''जब मेरा नाम न निकला तो धर्मराज बड़ा गम्भीर हो गया। उसे चिन्ता पड़ गई कि हमने तो बुरा काम किया। यह रूह तो गुरू नानक पातशाह के यहाँ जानी है, उनके आदमी हैं, तुम इन्हें यहाँ क्यों ले आए हो? तुम्हें, इन्हें लाने के लिये किसने कहा था। वह कोई और जीव था जिसे लाना था। तुम इन्हें लेकर आए हो, इन्होंने तो गुरू की सिखी धारण की हुई है। नाम जपती है, बाणी पढ़ती है, जाओ, इन्हें वापिस लौटा कर आओ।''

वह आगे बोली, ''महाराज! मुझे केवल वापिस ही नहीं भेजा, बल्कि मेरी सेवा करने लग गये। बहुत मान आदर किया।'' क्योंकि गुरू महाराज का हुक्म है -

साध संगि धरम राइ करे सेवा। साध कै संगि सोभा सुरदेवा॥ *पृष्ठ - 271*

सत्संग में आने का बहुत बड़ा महात्म है। सत्संग में दिव्य व्यक्त तथा अवयक्त दोनों रूहें बैठकर हरि यश का आनन्द लूटती हैं। व्यक्त प्रेमी सभी सत्संग में बैठे नज़र आते हैं और सत्संग का प्रत्यक्ष रूप में आनन्द लेते हैं। इनके अतिरिक्त जो देव लोक के देवता हैं, बड़े तीर्थों के अभिमानी देवता हैं, शहीद, अमीर रूहें यहाँ तक कि ब्रह्मा, विष्णु आदि सुख देने वाले तथा गंगा के अभिमानी देवता सत्संग में आ जाते हैं जैसा कि फ़रमान है –

कहि कमीर अब कहीऐ काहि। साध संगति बैकुंठै आहि॥ *पृष्ठ - 1161*

महापुरुष ऐसा भी कहते हैं –

हरि की कथा होति है जहाँ गंगा भी चल आवत तहाँ।

महापुरुषों का ऐसा मत है। एक बार नारद मुनि जी ने व्रत रखा और व्रत का उद्यापन करने के लिये विष्णु जी के दर्शन करने का इरादा बनाया। नारद मुनि जी जब वैकुण्ठ धाम में पहुँचते हैं, वहाँ जा कर माता लक्ष्मी जी से पूछा, ''विष्णु जी कहाँ हैं?'' लक्ष्मी जी ने कहा, ''आप त्रिकालदर्शी हो, आप योग विद्या द्वारा ध्यान लगाकर देखो कि कहाँ है?'' उस समय नारद जी ने योगबल द्वारा सभी तीर्थों में देखा, बड़े-बड़े योगियों के हृदयों में देखा, बर्फीली पहाड़ी कन्दराओं में देखा, परन्तु भगवान कहीं भी नज़र न आये। इस प्रकार देखते-देखते उनकी दृष्टि एक ऐसे स्थान पर पड़ी जहाँ पर सत्संग हो रहा है और विष्णु जी सबसे पीछे, फटे हुए एक तप्पड़ पर बैठे हैं। वहाँ पर गये और प्रभु से पूछा, ''आपके लिये बड़े-बड़े मन्दिर बने हैं, बड़े-बड़े योगी आपका ध्यान धरते हैं, आपके दर्शन करने के लिये लालायित रहते हैं, मैंने आपको सभी स्थानों पर देखा, पर आप कहीं भी नज़र न आये। मैं हैरान हूँ कि आप गरीब लोगों के बीच फटे हुए तप्पड़ पर सबसे पीछे बैठे हो, इसका क्या कारण है?''

विष्णु जी ने कहा, ''संसार में यह प्रसिद्ध है कि मेरी कोई माता, पिता, पुत्र, कुटुम्ब नहीं है परन्तु संसार को पता नहीं कि मेरा असली घर सत्संग में है, साधुओं की संगत में है। साधुओं की संगत में से ही मेरा दर्शन होता है क्योंकि मेरा निज रूप वही है। शेष सभी संसार द्वारा कल्पित रूप है। मेरी माता, मेरे पिता, मेरे मित्र, मेरे पुत्र ये सभी साधुओं की संगत में हैं। साधुओं की संगत में से सभी खजाने, रिद्धियों-सिद्धियों की प्राप्ति होती है। साधुओं की संगत में मैं सहज अवस्था का सुख प्राप्त करता हूँ क्योंकि साधुओं की संगत अति उपमा वाली है तथा उपमा योग्य है। भाई गुरदास जी ने इस तरह बताया है –

निज घर मेरो साध संगति नारद मुनि,
दरसन साध संग, मेरो निज रूप है।
साध संग मेरो माता पिता औ कुटंब सखा,
साध संग मेरो सुत स्रेसट अनूप है।
साध संग सरब निधान प्रान जीवन मै,
साध संग निज पद सेवा दीप धूप है।
साध संग रंग रस भोग सुख सहज मै,
साध संग सोभा अति उपमा औ ऊप है॥ *कबित (भाई गुरदास जी)*

साधुओं की संगत का इतना महातम है कि यदि कोई एक घड़ी भी सत्संग में मन चित्त लगाकर, बैठ जाये, वह भी निज घर में पहुँच जाता है –

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हूं ते आध।
भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ *पृष्ठ - 1377*

जिस प्रकार चन्दन के आस पास जितने वृक्ष होंगे, उन सभी के अन्दर चन्दन की सुगन्ध समा जाती है इसी प्रकार जो सत्संग करते हैं, इनके अन्दर भी चन्दन की वासना, वाहिगुरू जी के अस्तित्व का अहसास, समा जाता है। जैसा कि फ़रमान है –

कबीर चंदन का बिरवा भला बेड़िओ ढाक पलास।
ओइ भी चंदनु होइ रहे बसे जु चंदन पासि॥ *पृष्ठ - 1365*

सत्संग करने का लाभ ही लाभ है। जिस प्रकार पानी में जा रही, सामान से भरी हुई नाव, केवल दो अंगुल पानी से ऊपर होती है, वह डूबती नहीं, बल्कि पार उतार देती है। जिस तरह आठों पहर भोजन करने वाला बैठ कर, भोजन खाने का स्वाद लेता है और वह तृप्त हो जाता है। जिस प्रकार राज-दरबार में जाकर कोई श्रद्धालु प्यार से नमस्कार करता है, तो उस पर राजा प्रसन्न होकर, उसे बहुत कुछ पदार्थ दे देता है। इसी प्रकार 60 घड़ियों में यदि एक घड़ी सत्संग कर लिया जाये, उसका वास सचखण्ड में हो जाया करता है –

जैसे बोझ भरी नाव आंगुरी द्वै बाहरि है,
पारि परै पूर सबै कुसल बिहात है।
जैसे एकाहारी एक घरी पाकसाला बैठि,
भोजन कै बिंजनादि स्वादि कै अघात है।
जैसे राज द्वार जाइ, करत जुहार जन,
एक घरी पाछै देस भोगता ह्वै खात है।
आठ ही पहर साठ घरी मै जौ एक घरी,
साध समागम करै निज घर जात है॥ *कबित भाई गुरदास जी*

इतिहास में ऐसा उल्लेख मिलता है कि एक बार गुरू दशमेश जी, उर्पयुक्त विचारों के अनुसार वचन कर रहे थे कि सत्संग में पवित्रता की बहुत आवश्यकता है क्योंकि यहाँ पर शहीद रूहें तथा देव लोक के देवता आकर सतगुरू के वचन श्रवण करते हैं। उस समय एक सिंघ ने दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना की, ऐसे वचन तो हम काफी समय से सुनते आ रहे हैं। आप सर्व कला समरथ हो। त्रिलोकी नाथ हो। आप कृपा करके सत्संग में पहुँचने वाली देव रूहों के दर्शन करवाने की कृपा करें।'' उस समय गुरू महाराज ने सुखमनी साहिब की दो पंक्तियां पढ़ीं –

सरब भूत आपि वरतारा। सरब नैन आपि पेखनहारा॥ *पृष्ठ - 294*

समस्त संगत को दिव्य दृष्टि प्राप्त करवा दी। क्या देखते हैं कि देवता सत्संग में विराजमान हैं और गुरू महाराज के वचनों का आनन्द ले रहे हैं। वे इसलिये आते हैं कि देव लोकों में भोग तो बहुत हैं पर साधु की संगत नहीं है। महापुरुष अन्त समय में देव लोकों में नहीं जाया करते, वे अकाल पुरुष की सच्ची दरगाह में निवास करते हैं। इसीलिये उनके लिये सत्संग बहुत दुर्लभ है और क्या देखते हैं कि सारे दीवान में प्रकाश ही प्रकाश हो गया। इस दृश्य का आनन्द ले ही रहे थे कि एक देश का राजा गुरू महाराज जी को नमस्कार करने आया। उसके साथ कुछ अहलकार भी थे। जब वे आ रहे थे, उस समय गुरू महाराज जी ने आवाज़ लगाई कि इत्र, सुगन्धियां आदि का छिड़काव करो। हुक्म की तामील हुई, परन्तु देवता लोग उठ-उठ कर अपने-अपने धामों को जाना शुरू हो गये। उधर दीवान में इत्र आदि सुगन्धियां छिड़की जा रही थीं पर फिर भी देवता लोग चले गये। उनके चले जाने के बाद प्रार्थना की गई, ''देवताओं के दर्शन भी करवाये परन्तु ये चले क्यों गये?'' उस समय गुरू महाराज जी ने कहा, ''जो वह राजा आया था, उसने तीन दिन पहले तम्बाकू का सेवन किया था। यह ऐसी चीज़ है कि

इसकी दुर्गन्ध में देवता लोग ठहर नहीं सकते। इसीलिये हम अपने गुरसिखों को इन नशों से वर्जित करते हैं। रहतनामा में ऐसा उल्लेख मिलता है –

तनक तमाकू सेवीऐ देव पितर तजि जाइ।
पाणी ता के हाथ कउ मधरा सम अघदाइ।
मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक।
जगत जूठ शत कुल दहै निंदा दहै अनेक॥ *रहितनामा*

तम्बाकू पीने वाले को, उनके बुजुर्ग लोग जो देव लोक, पितृ लोक, में अपना समय बिता रहे होते हैं, वे उन वारिसों को छोड़ देते हैं जैसे माँ–बाप, अपने कई बच्चों को बेदावा लिख देते हैं। इसी प्रकार देव लोक में बसने वाले बुजुर्ग अपने वारिसों का साथ छोड़ देते हैं। तम्बाकू पीने वाले के हाथों से पानी पीना भी शराब पीने के बराबर है। शराब 7 कुलों का नाश करती है, भंग एक कुल का नाश करती है। तम्बाकू 100 कुलों का नाश करता है। निन्दा करने वालों का तो कोई हिसाब–किताब ही नहीं। इसलिये गुरसिखी में तम्बाकू पीने, हाथ लगाने तक की भी मनाही है। तम्बाकू की ज़हर कैंसर को जन्म देती है।

बाबा साहिब सिंघ जी के हजूर में लांगरी भाई भाग सिंघ जी की माता हाज़िर होकर बैठी थी जैसा कि बताया जा चुका है कि उसे धर्मराज ने अपनी कचहरी में से वापिस भेज दिया था। ये वचन सुनकर बाबा साहिब सिंघ जी ने कहा, ''साधु की संगत करने वालों की तो धर्मराज भी सेवा करता है।''

बाबा जी कहने लगे, ''देखो, साध संगत जी! तुम्हारे सामने उदाहरण है कि यह बीबी सेवा करती थी। इसे इसीलिये वापिस भेज दिया कि इसका नाम धर्मराज के रजिस्टरों में नहीं था।''

धर्मराज के पास वे लोग जाया करते हैं जो गुरू सिद्धान्तों को छोड़कर अपनी मन मति में दृढ़ रहते हैं। गुरू मति सदा यह दृढ़ करवाती है कि तू बन्दगी करने आया हैं, हउमै का नाश करना है। सारे सिद्धान्त गुरू ग्रन्थ साहिब जी में अंकित हैं। परन्तु जो अपनी मन मति अनुसार चलता है, वह चाहे हजार बार नमस्कार करे, सिर झुकाए, रूमाले चढ़ाए वह हुक्म न मानने के कारण मनमुख कहलाता है। वह जन्मता–मरता रहता है। महाराज जी फ़रमान करते है –

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे।
इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए।
हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ अगै भुखा किआ खाए।
मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥ *पृष्ठ – 450*

इस तरह से बाबा साहिब सिंघ जी कहने लगे, ''प्रेमियो! यह घटना तुम्हारे सामने घटित हुई है। जो हरि यश गाते हैं, उनकी मुसीबत के समय सहायता हुआ करती है।'' गुरू महाराज जी ने बहुत ही स्पष्ट रूप में फ़रमान किया है –

जह मात पिता सुत मीत न भाई।
मन ऊहा नामु तेरै संगि सहाई।
जह महा भइआन दूत जम दलै।
तह केवल नामु संगि तेरै चलै।
जह मुसकल होवै अति भारी।
हरि को नामु खिन माहि उधारी।
अनिक पुनहचरन करत नही तरै।

हरि को नामु कोटि पाप परहरै।
गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे।
नानक पावहु सूख घनेरे॥ पृष्ठ - 264

हर स्थान पर सहायता करने वाला केवल नाम ही है। महाराज कहते हैं, ''प्रेमियो! उसे क्यों भूला बैठा है? तुझे क्यों पता नहीं चलता कि मुसीबत के समय तेरी सहायता नाम ने करनी है?

जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ।
लागू होए दुसमना साक भि भजि खले।
सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ।
चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ॥ पृष्ठ - 70

ऐसा सहाई हरि का नाम है। वह यहाँ भी सहायता करता है दरगाह में भी सहायता करता है। मनुष्य को माया ने ऐसा मोहित किया है कि वह अपने हित की बात को सत्य नहीं मानता। यहाँ तक कि वह गुरू साहिब के वचनों को भी सत्य नहीं मानता। गुरू महाराज तो फ़रमान करते हैं, ''प्यारे! सभी वस्तुओं से अमूल्य परमेश्वर का नाम है। उसके चरणों में प्रार्थना करो कि मुझ पर कृपा कर, मैं तेरे नाम के साथ जुड़ जाऊँ।'' कई प्रेमी कहते हैं कि नाम इतना कीमती है फिर यह जीव क्यों नहीं रूचि लेता? गुरू महाराज कहते हैं कि जीव मन के पीछे लगा हुआ है। कुछ प्रेमी हैं जो नाम जपते हैं -

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।
जिना भाग मथाहि से नानक हरि रंगु माणदो॥ पृष्ठ - 81

भाग्यशाली ही गुरू से नाम की दात प्राप्त कर सकता है। कलयुग के इस जलते-तपते संसार में केवल नाम जपने वाला ही बचता है क्योंकि गुरू महाराज फ़रमान करते हैं कि कलयुग का जो रथ है, जिसमें हम सभी बैठकर सफर कर रहे हैं, वह अग्नि का रथ है। झूठ रथवान बनकर इसे चला रहा है। आग के रथ में बैठकर इसे कितना कष्ट होता है, यदि कोई सवारी थोड़ी सी भी गर्म हो जाये तो भी उसमें बैठना कठिन हो जाता है। गुरू महाराज जी समय की विचार करते हुए फ़रमान करते हैं -

कलजुगि रथु अगनि का कूड़ु अगै रथवाहु॥ पृष्ठ - 470

कलयुग में हम इस रथ में यात्रा कर रहे हैं। कलह तथा क्लेश का युग है। कई सम्प्रदाए छोटी-छोटी बातों के लिये, आपस में मरने मारने को तैयार हो जाती हैं। मन्दिर वाला मस्जिद को बिल्कुल भी अच्छा नहीं समझता। सत्पुरुष सदा ही इन्हें परमेश्वर के स्थान समझते हुए आदर करते हुए फ़रमान करते हैं कि देहुरे (मन्दिर) और मस्जिद में कोई अन्तर नहीं है। नमाज़ तथा गीता में कोई अन्तर नहीं है। यदि अन्तर है तो केवल बोली का। इन्सान सभी एक हैं, पाँच तत्वों के बने हुए हैं, पर धर्म के नाम पर एक दूसरे के प्रति नफरत करते हैं। यदि ये कहीं गुरू महाराज जी के वचनों को मान लें तो फिर आपस में कभी द्वैत पैदा ही न हो। फिर मन्दिर वाले मस्जिद का आदर करेंगे और मस्जिद वाले मन्दिर का आदर करेंगे क्योंकि दोनों ओर परमेश्वर का नाम प्रमुख है। पाँच तत्वों का बना हुआ इन्सान, एक जैसा भोजन खाकर जिन्दा रहता है, ताकतवर रहता है, कर्ता वही है, करीम भी वही है, राज़क भी वही है। हर इन्सान की आँख, नाक, कान, जीभ, पाँच तत्वों की मिट्टी, आकाश, हवा, अग्नि, पानी के बने हुए हैं। अल्लाह तथा राम के नहीं, एक के ही दो नाम है। कुरान वालों को पुराण का और पुराण वालों को कुरान का आदर करना चाहिये, पर जब भ्रमित हो गये हैं। गुरू के हुक्म को कोई नहीं पहचानता -

कोऊ भइओ मुंडीआ संनिआसी कोऊ जोगी भइओ,

कोई ब्रहमचारी कोऊ जतीअनु मानबो।
हिंदू तुरक कोऊ राफजी इमाम शाफी,
मानस की जात सबै एकै पहचानबो।
करता करीम सोई राजक रहीम ओई,
दूसरो न भेद कोई भूल भ्रम मानबो।
एक ही की सेव सभ ही को गुरदेव एक,
एक ही सरूप सबै एकै जोत जानबो। *अकाल उसतति*

देहरा मसीत सोई पूजा औ निवाज ओई,
मानस सबै एक पै अनेक को भ्रमाउ है।
देवता अदेव जच्छ गंध्रब तुरक हिंदू,
निआरे निआरे देसन के देस को प्रभाउ है।
एकै नैन एकै कान एकै देह एकै बान,
खाक बाद आतम औ आब को रलाउ है।
अलह अभेख सोई, पुरान ऐ कुरान ओई,
एक ही सरूप सबै, एक ही बनाउ है॥ *अकाल उसतति*

सत्पुरुषों के उपदेश सारी संगत के लिये सांझे हुआ करते हैं। उनकी दृष्टि में सम्प्रदायों का अलग-अलग भेद नहीं हुआ करता। यह सभी कुछ क्यों हो रहा है? दानियों का मत है कि कलयुग का समय होने के कारण, मनुष्य की बुद्धि, परमेश्वर के नाम में रमी हुई ज्योति से टूट गई है और वह भटक रहा है। जैसा कि बताया गया है कि कलयुग का रथ अग्नि का रथ है, झूठ रथवान है, धोखे देना, झूठ बोलना, निन्दा करना, विषय विकारों में लीन रहना, सत्संग में जाने के लिये हर समय ढील करते रहना, अगर मगर करते रहना, महापुरुषों की निन्दा करते रहना। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं, ''कलयुग की इस आग में यदि यह जीव बच सकता है तो परमेश्वर की शरण लेकर ही बच सकता है जैसा कि फ़रमान है''-

कलि ताती ठांढा हरि नाउ। सिमरि सिमरि सदा सुख पाउ॥ *पृष्ठ - 288*

पाँच क्लेशों के कारण, मनुष्य का मन हर समय पीड़ित रहता है तथा जन्म मरण के गोते खाता हुआ दुख भोग रहा है क्योंकि सबसे बड़े क्लेश अविद्या, अभिनिवेश, अस्मिता, राग तथा द्वैष ये क्लेश जब तक मनुष्य के मन में हैं, तब तक शान्ति नाम की कोई भी चीज़ इसके निकट तक नहीं आ सकती। संसार परमेश्वर के नाम की महिमा को नहीं जानता। इन वचनों पर विश्वास नहीं करता कि कलह तथा क्लेश नाम द्वारा ही खत्म हो सकता है। जैसे कि -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ। कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ *पृष्ठ - 262*

यदि इसके मन में नाम की महिमा बस जाये तो एक घड़ी के लिये भी नाम से वंचित नहीं रह सकता। महिमा न जानने, कारण संसार में नाशवान चीजों, पदार्थों के साथ लिपटा पड़ा है। गुरू नानक पातशाह को कलयुग जब मिला तो उसने प्रार्थना की, ''मैं आपके लिये मोतियों के मन्दिर रच देता हूँ, सेवा के लिये मोहिनियाँ हाज़िर कर देता हूँ, खूबसूरत पलंग, हीरे जवाहारातों से जड़े हुए भेंट कर देता हूँ, रिद्धियां-सिद्धियां आपके चरणों में पड़ी रहेंगी, ये भी मैं भेंट कर सकता हूँ।'' गुरू महाराज ने कहा, ''कलयुग में जो मनुष्य की वृत्ति है, उसका स्वभाव है, कि जब भी कोई नई चीज़ देखता है, तो वह उसी से लिपट जाता है। फिर उसका अपनी अक्ल के अनुसार निरीक्षण करता रहता है और वह वृत्ति फिर उसका प्रभाव अपने अन्दर ले जाती है। उस समय परमेश्वर को भूल जाती है। परमेश्वर के नाम

के बिना हृदय कमल फूल जल कर राख हो जाता है और प्राकृतिक वस्तुएं किसी प्रकार का सुख देने में समर्थ नहीं हैं। अत: नाम की प्राप्ति ही सर्वश्रेष्ठ दात है। गुरू महाराज जी का फ़रमान है -

मोती ता मंदर ऊसरहि रतनी त होहि जड़ाउ।
कसतूरि कुंगू अगरि चंदनि लीपि आवै चाउ।
मतु देखि भूला वीसरै तेरा चिति न आवै नाउ।
हरि बिनु जीउ जलि बलि जाउ।
मै आपणा गुरु पूछि देखिआ अवरु नाही थाउ॥ पृष्ठ - 14

यह जीव परमेश्वर के नाम की महिमा को न जानता हुआ सुख की प्राप्ति के लिये बहुत मेहनत करता है, परन्तु इसे सुख प्राप्त नहीं हो रहा। तृष्णा की अग्नि हर समय जलती है परन्तु परमेश्वर के नाम से खाली रहता है, नाम जपने की वेला को सो-सो कर बिता देता है और भजन करते समय आलसी बन जाता है। बुरे कर्मों के लिये शेर की तरह उठ खड़ा होता है -

बुरे काम कउ ऊठि खलोइआ। नाम की बेला पै पै सोइआ॥ पृष्ठ - 738

चंगिआई आलक करे बुरिआई होए शेर।
नानक अजकल आवसी गाफल फाही फेर। पृष्ठ - 518

बन्दगी करने वाले के सारे विघ्नों का नाश हो जाता है और कोई तरीका नहीं जिससे विघ्न दूर हो। ज्योतिषियों के कहने पर विघ्न दूर करने के लिये जादू टोने करता फिरता है, परन्तु विघ्नों का नाश नहीं हो पाता। कर्म दण्ड जरूर भोगना पड़ता है। नाम में सत्ता है, जिससे यह कर्म दण्ड से बच सकता है अन्यथा -

भोगे बिन भागे नही करम गती बलवान।

परमेश्वर को भूलने से करोड़ों विघ्न आ खड़े होते हैं -

कोटि बिघन तिसु लागते जिसनो विसरै नाउ॥ पृष्ठ - 524

गुरू साहिब जितना मर्ज़ी कही जायें, बाणी में बार-बार नाम जपने की ताकीद की जाती है पर यह न तो धुर अन्दर से बात को अपनाता है, न ही कोई महत्व देता है। यह मन्द-भाग्य की निशानी हुआ करती है। दुख तभी होता है। हाय, हाय! कुरलाहट इसकी खत्म नहीं होती, जब तक वह नाम की राह पर नहीं चलता।

कई प्रेमियों ने प्रत्यक्ष रूप में देखा है कि बड़ी-बड़ी बीमारियाँ जिनका इलाज डाक्टर नहीं कर सके, वे बन्दगी करने से ठीक हो गये।

1989 की बात है कि एक महिला मेरे पास आई। उसने अपने रोगों के कागज़ मुझे दिखाये। एक आंख की ज्योति बिल्कुल बन्द हो चुकी थी और दूसरी की ज्योति भी खत्म होने वाली थी। डाक्टरों ने कहा कि आपकी नज़रों की नाड़ियां सुन्न हो गईं हैं, इसलिये आंख का आप्रेशन नहीं हो सकता। गुर्दे में पथरी थी। जब डाक्टर आप्रेशन के लिये लेकर गये तो रक्त दाब बढ़ गया। रीढ़ की हड्डी में क्रेक आया हुआ था, भाव उसका सारा ही शरीर रोगी था। उसने मुझे कहा, "मैं किसी तरह से ठीक हो सकती हूँ।" मैंने कहा, "बीबी! वाहिगुरू के नाम में बहुत ताकत है। गुरू साहिब बार-बार इस बात पर ज़ोर देते हैं कि जिसका मन निरोग है, उसके तन के सारे रोग मिट जाया करते हैं जैसा कि फ़रमान आता है -

करि इसनानु सिमरि प्रभु अपना मन तन भए अरोगा।

कोटि बिघन लाथे प्रभ सरणा प्रगटे भले संजोगा॥ *पृष्ठ - 611*

मैंने कहा, ''आपका एक और केवल एक इलाज परमेश्वर का नाम है।'' उसने बताया कि उसका B.P (ब्लड प्रैशर) 240 है। ब्लड शूगर भी 240 रहती है। पेट में रसौली है, गुर्दे में पथरी है। कहने लगी, मैं कई सालों से लगातार पी. जी. आई. आ रही हूँ पर मेरा कोई इलाज नहीं हो रहा। मैंने उससे प्रार्थना की, ''बीबा! मैं डाक्टर तो नहीं हूँ पर मेरा यह विश्वास है कि यदि कोई सच्चे दिल से प्रभु का नाम जप ले, तो रोगों का नाश हो जाता है। ऐसा भी बताया जाता है -

सरब रोग का अउखदु नामु॥ *पृष्ठ - 274*

मैंने उसे कहा, ''बहन जी! तुम एक साल भजन करोगी तो सारे रोग दूर हो जायेंगे।'' वह बोली, ''हाँ, मैं जरूर कर लूंगी।'' रोग भी बड़े भयानक थे। उसने पूछा कि कितनी देर नाम जपना पड़ेगा। गुरू साहिब ने तो कहा है कि श्वांस-श्वांस नाम जपते रहो। तुम सारी ज़िन्दगी नाम जपते रहो। बाद में फिर नाम जपना छोड़ दो तो फिर तो वही बात हो गई ***'नै लंघी ख्वाजा विसरिआ'*** मतलब निकल जाने के बाद न पहचानने वाली बात हो गई। समुद्र पार करने के लिये नाव में बैठकर तो बहुत मिन्नतें मांगी, मैं ठीक ठाक पहुँच जाऊँ और अब किनारे पर पहुँच गये तो सभी कुछ भूल जाता हूँ। उसने विश्वास दिलाया कि वह सारी जिन्दगी नाम जपेगी। जो पाठ उसे बताया था, वह पाँच घंटे में पूरा होता था। उसने दो बजे उठकर एकान्त स्थान पर बैठ कर पाठ करना। फिर लंगर में सेवा करना। अभी 20 दिन ही हुए थे, मुझे कहने लगी, ''मेरी आंख में रोशनी आ गई। यदि आप मुझे आज्ञा दें तो मैं बल्ड प्रैशर पी. जी. आई. में जाकर चैक करवा आऊं।'' जब पी. जी. आई. पहुँची और उसका B.P. चैक किया तो डाक्टर हैरान हो गये कि इसमें न तो शूगर है, B.P. भी सामान्य हो गया है। एक महीने में आंख भी ठीक हो गई। डाक्टर ने पूछा, ''बीबी! तूने कौन सी दवाई ली है?'' वह कहने लगी, ''मैं तो गुरूद्वारा रतवाड़ा सहिब में पाठ करती हूँ। वाहिगुरू पर भरोसा रख कर नाम जपती हूँ।'' उन दिनों में हमारे पाठी बहुत कम होते थे उसने कहा कि मैं पाँच ग्रन्थी की डयूटी भी दिया करूंगी। इस प्रकार वह डयूटी भी देती रही। जब कुछ महीने और बीत गये, सितम्बर का महीना आया। मैं अमेरिका जाने के लिये तैयार हुआ तो वह कागज़ लेकर मेरे पास आई। उसमें पथरी बनी हुई थी। गुर्दे में जो पथरी थी, वह तीन टुकड़े होकर बाहर निकल गई। उसके बाद मैं अमेरिका चला गया। जब 1 जनवरी 1990 को वापिस लौटा तो वही महिला बोली कि उसकी दूसरी आँख भी ठीक हो जाये तो अच्छा है। जब मैंने वहाँ पर जाकर सारा हाल देखा तो उसकी आंख जो लगभग 20 महीने पहले बन्द हो गई थी, वह बन्द ही रही। उसने मेरे से छुट्टी मांगी और कहने लगी, ''अब मैं घर जाना चाहती हूँ। क्या मैं कानी ही जाऊंगी। बाल बच्चों को मिल आऊं।'' 20 जनवरी को वह मेरे पास फिर आई बहुत खुश थी। उसने बताया कि मेरी दूसरी आंख भी खुल गई। मैंने कहा, ''चार महीने बन्दगी करके फिर छुट्टी लेनी थी।'' कहने लगी, ''मेरी पोती के इम्तिहान हैं, मेरा वहाँ पर रहना बहुत जरूरी है।'' इसी दौरान उसने पी.जी. आई. में फिर से सारी चैकिंग करवाई। डाक्टरों ने कहा, ''तुम्हें कोई बीमारी नहीं है। हमें बताओ कि कौन सी दवाई खाई है? कार्ड पर तो कोई दवाई है नहीं।'' वह बोली, ''मैंने दवाई तो कोई नहीं खाई, लंगर में भोजन खाया है, वहाँ पर खाने के लिये गुड़ भी मिल जाता था।'' यह बात डाक्टरों की समझ से बाहर की थी। जब उसने रीढ़ की हड्डी चैक करवाई जिसमें दरार थी, वह एक्सरे में आई ही नहीं, रसौली की चैकिंग करवाई, वह भी नहीं आई।

साध संगत जी! यह तो मैं देखता ही आ रहा हूँ कि बड़े-बड़े रोग नाम जपने से दूर हो जाते

हैं परन्तु मनुष्य को नाम की कोई कद्र नहीं है। अपना मतलब निकाला और फिर वहीं आ जाता है। बेशक हम साल-साल भर कठिन मेहनत करवाते हैं फिर छुट्टी मिल गई फिर आलसी, बेपरवाह हो जाते हैं। यदि मन में कद्र हो कि नाम इतनी सहायता करता है तो सभी नाम जपने लग जाये।

एक बार जब मैंने जौली ग्रान्ट में डाक्टर स्वामी राम जी के मैडिकल कालिज की नींव रखी, उस समय पी. जी. आई. के डाक्टर चुटानी, डाक्टर पाठक तथा कुछ अमेरिकन डाक्टर वहाँ आये हुए थे। उस समय मैंने यह बात कही कि नाम में सभी शक्तियाँ निहित हैं। सभी रोगों को दूर करने के लिये नाम समर्थ है। वहाँ पर मैंने सारी बातें पी. जी. आई. की भी बताईं। डाक्टरों ने कहा कि हम मानते हैं कि मन रोगी हो तो सभी बीमारियां आकर घेर लेती हैं। तुम्हारा मन नरोया हो तो बीमारियां कम हो जाती हैं।

बात यह है कि परमेश्वर का नाम इतना कीमती है तो फिर मनुष्य नाम क्यों नहीं जपता। जो बात मैंने ऊपर बताई है उस महिला का कार्ड पी. जी. आई. का बना हुआ है। वह महिला अभी भी जीवित है। कोई भी उससे पूछ सकता है।

गुरू महाराज जी ने नाम की बरकतें सुखमनी साहिब में विस्तार से बताई हैं। परमेश्वर का नाम ही भवजल सागर तरने में सहाई है। जब नाम हृदय में बस जाये तो सारे सुख प्राप्त हो जाते हैं। याद रखने वाली बात है कि गुरू नानक पातशाह ने गुरू ग्रन्थ साहिब में नाम की महिमा बताते हुए फ़रमान किया है -

अब कलू आइओ रे। इकु नामु बोवहु बोवहु।
अन रूति नाही नाही। मतु भरमि भूलहु भूलहु॥ ***पृष्ठ - 1185***

कलयुग में धर्म के तीन पैर खिसक चुके हैं और चौथे पैर पर खड़ा है -

कलिजुगु हरि कीआ पग त्रै खिसकीआ पगु चउथा टिकै टिकाइ जीउ॥ ***पृष्ठ - 446***

कलयुग में धर्म के तीन पैर टूट चुके हैं। सत खत्म हो गया। सतयुग का मनुष्य सत्य के मुख्य कर्म करता था। सत को समझने की हमें आवश्यकता है। इसके लिये जपुजी साहिब के पहले आदेश को समझने की जरूरत है। गुरू नानक पातशाह जी ने ऐकंकार जी की व्याख्या करते हुए उसकी सर्व शक्ति को औंकार कहा, जैसा कि दशमेश पिता जी फ़रमान करते हैं -

प्रथम ओअंकार तिन कहा सो धुन पूर जगत मो रहा।

औंकार, ऐकंकार में सम्मिलित रूप है। यह कोई अलग वस्तु नहीं है। वैसे तो सारा संसार परमेश्वर में मिला हुआ है, अलग नहीं है, परन्तु हउमै का प्रसार होने के कारण समष्टि से व्यष्टि में बदल गया है। अलग होने के कारण, हउमैं में लिपटा हुआ दुखी हो रहा है। गुरू नानक पातशाह ने जब ऐकंकार को औंकार कहा तो यह समुच्चय रूप में १ओंकार कहलाया जो सत है, सत उसकी हस्ती को कहा जाता है जिसका कभी भी अभाव न हो। यह वाहिगुरू जी का ही नाम है जिसे सत तथा सच कहकर बाणी में दर्शाया गया है। यही सत की सूझ नाम कहलाती है। नाम प्राप्ति वह अवस्था है जहाँ पर पूरी तरह से अज्ञान का नाश हो जाये। पदार्थ भावना का नाश होकर, एक-दो-तीन-चार-पाँच-दस कोई भी चीज़ अलग नज़र न आए। एक ही औंकार सभी रंगों, रूपों में रंगा हुआ केवल एक ही प्रतीत में बस जाये। यहाँ पर एक बात और है कि जब निरंकार को एक कहते हैं तो वहाँ हम अपने आपको अलग महसूस करते हैं। इसीलिये गुरू महाराज जी ने वाच ज्ञानी को मिथ्या कहा है क्योंकि वह कहता

तो एक और केवल एक ही है परन्तु अपने अस्तित्व को उसके अन्दर मिलाकर कह रहा है। महाराज जी ने इस सूझ को यथार्थ ज्ञान नहीं कहा। इसे मुख ज्ञानी कहा है जिसका स्तर मृतक के बराबर होता है –

एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै।
अंतरि बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै॥ पृष्ठ - 930

नाम की पूर्ण अवस्था उस समय अपनी पारस कला के पूरे यौवन पर होती है, जब अपने आपा भाव (निजित्व) को मिटाकर, परमेश्वर में समाई हो जाये। यहीं पर आकर ही सभी भ्रमित हो जाते हैं क्योंकि ज्ञान तो वे भी देते हैं, वे अपनी विद्या के बल पर देते हैं, पढ़ते हुए ज्ञान को कथित करते हैं, परन्तु वे स्वंय ठीक उसी तरह होते हैं जैसे एक रिकार्ड हो, वह बोलता है पर उसमें जान नहीं होती। जब नाम प्रकट हो जाता है, जिसे नाम का हृदय में बसना कहते हैं, उस समय अपना अलगपन खत्म हो जाता है। कई प्रेमी कहते हैं कि फिर उस अवस्था में सांसारिक क्रिया तो हो ही नहीं सकती क्योंकि वेदान्त मत के अनुसार, जब साधक छठी भूमिका में पहुँच जाता है, उसे अपनी शारीरिक क्रिया निभाने के लिये, दूसरे को ही बताना पड़ता है कि आपने भोजन करना है – भोजन करो। स्नान करना है – स्नान करो। सांतवी भूमिका में यदि कोई उसके मुँह में भोजन डाल दे तो वह खा लेता है। जागने पर भी जागता नहीं अर्थात शारीरिक क्रिया की सारी सूझ खत्म हो जाती है। महापुरुष बताते हैं कि उसका शरीर 10-15 दिन ही रहता है, फिर समाप्त हो जाता है। पाँचवी तथा छठी भूमिका को गुरमत अनुसार कोई महत्व नहीं दिया जाता। न ही गुरू इतिहास में महान उच्च गुरसिख इस अवस्था में विचरे हैं। यहाँ तक कि गुरू महाराज महान उच्च अवस्था में होते हुए, ऐसी बेसुरत अवस्था में नहीं आये। गुरमत में गुरसिख सहज अवस्था में विचर रहा होता है जिसे पूर्ण ज्ञान कहते हैं। उस अवस्था में हउमै का पूरी तरह अभाव होता है तथा समस्त सांसारिक, व्यवहारिक, निजी शारीरिक क्रिया हुक्म के अधीन चल रही होती है, जिसके बारे में गुरू नानक पातशाह ने फ़रमान किया है –

हुकमि रजाई चलणा नानक लिखिआ नालि॥ पृष्ठ - 1

सूर्य, चन्द्रमाँ, तारे कोई फुरना नहीं करते, बहती हुई नदियां कोई फुरना नहीं करती, चलती हुई वायु को कोई फुरना नहीं आता। केवल प्राकृतिक नियम (Law of Nature) के अनुसार पूरी तरह से, पूर्ण निर्धारित नियमों के अधीन क्रिया करते हैं। इनकी क्रिया हउमै के अधीन नहीं बल्कि हुक्म के अधीन होती है। इसी प्रकार जिसे पूर्ण ज्ञान हो गया, उसकी क्रिया हुक्म के अधीन हो जाती है, वह शस्त्र भी चला सकता है, गुरू के कर्तव्य भी निभा सकता है, दयालु कृपालु होकर अपने दृष्टिमान जीवन का बलिदान भी दे सकता है। इस अवस्था को समझने की आवश्यकता है क्योंकि वहाँ पर काफी भ्रम उठ खड़े होते हैं। हमारे महापुरुष वेदान्त की प्राय: छठी सांतवी भूमिका का पूर्ण प्राप्ति के लिये उल्लेख करते हैं। हम वहाँ तक सहमत हैं, जहाँ तक भाई घनईया जी ने हुक्म अधीन तप किया। गुरू महाराज जी का फ़रमान है –

नानक हुकमै जे बुझै त हउमै कहै न कोइ॥ पृष्ठ - 1

इस जीवन को सत का जीवन कहा जाता है। इस ज्ञान को नाम की प्राप्ति का ज्ञान कहा जाता है। यह अति कठिन अवस्था है जो विरले-विरले पुरुषों को प्राप्त होती है। सतयुग में इस सत को, उस समय के लोग पूरी तरह से समझते थे। इस समय कलयुग में हउमैं के अन्ध गुब्बार ने सारे ज्ञान को अपने वश में कर लिया है। बातों के ज्ञानी बहुत हैं, उनके व्याख्यानों में बहुत आकर्षण होगा, प्रेरणा होगी पर

यह सारा हउमै के मण्डल से ही वर्णित किया गया मृत ज्ञान है। ज्ञानी कहलाने वाला पूर्ण ज्ञान वाली अवस्था के बिना अन्ध ज्ञानी होता है। अन्ध ज्ञान का ज्ञान भी अन्धा ही होता है। गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है –

कलि महि प्रेत जिन्ही रामु न पछाता सतजुगि परम हंस बीचारी।
दुआपरि त्रेतै माणस वरतहि विरलै हउमै मारी॥ *पृष्ठ - 1131*

अतः यह सत का पैर सतयुग में कायम था जिसे सांकेतिक रूप में गुरू नानक पातशाह जी ने प्रकट करते हुए कहा है –

आदि सचु जुगादि सचु। है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ *पृष्ठ - 1*

वाहिगुरू, परमेश्वर के अतिरिक्त इस संसार में और कोई नहीं है। स्वंय ही अनेक रंगों, रूपों में अपनी खेल कर रहा है। कहीं ज्ञानी है, कहीं अज्ञानी है, कहीं देने वाला दाता है, कहीं मंगता है, कहीं पैदा हो रहा है, कहीं मर रहा है, कहीं पापी है, कहीं पुण्ययी है, कहीं छीन रहा है, कहीं दे रहा है, कहीं पुण्य दान कर रहा है जैसा कि गुरू दशमेश पिता जी फ़रमान करते हैं –

कतहूँ अचेत हुइकै चेतना को चार कीओ,
कतहूँ अचिंत हुइकै सोवत अचेत हो।
कतहूँ भिखारी हुइकै मांगत फिरत भीख,
कहूँ महां दान हुइकै मांगिओ धन देत हो।
कहूँ महाराजन को दीजत अनंत दान,
कहूँ महाराजन ते छीन छित लेत हो।
कहूँ बेद रीत, कहूँ ता सिउ बिप्रीत,
कहूँ त्रिगुन अतीत कहूँ सरगुन समेत हो॥ *अकाल उस्तति*

यह ज्ञान है, जिसमें जीव का अपने अस्तित्व से पूरी तरह अभाव हो जाता है। हउमै का चक्कर टूट चुका होता है और प्रत्येक स्थान पर परमेश्वर ही परमेश्वर होता है। यदि मैं यह कहूँ कि जिसने परमेश्वर के दर्शन कर लिये, वह ब्रह्मज्ञानी है, ऐसे भी काम नहीं चलता क्योंकि परमेश्वर से अलग देखने वाला और कोई नज़र नहीं आता। यह तो अन्दर बाहर दृष्टा तथा अदृष्टा एक ही हो जाये, वह सत अवस्था हुआ करती है। हर जगह गोबिन्द ही दिखाई दे।

सतयुग के लोग सत का जीवन व्यतीत किया करते थे। सत्य बोलते थे, इसलिये उन्हें परमहंस कहा गया।

दूसरा पैर यज्ञ का हुआ करता था। यज्ञ हठ योग पर आधारित कुछ साधन थे, जिन्हें किसी नियत की गई विधि से किसी एकान्त स्थान पर बैठकर किया करते थे। आम तौर पर अग्नि कुण्ड बना कर उसके सामने बैठकर किसी मन्त्र का उच्चारण किया जाता था। यज्ञ में मंत्र उच्चारण के साथ-साथ आहुतियाँ डाली जाती थीं, कोई आराधना की जाती थी। जब मनोरथ पूरा हो जाता था, तब उसे कहते थे कि अब यज्ञ सम्पूर्ण हो गया। यज्ञ की पूर्णता के पश्चात भोजन आदि खिलाया करते थे, पुण्य दान किये जाते थे। यह त्रेता युग का मुख्य साधन था पर इस युग में मनुष्य और थोड़ा नीचे आ गया था और उसमें समुच्चय सत का अनुभव मद्धम पड़ गया था तथा अलगपन महसूस होने लग गया था। इस ज्ञान को मनुष्य की सूझ कहा जाता है। इसी तरह द्वापर युग में तप किये जाते थे। तपों के बल पर अपने लक्ष्य तक पुहँचने का यत्न किया जाता था। परन्तु यह साधन हउमै के अधीन होने के कारण अर्न्तज्ञान का प्रकाश नहीं कर सकते। कलयुग में मनुष्य दिशाहीन हो चुका है। माया में इतना लिप्त हो गया है कि

अपना परम मनोरथ माया की उपलब्धियों को प्राप्त करना ही समझता है। प्राचीन समय में महापुरुषों द्वारा बताये गये साधन पूरे हो जाते थे क्योंकि उस समय इरादा बहुत दृढ़ होता था। महापुरुष सत का ज्ञान करवा दिया करते थे, उनके स्वंय के जीवन में सत का प्रकाश होता था और वे कुछ समय गृहस्थ जीवन बिताने के पश्चात साधना सम्पन्न होने के लिये एकान्त स्थानों पर जाकर निवास किया करते थे। अपनी सारी सम्पत्ति, जायदाद अपने पुत्रों को दे दिया करते थे। तत्पश्चात महापुरुषों से शिक्षा लेकर परम पद को प्राप्त कर लेते थे।

कलयुग में मनुष्य इतना दिशाहीन हो गया कि उसे सत का ज्ञान होता ही नहीं। यदि कहीं बिजली की चमक के समान हो भी जाता है तो एक दम उसे माया में फिर गायब हो जाना पड़ता है।

अत: विचार चल रही थी कि ऐकंकार जी की, जिसे सत तथा नाम कहा गया है। बहुत से मतों में परमेश्वर को केवल चेतन शक्ति कहा गया है, जिसका प्रकृति पर परछाईं पड़ने से उस पर प्रभाव पड़ता है। प्रकृति के तीन गुण रजो, तमो और सतो ये कम अधिक होने लग जाते हैं। जिसके फलस्वरूप प्रकृति अनेक रूपों में फैल जाती है। कई मतों का तो ऐसा विचार है कि जीव अनादि है, कुछ मत ऐसा मानते हैं कि प्रकृति में जो 'मैं' भाव पैदा होता है, उसे ही जीवन कहते हैं। गुरमत में जीव तथा प्रकृति को अनादि नहीं माना गया है केवल वाहिगुरू जी ही अनादि हैं। हुक्म में ही जीव का अस्तित्व कायम होता है और हुक्म में ही सारी रचना होती है। इस रचना का अस्तित्व तब तक कायम रहता है, जब तक यह जीव हउमै के चक्कर में घिरा रहता है। गुरमत अनुसार परमेश्वर ही कर्ता है। सारी सृष्टि अपने हुक्म के अधीन कर्ता के रूप में प्रकट करते हैं। वह केवल चेतन तत्व ही नहीं है, वह कर्ता भी है। हर स्थान पर समाये हुए भी हैं और प्रत्येक पल-पल में हो रही उथल-पुथल से पूरी तरह विज्ञ हैं। उन्हें नाश हो जाने का भय नहीं, उसका किसी के साथ वैर नहीं है क्योंकि वे अपने आप (स्वंयमेव) ही हैं। काल का बेशक कितना समय क्यों न बीत जाये, उसका वाहिगुरू पर कोई प्रभाव नहीं हुआ करता क्योंकि काल भी उन्हीं का बनाया हुआ है। वे स्वंय अकाल है। महाराज जी ने तो उन्हें सदा-सदा दयालु कह कर सम्बोधन किया है। इससे उन पर कोई भी क्रिया करने का दोष नहीं लगता। गुरमत में परमेश्वर, वाहिगुरू जी का अस्तित्व इस तरह है जैसे पिता और पुत्र का व्यवहार होता है। वह हस्ती है जिसका कोई विनाश नहीं होता। वह ज्ञान का स्वरूप ही नहीं है बल्कि पूर्ण ज्ञान हैं, सैभं स्वंयमेव जिनके समान और कोई नहीं है। उनमें कृपा का बेअन्त भण्डार है तथा वह सारे ब्रह्मण्ड के गुरू हैं। उनकी कृपा से हउमै वश हुए जीव, समरथ गुरू के बख्शे हुए ज्ञान अधीन उसे पहचान सकते हैं। यहाँ पर गुरू नानक पतशाह जी ने उन्हें सदा-सदा के लिये सत कहा है -

आदि सचु जुगादि सचु। है भी सचु नानक होसी भी सचु॥ पृष्ठ - 1

इस सत का ज्ञान प्राप्त करने के लिये गुरू महाराज जी ने कुछ रहतें (नियम) बताई हैं जिनके आधार पर यह जीव सत में समा सकता है और सत की प्राप्ति कर सकता है। आपने फ़रमान किया है कि जब तक हृदय में इस सत वाहिगुरू के लिये प्यार पैदा नहीं होता, उसका वास हृदय में नहीं हो जाता, तब तक जीव का ज्ञान खाली भाव ही है। उस सत को तभी जाना जाता है जब पूर्ण रूप से वाहिगुरू की हृदय में समाई हो जाती है -

सचु ता परु जाणीऐ जा रिदै सचा होइ।
कूड़ की मलु उतरै तनु करे हछा धोइ॥ पृष्ठ - 468

दूसरा महाराज जी फ़रमान करते हैं कि इस सच को, इस अस्तित्व को, जो अकाल है, तभी जाना जा सकता है यदि हृदय में पूर्ण प्यार वाला आकर्षण समाया हो, जिसके बारे में बाणी में फ़रमान

आता है। अन्य सभी प्रकार के आकर्षणों की निवृत्ति करके – जायदाद, रिश्तेदार आदि जो उपलब्धियों के आकर्षण हैं, उन सभी से टूट कर, परमेश्वर का प्यार हृदय में भर जाये तो उस सच की पहचान हो सकती है। जब यह प्यार हृदय में बसा होगा, जब कोई भी ऐसे सत से कल्पित हुआ, कोई भी नाम लेगा तो वह नाम बहुत ही प्यारा लगेगा और मन आनन्द से खिल उठेगा और बड़ी से बड़ी जिसे मोक्ष पदवी कहते हैं, उसकी प्राप्ति हो जायेगी –

सचु ता परु जाणीऐ जा सचि धरे पिआरु।
नाउ सुणि मनु रहसीऐ ता पाए मोख दुआरु॥ पृष्ठ - 468

तीसरी रहत गुरू महाराज जी ने बताई है, वह है युक्ति की। युक्ति (जुगत) पूरे सतगुरू से प्राप्त हुआ करती है जिसके अनुसार मनुष्य संसार में रहता है, खाता है, पीता है, युक्ति धारण कर लेता है तथा इस शरीर को पूरी तरह से शोध लेता है जिससे वह पूरी तरह से अनुभव में समा जाये कि मेरा अस्तित्व प्राण, उपान, उदान, बिआन, समान, इनमें से कुछ भी नहीं है। शरीर के सम्बन्ध से बंधा हुआ मन, वह भी मैं नहीं हूँ, न ही मैं बुद्धि हूँ, न ही मैं चित्त हूँ और न ही मैं अहमभाव बना हुआ हूँ, न ही मैं अन्तसकरण और न ही इसमें रमा हुआ अहमभाव या ऐसा निश्चय कर ले कि–

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा।
ईधै निरगुन ऊधै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा॥ पृष्ठ - 827

मैं क्या हूँ? कुछ भी नहीं हूँ। यह तो सारा खेल अगम्म से ही हो रहा है, अहमभाव असत्य है –

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ॥ पृष्ठ - 846

यदि उसके मन में यह भाव भी पैदा हो जाये कि मैं परमेश्वर हूँ, ऐसा कहने से उसके अन्दर हउमैं का अस्तित्व कायम रह जाता है। उसे परमेश्वर का भाव और मैं का अभाव हो तथा कर्ता का पूर्ण ज्ञान हो, उसके बारे में फ़रमान है –

सचु ता परु जाणीऐ जा जुगति जाणै जीउ।
धरति काइआ साधि कै विचि देइ करता बीउ॥ पृष्ठ - 468

शरीर रूपी धरती में से परिपूर्ण नाम का प्रकाश पैदा हो जाना सत की प्राप्ति है। इसी तरह से सच की पहचान, समरथ गुरू के सत-उपदेश को धारण करने से हो जाया करती है। उस समय सारे संसार के जीव, उसे परमेश्वर ही दृष्टि आने शुरू हो जाते हैं। जो कल्पित अवस्था नहीं है। उस समय शुभ शिक्षाओं, शुभ विचारों की सांझ संसार में पड़ जाने के कारण, सारा संसार एक ही परमेश्वर दिखाई देता है। गुरू महाराज जी फ़रमान करते हैं कि इस सत की प्राप्ति को स्थिर रखने के लिये, मैं के झूठे मण्डल में से बाहर निकल कर आत्म मण्डल में प्रवेश कर जाता है। आत्मा और परमात्मा दो नहीं, एक ही हुआ करते हैं। इस प्रकार यह अवस्था, समरथ सतगुरू के ज्ञान से प्राप्त होकर, साधना करने से, आत्म चिन्तन करने से, सत का निवास करवा देती है। हउमै मण्डल में आये हुए सारे जगत के दुखों का नाश करने के लिये यह सत की पहचान दारू (औषधि) रूप होती है। जिनके पल्ले में सत-धन है, वे धन्य हैं, वे परमेश्वर ही है। परमेश्वर की रची हुई सृष्टि में देवताओं का स्थान बहुत ऊँचा है। जिनमें प्रमुख शिव जी, विष्णु जी और ब्रह्मा जी हैं। उनके बारे में ऐसा फ़रमान आता है कि जहाँ सत के संग के साथ, परमेश्वर के प्यारे इकट्ठे होकर मिलते हैं, वहाँ पर विष्णु जी गुप्त रूप में आकर बैठ जाते हैं। शिव जी महाराज के बारे में तो फ़रमान है –

ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर। नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ पृष्ठ - 273

इसी प्रकार ब्रह्मा जी, ब्रह्म ज्ञानी के दर्शनों में से सत ज्ञान संसार में प्रकट कर रहे हैं, बेशक वह ऋषियों-मुनियों द्वारा प्रकट हुआ या वह सच्चे साधुओं द्वारा कलयुग के महान घोर अन्धकार में से प्रकट हुआ। मैं प्रार्थना कर रहा था कि-

कलजुगु हरि कीआ पग त्रै खिसकीआ ....॥ *पृष्ठ - 446*

कलयुग में धर्म के तीन पैर खत्म हो गये। धर्म की बैल के साथ उपमा करते हुए फ़रमान करते हैं कि बैल चार पैरों से सारे शरीर का सन्तुलन कायम रखता है पर अब वह केवल एक ही पैर के बल पर खड़ा है।

कलयुग में विशेषता विहंगम मार्ग की है। चींटी मार्ग इस युग में सफल नहीं होता। एक प्रमाण द्वारा बात और अधिक समझ में आ जायेगी।

जब कृष्ण जी महाराज, पाँचों पाण्डवों के मध्य बैठे थे तो आपके मुख से अचानक निकल गया, ''कलयुग आ गया भाई।'' उस समय सभी का मन थोड़ा सा सहम गया कि कलयुग में तो महापुरुषों के अनुभव के अनुसार सारे कर्म-धर्म नष्ट हो जायेंगे। तीर्थ, व्रत, दान आदि फल नहीं देंगे। उस समय आपने कृष्ण जी महाराज से प्रार्थना की, ''आप कृपा करके यह तो फ़रमान करें कि कौन सी सिद्धि से धूप का रंग बदल जायेगा, जीवों की मनोवृति बदल जायेगी, नदियों का बहाव बदल जायेगा। इस पर आप प्रकाश डालने की कृपा करें।'' कृष्ण महाराज जी ने कहा, ''प्रकृति पर मनुष्य के विचारों का प्रभाव नहीं होता है। सूर्य उसी हिसाब से चलता रहेगा, दिन रात उसी तरह से बनते रहेंगे, पौधों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। वनस्पति वैसी ही रहेगीं। परन्तु मनुष्य के विचारों पर प्रभाव पड़ेगा। मनुष्य की मनोवृत्ति जो तीनों युगों में थी, वह बदल जायेगी।'' इस बात को समझाने के लिये आपने युधिष्ठिर से कहा, ''तुम्हारे पास कोई अजीब किस्म का मुकदमा है?'' उसने कहा, ''थोड़े दिन पहले एक ऐसा मुकदमा आया है, जिसका फैसला हम भी नहीं कर सके। वह मामला इस प्रकार है - एक किसान ने अपनी जमीन किसी दूसरे व्यक्ति को बेच दी। जब दूसरा किसान जमीन खोदकर उसमें कुआं लगवाने लगा तो उसमें से दफीना (गुप्त रूप में दबा हुआ धन) मोहरों से भरी हुई एक गागर निकल आई। जमीन खरीदने वाले किसान ने, बेचने वाले किसान से कहा, ''इस पर तेरा अधिकार है, यह तू ले ले।'' परन्तु उसने मना करते हुए कहा, ''मैंने तो जमीन खरीदी है। यह मोहरों से भरी गागर मैंने नहीं लेनी, इस पर तेरा अधिकार है।'' इस प्रकार करते-करते मुकदमा कचहरी में दायर हो गया। कृष्ण महाराज जी ने कहा कि तुमने तीन महीने तक फैसला नहीं देना। इसके बाद हमें बताना।

इस प्रकार समय बीतता गया। मनुष्य के स्वभाव पर कलयुग का प्रभाव हो गया। जिसने जमीन बेचीं थी, वह बोला, ''मैंने जमीन बेची है, दफीना नहीं बेचा, अतः उस पर मेरा अधिकार है।'' दूसरे ने प्रार्थना की, ''मैंने जमीन खरीद ली है। अब जो चीज़ भी इसमें से निकलती है, वह मेरी है, उस पर मेरा अधिकार है। इसमें खड़े हुए वृक्ष मेरे हैं, इसमें से निकलने वाला खजाना भी मेरा है।'' इस प्रकार कचहरी में जब मुकदमा चल रहा था तो उस समय फैसला करने वाले अधिकारी ने कहा, ''यह दफीना, तुम दोनों में से किसी का भी नहीं है। इस पर केवल सरकार का हक है।'' यह सुनकर पाण्डवों को कुछ बात समझ में आ गई। फिर उन्होंने कृष्ण जी से पूछा कि कलयुग में लोगों का व्यवहार कैसा होगा? कृष्ण महाराज ने कहा, जब तुम अमृत बेला में स्नान करोगे, जब समाधि लगाओगे, उस समय कुछ दृष्टान्त देखोगे। उन्हें तुम मुझे बताना। उनकी व्याख्या करने पर थोड़ा बहुत पता चल जायेगा कि समाज कैसा होगा, सरकारी कर्मचारियों का बर्ताव कैसा होगा, राजा का व्यवहार कैसा होगा? यह भी पता चल जायेगा

कि कलयुग में भवजल तरने का साधन क्या होगा?

अमृत बेला में जब कृष्ण महाराज जी के पास पाँचों पाण्डव आये तो उन्होंने अपने-अपने रात को देखें दृष्टान्तों का उल्लेख किया। पहले पाण्डव ने कहा, ''महाराज! जब मैं भजन कर रहा था तो मुझे यह नज़र आया कि मैंने एक खेत देखा जिसमें फसल लहलहा रही थी। उसके चारों ओर बाड़ लगी हुई थी। परन्तु थोड़ी देर बाद मैंने देखा कि उस बाड़ को पशुओं जैसे मुँह लगे हुये थे। उन्होंने सारी फसल चट-पट करके खेत खाली कर दिया। इस दृष्टान्त का क्या भाव है?''

कृष्ण महाराज जी ने कहा, ''इसका भाव यह है कि प्रजा को खुशहाली देने की बजाये, राजा अपने घर भरेगा। प्रजा की उसे कोई प्रवाह नहीं होगी। वह जायज़, नाजायज़ कानून बनाकर प्रजा के अधिकार लूट लेगा। कलयुग में राजा भ्रष्ट हो जायेगा जैसा कि गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है -

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ।
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।
हउ भालि विकुंनी होई। आधेरै राहु न कोई।
विचि हउमै करि दुखु रोई।
कहु नानक किनि बिधि गति होई॥ *पृष्ठ - 145*

दूसरे पाण्डव ने कहा, ''मुझे एक हाथी दिखाई दिया। उसकी एक की बजाये दो सून्ड थीं। वह एक सून्ड से घास खा रहा था और दूसरी सून्ड से मांस खा रहा था। मुझे यह बात समझ नहीं आई।'' कृष्ण महाराज जी ने दूसरे पाण्डव के इस दृष्टान्त का उत्तर देते हुए कहा, ''प्यारे! राज्य चलाने वाले शासक, बड़े कर्मचारी होते हैं। वे सच्चे तथा झूठे दोनों तरह के लोगों से धन लिया करेंगे। उनके निर्णय सत्य पर आधारित नहीं होंगे। उनमें तनाव होगा।''

तीसरे पाण्डव ने कहा, ''महाराज! मुझे एक हंस नज़र आया जिसके दोनों पंखों पर वेदों के श्लोक लिखे हुए थे। वह हंस वेदों के श्लोक बोलता था। उसके सामने मोतियों का ढेर भी पड़ा था और एक बर्तन में बेअन्त कीड़े मकौड़े आदि पड़े थे। वह मोतियों को छोड़कर कीड़े-मकौड़े खा रहा था। इसका क्या भाव है, कृपा करके बताइये?''

कृष्ण महाराज जी ने कहा, ''इस दृष्टान्त में कलयुग में होने वाले धार्मिक नेताओं का हाल तूने देखा है। इन्हें धर्म ग्रन्थ जबानी याद होंगे। संसार उनका व्याख्यान सुन-सुन कर वाह-वाह करेगा, पर इनका खान-पान निकृष्ट होगा। धर्माचार्यों का भोजन सात्विक वृति का हुआ करता है। राजसी तथा तामसी कर्मों से वे सदा संकोच करते हैं। परन्तु कलयुग में ये आचार्य, साधु, सन्त, धर्म के ठेकेदार, सत्य, सन्तोष, धैर्य, विचार, क्षमा, दान, पुण्य, सत्य का जीवन आदि सतगुणों को छोड़कर विषय विकारों, निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, शराब मांस भक्षण तथा निखिद्ध भोजन करेंगे। स्वंय भी तमोगुणी भोजन करेगें तथा लोगों को भी ऐसा ही भोजन खाने के लिये प्रेरित करेंगे। उलट-पुलट ढंगों से यह बात मनवाने का यत्न करेंगे कि अमुक पुस्तक में तमोगुणी भोजन का उल्लेख है। तमोगुणी भोजन में पूरा विश्वास रखेंगे। उनकी कथनी और करनी में जमीन आसमान का अन्तर होगा। वे सत के वचन कभी नहीं करेंगे। जिज्ञासु को हमेशा भेषों में प्रवृत्त करके रखेंगे। ये प्रचारक सभी धर्मों को आपस में लड़ाते रहेंगे। कलयुग में अनेक धर्म प्रचलित हो जायेंगे और सत मार्ग से दूर हो जायेंगे। साध संगत जी! गुरू ही सत का उपदेश दे सकता है बाकी तो सभी अन्धे हैं।

चौथे पाण्डव ने कहा, ''मैंने देखा कि तीन कुएं लगे हुए हैं। बीच वाला कूआं सूखा पड़ा था। पहले कुएं की धार इतनी ऊँची उठती थी कि बीच वाले कुएं को छोड़कर, तीसरे कुएं में जाकर गिर रही थी।'' कृष्ण महाराज जी ने इस दृष्टान्त का भाव बताया, ''यह दृष्टान्त भाईचारे के व्यवहार का है। कलयुग में अपने निजी रक्त से सम्बन्ध रखने वाले अपने नज़दीकी सम्बन्धों को छोड़कर, किसी अन्य तीसरे के साथ सम्बन्ध स्थापित करेंगे और भाई-भाई को मारने के वैर से भरपूर इरादे मन में धारण करते रहेंगे।'' युधिष्ठिर ने कहा, ''मैंने जो दृष्टान्त देखा है वह ऐसा है कि एक पर्वत के ऊपर से बहुत भारी पत्थर लुढ़कता चला आ रहा है। इतनी तेज़ी से आ रहा था कि वह कहीं भी न रूका। बड़े-बड़े वृक्षों को गिराता आ रहा था। यदि रूका भी तो एक तिनके के सहारे हजारों टनों का पत्थर रुक गया। मैं हैरान हूँ कि जिसे बड़े-बड़े पत्थर न रोक सके, उसे घास के तिनके ने कैसे रोक लिया?'' कृष्ण महाराज जी ने कहा, ''कलयुग ने तुझे बता दिया कि त्रेता, द्वापर के युग का जप, तप, दान कोई भी सफल नहीं होगा। कोई साधना सफल नहीं होगी। केवल परमेश्वर का नाम है जिसे प्राप्त करके, इस जीव का पूरी तरह से कल्याण हो जायेगा। नाम में शक्ति है कि वह पापों के बड़े से बड़े ढेर को बिल्कुल राख बना देता है। उस समय कृष्ण महाराज जी ने कहा, ''तुमने कलयुग का व्यवहार देख लिया, केवल नाम जप कर ही प्राणी तर सकता है। अन्यथा माया ने अपने मोह में सभी को चाहे कोई साधु है या बनावटी सन्त, किसी को भी स्थिर नहीं रहने देना। सभी की वृत्ति मायाकार हो जायेगी। जीव थोड़ा बहुत पुण्य, दान, तीर्थ करके अपनी महिमा का गान करवायेंगे जिसके फलस्वरूप उनके द्वारा किया गया पुण्य दान निष्फल हो जायेगा। जैसा कि फ़रमान है -

तीरथ बरत अरु दान करि मन मै धरै गुमानु।
नानक निहफल जात तिहि जिउ कुंचर इसनानु॥ पृष्ठ - 1428

एक अन्य कथा भी आती है जिसे महात्मा लोग सुनाते आये हैं। पाण्डवों ने जब सुना कि कलयुग आ गया, उस समय उन्होंने राज पाट अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को सौंप दिया और वे स्वंय हेमकुंट की ओर बर्फीले पहाड़ों के ऊपर चले गये। कुछ लोगों का ख्याल है कि वे बर्फीले पहाड़ों में ही शरीर का त्याग कर गये। परीक्षित राजा के राज्य के दौरान कलयुग का राज्य शुरू हो गया था। कलयुग के देवता ने एक दिन राजा परीक्षित को दर्शन दिये। वह प्रसंग इस प्रकार है। राजा परीक्षित जंगल में जंगली घातक जानवरों के शिकार के लिये गया हुआ था। उसे दिखाई दिया कि एक बहुत बड़े तथा भरकम (भारी) शरीर वाला आदमी बैल की टाँगें तोड़ रहा है। राजा परीक्षित शीघ्रातिशीघ्र वहाँ पहुँचा और मन में सोचता जा रहा था कि मेरे राज्य में कोई बैल को मार सकता है? यह तो बहुत बड़ी हत्या है क्योंकि गाय और लड़की को मारना बहुत बड़ी हत्या होती है। छह बड़ी हत्याएं बताई जाती हैं जिसमें पढ़े लिखे ब्रह्म विचार वाले विद्वान जिसे ब्राह्मण की पदवी प्राप्त होती है, उसे मारना; अपनी लड़की को मारना; किसी से धन लेकर मुकर जाना ऋण हत्या कहलाती है। अपने वंश का घात करना, वंशघाती कहलाता है। इसी प्रकार किसी को विश्वास देकर फिर घात करने वाला विश्वासघाती कहलाता है। प्राचीन शास्त्रों में इन हत्याओं को बहुत बड़ा पाप माना जाता था। अत: राजा परीक्षित के राज्य में उसने स्वंय देखा कि कोई बड़े कद वाला, काले रंग वाला पुरुष, काले कपड़े पहने हुए बैल की हत्या कर रहा है। उसने तलवार निकाल ली और मारने के लिये उसके पास पहुँच गया। जब वह उस पुरुष को मारने ही वाला था तो वह बोला, ''राजन! राजा लोग तो सदा न्याय किया करते हैं, किसी की हत्या करने से

पहले उसे पूछते हैं? उसे दोषी ठहराते हैं। यह तो तुम बहुत बड़ा पाप करने जा रहे हो?'' राजा ने कहा, ''ठीक है, मुझे गुस्सा आ गया था, मैंने तुझे मार देना था पर यह बता तू कौन है?'' कलयुग कहने लगा, ''महाराज, जिस प्रकार आप दुनियाँ पर थोड़े से समय के लिये राज्य करने आये हो इसी प्रकार मेरा राज्य सारे संसार पर है। मेरे तीन भाई राज्य कर चुके हैं। मैं इस युग का राजा हूँ। हमें परमेश्वर ने स्थापित किया है। मेरा बड़ा भाई यहाँ पर 17 लाख 28 हज़ार साल तक राज्य करके चला गया। दूसरा भाई 12 लाख, 96 हज़ार साल राज्य करके चला गया। तीसरे भाई ने 8 लाख 64 हज़ार साल राज्य किया। अब मेरा राज्य है। मैंने चार लाख 32 हज़ार साल राज्य करना है। मेरे बड़े भाईयों के क्रमशः सतयुग, त्रेता, द्वापर नाम हैं। मेरा नाम राज्य करने से पहले ही प्रसिद्ध है कलयुग। राजन! तेरा राज्य तो थोड़े से समय का है मेरे राज्य में तो लाखों राजा होंगे और संसार से चले जायेंगे।'' राजा परीक्षित ने पूछा, ''ऐ कलयुग! तेरा इस बैल को मारने का क्या कारण है? यह तो पहले ही एक टांग के बल पर खड़ा है। तू इसकी इस टांग को भी तोड़ रहा है?'' उस समय राजा परीक्षित को कलयुग ने कहा, ''राजन! यह जो तुझे बैल नज़र आ रहा है, यह बैल नहीं है।'' राजा ने पूछा, ''फिर यह कौन है? एक पैर के बलबूते पर क्यों खड़ा है? इसकी बाकी तीन टांगे कहाँ गईं?'' कलयुग बोला, ''राजन! यह धर्म है, मेरे राज्य में किसी का भी कोई धर्म नहीं रहेगा। इस धर्म के बारे में गुरू नानक पातशाह ने भी कहा है कि कलयुग के राजा कसाई का रूप धारण कर चुके हैं, धर्म का कोई रक्षक न होने के कारण सभी ओर अन्धकार तथा अधर्म फैल गया है। मैं संसार में यह ढूँढने चला हूँ कि कहीं धर्म का प्रकाश भी है।'' आपके शब्द हैं –

कलि काती राजे कासाई धरमु पंख करि उडरिआ।
कूड़ु अमावस सचु चंद्रमा दीसै नाही कह चड़िआ।
हउ भालि विकुंनी होई। आधेरै राहु न कोई।
विचि हउमै करि दुखु रोई। कहु नानक किनि बिधि गति होई॥ पृष्ठ - 145

कलयुग ने कहा, ''मेरे राज्य में धर्म नहीं रहेगा। प्राचीन युगों में, मनुष्य के लिये भवजल तरने के जो साधन थे, वे मेरे राज्य में नहीं चलेंगे। यदि कोई तप करेगा, तप में विघ्न पड़ जायेगा। यज्ञ करने के बाद यज्ञ भी सफल नहीं होगा। जत भी नहीं रहेगा। योग भी मेरे राज्य में सफल नहीं होगा। इसीलिये गुरबाणी में फ़रमान है –

जे को सतु करे सो छीजै तप घरि तपु न होई।
जे को नाउ लए बदनावी कलि के लखण एई॥ पृष्ठ - 902

''हे राजन! मेरे राज्य लोक राज कहलायेंगे। नाचने गाने वालों की प्रशंसा हुआ करेगी। जहाँ भी पाखण्ड का बोल बाला होगा, वहाँ पर मैं उन्हें आगे बढ़ाने की सत्ता देता रहूँगा। नाम जपने वालों की मैं बदनामी करवाऊँगा। मेरे राज्य में पाप का प्रसार हो जायेगा।'' उस समय राजा परीक्षित ने कहा, ''फिर तो तुझे ज़रूर मार देना चाहिये क्योंकि तू लोगों को बहका देगा, उलटे रास्ते पर डाल देगा।'' जब राजा ने तलवार निकाली तो उसने कहा, ''राजन! मेरे अन्दर कुछ अच्छी बातें भी हैं। वह यह है कि मेरे राज्य में यदि कोई नाम का बीज बोयेगा, वह बहुत अधिक फलदायी होगा। सत्संग का महात्म बहुत बढ़ जायेगा। निरंकार ने स्वंय संसार में रूपधारी होकर नाम की महिमा बतानी है और नाम का प्रसार करना है। यदि कोई अन्तिम समय में एक बार भी परमेश्वर का ध्यान कर लेगा, उसका फल इतना अधिक होगा कि बेशक उसने लाखों पाप क्यों न किये हों वह यमों की मार से छूट जायेगा और उच्च गति को प्राप्त होगा। मेरे युग में नाम की महिमा, सत्संग की महिमा बहुत अधिक होगी। यहाँ तक हो

जायेगा कि यदि एक क्षण के लिये भी अन्तिम समय में ध्यान परमेश्वर में चला गया तो उसके सारे पाप नष्ट हो जायेंगे और वह बैकुंठ धाम चला जायेगा। जैसा कि गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है –

एक चित जिह इक छिन धिआइओ। काल फास के बीच न आइओ॥ अकाल उसतति

मेरे राज्य में यदि कोई असली सन्त होगा, उसका मैं आदर करूंगा पर पहले मैं पूरी तरह से उसकी परख करूंगा कि वह माया के सामने खड़ा रह सकता है या नहीं। अन्यथा मैं उस पाखण्डी को पापों में प्रवृत्त करवा दूंगा। वाचक तौर पर वह प्रचार करेगा पर कपटी तथा कामी से भी अधिक बुरा होगा। यह बात सुनकर राजा ने अपनी तलवार म्यान में रख ली और कहने लगा, ''तेरे अन्दर सारे दोष हैं, पर तेरे युग में जो रियायत दी गई है कि यदि एक बार भी अन्त समय परमेश्वर याद आ जाये तो वह बैकुंठ धाम चला जायेगा। फिर मैं तुझे नहीं मारता।''

इस प्रकार गुरू महाराज जी ने कहा, ''प्रेमियो! अब कलयुग आ गया है। इससे पहले जो पूर्व युगों की उनकी वार्ता इस प्रकार है –

सतजुगि सभु संतोख सरीरा पग चारे धरमु धिआनु जीउ।
मनि तनि हरि गावहि परम सुखु पावहि हरि हिरदै हरि गुण गिआनु जीउ।
गुण गिआनु पदारथु हरि हरि किरतारथु सोभा गुरमुखि होई।
अंतरि बाहरि हरि प्रभु एको दूजा अवरु न कोई।
हरि हरि लिव लाई हरिनामु सखाई हरि दरगह पावै मानु जीउ।
सतजुगि सभु संतोख सरीरा पग चारे धरम धिआनु जीउ॥ पृष्ठ - 445

सतयुग में चारों पैर कायम थे। सत भी था, जप भी था, जत भी था, नाम भी था पर त्रेता में एक पैर जाता रहा। परमेश्वर की परिपूर्णता के स्थान पर मनुष्य को सन्देह हो गया कि परमेश्वर हर जगह हाज़िर-नाज़िर हैं, हर एक के अन्दर है? तब मनुष्य के अन्दर क्रोध घुस आया। हउमै का वास हो गया। राजा क्रोध के वशीभूत होकर युद्धों में फंसने लग गये। बेअन्त वासनाएं उत्पन्न हो गईं। वासनाओं की पूर्ति के लिये युद्ध शुरू हुए और मनुष्य उसमें घिर गया–

तेता जुगु आइआ अंतरि जोरु पाइआ जतु संजम करम कमाइ जीउ॥ पृष्ठ - 445

द्वापर में दो पैर रह गये। द्वापर में जीव भ्रम में पड़ गया और तप करना शुरू कर दिया। पुण्य दान करने शुरू कर दिये। पुण्य दान के फल मांगने लग गया। बड़े भयानक युद्ध शुरू हो गये। महाभारत जैसा युद्ध उन्हीं राजाओं ने किया। ऐसा कहते हैं कि 45 लाख फौज लड़ रही थी जो 18 दिनों में खत्म हो गई, केवल 10 आदमी बचे थे। अब कलयुग में एक पैर रह गया। जप, तप, सत खत्म हो गये हैं। पूजा आदि भी कोई फल नहीं देती। गुरू नानक पातशाह ने इस कलयुग में नाम की महिमा दृढ़ करवाई तथा नाम के सहारे जत, सत और तप फिर जीवित होने लगे –

कलिजुगु हरि कीआ पग त्रै खिसकीआ................॥ पृष्ठ - 446

तीन पैर टूट गये। गुरू नानक पातशाह जी ने शान्ति दिलाई –

गुर सबदु कमाइआ अउखधु हरि पाइआ हरि कीरति हरि सांति पाइ जीउ॥ पृष्ठ - 446

कीर्तन को भक्ति के रूप में प्रचलित किया जिससे सभी कुलों का उद्धार होना शुरू हो गया –

कलजुग महि कीरतनु परधाना। गुरमुखि जपीऐ लाइ धिआना।
आपि तरै सगले कुल तारे हरि दरगह पति सिउ जाइदा॥ पृष्ठ - 1075

नाम जपने से सारे दुखों का खात्मा हो जाता है। सेवा करने से यहाँ भी मान और दरगाह में भी मान मिलता है –

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ। ता दरगह बैसणु पाईऐ॥ *पृष्ठ – 26*

पिछले कई दिनों से गुरू अंगद साहिब जी के जीवन के बारे में विचार चलती आ रही है। संक्षेप में सारी बात फिर दोहराता हूँ। गुरू अंगद साहिब जी का पहला नाम भाई लहणा था। पिता का नाम फेरू था। इनके पिता जी चौधरी तख़्त मल के पटवार का काम किया करते थे। ऐसे समझ लो कि मुनीम थे। इनके पुत्र थे भाई लहणा जी। आप संघर में विवाहित थे। पिता जी शरीर त्याग गये। पिता जी ने संगत इकट्ठी करनी और नाचते गाते तीर्थ यात्रा करने जाया करते थे। भाई लहणा जी पर भी इसका प्रभाव पड़ा। इन्होंने देवी की बहुत सी भेंटे, आरतियां याद कर ली थीं। आप का गला बहुत ही सुन्दर तथा मिठास से भरा हुआ, कोयल के मीठे बोलों जैसा था। व्यक्तित्व में बड़ा आकर्षण था। भाई फेरू जी के बाद, आप जी देवी के दर्शनों के लिये बहुत से लोग इकट्ठे करके जिसे संग कहते हैं, लेकर जाया करते थे। आप उनके मुखिया होते थे। व्यापार काफी लम्बा चौड़ा था, शाही भी चलती थी। आप लोगों को काम करने के लिये पैसे भी उधार दिया करते थे। घर में खूब नौकर चाकर थे। इनके गाँव में जब भी कोई आता उस समय आप जगराता किया करते थे और देवी की भेंटे गाया करते थे। एक दिन जगराता करके लौट रहे थे तो इन्हें भाई जोध जी मिल गये। भाई जोध जी जपुजी साहिब का पाठ बड़े विचार कर, कर रहे थे। भाई लहणा जी ने सुना कि –

सभना जीआ का इकु दाता सो मै विसरि न जाई॥ *पृष्ठ – 2*

आप सत्य मार्ग के राही थे। सुनते ही एक दम आकर्षण हुआ। इतने में इन्होंने और भी ध्यान से सुना –

पुंनी पापी आखणु नाहि। करि करि करणा लिखि लै जाहु॥ *पृष्ठ – 4*

समझने का यत्न किया। जपुजी साहिब में से जो कुछ भी समझ में आता था, समझा। इसके पश्चात भाई जोध जी ने आसा जी की वार पढ़नी शुरू की। आप पहले बड़े ही प्यार के साथ श्लोक पढ़ते थे फिर पौड़ी पढ़ते थे। उन दिनों काम काज अधिक होने के कारण चलते फिरते भी बाणी पढ़ लिया करते थे। आज आप एकान्त में बैठे हैं और देवनैत से भाई लहणा जी भी आ गये। अकेली–अकेली बाणी की तुक समझने का यत्न किया। जब भाई जोध जी ने पूरी बाणी पढ़ ली तो आपने बड़ी विनम्रता के साथ, बड़े प्यार के साथ वचन किया, ''आप कृपा करके मुझे यह बता सकते हो कि ये बिशनपद किसके हैं?'' उस समय भाई जोध ने कहा, ''भाई लहणा जी, ये बिशनपद नहीं हैं। ये तो अकाल पुरुष के साथ मिलाप के लिये धुर से आई हुई बाणी है जो गुरू नानक पातशाह के मुखारबिन्द से उच्चरित हुई है। उन दिनों एक स्थान से दूसरे स्थान पर खबर बड़ी मुश्किल से जाया करती थी। आजकल तो छोटी से छोटी घटना किसी कोने में घटित हो जाये, उसका अखबारों, टैलिफोन तथा टी.वी. द्वारा प्रसार होना शुरू हो जाता है परन्तु उन दिनों बहुत कम ही पता चल पाता था। जब भाई जोध जी ने कहा कि गुरू नानक पातशाह की बाणी है तब भाई लहणा जी ने पूछा, ''आप गुरू नानक पातशाह को जानते हैं? कृपा करके मुझे बतायेंगे कि वह कौन हैं? कहाँ रहते हैं?'' भाई जोध जी ने कहा, ''गुरू नानक पातशाह यहाँ से बहुत ही नज़दीक निवास किये हुए हैं।'' खडूर साहिब से करतार पुर बहुत नज़दीक है। वे बोले, ''भाई लहणा जी! वे समरथ हैं जो इसी शरीर में परमेश्वर के दर्शन करवाने की समर्थ रखते हैं। मैं तो यहाँ तक कहता हूँ कि वह स्वंय ही परमेश्वर हैं। गुरू नानक

पातशाह जो अकाल पुरुष वाहिगुरू जी के अवतार हैं, कलयुग में जितना पाप बढ़ना है, उसे काटने के लिये सरल से सरल रास्ता बता कर जीवों के कल्याण के लिये आप जी पारब्रह्म परमेश्वर गुरू नानक रूप होकर प्रकट हुए हैं। भाई लहणा जी! मैं एक बात कहूँ पर आप बुरा न मानना कि अवतार, पीर, पैगम्बर संसार में आज से पहले बहुत आये हैं, उन्हें शक्ति आवश्यकतानुसार दी जाती है। सतयुग, त्रेता, द्वापर युग में परम हंस तथा मनुष्य रहते थे। उन्हें समझाना कोई मुश्किल बात नहीं थी। लम्बी-लम्बी आयु होती थीं। उनके साधन भी बड़े आराम से हो जाया करते थे। उस समय जो महापुरुष संसार में आये, उनके बारे में जब हम शास्त्रों के अन्दर विचार करते हैं तो पता चलता है कि वे प्रमुख देवताओं के अवतार थे। कुछ विष्णु जी के अवतार थे जैसे श्री राम चन्द्र जी महाराज 14 कला लेकर संसार में प्रकट हुए तथा कृष्ण महाराज जी 16 कला सम्पूर्ण द्वापर युग में प्रकट हुए, जिनका महान सन्देश गीता में आता है जो कि आज भी अपनाया जाता है। शास्त्रों के मतानुसार आप विष्णु जी के अवतार थे। इस प्रकार बहुत से महापुरुष आये, उन प्रवान हुए देवताओं या फरिश्तों ने आकर परमात्म सन्देश दिया तथा वे संसार को सीधा रास्ता दिखाते रहे। बेअन्त दुनियाँ का उद्धार किया।

कलयुग में क्योंकि बहुत अधिक पाप, धर्म के नाम पर ही होने लग गये थे। कत्लेआम मचा हुआ था। मनों में, अन्तसकरण में धुन्ध छा गई थी, अन्धेरा दूर करने के लिये यदि प्रकाश कर दो तो अन्धेरा दूर हो जाता है। परन्तु धुन्ध दूर नहीं हुआ करती। धुन्ध दूर करने का कोई साधन नहीं, वह तो हवा ही चल पड़े तो धुन्ध के बादल उड़ जाया करते थे, वे किसी लैम्प को, रोशनी, प्रकाश को कुछ नहीं समझती। गुरू नानक पातशाह जी के समय धर्म के अन्दर बहुत पाखण्ड तथा दिखावा आ चुका था। गुरू नानक पातशाह के बारे में तो जितना बताता हूँ, उतना ही कम है। जब गुरू नानक पातशाह जी निरंकार के पास सचखण्ड में गये, उस समय निरंकार जी ने फ़रमान किया, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तू गुरू परमेश्वर, तू मेरा ही रूप हुआ। मैं ही तेरे अन्दर प्रकट हुआ हूँ। तूने सत्य मार्ग को प्रकट करना है और धुन्ध को मिटाना है।'' अतः लहणा जी! गुरू नानक जी के जितने भी उपदेश हैं, High way खुला मार्ग है, जिन पर चलते हुए मुसाफिर को स्थान-स्थान पर संकेत मिलते जाते हैं। खतरे के स्थान पर खतरा लिखा हुआ होता है, सीधे रास्ते पर चलने की निशानी यह हुआ करती है कि इधर चलें। गुरू नानक पातशाह जी समरथ गुरू हैं। परमेश्वर तथा उनमें कोई भेद नहीं। इस बात को समझने के लिये तुम्हें काफी सत्संग करने की जरूरत है क्योंकि श्रद्धा के बिना, श्रद्धाहीन पुरुष को, इस भेद का पता नहीं चलता, वह तो शरीर को देखता है। गुरू शरीर नहीं होता। वह जाग्रत ज्योति ही होता है। शरीर में रहता हुआ काम करता है। प्राचीन समय में महापुरुषों को आकाशवाणी हुआ करती थी, उसके अनुसार वे आध्यात्मिक सन्देश जनता को दृढ़ करवाया करते थे। इसके विपरीत गुरू नानक पातशाह में करोड़ों ब्रह्मण्डों का मालिक स्वंय ही बोलता है। आप हमेशा ही फ़रमान किया करते हैं, आसा राग, गऊड़ी राग या धनासरी राग में मरदाना रबाब सुर करता, उस समय बाणी का प्रसार हो रहा होता है। यदि और थोड़ा सा विचार से बात को समझना हो तो ऐसे कह लें कि गुरू के स्वरूप में स्वंय निरंकार ही बोल रहा होता है। यह मेरा वचन किन्तु करने वाला नहीं है, यह सत पर आधारित है। इसकी समझ उस समय आती है, जब जीव शरीर के मण्डल तथा अहमभाव के मण्डल में से परिपूर्ण आत्म मण्डल में प्रवेश कर जाता है। उस समय जो वचन मैं कर रहा हूँ फिर समझ आते हैं। उसका कारण मैं तुझे बताता हूँ। मनुष्य की जो अक्ल है, वह माया के चक्करों में होने के कारण शुद्ध नहीं है। जीव की बुद्धि काल मण्डल से ऊपर नहीं जाती मेरे सतगुरू जी ने बताया है कि जिस समय यह जीव उन्नति करता है तो पहले धर्म खण्ड में जाकर जो जीवों के साथ बर्ताव हो रहा है, उसे

देख रहा है। कुछ गाफिल नरकों में फैंके जा रहे हैं, कुछ को बड़प्पन मिल रहा है, कुछ फिर से यौनियों में भेजे जा रहे हैं। गुरू साहिब ने सारा हाल धर्म खण्ड में ही सीमित कर दिया। इसके पश्चात गुरू महाराज जी ने ज्ञान खण्ड का वर्णन किया, जिसका बहुत बड़ा विशेष व्यवहार हो रहा है, जो हमारे नेत्रों से अदृश्य है। जितने भी देवी देवताओं को हम जानते हैं, जो भी संसार की रचना कर रहे हैं, जो भी साधक तप साधना करके, ऊँची अवस्थाओं में पहुँचे हुए हैं, माया मण्डल के अन्तिम सिरे पर पहुँचे हुए हैं, उनके बारे में उल्लेख किया हुआ है, यदि तुझे समझ आ जाये तो संक्षेप में बताता हूँ –

धरम खंड का एहो धरमु।
गिआन खंड का आखहु करमु।
केते पवण पाणी वैसंतर केते कान महेस।
केते बरमे घाड़ति घड़ीअहि रूप रंग के वेस।
केतीआ करम भूमी मेर केते केते धू उपदेस।
केते इंद चंद सूर केते केते मंडल देस।
केते सिध बुध नाथ केते केते देवी वेस।
केते देव दानव मुनि केते केते रतन समुंद।
केतीआ खाणी केतीआ बाणी केते पात नरिंद।
केतीआ सुरती सेवक केते नानक अंतु न अंतु॥ *पृष्ठ - 7*

आपने इसके ऊपर सरम खण्ड का उल्लेख किया है जहाँ पर पहुँच कर उस बुद्धि की रचना होती है, जिसे माया मण्डल से ऊपर, रूप मण्डल में परमेश्वर के अकाल मण्डल में जानने की शक्ति आ जाती है, वे नैन दिये जाते हैं, वह सुरत दी जाती है, जहाँ पर पहुँच कर पारब्रह्म परमेश्वर की अमित लीला हो रही प्रत्यक्ष अनुभव होती है। जैसा कि आपने फ़रमान किया है –

सरम खंड की बाणी रूपु। तिथै घाड़ति घड़ीऐ बहुतु अनूपु।
ता कीआ गला कथीआ ना जाहि। जे को कहै पिछै पछुताइ।
तिथै घड़ीऐ सुरति मति मनि बुधि। तिथै घड़ीऐ सुरा सिधा की सुधि॥ *पृष्ठ - 8*

इससे आगे गुरू नानक पातशाह जी ने इस जीव को बहुत ऊँचा ले जाकर वाहिगुरू जी की निज कृपा, बख्शीश के मण्डल में प्रवेश कराया है। जिसके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता, परन्तु थोड़े से संकेत आपने दिये हैं –

करम खंड की बाणी जोरु। तिथै होरु न कोई होरु।
तिथै जोध महाबल सूर। तिन महि रामु रहिआ भरपूर।
तिथै सीतो सीता महिमा माहि। ता के रूप न कथने जाहि।
ना ओहि मरहि न ठागे जाहि। जिन कै रामु वसै मन माहि।
तिथै भगत वसहि के लोअ। करहि अनंदु सचा मनि सोइ।
सच खंडि वसै निरंकारु। करि करि वेखै नदरि निहालु।
तिथै खंड मंडल वरभंड। जे को कथै त अंत न अंत।
तिथै लोअ लोअ आकार। जिव जिव हुकमु तिवै तिव कार।
वेखै विगसै करि वीचारु। नानक कथना करड़ा सारु॥ *पृष्ठ - 8*

वहाँ पर, उस मण्डल में पहुँचा हुआ जीव किसी भी विधि से ठगा नहीं जाता क्योंकि माया की हद, ज्ञान खण्ड की अन्तिम मंजिल तक पहुँच कर खत्म हो जाती है। यहाँ से आगे वह पारब्रह्म के मण्डल की सृष्टि पहले सरम खण्ड फिर बख्शीश का, प्यार का, अपनत्व का भरा हुआ, कर्म खण्ड का

मण्डल है। यहाँ पर आकर निरंकार पूर्ण रूप में पहुँची हुई आत्मा को अपने अन्दर अभेद कर लेता है। ऐसे समझ लो, वह परमेश्वर ही बना देता है। उसके आगे गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया है कि पूर्ण रूप से परमेश्वर में अभेद वही होता है, जिस पर अकाल पुरुष की पूर्ण कृपा दृष्टि हो जाये। जिसके साधन पक्ष संक्षेप में गुरू महाराज जी ने बताए हैं –

जतु पाहारा धीरजु सुनिआरु। अहरणि मति वेदु हथीआरु।
भउ खला अगनि तपताउ। भांडा भाउ अंम्रितु तितु ढालि।
घड़ीऐ सबदु सची टकसाल। जिन कउ नदरि करमु तिन कार।
नानक नदरी नदरि निहाल॥ *पृष्ठ - 8*

भाई जोध जी कहने लगे, ''भाई लहणा जी! दुनियां में अन्धकार मचा हुआ है। सभी मौखिक धार्मिक अगुआ जो आज संसार में क्रियाशील हैं, अपने असली लक्ष्य से खिसके हुए हैं। कोई जादूगरी करके तांत्रिक विद्या द्वारा अपना गुजारा कर रहा है। कोई छल कपट से चल रहा है। गुरू नानक पातशाह हर एक के पास जाकर उसे सच के मार्ग पर चलाते हैं, आप पूर्ण गुरू हैं, गुरू ही नहीं, वह तो गुरू परमेश्वर हैं। यदि ऐसे कहें जैसा कि मैं पहले बता चुका हूँ कि पारब्रह्म परमेश्वर का निर्गुण स्वरूप ही, सगुण स्वरूप गुरू परमेश्वर होकर प्रकट हुआ है, तो यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। सत पर आधारित है। संसार के उद्धार के लिये आपने सुरत शबद का मार्ग प्रचलित किया है। पूर्व युगों में हठ योग, राज योग प्रचलित थे। इन रास्तों पर चलकर परमेश्वर तक पहुँचने के लिये काफी समय लगता था। मनुष्य की उम्र बहुत कम होने के कारण राज योग की पूर्ण रूप में प्राप्ति नहीं होती थी। चलते तो परमेश्वर को मिलने के लिये थे, परन्तु सही रास्ता न होने के कारण, समय भी कम होने के कारण, जिज्ञासु परमेश्वर को मिलने में सफल नहीं होते थे, बीच में ही लटक जाते थे। राजयोग जिसे कष्ट योग भी कहा जाता है, में साधन बहुत कठिन हैं। भाई लहणा जी, मैंने गुरू नानक पातशाह की संगत करके जो कुछ जाना है, वह मैं तुम्हें अति संक्षेप रूप में बताता हूँ।

भाई लहणा जी! आप यह तो भली भान्ति जानते ही हो तथा मेरे साथ सहमत होंगे कि अब हठ योग का तो बिल्कुल ही समय नहीं रहा। ठण्डे पानी में घन्टों खड़े रहना, कांटों पर सोना, भूखे रहना, ये साधन परमेश्वर को नहीं भाते क्योंकि वाहिगुरू जी ने अति उत्तम मानस शरीर की बख़्शीश हमें दी है। यह व्यर्थ गवाँने के लिये नहीं दी। शरीर पूरी तरह स्वस्थ होना चाहिये। तभी हम किसी लक्ष्य पर पहुँच सकते हैं। दूसरा राज योग है। उसके अन्दर अनेक रहतें (नियम) हैं। मन की, शरीर की, जिन्हें सम तथा दम कहते हैं। तीसरा इनके अन्दर आसन हैं – प्राणायाम है, प्रतिहार है, धारना, ध्यान, समाधि हुआ करती है। समाधि दो प्रकार की होती है। एक को सम्प्रज्ञात समाधि कहते हैं, जिसके चार भेद हुआ करते हैं। दूसरी असम्प्रज्ञात होती है। इसके पश्चात राजमेघ समाधि हुआ करती है, जहाँ पर पहुँच कर फुरने खत्म हो जाया करते हैं। दसवें द्वार में सुरत टिक जाती है। आधुनिक समय में प्राणायाम करना बहुत कठिन है। गृहस्थी तो कर ही नहीं सकते क्योंकि इसमें पूर्ण ब्रह्मचर्य रखने की शर्त जरूरी है। कलयुग के लोगों के आचार, व्यवहार बहुत ही निम्न कोटि के हो गये हैं। इसलिये ब्रह्मचर्य रह ही नहीं सकता। ब्रह्मचर्य का सम्बन्ध दिमाग के साथ है। यदि दिमाग खुश्क हो जाये तो हम अपने लक्ष्य पर नहीं पहुँच सकते। ऐसा लिखा हुआ मिलता है कि छोटे से छोटा प्राणायाम 42 बार औंकार का शब्द कह कर सांस अन्दर खींचा जाये, 84 बार अन्दर रोक कर, 42 बार औंकार कहते हुए बाहर छोड़ा जाये, फिर 42 बार अन्दर खींचा जाये। यह प्राणायाम की पहली सीढ़ी है। (42+84+42 = 168) प्राण वायु तथा अपान वायु के संगम की गर्मी से भुजंगा नाड़ी का मुँह खुलता है, फिर सारे चक्रों में से होता हुआ, सारी रूकावटें

दूर करता हुआ, साधक आज्ञा चक्र में पहुँचता है। उस स्थान से आगे त्रिकुटी छूटती है और सुरत सहंसरार दल में प्रवेश करती है, जहाँ पर सफेद प्रकाश का चमक मारता हुआ फल होता है। इसमें अथाह शक्तियां, रिद्धियां, सिद्धियां शक्तियां पैदा हो जाती हैं जिन्हें जिज्ञासु जर नहीं सकता। जिज्ञासु इन्हीं रिद्धियों-सिद्धियों में लिप्त हो जाता है। यहीं पर ही उसे संसार की प्रशंसा प्राप्त होकर आगे बढ़ने की रूचि खत्म हो जाती है। कोई-कोई प्रेमी दसवें द्वार में टिकाना कर पाता है। यहाँ तक तो योगी पहुँच जाते हैं। फुरना भी शान्त कर लेते हैं। पर लहणा जी, थोड़ा सा ध्यान लगाकर सुनो। वाहिगुरू जी परिपूर्ण अस्तित्व हैं, जो हर स्थान पर फैला हुआ है। वह निरा ही प्यार है। उसके मण्डल में प्रवेश करने के लिये भरपूर प्यार के जज़बे की जरूरत है। पूरी तरह आपा (निजित्व) समर्पण करने की ज़रूरत है। मैं भाव को पूरी तरह से मारना पड़ता है। देह अधिआस से ऊपर उठ कर सत की पहचान तो कर लेता है, परन्तु निर्मल हऊं (हउमै) के अभाव के लिये तथा परमेश्वर में अभेद होने के लिये वाहिगुरू की कृपा की जरूरत है। लहणा जी, आम तौर पर जितने भी भारतीय दर्शन हैं वह परमेश्वर को प्यार भरा अस्तित्व बताने की बजाये, केवल चेतन तत्व कह देते हैं। दूसरी ओर जड़ तत्व प्रकृति को अनादि कह देते हैं। सृष्टि के प्रसार को संयोग कह देते हैं पर गुरू नानक पातशाह जी तो अकाल पुरुष को कर्ता कहते हैं। उसकी मर्ज़ी से सभी कुछ चल रहा है। इसमें प्रकृति अलग तत्व नहीं है। वाहिगुरू जी कर्ता कारण समरथ हैं। उन्हें कुम्हार की तरह किसी अन्य वस्तु की जरूरत नहीं है क्योंकि जब वह बर्तन बनाता है, उसे सबसे पहले मिट्टी की जरूरत है। दूसरी चक को चलाने वाले डण्डे की, तीसरी बल की, चौथी योग्यता की है। फिर जाकर कहीं बर्तन बनते हैं। परन्तु परेश्वर को किसी चीज़ की जरूरत नहीं है। उसका तो अकस्मात विचार करना है, जब उसने चाहा एक से अनेक हो गया। जब खेल बन्द करनी होती है, तो फिर अनेक से एक हो जाता है। यहाँ तक पहुँचने के लिये गुरू नानक पातशाह जी ने समरथ गुरू की प्राप्ति पर जोर दिया है। देवताओं की पूजा, पदार्थ तो दे सकती हैं, परन्तु ज्ञान नहीं दे सकती क्योंकि वे भी माया की ही कृति है जैसा कि आपने फ़रमान किया है -

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ *पृष्ठ - 7*

गुरू नानक पातशाह जी ने पूर्ण सतगुरू के बारे में फ़रमान किया है, सतगुरू वह है जो इस शरीर में, ब्रह्मण्ड में, कण-कण में समाई प्रभु ज्योति को दिखा कर भ्रमों का नाश कर दे और जिज्ञासु को उसका असली अनादि स्वरूप दिखा दे, वाहिगुरू रूप ही हुआ दिखाई दे। उसके बारे में इस प्रकार कहा है -

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु।
पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु।
दीप लोअ पाताल तह खंड मंडल हैरानु।
तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु।
सुखमन कै घरि रागु सुनि सुंनि मंडलि लिव लाइ।
अकथ कथा बीचारीऐ मनसा मनहि समाइ।
उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ।
अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ।
सभि सखीआ पंचे मिले गुरमुखि निज घरि वासु।

सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु॥ *पृष्ठ - 1291*

अत: लहणा जी, बात तो बहुत लम्बी हो गई। यदि आपको जल्दी न हो तो मैं बताता हूँ कि गुरू नानक पातशाह जी हठ योग की तरफ नहीं लगाते। उनका मत तो गृहस्थ में रहते हुए, सभी उत्तरदायित्वों को निभाते हुए, परमपद की प्राप्ति का है जैसा कि फ़रमान है -

नानक सतिगुरि भेटिऐ पूरी होवै जुगति।
हसंदिआ खेलंदिआ पैनंदिआ खावंदिआ विचे होवै मुकति॥ *पृष्ठ - 522*

इसीलिये गुरू नानक पातशाह हठ योग के साधनों को पसन्द नहीं करते। आपका मत तो गृहस्थ में रहते हुए शबद और सुरत के अति सुखैन योग द्वारा पार करा देता है। साध संगत जी! गुरू नानक पातशाह को भाई गुरदास जी के मत अनुसार संसार में निरंकार ने भेजा -

सुणी पुकारि दातार प्रभु गुरु नानक जग महि पठाइआ।
चरन धोइ रहरासि करि चरणाम्रितु सिखां पीलाइआ।
पारब्रहम पूरन ब्रहम कलिजुग अंदरि इक दिखाइआ।
चारे पैर धरम दे चारि वरन इक वरनु कराइआ।
राणा रंक बराबरी पैरी पवणा जगि वरताइआ।
उलटा खेलु पिरंम दा पैरां उपरि सीसु निवाइआ।
कलिजुगु बाबे तारिआ सतिनामु पड़ि मंत्र सुणाइआ।
कलि तारणि गुरु नानक आइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 1/23*

ये वचन चल ही रहे थे, तभी भाई लहणा जी ने कहा, ''भाई जोध जी! आपने तो मेरे अन्दर एक प्रकार से प्रकाश ही कर दिया क्योंकि मैं भी यह चाहता हूँ, मेरे धुर अन्दर यह सोच है कि मानस जन्म की सफलता के लिये कोई पूर्ण गुरू, धारण कर लिया जाये तथा उसके बताए हुए मार्ग पर चलकर, जन्म मरण का चक्कर समाप्त कर लिया जाये परन्तु मैं जहाँ भी गया, मेरा अनुमान कुछ और ही निकला क्योंकि वह उच्च कोटि का महापुरुष नहीं निकलता। मुझे जब तक तसल्ली नहीं होती, तब तक मैं किसी महापुरुष के पीछे नहीं लगना चाहता। जो आपने गुरू नानक पातशाह के बारे में बताया है, मेरे अन्दर प्यार ही प्यार जाग्रत हो उठा है। मैं आपका धन्यवादी हूँ और मेरे अन्दर उनके दर्शन करने की बड़ी लालसा है। मुझे आशा है कि मैं अपने जीवन को जरूर सफल कर लूंगा। बाकी आप सोचते होंगे कि मैं हर साल देवी जी के मन्दिर पर संगत लेकर जाता हूँ और देवी माता की भेंटे गाता हूँ, मस्ती में आकर खूब नाचता भी हूँ पर भाई जोध जी! मैंने आज तक कभी सोचा भी नहीं था कि इस जीवन में वाहिगुरू को प्राप्त कर लिया जा सकता है। ऐसा इसलिये भी था कि न तो कोई परमेश्वर का मन्दिर है, देवताओं के मन्दिर बने हुए हैं या अवतारों के मन्दिर हैं पर मुझे तुम्हारे साथ वचन करके ज्ञान हो गया है कि ये अवतार परमेश्वर के बनाए हुए हैं। यह भी पता चल गया कि देवी-देवता काल से स्वतन्त्र नहीं हैं, अमर नहीं हैं। इसलिये मेरे मन में प्रबल इच्छा पैदा हो गई है कि मैं गुरू नानक पातशाह के दर्शन करूं, जहाँ जाकर मैं अपने जीवन का लक्ष्य पूरा करने में सफल हो सकूं।''

कुछ दिनों के पश्चात आपने अपने इलाके का संग इकट्ठा किया और देवी जी के दर्शनों के लिये संग सहित चल पड़े। भेंटे गाने वालों के पैरों में घुंघरू बन्धे होते थे, हाथों में खड़तालें होती थीं, अनेक प्रकार के चिमटे, झुनझुने बाजों के साथ गाते बजाते तथा नाचते हुए जाया करते थे। आप जी भी इस रस्म को पूरी करने के लिये संग लेकर जा रहे थे, परन्तु इस बार यह विचार आपके मन में बार-बार उठ रहा था कि देवी देवता पदार्थ तो दे सकते हैं परन्तु मुक्ति नहीं दे सकते। ऐसा मैंने कई

महापुरुषों से सुना है कि वे स्वंय तो मुक्त हैं नहीं। मुक्ति तो केवल समरथ गुरू ही दिलवा सकता है। आपको समरथ गुरू की तलाश तो पहले से थी ही, पर आज मन में चाव पैदा हो गया कि आज मैंने देवी के दर्शनों पर जाते हुए गुरू नानक पातशाह के दर्शन करतारपुर में ज़रूर ही करने हैं। यदि आप ठीक उसी तरह के हुए जैसा भाई जोध जी ने बताया है फिर तो मैं अपना सभी कुछ उनके चरणों में न्यौछावर कर दूंगा। ऐसे विचार करते-करते आप संग सहित करतारपुर पहुँच जाते हैं और करतारपुर के निकट ही सभी संगी, साथी, रात बिताने के लिये डेरा लगा लेते हैं परन्तु लहणा जी अचानक ही अपने घोड़े पर सवार होकर करतार पुर की ओर चल पड़ते हैं। आपके प्यार के आकर्षण की तरंगें, गुरू नानक पातशाह के पास खींच कर ले गईं। आप करतारपुर की ओर चले और जिस स्थान पर चौराहा था, जहाँ से चारों ओर को रास्ते जाते हैं, वहाँ पर रूक गये। रास्ते के बारे में भूल-भुलैया में पड़ गये कि पता नहीं कौन सा रास्ता करतारपुर को जाता है, जिस पर चलकर मैं गुरू नानक पातशाह के दर्शन करूं। जब भाई लहणा जी ने उस रास्ते के निकट ही गुरू नानक पातशाह को खड़े देखा, उस समय उन्हें साधारण व्यक्ति समझ कर, आपने कहा, ''सतकारयोग जी! पास आकर मेरी प्रार्थना सुनो।'' घोड़ा पास ले गये। आपने कहा, ''मैं संघर से आया हूँ, मैं देवी के स्थान पर संग लेकर जा रहा हूँ, मेरे मन में बड़ी तीव्र इच्छा है कि मैं गुरू नानक जी के दर्शन करता जाऊं। क्या तुम मुझे सही रास्ता बता सकते हो, जिस पर चलकर मैं गुरू नानक पातशाह के दर्शन कर सकूं?'' तब गुरू नानक पातशाह जी मुस्कराये तथा अति प्यार भरी दृष्टि भाई लहणा जी पर डाली और कहने लगे, ''प्यारे! धन्य है तेरी लालसा। मैं बलिहार जाता हूँ। आ, मैं तुझे रास्ता दिखाऊं। मुझे डर है कि यदि इसी तरह कई रास्ते और आ गये तो तुम रास्ता भूल न जाओ। मेरा शरीर आगे-आगे चलता है, तू पीछे-पीछे चला आ। मुझे पता है कि तेरा घोड़ा तेज़ चलता है, मैं भी उसी चाल से चलूंगा। तुझे घोड़ा आहिस्ता करने की ज़रूरत नहीं।'' चलते-चलते आपने कहा, ''प्यारे! तेरा नाम क्या है?'' घोड़े पर सवार लहणा जी ने कहा, ''लहणा।'' सच्चे पातशाह कहते हैं, ''कितना सुन्दर नाम है। तूने लहणा अर्थात लेना है और हम देनदार हैं।'' जब कोई लेने वाला आता है तो देन दार पैदल ही चला करते थे। गुरू नानक पातशाह जी बड़ी जल्दी-जल्दी घोड़े के आगे-आगे चल रहे हैं। कभी-कभी भाग-भाग कर भी चलते हैं। चलते-चलते जब धर्मशाला के निकट आ गये, आपने फ़रमान किया, ''प्यारे! ऐसे करो, अपना घोड़ा यहाँ बान्ध दो, यहाँ पर पास ही घास-फूंस के पट्ठे पड़े हैं, जाओ अपने आप घोड़े को डाल दो, अन्यथा मैं डाल देता हूँ। तुम यहाँ पर पाँच स्नान (हाथ, मुँह तथा पाँव धोवो) करो, आराम से इसके बाद संकेत करते हुए बोले, इधर सामने आ जाना, वहाँ पर जिसको तूने मिलना है, वह अपने आप ही आ जायेगा।'' गुरू नानक पातशाह जी ने अपने बारे में कोई संकेत तक न दिया। आप अन्दर गये तथा साफे से पैर तथा टांगे साफ कीं, खड़ाऊं एक तरफ रख दिये और सामने बिछे हुए पलंग पर चौकड़ी लगा कर बैठ गये।

भाई लहणा जी आराम से पाँच स्नान करके, अपने घोड़े पर हाथ फेर कर जब बताये हुए स्थान पर पहुँचे, कमरे के दरवाज़े खुले हुए थे, आप देहरी पार करके अन्दर चले गये। जब अन्दर जाकर देखा तो पलंग पर वही महान हस्ती बैठी है जो मुझे रास्ता बताने के लिये, अपनी क्षमता से भी अधिक जल्दी-जल्दी, कभी-कभी भागते-भागते मुझे रास्ता बता रहे थे। भाई लहणा जी के मन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और दर्शन करने के पश्चात कोई बात कह न सके। मौन ही रह गये। अन्दर ही अन्दर बात चल रही है और अन्दर ही अन्दर उसका उत्तर भी मिल रहा है। गुरू नानक पातशाह जी के प्यार ने इतना आकर्षित किया कि भाई लहणा जी को देवी के संग के साथ जाना ही भूल गया और वहीं पर ही रह गये। साथ आने वाले संगियों को कहा, ''मैंने तो जहाँ आना था, वहाँ पहुँच गया। अब और कोई

जरूरत नहीं है। मुझे तो जो वस्तु दुनियां में से प्राप्त होनी थी, वह मिल गई।'' चार दिनों तक गुरू नानक पातशाह की संगत की। आप जी ने भाई लहणा जी को अपने अति निकट रखा और इन पर खास ध्यान रखते थे। भाई लहणा जी ने आप जी के पवित्र वचन सुने और ऐसा महसूस हुआ कि मैंने जहाँ जाना था, वहीं पहुँच गया, यही मेरी दुनियां है, यही मेरा परमेश्वर है, सभी कुछ यही है। गुरू नानक पातशाह के साथ पूरी तरह से इकमिक हो गये। अन्दर ही अन्दर पूरी तरह से गुलाम बन गये क्योंकि जिन्दगी में पहली बार ऐसे महापुरुष के दर्शन किये थे तथा भाई जोध जी द्वारा बताए गये वचन बार-बार याद आते हैं, साथ ही साथ हैरान भी होते जा रहे हैं कि गुरू नानक देव जी उतने महान नहीं हैं बल्कि जितने भाई जोध जी ने बताये उससे भी कहीं अधिक हैं, वह तो आप ही आप हैं।

चार दिन बीत गये। भाई लहणा जी को दुनियाँ भूल गई, घर की कोई याद नहीं आ रही। न ही जो संग साथ आया था, उसकी याद आ रही है। उनकी दुनियां तो करतारपुर ही बन गई। गुरू नानक पातशाह जी ने चौथे दिन अपने पास बुलाया और कहा, ''हे पुरखा! तूने चार दिन सत्संग कर लिया है, अब तू अपने घर वापिस जा।'' मन में ख्याल आया कि जो महापुरुषों का वचन होता है, उसके सामने कोई दलील नहीं देनी चाहिये। उसने गुरू नानक पातशाह के चरण पकड़ लिये। अज़ीब तरह का प्रभाव मन पर पड़ा हुआ है, नेत्रों में से प्रेम आंसू बह चले, बड़ी मुश्किल से कहा, ''मुझ प्यासे को तो किसी अच्छी सौभाग्य घड़ी के फलस्वरूप अमृत का चश्मा हाथ लग गया है। मैं इसे कैसे छोड़ूं?'' गुरू नानक पातशाह ने कहा, ''पुरखा! अब तुम जाओ। अपने घर की सुध-बुध लो।'' हुक्म के बन्धे हुए, भाई लहणा जी घर आ गये। आप का मन घर में बिल्कुल भी न लगा। दूसरे दिन ही आप ने लंगर में साथ ले जाने के लिये नमक की गठड़ी बान्ध ली, एक सफ साथ ले ली क्योंकि गुरू नानक पातशाह के पास जाकर सफ पर सोना था। आप जी ने नमक की गठड़ी उठाई और धीरे-धीरे चलते हुए करतारपुर पहुँच गये। लंगर में पहुँच कर नमक की गठड़ी उतार दी। माता जी! देख रही थी कि कोई भला पुरुष आया है क्योंकि आपने रेशमी वस्त्र पहने हुए थे। माता जी ने कई प्रकार के अनुमान लगाये इतना अमीर बालक नमक की गठड़ी कहाँ से उठाकर लाया है। इतने में ही माता जी ने भाई लहणा जी से पूछा, ''बेटा, कहाँ से आया है?'' आपने अपना परिचय दिया। भाई लहणा जी ने माता सुलखनी जी से पूछा ''गुरू महाराज जी कहाँ है?'' माता जी ने कहा वह तो धानों की गोड़ाई कर रहे हैं, नदीन (खरपतवार) निकाला जा रहा है, जो रात को पशुओं-ढोरों के लिये जरूरत पड़ता है। यदि तुझे दर्शन करने की जल्दी है तो वहाँ सामने खेतों में चला जा। गुरू नानक पातशाह जी ऐसे साधु नहीं थे, न ही ऐसे पीर पैगम्बर थे जो दूसरों की कमाई पर निर्भर करते और न ही गोशानशीन होकर बैठ जाने वाले थे। उन्होंने संसार को एक शिक्षा देनी थी, ''प्यारे! हाथों, पैरों से काम करो, शरीर से काम करो परन्तु चित्त को परमेश्वर के साथ लगाकर रखो।'' आप जी फ़रमान करते हैं -

चिंतत ही दीसै सभु कोइ। चेतहि एकु तही सुखु होइ॥ ***पृष्ठ - 932***

एक परमेश्वर में ध्यान रखना बहुत ही कठिन है। जो साधक बिल्कुल भी कोई काम नहीं करता और काफी समय तक आखें बन्द किये बैठा रहता है, उसका भी चित्त एकाग्र होकर नहीं बैठता। गुरू महाराज जी तो संसार की, धर्म की, समाज की, सभी जिम्मेवारियां निभाते हुए बता रहे थे कि चित्त परमेश्वर में कैसे लगाया जाता है। इसलिये आप धानों में नदीन निकाल रहे थे। इतना भी नहीं कि वे धानों की कतारों में खड़े हुए नदीन निकलवा रहे थे, बल्कि स्वंय भी इस कार्य में इतने व्यस्त थे, जैसे

अन्य सेवादार लगे हुए थे। गुरमत में काम काज छोड़कर, केवल भजन करने वाली अवस्था को मान्यता नहीं मिली। सबसे बड़ा योगी वह है जो संसार के काम भी करता हो और उसका चित्त परमेश्वर के साथ जुड़ा रहता हो। गुरू ग्रन्थ साहिब में इस सम्बन्ध में कई उदाहरणों का उल्लेख नामदेव जी ने किया है। नामदेव जी के समकाली भक्त त्रिलोचन जी, नामदेव जी के पास आये। आप अधिकतर समाधि लगाने पर विश्वास रखते थे।

उन दिनों संचार साधनों की कमी होने के कारण यदि कहीं कोई घटना घटित हो जाती तो वह पाँच सात लोगों के पास पहुँचते-पहुँचते कुछ की कुछ बन जाती। अन्य लोगों के विचार भी उसमें मिल जाते थे क्योंकि प्रत्यक्ष ही है कि पहला व्यक्ति तो आखों देखा हाल सही-सही बता देता है, दूसरा कुछ और बताता है, तीसरा एक दो बातें और मिला देता है पाँचवें और सातवें तक पहुँचते-पहुँचते बात और भी बिगड़ जाती है। एक दिन नामदेव जी मन्दिर में जाकर कैशियो बजा कर भजन करने लगे। आप निम्न जाति के थे। वह मन्दिर उच्च जाति के लोगों के लिये बनाया हुआ था। ये अपने-अपने विचार हुआ करते हैं, परन्तु गुरू नानक पातशाह ने इन निर्मूल विचारों को बिल्कुल भी नहीं माना। आप जी का विचार यह था कि सारी सृष्टि परमेश्वर ने, आप जी ने अपने आप में से ही पैदा की है। वे स्वंय ही सभी रूप धारण करके अपनी खेल कर रहे हैं, फिर छोटा बड़ा कैसे हो गया? बाणी में तो यहाँ तक फ़रमान आता है कि यदि तेरे मन में बहुत तीव्र लालसा है कि किसी को बुरा कहूँ तो यदि तूने कहना ही है, तो अपने आप को कह ले -

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ।
जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ॥ *पृष्ठ - 1364*

मन्दिर वालों ने जब नामदेव जी को देखा कि एक शूद्र मन्दिर में कैशियो बजा रहा है तो उस समय उन्होंने उनका निरादर किया और इन्हें डेढ़ कहा, (ए पंडीआ मो कउ ढेढ कहत) शूद्र कहा। आप उसी तरह प्यार में रंगे हुए, मन्दिर के पीछे जाकर बैठ जाते हैं और प्रभु से कह रहे हैं कि यदि तेरा ऊँची जातियों के साथ प्यार है, तो मुझे छीपा जाति में जन्म नहीं देना था, पर मेरा प्रभु ऐसा नहीं है, वह तो बलहीनों को बल देता है, बेआसरों का आसरा है, जिनके मनों में उच्च कोटि की विनम्रता है, उनके हृदयों में वह निवास करता है -

हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि॥ *पृष्ठ - 1089*

क्योंकि इस अहंकार ने जीव को परमेश्वर से तोड़ा हुआ है। यही अहमभाव जिसके फलस्वरूप मैं और मेरी का जन्म हुआ है, जीव को परमेश्वर से अलग करके रखता है। प्रभु जो कि हाज़िर-नाज़िर, सर्व कला समरथ, सभी को प्यार करने वाले हैं, ऐसा कौतुक दिखाया कि मन्दिर का मुँह पश्चिम की तरफ कर दिया, जबकि आम मन्दिरों के द्वार पूर्व की ओर ही हुआ करते हैं।

भक्त त्रिलोचन यह देखने के लिये नामदेव जी के पास आते हैं और यह देखना चाहते हैं कि नामदेव जी भक्ति कैसे करते हैं? परमेश्वर उसके सारे काम कैसे करता है? प्रकट कैसे होता है? वह कौन सी भक्ति है जिसके कारण परमेश्वर उनके वश में हो गया है? जब नामदेव जी के पास भक्त त्रिलोचन पहुँचता है, नामदेव जी तब अपने कार्य में लगे हुए थे। दक्षिण भारत में मशीनें आने से पहले कपड़ा ठप्पों द्वारा छापा जाता था। छापने वालों के पास अनेक प्रकार की छापें हुआ करती थीं। कपड़ों पर छापे लगाते थे इसीलिये उन्हें छीपा कहा जाता था। त्रिलोचन जब पहुँचे तो नामदेव जी के चारों ओर ग्राहकों का

झुरमुट लगा हुआ था और सभी अपने-अपने कपड़े जल्दी से जल्दी छापे लगवाकर वापिस करने के लिये कह रहे थे और नामदेव जी सभी को समय बता रहे थे। इसने सोचा कि नामदेव जी तो एक बुरी तरह से फंसा हुआ गृहस्थी है। वह तो बातें ही बातें करता है। वह राम का नाम कब जपता होगा फिर वह भक्त कैसे हो सकता है? हो सकता है, लोक कथाएं ऐसे ही प्रचलित हो गई हों। सन्तों के श्रद्धालु अनेक कथाएं प्रचलित कर देते हैं। काफी समय पश्चात उसने नामदेव जी को सम्बोधित करते हुए एक प्रकार से ताना दिया -

नामा माइआ मोहिआ कहै तिलोचनु मीत।
काहे छीपहु छाइलै राम न लावहु चीतु॥ पृष्ठ - 1375

नामदेव जी ने सुना। आप मुस्करा पड़े और उन्होंने लौट कर उत्तर दिया कि त्रिलोचन जी, प्यार का सम्बन्ध हृदय से हुआ करता है, जीभ से नहीं हुआ करता। परमेश्वर हृदय की तरंगों से गीला होता है, न तो वह गाने से भीगता है न दान और न तीर्थ यात्रा करने से, वह तो हृदय की प्रीत मांगता है। प्यार एक के साथ ही होता है अन्य सभी प्यार संकोचने पड़ते हैं, प्यार आकर्षण पैदा करता है यदि केवल एक के साथ किया जाये -

लोग कुटंब सभहु ते तोरै तउ आपन बेढी आवै हो॥ पृष्ठ - 657

किरत करना हाथों का काम है, शरीर की अनेक जरूरतें हैं। परिवार की अनेक आवश्यकताएं हैं। गृहस्थी का धर्म है कि धर्म की किरत करे। इसी कार्य में से ही प्रभु की भक्ति के लिये समय निकाले। त्रिलोचन जी, आप मेरे साथ सहमत होंगे कि परमेश्वर का सम्बन्ध हृदय के साथ होता है, दिमाग से नहीं होता। ज्ञानी बुद्धि मण्डल में रहते हैं। वे दिमागी खोजें, नईं से नईं निकाल लेते हैं। भक्त प्रभु से प्यार करते हैं। वे रो भी लेते हैं और उसके प्यार में चुप भी कर जाते हैं -

रंगि हसहि रंगि रोवहि चुप भी करि जाहि।
परवाह नाही किसै केरी बाझु सचे नाहि॥ पृष्ठ - 473

अत: त्रिलोचन जी! गृहस्थ धर्म निभाने के लिये किरत करनी जरूरी है। जो दूसरों की कमाई पर पलता है, दान करने वाले उसकी कमाई का हिस्सा ले जाते हैं फिर अपने पास तो कुछ भी न रहा। भक्ति का जो धन है, उसे तो सेवा करने वाले भी लूट कर ले जायेंगे। परमेश्वर का सम्बन्ध तो हृदय की सच्चाई से, हृदय के आकर्षण से जैसा कि कहा है -

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।
निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।
इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी।
वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे॥ डा. भाई वीर सिंघ जी

त्रिलोचन जी, आपकी बात मुझे समझ आ गई है। आप अपनी जगह ठीक हो क्योंकि आप किरत नहीं करते। मैं तो गरीब आदमी हूँ, परिवार भी पालना है। मैं पूरी लगन के साथ अपना काम करता हूँ। भक्त जी मुख से राम कहो और मेरी बात सुनो -

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संमालि।
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥ पृष्ठ - 1376

त्रिलोचन जी ने प्रश्न किया, ''नामदेव जी! मन एक है या दो, चित्त एक है या दो? जब चित्त परमेश्वर के साथ लगा हो फिर काम में कैसे लग जायेगा?'' नामदेव जी ने कहा, ''त्रिलोचन जी! मन की बहुत सी पर्तें होती हैं। ऊपर वाला मन किरत में लीन हो जाता है। मन की आन्तरिक पर्त में यदि

कोई चीज़ गहरी चली जाये वह भूलती नहीं है। यदि किसी माता का पुत्र विदेश चला जाये और वह यह कहे कि वह दुखी है,ऽ तो मां के दिल को गहरी चोट लगेगी, उसके दिलो-दिमाग को हिला कर रख देगी। उस घर के काम काज करती हुई का चित्त, अपने बच्चे में रहेगा। एक बालक ने पतंग बनाई। डोरी बान्धी और आसमान में उड़ा दी। वह ठीक तरह से तभी उड़ेगी जब ठीक समय पर ठीक झटके दिये जायेंगे। हँसने की बातें भी वे बालक करते हैं और अपना गहन ध्यान उस पतंग में लगाये रहते हैं। वह आवश्यकता पड़ने पर उसे झटका देता है, जिसके फलस्वरूप पतंग ऊपर को चढ़ती रहती है और इस बात से भी सावधान रहता है कि कोई दूसरा, उसकी पतंग की डोर न काट दे।

इसी तरह से मैं एक और उदाहरण देता हूँ। गाँव की लड़कियां कुएं से स्वच्छ जल भर कर ला रही हैं। उन्होंने दो मटके सिर पर, एक बगल में उठाया हुआ है। बातें करती हुई, हंसती हुई आ रही हैं। परन्तु उनका ध्यान मटके में ही रहता है। चौथी उदाहरण देता हूँ कि एक सोने के गहने बनाने वाला कारीगर है। सोने के गहने बना रहा है। ग्राहक आते हैं। उससे बातें करते हुए उसे अपनी मन पसन्द के गहने बनाने के लिये कहते हैं परन्तु वह बातें भी करता है तथा अपनी ठुक-ठुक भी बन्द नहीं करता। ठीक-ठीक चित्र बना रहा है क्योंकि अन्दर की गहरी पर्त में से देख रहा है।

एक बार एक राजा अपनी फौजों सहित, बैण्ड बाजों के साथ बाज़ार में से गुज़र गया। दूसरी ओर कोई कलाकार गहने बना रहा था। वह अपने काम से आंख उठाकर भी नहीं देख रहा था। राजा की फौज चली गई। बाद में किसी ने पूछा, ''तूने देखा था कि पहले पैदल सवार थे, फिर हाथी सवार थे, फिर घुड़ सवार आये थे।'' उसने कहा, मुझे तो अपने काम में से इतनी फुर्सत नहीं थी कि वे यहाँ से गुज़रे भी थे या नहीं, मैं तो अपना काम कर रहा था। इसी तरह हमारे मन की पर्त में कोई गहरी चीज़ समा जाती है तो हम बेशक ऊपर-ऊपर से हंसते हैं पर कोई गमगीन असर हुआ है तो आह अपने आप ही अन्दर से निकल जायेगी।

एक और उदाहरण दिया कि एक ताज़ा प्रसूति गाय चरवाहे के साथ जंगल में घास चरने गई। परन्तु थोड़ी-थोड़ी देर बाद गाँव की ओर मुँह करके रम्भाना शुरू कर देती है क्योंकि उसका ध्यान बछड़े में रहता है।

इसी तरह त्रिलोचन जी, हाथों से कोई किरत करता है खेती बाड़ी करता है, कोई काम करता है। वह अपने चित्त की अवस्था के अनुसार उसी पर्त में रहेगा, जिस पर्त में उसने गहरी जगह बनाई हुई है।

अत: गुरू नानक पातशाह ने किरत (काम धन्धे) को महत्व देते हुए स्वंय किरत करके दिखाई।

आज आप धानों में से नदीन निकाल रहे हैं। घर में पशु आदि भी हैं, दूध भी दोहना है, घर में बहुत सी संगत आई है, उनकी भी जल पान आदि से सेवा करनी है। जब भाई लहणा जी पहुँचे तो उस समय उन्होंने रेशमी वस्त्र पहने हुए थे। आप भी उसी तरह गुरू नानक पातशाह जी के साथ कार्य करने लगे, गुरू महाराज जी ने थोड़ी देर बाद देखा कि सूरज छिपने वाला है, पशुओं के लिये चारा भी ले जाना है। आपने भाई लहणा जी से कहा, ''ऐसा करो, तंगड़ लेकर उसमें नदीन डाल लो।'' लहणा जी ने दो गठड़ियां बना लीं। कीचड़ मिट्टी से भरी हुई हैं। एक गठड़ी सिर पर रख ली। गुरू नानक पातशाह भी साथ ही चले आ रहे हैं। उनके पास और सामान खुरपे आदि हैं जो हाथों में पकड़े हुए

हैं। जो नदीन लहणा जी ने उठाया हुआ है, वह पानी में से निकाला हुआ था। उसकी जड़ों में कीचड़ तथा पानी भरा हुआ था। उसका पानी रिस-रिस कर भाई लहणा जी के रेशमी कपड़ों पर गिर-गिर कर काफी गहरे दाग छोड़ता जा रहा था। वह घर से अभी-अभी थोड़ी देर पहले माता जी के पास से होकर गये थे, उन्होंने देखा था कि कितने सुन्दर कपड़े पहने हुए थे। जब माता जी ने देखा कि कपड़ों पर मिट्टी के दाग पड़ गये हैं, तब आपने गुरू नानक पातशाह से कहा, ''ये प्रेमी दूर-दूर से सेवा करने आते हैं। यह प्रेमी अभी नया-नया ही आया है, इतना तो ध्यान कर लिया करो, यह गठड़ी किसी और दास के सिर पर रखवा देते। इसके तो सारे कपड़े कीचड़ से लथपथ हो गये हैं।'' उस समय गुरू नानक पातशाह मुस्कराये और सहज ही बोले, ''मैंने इसे कीचड़ मिट्टी से सनी हुई गठड़ी नहीं उठवाई, यह तो दीन दुनियां का छत्र इसके सिर पर रखा है। जब यह झूलेगा तो इसकी सुगन्धियां दूर-दूर तक फैलेगीं और अनेक प्रेमियों का उद्धार होगा। तुम गहरी नज़र डाल कर देखो, यह तो सेवा का पुंज है। सेवा करके ही मान प्राप्त होता है'' -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ। ता दरगह बैसणु पाईऐ।
कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ *पृष्ठ - 26*

साध संगत जी! गुरू घर में सेवा और सिमरण इस तरह जरूरी है जैसे हवा में उड़ने वाले हवाई जहाज के दो पंख होते हैं और हज़ारों मीलों का सफर कुछ मिनटों में तय हो जाता है। गुरू सेवा, वाहिगुरू सेवा, सन्त सेवा, साध संगत की सेवा, देश सेवा, समाज की सेवा, परिवार की सेवा, भाईचारे की सेवा, जब हम अन्य सेवाओं के बारे में विचार करते हैं तो अपने पशुओं की सेवा, फसल की सेवा, अपने काम की सेवा इसमें शामिल हो जाती है। सेवा कहीं भी करके देख लो, वह फल ज़रूर देती है जैसे कि एक अध्यापक है, कुछ बच्चों को पढ़ाने की तन और मन से सेवा करते हैं। दूसरा बहुत पुण्य है। बच्चे लायक बन जाते हैं। समाज नरोया हो जाता है और बेअन्त परेशानियाँ समाप्त हो जाती हैं। इसी तरह डाक्टर की सेवा मरीजों को निरोग कर देती है। जब कोई शारीरिक रूप से स्वस्थ हो जाता है, तो स्वभावतया ही उसके मन में आता है कि डाक्टर ने मुझे नई जिन्दगी दे दी। इसी तरह कोई राजा है, कर्मचारी है, अहलकार की सेवा हुआ करती है कि वह अपने कानून के अनुसार पूरी तरह से पहरा देता हुआ समाज को अमन शान्ति से रहने के अवसर प्रदान करे। कोई नेता है, वह चुनाव के समय लोगों को कहता है, ''मैं तुम्हारा सेवादार हूँ तो वह भी यदि अच्छी तरह से सेवा करे तो वह अपने इलाके का हुलिया बदल सकता है। राजा का धर्म, गुरू महाराज जी ने न्याय करना बताया है -

राजे चुली निआव की पड़िआ सचु धिआनु॥ *पृष्ठ - 1240*

महाराज जी ने तो फ़रमान किया है, 'बिन सेवा फल किसे नही' दुनियां की सेवा, दुनियांवी पदार्थ देती है। गुरू की सेवा ज्ञान प्रदान करती है। परमेश्वर की सेवा सारी दुनियां का भला दिल से मांगती है, करती है -

नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत दा भला।

एक व्यक्ति के पास कोई दुधारू पशु है। परन्तु वह उसकी पूरी तरह से सेवा नहीं करता। उसे पूरी तरह से संतुलित आहार नहीं देता, उनके लिये धूप-छांव का कोई ध्यान नहीं करता, उसके पशुओं का दूध सूख जायेगा। उसे ऐसा लगेगा कि किसी ने नज़र लगा दी, परन्तु उसे यह नहीं पता कि उसने अपने पशुओं की सेवा नहीं की। जो सेवा करते हैं उनके सारे काम, दूध वगैरा सभी ठीक-ठाक चलते हैं।

किसी दफ्तर में कोई प्रेमी कर्मचारी हो, यदि वह अपने कर्तव्य को पूरी तरह से निभाता है

और समय पर फाइलों का निपटारा करता है, उसका यह कर्म प्रशंसनीय है तथा बिना ध्यान लगाये पूजा पाठ से कहीं बढ़िया है। इन सभी सेवाओं से परम श्रेष्ठ सेवा, गुरू सेवा है। प्राचीन समय में लोग तपस्या किया करते थे, जिसे जोहद कहते थे। कोई ठण्डे पानी में खड़ा रह कर तप करता था, कोई पाँच धूनियाँ लगाकर उस आग के घेरे में बैठता था और अपने शरीर का रक्त सुखाता था, कोई उलटा लटकता था और कोई अनेक प्रकार के शरीर को दुख देने वाले काम करता था। रंग काला पड़ जाना, शरीर का सूख जाना, तप कहलाता था। जिस प्रकार सर्दियों के दिनों में बड़े मटके के पैंदे में एक अंगुली जितना छेद करके उसमें ठण्डा पानी डालते रहना, जो पानी मटके से गिर रहा हो, उसके नीचे बैठे जाना और शरीर पर उस पानी को गिरने देना। इसी तरह से शरीर को राख मल लेना, कोई भूखा रहता था, कोई पत्थरों पर सोता था, कोई कम से कम खाकर शरीर को चलायेमान रखता था क्योंकि मनों में शौक था कि तप करके किसी किनारे पर पहुँच जायें परन्तु यह मालूम नहीं था कि ये मार्ग किसी मंज़िल पर भी पहुचायेंगे या नहीं। गुरू की सेवा सबसे बड़ी सेवा है, गुरू की सेवा के बराबर और कोई सेवा नहीं है। गुरू अंगद साहिब जी गुरू नानक पातशाह के पास आकर सेवा करने लग गये –

धारना – गुरू सेवा दे बराबर होर तप ना,
सेवा कर लै मन ला के – 2, 2
मेरे पिआरे, सेवा कर लै मन ला के – 2, 2
गुरू सेवा दे बराबर होर तप ना,.....–2, 2

पैरी पै पाखाक होइ छडि मणी मनूरी।
पाणी पखा पीहणा नित करै मजूरी।
त्रपड़ झाड़ि विछाइंदा, चुलि झोकि न झूरी।
मुरदे वांगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी।
चंदनु होवै सिंमलहु फलु वासु हजूरी।
पीर मुरीदा पिरहड़ी गुरमुखि मति पूरी॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/19*

गुर सेवा तपां सिरि तपु सारु।
हरि जीउ मनि वसै सभ दूख विसारणहारु॥ *पृष्ठ – 423*

गुरू सेवा करने से वाहिगुरू जी हृदय में बस जाते हैं तथा सारी बरकतें प्राप्त हो जाया करती हैं। भाई गुरदास जी जिनकी बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कुंजी होने का मान प्राप्त है। गुरू ग्रन्थ साहिब में छिपे रहस्य को पूरी तरह से विस्तार पूर्वक प्रकट करते हैं। आप फ़रमान करते हैं कि चरणों में नमस्कार करना, अपने आपको चरणों की धूलि बनाना, अपने अन्दर जो मान है कि मैं बहुत बड़ा सचिव हूँ, मैं अमीर हूँ, मेरी बहुत बड़ी–बड़ी जान पहचान है, लोग मुझे नमस्कार करते हैं, मैं बड़ा ज्ञानी हूँ, महान कथाकार हूँ, भाई गुरदास जी कहते हैं कि इन बातों को छोड़ दे। पानी, पंखा, पीसना, वगैरा, उन दिनों मशीनें नहीं हुआ करती थीं, पानी पिलाना, पंखा झुलाना, पीसना ये बहुत बड़ी–बड़ी सेवाएं मानी जाती थीं। हाथों से छोटी–छोटी चक्कियां चलानी पड़ती थीं। सत्संग के लिये तप्पड़ झाड़ कर बिछाये जाते थे। ईंधन के लिये लकड़ियां लाकर झौंका करते थे। ये सभी कुछ करने के लिये अपने आपको कुछ भी न समझना, अपने आपको मुर्दे की तरह समझाना। कुछ बन कर सेवा करना, फल नहीं दिया करती –

मान अभिमान मंधे सो सेवकु नाही।
तत समदरसी संतहु कोई कोटि मंधाही।
कहन कहावन इहु कीरति करला।
कथन कहन ते मुकता गुरमुखि कोई विरला।। *पृष्ठ – 51*

आम तौर पर यह देखा जाता है कि कोई आदमी सेवा करता है, वह सेवा के सही तरीके को न समझने के कारण कई बार सेवा का फल प्राप्त नहीं कर पाता। सेवा करके यदि क्रोध करता है और दूसरों को भला बुरा कहता है कि तुम सेवा नहीं करते, मैं करता हूँ, वह सेवा फल नहीं देती। यदि सेवा में लीन होना है, गुरू महाराज के बताये रास्ते पर चलना है और कोई फल प्राप्त नहीं करना तो उसके बारे में भाई गुरदास जी ने बहुत ही विस्तार से बताया है -

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा।
गोला मुल खरीदु कारे जोवणा।
ना तिसु भुख न नीद न खाणा सोवणा।
पीहणि होइ जदीद पाणी ढोवणा।
पखे दी तागीद पग मलि धोवणा।
सेवक होइ संजीदु न हसण रोवणा।
दर दरवेस रसीदु पिरम रस भोवणा।
चंद मुमारख ईद पुगि खलोवणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 3/18*

सेवा करने वाले के मन में अथाह सिदक (धैर्य और भरोसा) होना चाहिये। सिदक और सब्र का बड़ा गुण उसके अन्दर होना चाहिये। ऐसे ही नाटक चेटक करके, वाह-वाह नहीं करवाये बल्कि उन शक्तियों को गुप्त रख कर, आगे बढ़ कर सेवा करे।

सिदक के बारे यदि विचार करें तो गुरू इतिहास में देखने पर पता चलता है कि गुरू दशमेश पिता जी जब आनन्दपुर साहिब छोड़ कर आये तो उस समय मुगलों ने कसमें खाईं, कुरान शरीफ की साक्षी देकर भी गुरू महाराज जी को चारों ओर घेरा डाल लिया और हमला कर दिया। बहुत से सिंघ शहीद हो गये। जत्थेबन्दी टूट गई। जिधर जिसका मुँह था, उधर चल पड़ा। सरसा नदी में पानी बहुत चढ़ा हुआ था। बहुत से सिंघ बह गये। गुरू महाराज जी का परिवार यहाँ बिछुड़ गया। माताएं धीरे-धीरे गुप्त रूप में चलीं, दिल्ली पहुँची। छोटे साहिबजादे तथा माता गुजरी जी रोपड़ होते हुए खेड़ी गाँव में पहुँच गये। जहाँ पर गंगू बेईमान ने चुगली करके उन्हें मोरिण्डा वाले थानेदार के पास कैद करवा दिया और उन्होंने फिर आगे नवाब वज़ीर खान सूबा सरहन्द के हवाले कर दिया।

गुरू महाराज जी के साथ उस समय 40 सिंघ थे। एक सिंघ जिसका नाम बचितर सिंघ था, वह बुरी तरह से घायल हो गया था। उसे उठाकर निहंग खान कोटला वाले के किले में लाया गया और कहा यदि यह ठीक हो गया तो हमें मिल लेगा और यदि वाहिगुरू के हुक्म में शहीद हो गया तो इसका संस्कार कर देना।

गुरू महाराज 40 सिंघों सहित चमकौर की गढ़ी में मोर्चा लगा लेते हैं और बड़ा ही भयानक युद्ध दुनियाँ के इतिहास में, प्रसिद्ध हुआ। जिसमें 40 सिंघों का 10 लाख फौज़ के साथ मुकाबला था। जिन सिंघों ने 24 घंटे से कुछ भी नहीं खाया था, वे चमकौर की गढ़ी में थे। दूसरी ओर मुलखईआ फौज गढ़ी को तथा गुरू महाराज जी को घेर कर, शहीद करने के मन्सूबे तैयार कर रही थी। इनके पास तोपें भी थीं परन्तु अभी युद्ध के मैदान में पहुँची नहीं थीं। गुरू महाराज जी को, 10 लाख गिनती बताते हैं, जिन्होंने गढ़ी को घेरा हुआ था। इस युद्ध में पेशावर से लेकर दिल्ली तक आम लामबन्द की हुई थी। जगह-जगह पर नाका बन्दी, चैकिंग, कोई भी व्यक्ति गुरू साहिब से नहीं मिल सकता था। इस लामबन्दी की संख्या पहाड़ी राजाओं सहित 10 लाख बताई जाती है। कोई भी रसद किसी भी सिंघ या गुरू

महाराज जी के पास बाहर से नहीं पहुँच सकती थी। ऐसा बताया जाता है कि डेढ़ लाख की फौज दिल्ली से आई, जिसमें तोपे भी थीं। जब उन्हें पता चला कि गढ़ी तो कच्ची ही है, अन्दर 40-50 सिंघ हैं, फिर उन्होंने तोपों का इन्तज़ार न किया, हाथों-हाथ पकड़ने की योजना बनाकर हमला कर दिया। परन्तु दूसरी ओर ऐसे योद्धा थे, जिनके अन्दर डर कहीं आस-पास ही नहीं था। जो अपने शरीर का अंग-अंग कटवा कर युद्ध से पीछे हटने को तैयार नहीं थे। पूरा दिन युद्ध चलता रहा, परन्तु गुरू महाराज जी को पकड़ने में सफल न हो सके। गुरू दशमेश पिता जी युद्ध में शहीदी देने के लिये बड़े साहिबजादा अजीत सिंघ को भेजते हैं तथा आप फ़रमान करते हैं, ''बेटा यह धर्म युद्ध है, इसमें अधिक से अधिक बल लगाकर दुष्टों का खातमा करना है। तीन घंटे का युद्ध साहिबजादा अजीत सिंघ का हुआ। इसके पश्चात छोटे साहिबजादे जिनकी आयु 14 वर्ष की थी, साहिब जुझार सिंघ जी, उन्हें युद्ध में भेजा गया। हैरानी होती है कि एक ओर तो बड़े-बड़े कद वाले ताकतवर सरकारी योद्धा और दूसरी ओर पाँच सिंघ और साहिबजादा जुझार सिंघ आप जी ने भी पूरे तीन घंटे युद्ध करने के पश्चात शहीदी प्राप्त की। जिन सिंघों ने साहिबजादों को युद्ध के समय अपने घेरे में लिया हुआ था, वे बड़े-बड़े शत्रुओं को लताड़ रहे थे तथा तीन घंटे के युद्ध के पश्चात आप जी ने भी शरीर त्याग दिया। जब साहिबजादे शहीद हुए, उस समय गुरू महाराज जी ने अकाल पुरुष के सामने विनम्रता सहित प्रार्थना की, ''पातशाह! ये बच्चे आप जी की अमानत थे, आपके चरणों में समर्पित हो गये हैं। मैं बहुत भाग्यशाली हूँ।''

इस युद्ध में अनोखी बात यह थी कि एक से एक नहीं लड़ता था। एक पर अनेक वार करते थे। महाभारत के युद्ध में जब अभिमन्यु ने युद्ध किया, उस समय एक के साथ एक योद्धा की, युद्ध करने की मर्यादा थी, तब भी दुर्योधन ने सभी बड़े-बड़े योद्धाओं को इकट्ठा करके उस पर वार करने को कहा और उसकी हत्या कर दी। सभी पाण्डवों ने इसका रोष मनाया, अफसोस मनाया और प्रण किया कि इस युद्ध में इन योद्धाओं को अवश्य ही मार गिराया जाये। अतः अर्जुन ने बदला लिया। कृष्ण महाराज जी के दिलासा देने के पश्चात भी उनका वैराग न रूक सका।

इस युद्ध में कोई भी नियम काम नहीं कर रहा था। जब साहिबज़ादा अजीत सिंघ जी युद्ध कर रहे थे तो सभी के सभी इकट्ठे होकर कई-कई वार एक साथ कर रहे थे। टिड्डी दल का वार रोकना कितना कठिन था। इतने वार होते हुए भी आप पूरे तीन घंटे, पूरे उत्साह के साथ युद्ध करते रहे। सिंघों ने पीठ से पीठ लगा रखी थी, वार रोकते थे, बीच में साहिबजादा अजीत सिंघ निशाना लगा-लगा कर तीर चलाते थे। जब साथी शहीद हो गये तो उसके काफी देर बाद साहिब अजीत सिंघ जी शहीद हुए। गुरू महाराज जी ने नेत्रों से आंसू नहीं बहाये। आप जी ने अकाल पुरुष जी को नमस्कार की और शुक्र मनाया, साहिबज़ादा अजीत सिंघ ने शूरवीरता दिखा कर धर्म की पूरी तरह से पालना की है। जब साहिबज़ादा जुझार सिंघ युद्ध कर रहे थे तो शत्रु हैरान हो रहा था कि कितनी निर्भयता इन्होंने इन बच्चों में भर दी है। किस प्रकार से इतने बड़े शत्रु दल की बाढ़ को, जिसे कोई भी हटा नहीं सकता था, दूर-दूर तक घूम फिर कर ठिकाने लगा रहे थे। गढ़ी की तरफ बढ़ने की कोई भी हिम्मत नहीं करता था। इसी प्रकार जब आप माछीवाड़े से होते हुए राये कल्ला के पास पहुँचते हैं। जब माही छोटे साहिबज़ादों की खबर सुनाता है तो आपने आंसू नहीं गिराये, आपने अन्याय को देखा और होने वाले विनाश को देखते हुए, कांही का पौधा उखाड़ कर फैंकते हुए वचन किया, ''आज मुगल राज की जड़ उखड़ गई जिसमें कोई इन्साफ नहीं रहा।'' आपने रोते हुए राय कल्ला, उसके साथी और बहुत से प्रेमियों को दिलासा देते हुए कहा, ''वे तो वीर बहादुर थे। वे अपना धर्म पूरी तरह निभा गये। उनका वास अमरपुरी

में हो गया है और वे सदा-सदा की ज़िन्दगी प्राप्त कर चुके हैं।''

इस प्रकार आप चलते-चलते खिदराणे की ढाब पर युद्ध करके, आज साबों की तलवन्डी के पास कैम्प लगाये हुए हैं। वहाँ पर भाई डल्ला जो वहाँ का चौधरी था, फौज में 300 बड़े-बड़े जवान अपने पास हर समय रखता था, उसे जब गुरू महाराज जी के युद्धों के बारे में पता चला, बड़े साहिबजादों की शहीदी तथा छोटे साहिबजादों को दिये गये तसीहों द्वारा की गई शहीदी के बारे में पता चला तो उसने बहुत दुख प्रकट किया, परन्तु उसके अन्दर कुछ अभिमान था कि यदि गुरू महाराज उसे याद कर लेते तो उसके जवानों ने इतने खण्डे चलाने थे कि कवच सहित काट कर घोड़े की काठी तथा घोड़े का पेट काटकर खण्डों को धरती में गाढ़ देते। वह गुरू की महिमा को नहीं जानता था कि आप तो सर्व कला समरथ हैं। उसने मनुष्य अनुमान से गुरू महाराज जी से कहा, ''महाराज, मैं भी तो था। मेरी फौज़ के किसी भी जवान की छाती 45 इन्च से कम नहीं है और कितने बड़े-बड़े शेर हैं, साढ़े 6 फुट लम्बे, सात-सात फुट ऊँचे हैं। ये अजेय सूरमा हैं, इन्हें कोई जीत नहीं सकता। आप मुझे याद कर लेते तो इतना नुकसान न होता। आपका सन्देशा सुनते ही मैं एक दम पहुँच जाता।''

गुरू महाराज जी ने कहा, ''भाई डल्ला! तेरी शुभ इच्छा के हम धन्यवादी हैं, पर एक बात सुन। तेरे सात-सात फुट ऊचे शेरों जैसे जवानों ने हमारे धर्म हित युद्धों में लड़ाई नहीं लड़नी थीं क्योंकि इनके अन्दर अभिमान है कि वे बहुत बड़े सूरमा हैं। इन्हें आदर्श का पता नहीं। ये लूट मार के लिये तो लड़ सकते हैं पर देश तथा धर्म की रक्षा के लिये अपना बलिदान नहीं दे सकते। ये तो माया के आदमी हैं। हउमै में भरे होने के कारण दूसरे के लिये कुर्बानी नहीं दे सकते।'' डल्ले को बात समझ में न आई कि दूसरे के लिये अपना बलिदान दे दिया जाये। वह तो इतना ही जानता था कि यदि किसी ने हमला किया है तो उसका मुकाबला किया जाये। भाई डल्ले को सिदक का पता नहीं था। भाई गुरदास जी फ़रमान करते हैं -

मुरदे वांगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी॥ ***भाई गुरदास जी, वार 27/19***

भाई डल्ले ने दो तीन बार गुरू साहिब को अपने बहादुरों के बारे में कहा। गुरू महाराज जी ने कहा, ''कोई बात नहीं, जब जरूरत पड़ेगी तेरी प्रार्थना पर गौर तलब करके देख लेंगे।''

गुरू महाराज जी एक दिन सिंघासन पर बैठे थे। एक कारीगर आया, जिसने राईफल बनाई थी। उसने वह गुरू महाराज जी के चरणों में भेंट कर दी और साथ ही यह भी कहा कि उसने इसका निशाना साध कर देखा है, जो अपने लक्ष्य से कभी भी दूर नहीं लगता। गुरू महाराज जी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने भाई डल्ले को राईफल दिखाते हुए कहा, ''राईफल देखने में तो बहुत सुन्दर लगती है, परन्तु इसकी असली महत्ता का पता तो तभी लगेगा यदि निशाना लगाकर देखा जाये।'' उस प्रेमी ने कहा कि उसका निशाना कभी नहीं चूकता। गुरू महाराज जी ने कहा, ''डल्ले! हम देखना चाहते हैं कि इसमें कितनी ताकत है और कितने लोगों के शरीरों में से पार हो सकती है।'' इतना सुनकर डल्ले के जवानों ने सिर नीचे झुका लिये। गुरू महाराज जी ने कहा, ''भाई डल्ला! अपने दो जवान सामने खड़े कर, हम निशाना देखना चाहते हैं।'' जो जवान वहाँ पर थे, एक-एक करके खिसकने शुरू हो गये। डल्ला भी बहुत परेशान हो गया। गुरू महाराज जी ने फिर कहा, डल्ला फिर फौजी जवानों के पास गया और बोला, ''तुमने मेरी बेइज्जती करवा दी। तुम तो वहाँ से खिसक आये, सामने भी न रूके।'' उन्होंने कहा, ''चौधरी! हम लोगों के साथ लड़ सकते हैं, लड़वा कर देख ले, परन्तु यह बात तो गलत है, केवल निशाना परखने के लिये दो आदमी गोली से मार दिये जायें। निशाना तो किसी और तरीके से भी परखा

जा सकता है?''

डल्ले ने कहा, ''तुमने तो मेरा बड़ा भारी निरादर करवा दिया। मैं अब गुरू महाराज जी से कह कर आया हूँ कि मैं लेकर आता हूँ, बिखरे हुए बेरों का अभी कुछ नहीं बिगड़ा है। मैं तो तुम्हारी बड़ी इज्जत करता रहा हूँ कि मेरे जवानों जैसा कोई सूरमा है ही नहीं, पर तुम तो एक-एक करके खिसकते हुए बाहर आ गये। जो तुमने किया है, यह अच्छी बात नहीं है। क्या जवान, क्या वृद्ध, क्या काज़ी सभी ने मरना है, तुम अब भी डरते हो।'' कहने लगे, ''हमारे यदि हाथ देखने हैं तो जंगे मैदान में देखो।'' उसके एक भी जवान ने बात न मानी। डल्ला निराश होकर गुरू महाराज जी के पास आया। महाराज जी ने पूछा, ''डल्ला! कोई जवान लेकर आया?'' महाराज जी ने कहा, ''तू बहुत मज़बूत है, तेरे ऊपर ही निशाना परख कर देख लेते हैं।'' यह सुनकर डल्ले का चेहरा पीला पड़ गया कहने लगा, ''मेरे तो बच्चे, अभी बहुत छोटे हैं।'' गुरू महाराज ने कहा। ''जा, किसी सिंघ को ले आ।'' तब जाकर डल्ले की जान में जान आई।

जल्दी से उठा। एक दम बाहर देखा, दो सिंघ पास ही खड़े थे। एक सिंघ दस्तार सजा चुका था और दूसरा अभी सजा रहा था।

भाई डल्ले ने जाकर सारी बात बताई कि गुरू महाराज जी ने निशाना परखना है, तुम दोनों में से एक सिंघ मेरे साथ चलो। इतनी बात सुनते ही दोनों उठकर आ गये। जो दस्तार सजा रहा था, वह थोड़ा पीछे रह गया था, दूसरा भाग कर गुरू महाराज जी के सामने आकर खड़ा हो गया। इतनी देर में पहला भी पहुँच गया, वह उसके आगे जाकर खड़ा हो गया, वह उसके आगे। ऐसे करते-करते वे गुरू महाराज जी तक पहुँच गये।

गुरू महाराज जी ने कहा, ''प्यारे! मैंने तो एक बुलाया था, तुम दो क्यों आ गये?'' डल्ला यह देखकर हैरान हो रहा है।

एक ने कहा, ''महाराज! मैं आपके नज़दीक ही बैठा था, पहले आवाज़ मैंने सुनी थी। मैं उस समय दस्तार सजा रहा था। इसने दूर खड़े हुए ने सुन लिया और यह मेरी अपेक्षा आपके पास पहले दूर से भाग कर आ खड़ा हुआ। मेरा हक पहले बनता है, इसका बाद में इसका।'' दूसरे ने कहा, ''महाराज! यह हक आगे पीछे का नहीं है, यह तो जो पहले पहुँच गया उसी का है।'' गुरू महाराज जी ने कहा, ''दोनों खड़े हो जाओ।'' गुरू महाराज जी ने निशाना साध लिया। डल्ला मन में भयभीत हो रहा है कि बस अब एक सैकिण्ड में गुरू जी ने दोनों को मार देना है, परन्तु जब गोली चली तो वह दोनों की दस्तार में से पार होती हुई निकल गई। महाराज जी ने कहा, ''वाह भाई वाह, मिस्त्री! तेरी राईफल बिल्कुल सही है।''

गुरू महाराज जी ने कहा, ''डल्ला! तेरे सात-सात फुट लम्बे जवान कहाँ हैं प्यारे? तुझे कहा था कि इन्होंने नहीं लड़ना। ये भले की लड़ाई नहीं लड़ सकते। ये हउमै वाली लड़ाई लड़ सकते हैं। सिदकी वे हुआ करते हैं जिन्होंने तन, मन, धन, गुरू को अर्पण कर दिया होता है।'' इन सिंघों ने अपने पास कुछ भी नहीं रखा हुआ। ब्रह्मज्ञान की दात इन्हें मिली हुई है। देह अधिआस इनका टूटा हुआ है। सेवादार में सिदक का होना जरूरी है। सब्र होना चाहिये परन्तु हमें तो सन्तोष के बारे में कुछ पता ही नहीं है कि 'साबर' अक्षर गुरू महाराज जी ने क्या लिख दिया। हम तो ऐसे समझते हैं कि किसी को भूख लगी हुई हो और वह कहता है, ''जल्दी-जल्दी रोटी दो।'' माँ कहती है, ''सब्र कर, मैं थोड़ी देर

में लाती हूँ।'' पर गुरू घर में सब्र का जो आशय है, वह बहुत ही ऊँचा है।

ईरान का बादशाह अपनी सभा में रूहानी वचन सुना करता था। एक दिन सब्र (सन्तोष) और शुक्र (कृतज्ञता) का उल्लेख आ गया क्योंकि कुरान शरीफ में सब्र की बहुत महत्ता बताई गई है और कहा गया है कि जिसके अन्दर सब्र है, वह सांई के बहुत नज़दीक होता है। सब्र में ही खुदा है। उसने अपने मौलवियों से इसका अर्थ समझने का यत्न किया। उन्होंने अपनी-अपनी सोच के अनुसार अर्थ बताए परन्तु बादशाह को तसल्ली न हुई।

उस समय वहाँ पर कोई सूफी फकीर बैठा था। उसने कहा कि यदि आप वास्तविक रूप में इसका अर्थ जानना और देखना चाहते हो, तो औरंगजेब की कैद में एक महान पहुँचे हुए, ब्रह्मज्ञान की अवस्था के सांई लोग कैद हैं, जिनका नाम सुरमद है। वह इसका सही अर्थ बता सकते हैं। तुम अपने वकील को भेज कर अर्थ पुछवा लो क्योंकि औरंगजेब ने उसे जल्दी ही कत्ल करवा देना है। सुरमद को जेल में मिलने का समय तथा इजाज़त ले ली गई। वह जेल की कोठड़ी में बन्द था। सारी शक्तियों का मालिक था। औरंगजेब उससे डरता था। उसने जाकर सांई से प्रार्थना की, ''महाराज! मेरे बादशाह ने मुझे भेजा है। मैं सब्र और शुक्र का अर्थ पूछना चाहता हूँ।''

सुरमद बोले, ''ऐसे करना, काफी दिन हो गये हैं, हमने स्नान नहीं किया है और हम नंगे हैं। दो गज़ कपड़ा और पानी की मशक लेकर कल आ जाना।'' दूसरे दिन वह दो गज़ कपड़ा तथा पानी की मशक लेकर आया। पीर ने स्नान किया। इसके पश्चात दो गज़ कपड़ा अपने चारों ओर लपेटा और बैठ गये।

कहने लगा, ''महाराज! फिर मुझे अब सब्र और शुक्र के अर्थ बताओ।''

फकीर सांई बोले, ''अभी तुझे व्यवहारिक रूप से समझाते हैं।''

इतनी देर में कोड़े लगाने वाला आ गया। उसे 100 कोड़े रोज़ लगाये जाते थे। उसे तसीहे दिये जा रहे थे। आप खड़े हो गये और कोड़े लगने शुरू हो गये। जब 50 कोड़े लग चुके, वह जल्लाद दम लेने लग गया और ये बैठ गये। कहने लगे, ''तुझे सब्र का अर्थ समझ में आया?''

कहता है, ''नहीं महाराज! मुझे तो कुछ समझ नहीं आया। उस समय, जब कोड़े लगते थे तो आप नहीं का संकेत करते हुए अंगुली हिलाते थे।

सांई बोले, ''यही सब्र था।''

कहने लगा, ''महाराज! मैं समझा नहीं।''

फकीर बोले, ''फिर अब समझा देते हैं।'' नेत्रों पर हाथ फेर दिया।

सुरमद बोले, ''अच्छा अब गैबी अदृश्य को देख तू।''

जब जल्लाद फिर दोबारा कोड़े मारने लगा तो सारी आसमानी शक्तियां गैबी (अदृश्य) हाथ जोड़े खड़ी हैं और मानों कह रही हैं, ''महापुरुष जी! हुक्म करो, दिल्ली को गर्क कर दें, साथ ही बादशाही को भी डुबो दें। हुक्म करो।'' परन्तु सांई फकीर, हर कोड़े लगने पर हाथ हिलाये जाते हैं, अंगुली हिलाते जा रहे हैं। कहते हैं, ''नहीं नहीं......।'' इस प्रकार सौ कोड़े लगाने के पश्चात जल्लाद चला गया।

सांई बोले, ''अब अर्थ समझ में आया?''

कहने लगा, ''अभी भी नहीं आया।''

सुरमद कहते हैं, ''देख, इतनी शक्तियों का मालिक हूँ, यदि एक फुरना कर दूँ, तो कहाँ औरंगजेब होगा और कहाँ रहेंगी उसकी फौज़ें? कहाँ इसका राज? सभी कुछ गर्क कर दूँ। एक फुरना करने से ही सब तहस-नहस हो जायेगा परन्तु इतनी शक्तियों का मालिक होता हुआ भी मैं सब्र (सन्तोष) में हूँ। कोई शक्ति नहीं दिखा रहा। इसे सब्र कहते हैं।''

फिर बोला, ''महाराज! आप महान हैं, वास्तव में पूरे सरबर हैं, शुक्र क्या है यह भी बता दीजिये?''

सांई बोले, उसका भी तुझे अभी पता चल जायेगा। इतनी देर में आधा प्याला पानी में आधा प्याला नमक घोल कर दे दिया गया। सुरमद ने पी लिया और पीकर कहते हैं, ''अल्लाह ताला, तेरा शुक्र है। तू मेरे लिये यहाँ भी पानी स्वंय भेजता है।''

कहता है, ''सांई फकीर! मैं समझा नहीं।''

फकीर बोले, ''अब समझा देते हैं।'' दृष्टि खोल दी। क्या देख रहा है कि छिपी हुई शक्तियां प्रार्थना कर रही हैं, आसमानी फरिश्ते प्रार्थना कर रहे हैं, ''पीर जी! ये बढ़िया-बढ़िया पदार्थ खाइये। ये आपके लिये हैं।''

फकीर कहते हैं, ''नहीं, जो प्रालब्ध अनुसार परमेश्वर ने मुझे भेजा है, मैं वही खाऊंगा।'' इसे सब्र और शुक्र कहते हैं। फ़रमान करते हैं -

मुरदे वांगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/19*

इतना सिदक और सब्र हो, वह सेवादार कहलाता है-

चंदनु होवै सिंमलहु फलु वासु हजूरी॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/19*

फिर फल क्या होता है? सिम्मबल वृक्ष भी चन्दन बन जाता है -

पीर मुरीदा पिरहड़ी गुरमखि मति पूरी॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/19*

अत: सेवा ऐसे नहीं हुआ करती इसमें बेअन्त शक्तियां भरी रहती हैं। ऐसे पढ़ लो -

धारना - करके कोई वेख लओ, सेवा तों मिलदा मेवा - 2, 2
सेवा तों मिलदै मेवा - 2, 2
करके कोई वेख लओ, ... - 2

सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए॥ *पृष्ठ - 116*

एक चीज़ नहीं, कहते हैं जो कुछ भी मांगता है, वही मिल जाता है -

तीरथ कीए एक फल संत मिले फल चार।
गुरू मिले फल अनेक हैं कहत कबीर बीचार।

सतिगुर सेवे ता सभ किछु पाए।
जेही मनसा करि लाहै तेहा फलु पाए।। *पृष्ठ - 116*

जैसी मन में मन्शा रखकर गुरू की सेवा करने लग जाये वैसा ही फल प्राप्त हो जाता है -

सतिगुरु दाता सभना वथू का पूरै भागि मिलावणिआ॥ *पृष्ठ - 116*

भाई आदम बराड़ की 70 साल की आयु हो गई। आपके कोई सन्तान नहीं हुई। चौधरी ने बड़े यत्न किये। ये जो कैथल के राजा हुए हैं, इनके बुजुर्ग थे। इनको किसी महापुरुष ने बताया, ''भाई आदम! तेरी जो इच्छा है, यहाँ पूरी नहीं हो सकतीं। तू गुरू रामदास जी के दरबार में जा। वहाँ जाकर तेरी इच्छा पूर्ण हो जायेगी।''

आप पत्नी तथा लड़की सहित श्री गुरू अमरदास जी के दरबार में अमृतसर पहुँच जाते हैं। पत्नी और लड़की दोनों लंगर में सेवा करती हैं, बर्तन मांजती हैं, झाड़ू लगाती हैं तथा अन्य कई प्रकार की सेवा दाल सब्जियां बनाना, भोजन बनाने की सेवा करती हैं। उधर भाई आदम जंगल में जाता है और वहाँ से एक गट्ठड़ लकड़ियों का लाकर गुरू के लंगर में दे देता है और एक गट्ठड़ अपने घर ले आता है। उसमें से आधा बेच देता है और आधा घर के काम लगाता है। लंगर में से भोजन नहीं करते। घर आकर भोजन करते हैं। काफी समय बीत जाता है। एक दिन गुरू रामदास जी महाराज बाहर से आये हैं, संगत साथ है, बरसात हो रही है, सर्दी का महीना है।

महाराज जी ने बड़े लांगरी से पूछा, ''प्यारे जी! संगत के वस्त्र गीले हो गये हैं और ठण्ड बहुत ज्यादा है। ठण्डी हवा भी चल रही है और बरसात भी हो रही है। कोई सूखी लकड़ियाँ हैं ताकि यह हाथ पाँव सेक सकें।''

लांगरी बोले, ''सच्चे पातशाह! लंगर में तो लंगर के लिये ही हैं। जैसा आपका हुक्म होगा वैसा ही किया जायेगा।''

कहने लगे, ''भाई! फिर सुबह भोजन भी बनाना है।'' यह कहकर अन्दर चले गये।

इधर भाई आदम को पता चला। सारी बात सुन ली। उस समय जितनी लकड़ियां घर में पड़ी थीं, सारी उठाकर कमरों के आगे रख कर, धूनियां लगा दीं। चारों ओर धूनियां ही धूनियां लगी हुई हैं। संगत आराम कर रही है, वस्त्र सूख गये हैं। जब अमृत बेला में गुरू रामदास जी महाराज ने चारों ओर उजाला ही उजाला देखा तो आपने पूछा, ''भाई! यह प्रकाश कहाँ से आया?''

कहने लगे, ''सच्चे पातशाह! यहाँ पर एक सिख मालवे से आया हुआ है उसका नाम आदम है। उसे आदम बराड़ भी कहते हैं। उसका गोत्र है सिद्धू बराड़। उसने यह सेवा की है।''

महाराज जी ने कहा, ''हमारे सामने पेश करना उन्हें।''

दीवान सजाया गया और समाप्ति के पश्चात, महाराज जी ने कहा, ''भाई! उस सेवादार को पेश करो।'' आवाज़ लगाई गई, ''भाई आदम, गुरू महाराज जी के पास पेश हो।'' संगत में से उठकर गुरू महाराज जी के पास पेश हो गया।

महाराज कहने लगे, ''भाई आदम! तूने सेवा करके हमें प्रसन्न कर लिया है। मांग क्या चाहिये?''

70 साल की आयु है। विनम्र हो गया और मन ही मन सोचने लगा कि यदि मैं कहूँ कि मुझे पुत्र चाहिये, मेरी पत्नी की उम्र भी 70 साल की है। यह कैसे होगा? शर्म आ गई। साध संगत जी ऐसा स्वाभाविक हो जाता है। तब महाराज जी ने कहा, ''अच्छा! तू शर्माता है, सलाह कर ले।''

दूसरे दिन फिर महाराज जी ने कहा, तब उसकी लड़की पत्नी और वह स्वंय भी खड़े थे। महाराज जी ने कहा, ''माँग क्या मांगता है, तुझे गुरू नानक से क्या दिलवायें।'' लड़की कहने लगी, ''महाराज! हमारी

जोड़ी बना दो, मेरा भाई नहीं है।''

महाराज जी ने उस समय नेत्र बन्द किये और थोड़ी देर बाद नेत्र खोले और कहने लगे, ''भाई आदम! तेरी किस्मत में कई जन्मों तक पुत्र नहीं लिखा हुआ। हम परमेश्वर का जो विधान है, उसे तो नहीं मिटाते पर इतना है कि हमारे घर में चौथे पुत्र ने जन्म लेना है और वह पुत्र हम तेरे घर भेजते हैं और उसका नाम तू भाई भगतू रखना। वह जन्म से ही सिद्ध होगा। उसने बड़े-बड़े काम करने हैं।''

अतः पुत्र का वरदान दे दिया। सेवा, जिस भाव से कोई करने लगता है, महाराज उसकी सेवा से प्रसन्न होकर जो उसकी इच्छा होती है, पूरी कर देते हैं। इस प्रकार गुरू अंगद साहिब महाराज, गुरू नानक पातशाह के दर पर बहुत सेवा कर रहे हैं। उनकी सेवा के बारे में जब सुनते हैं, पढ़ते हैं तो हैरान रह जाते हैं कि हम तो धेले के भी सिख नहीं हैं। साध संगत जी! उन्होंने हमें सिखी का नमूना पेश किया है।

अब समय इजाज़त नहीं देता। यहीं पर ही मैं समाप्त करता हूँ। सभी प्रेमी आनन्द साहिब तथा गुर सतोतर में बोलकर अपनी रसना पवित्र करो।

- ***आनन्द साहिब*** -
- ***गुर सतोतर*** -
- ***अरदास*** -

6

शान..।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

धारना - मुल्ल खरीदी लाला गोला,
मेरा नाउ सुभागा जी - 2, 2
मेरा नाउ सुभागा जी - 4, 2
मुल्ल खरीदी लाला गोला,......-2

मुल खरीदी लाला गोला मेरा नाउ सुभागा।
गुर की बचनी हाटि बिकाना जितु लाइआ तितु लागा।
तेरे लाले किआ चतुराई।
साहिब का हुकमु न करणा जाई।
मा लाली पिउ लाला मेरा हउ लाले का जाइआ।
लाली नाचै लाला गावै भगति करउ तेरी राइआ।
पीअहि त पाणी आणी मीरा खाहि त पीसण जाउ।
पखा फेरी पाव मलोवा जपत रहा तेरा नाउ।
लूण हरामी नानकु लाला बखसिहि तुधु वडिआई।
आदि जुगादि दइआपति दाता तुधु विणु मुकति न पाई॥ *पृष्ठ - 991*

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए आप गुरू दरबार में पहुँचे हो। काफी दिनों से एक विचार चल रही है। वह यह विचार यह है कि गुरू नानक पातशाह -

आपि नराइणु कला धारि जग महि परवरियउ॥ *पृष्ठ - 1395*

संसार में वह कौन सा दूसरा गुरू नानक था, जिसके आगे गुरू नानक को झुकना पड़ा। यह कथा चल रही है। अभी तक आपने श्रवण किया है कि भाई लहणा जी, जो पहले देवी के उपासक थे, किसी गुरसिख से लगन लगी। लगन लगते ही एक दम ऐसा हुआ, जैसे प्रबल संस्कार जाग पड़े। गुरू के साथ प्यार हो गया। उस वक्त की इन्तज़ार करने लगे, जब वे गुरू चरणों में, गुरू नानक के दर्शन करने जायें। सौभाग्य प्राप्त हुआ। देवी के दर्शनों को समूह लेकर जा रहे हैं, रास्ते में गुरू नानक पातशाह घट-घट के स्वामी देख रहे हैं कि इस रूहानी मण्डल के राज का धनी आज इधर चढ़ाई करता आ रहा है। आप अकेले, बाहर रोही में आ जाते हैं और भाई लहणा जी घोड़े पर सवार होकर गुरू नानक का पता उन्हीं, से ही पूछते हैं। आगे-आगे गुरू नानक, पीछे-पीछे भाई लहणा जी, इशारा कर देते हैं कि घोड़ा यहाँ बान्ध दो और उसके बाद आप अन्दर जाकर बैठ जाते हैं। जब अन्दर जाकर भाई लहणा जी देखते हैं कि यह तो वही है जिनकी तलाश में आया था, फिर अपनी भूल की क्षमा मांगते हैं, ''पातशाह!

क्षमा करो, मैं घोड़े पर चढ़ा हुआ था और आप पैदल।'' पातशाह ने पूछा, ''तेरा नाम क्या है?'' उत्तर दिया, ''पातशाह! मेरा नाम लहणा है।'' महाराज जी कहते हैं, ''भाई! लेनदार हमेशा ही घोड़ों पर चढ़ कर आया करते हैं, कोई बात नहीं, तूने लेना है और हमने देना है और मेरे राज का धनी, आज आया है। अपने धनी को लेने के लिये पैदल जाना उसका सम्मान हुआ करता है।'' यह बात उनकी समझ में न आई। उसके बाद आप कुछ दिन वहीं रहे। साथ आने वाले साथियों, संगियों को जवाब दे दिया। घर चले गये, रह न सके। दिल वहीं छोड़ आये, शरीर साथ ले आये। यहाँ नहीं टिक सके। वापसी पर एक नमक की गठड़ी सिर पर रख कर ले आते हैं। नमक की गठड़ी को लंगर में रखने के पश्चात गुरू महाराज जी के पास जाते हैं। उसके बाद आपने गोडाई शुरू की। महाराज जी कहने लगे, ''भाई लहणा! तुझे ये काम नहीं आते।'' लहणा जी बोले ''महाराज जी, मुझे कोई सेवा बताओ।'' महाराज जी ने कहा, ''यह गठड़ी उठा कर ले जा और मिट्टी वगैरा साफ करके, यह चारा पशुओं को डाल दे।'' उन्होंने मिट्टी से लथपथ हुई घास आपने सिर पर उठा ली। बहुत सुन्दर कपड़े पहने हुए थे। उन पर मिट्टी के धब्बे लग गये। गुरू नानक देव जी भी पीछे-पीछे चले आ रहे हैं। माता जी ने जब देखा तो बोलीं, ''अजी, आप इतना तो देख लिया करो कि कोई भला पुरुष आया है। सुन्दर-सुन्दर वस्त्र पहने हुए हैं और आपने इन्हें ही कीचड़ मिट्टी से सनी हुई घास की गठड़ी सिर पर रखवा दी, इनका सारा जामा कीचड़ से भर गया।'' महाराज जी कहने लगे, ''नहीं, जामा कीचड़ से नहीं भरा, पास होकर देखो, ये तो केसर के छींटे पड़े हैं और मैंने इनसे गठड़ी नहीं उठवाई, मैंने तो दीन-दुनियां का ताज इसके सिर पर रखा है।'' इतनी बात सुनते ही माता जी, जो पहले से ही महाराज जी की इन रमज़ों (रहस्यों) के बारे में जानती थीं, एक दम उनके मन में यह बात उठी कि पुत्र क्या करेंगे यदि दीन-दुनियां का ताज इसके सिर पर रख दिया? कोई वचन न किया और चुप कर गईं। उसके पश्चात भाई लहणा जी (गुरू अंगद साहिब महाराज) तन-मन से सेवा में लीन हो जाते हैं। बेशक गाँव के कुछ लोग बदनामी भी कर रहे हैं। बहुत विचार हो चुकी है। अब दिन रात आप गुरू नानक पातशाह की सेवा कर रहे हैं। सबसे बड़ा जो तप होता है, वह गुरू सेवा है। जिसके समान संसार में और कोई तप नहीं है -

गुर सेवा तपां सिरि तपु सारु।
हरि जीउ मनि वसै सभ दूख विसारणहारु॥ *पृष्ठ - 423*

संसार में इतना बड़ा तप और कोई नहीं है, सबसे श्रेष्ठ तप गुरू की सेवा हुआ करता है। गुरू घर में दो बातें प्रधान हैं, वाहिगुरू का सिमरण, गुरू की सेवा, संगत की सेवा, संसार की सेवा। जिस प्रकार जहाज दो पंखों से उड़ता है, इसी प्रकार यदि उपयुर्क्त दो चीज़ें हों, फिर रूहानियत का सफर तय होता है। अतः गुरू घर में सेवा को बहुत महत्व दिया गया है। ईसा जी ने सेवा को प्रधानगी दी। वास्तव में वे सेवा कर रहे हैं। हज़ारों की संख्या में दुनियां में उनके हस्पताल, अनाथ आश्रम तथा अन्य कई प्रकार के आश्रम बने हुए हैं। सारी-सारी ज़िन्दगी सेवा के लिये अर्पण करते हैं। महिलाएं भी पूरे जीवन का व्रत लेती हैं, जिन्हें ईसाई लोग सन्तनी (Nuns) कहते हैं तथा पुरुष पादरी वर्ग भी, विवाह न कराने का प्रण करते हैं। ईसा जी को हुए दो हज़ार वर्ष बीत चुके हैं, परन्तु अभी तक उनके इस कार्य के उत्साह में कोई कमी नहीं आई, बल्कि बढ़ते जा रहे हैं। उनके पास एक आदर्श भक्ति है और एक सेवा है। हमारे पास ९ प्रकार की भक्तियां हैं, दसवां फल प्रेमा भक्ति का, ग्यारहवां अपरा भक्ति, बारहवां परा भक्ति। सिद्धान्तों के अनुसार तो हम बहुत आगे बढ़ गये हैं, परन्तु व्यवहारिक पक्ष से हम पिछड़ रहे हैं। हमारा उद्देश्य हमारे सिद्धान्त बहुत उच्च हैं, परन्तु व्यवहारिक जीवन में हम अपना नहीं रहे। हमारे अन्दर वह उत्साह नहीं है जो ईसाइयों में ईसा जी के प्रचार के लिये उत्साह है। पता नहीं कहाँ-कहाँ जंगलों में गये? यदि आप अफ्रीका का हाल पढ़ें, वहाँ पर कोई व्यक्ति नहीं जा सकता था, पर इनके जो

मिशनरी थे, ऐसे स्थानों में से भी गये, जहाँ पर बहुत से मर भी गये, लेकिन ये पीछे नहीं हटे, आगे ही आगे बढ़ते रहे। कांगों स्टेट में एक मक्खी थी, जिसको डंक मारती, आदमी वहीं मर जाता था। जंगलों में इतना अन्धेरा था कि सूरज भी दिखाई नहीं देता था। उन घने जंगलों में से गुज़र कर उन लोगों तक पहुँचे जो आदमियों को भी खा जाते थे। उन्हें परमात्मा का ज्ञान दिया। पूरे संसार में दूर दराज़ तक जाते हैं। सेवा और सिमरण ये दो चीज़ें उनके पास हैं। गुरू नानक पातशाह ने हमें और ऊँचा उठाया कि अरदास थोड़ी देर के लिये हुआ करती है। उसे याद में बिठाओ जिसे सिमरण कहते हैं। अतः गुरू घर में दो बातों की महानता है - सेवा और सिमरण की। दोनों का फल इस प्रकार से फ़रमान कर रहे हैं -

धारना - नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े,
सेवा करके माण पाईदै - 2, 2
मेरे पिआरे, सेवा करके माण पाईदै - 2, 2
नाम जपीए तां दूर हुंदे दुखड़े,..........-2

संसार में सेवा करके, यहाँ पर भी मान और दरगाह में भी मान मिलता है -

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ। ता दरगह बैसणु पाईऐ॥ *पृष्ठ - 26*

नाम जपने से सारे दुखों का खातमा हो जाता है। परमेश्वर को हर समय याद रखना और घट-घट में व्यापक समझ कर, उसकी उपस्थिति महसूस करते रहना, यह नाम की प्राप्ति हुआ करती है। इसके साथ दोनों चीज़ें महाराज जी ने रखी हैं - सेवा और सिमरण। गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज का जो आदर्श सिद्धान्त, गुरू महाराज ने पेश किया है, व्यवहारिक रूप में गुरसिखों को दिखाया, सेवा से मान मिलता है। अन्य कौमें भी सेवा करती हैं परन्तु ईसाईयों की सेवा सबसे महान है। इन लोगों की सेवा के बराबर अन्य लोग सेवा नहीं करते। इन्हें पता चल जाये कि अमुक स्थान पर दुख ही दुख है, उसी समय ये लोग चले जाते हैं। ईथोपिया में अकाल पड़ गया। मैं अमेरिका में था। उनका तीन घंटे का प्रोग्राम हुआ। 12 करोड़ 60 लाख रुपये उसी समय इकट्ठा हो गये - तीन घंटे के अन्दर-अन्दर? बंगला देश में बाढ़ आ गई। तीन करोड़ साठ लाख रूपैया, तीन घंटे में इकट्ठा करके भेज दिया। सामान लेकर बांटना शुरू कर दिया। सेवा तो हमारे यहाँ भी करते हैं, दान भी करते हैं, परन्तु उत्साह पूर्वक नहीं। साध संगत जी! हमारे अन्दर उन कौमों के बराबर पहुँचने के लिये बहुत उत्साह की जरूरत है। बातें बनाने में तो हम बहुत आगे हैं। गुरू महाराज जी ने हमें यह चेतावनी दी है कि बातों से तो ये बहुत बड़े बन जाते हैं, इनका इतिहास भी काफी लम्बा है, ऐसे-ऐसे बादशाह हुए हैं, जिन्होंने अपना सर्वस्व दान कर दिया, उनकी कथा कहानियां पढ़कर हम खुश होते हैं, गौरव महसूस करते हैं कि हमारे बुजुर्ग इतने महान थे, उनकी कहानियों तथा कुर्बानियों को पढ़-पढ़ कर सुन-सुन कर हम दिन बिता रहे हैं। एक बार अमेरिका में गुरू दसवें पातशाह के प्रकाश उत्सव पर जलूस निकला। वहाँ पर किसी ने एक ऊँचे स्थान पर खड़े होकर कविता पढ़ी, कुछ भाषण दिये, ऐसे भी दिये कि छोटे-छोटे बच्चे दीवारों में चिनवा दिये गये लेकिन उन्होंने अपना धर्म नहीं छोड़ा। श्री गुरू गोबिन्द सिंघ जी के 17 वर्ष तथा 14 वर्ष की आयु के पुत्र तीन-तीन घंटे युद्ध करते रहे और उसके बाद कहीं उसने यह कह दिया कि हमारे अन्दर से ही बाबा दीप सिंघ जैसे योद्धा हुए हैं, जिनका शीश धड़ से अलग हो गया लेकिन आप शीश को हथेली पर उठाये युद्ध करते रहे। एक अमेरिका निवासी उस समय खड़ा हो गया। दोनों बाजू ऊपर उठा-उठा कर ज़ोर-ज़ोर से कहने लगा, ''अरे लोगो! यदि तुम कोई झूठ बोलने वाला देखना चाहते हो तो इन्हें देख लो। इनसे बढ़कर दुनियां में कोई झूठा नहीं है।'' उस समय किसी सियाने आदमी ने कहा, ''तुम ऐसा मत कहो, ऐसा नहीं है, ये सभी सच्ची बातें हैं।'' वह बोला, ''यदि सच्ची बातें हैं तो तुम उनके सिख

नहीं हो। तुम तो गुलाम बने हुए हो। तुम अपना धर्म नहीं निभा सकते। यहाँ पर आकर केश और दाढ़ी कटवा लेते हो, धर्म से विमुख हो जाते हैं और बातें तुम उनकी करते हो जो शीश हथेली पर रख कर लड़ते रहे। अतः या तो तुम्हारे अन्दर कोई दोष है। तुम तो ऐसी बातें मत कहो कि वे हमारे बुजुर्ग थे।'' अतः कहानियां ही हमें जिन्दा रखती हैं। हमारा जीवन व्यवहारिक नहीं है। गुरू घर में सेवा और सिमरण दोनों बराबर की बातें हैं। सेवा के अनेक ढंग हैं। कई प्रकार से सेवा की जाती है और सिमरण वाहिगुरू का नाम है।

अब भाई लहणा जी गुरू नानक पातशाह जी की संगत में आ गये। आपने बहुत कुछ तथा अनेक प्रकार के कौतुक देखे और आप तन मन से सेवा करते रहे। गुरू की जो सेवा है, वह अन्य सभी सेवाओं से महान हुआ करती है –

पैरी पै पाखाक होइ छडि मणी मनूरी।
पाणी पखा पीहणा नित करै मजूरी।
त्रपड़ झाड़ि विछाइंदा चुलि झोकि न झूरी।
मुरदे वाँगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी।
चंदनु होवै सिंमलहु फलु वासु हजूरी।
पीर मुरीदा पिरहड़ी गुरमुखि मति पूरी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/19

कहते हैं, जब तक मुर्दे के समान नहीं हो जाता, तब तक सेवा नहीं कर सकता क्योंकि –

मान अभिमान मंधे सो सेवकु नाही॥ पृष्ठ – 51

जिसे ज़रा सी भी कोई बात कही, गुस्सा आ जाये, कहते हैं, वह सेवक नहीं हुआ करता। वह तो एक रस्म पूरी करने वाली बात है। आप देख लो, आम तौर पर जो अखण्ड पाठ करते हैं, थोड़ा सा समय भी ज्यादा हो जाये, 10 मिनट फालतू हो जायें, तो आग बबूला हो जाते हैं। वैसे सेवा करता है। ऐसे सेवा नहीं हुआ करती, उसे तो शुक्र में रहना चाहिये कि मेरे से महाराज जी सेवा ले रहे हैं, कहीं मेरे से सेवा न छीन लें। सेवा के स्थान पर अभिमान आ जाता है। उसका कारण वृत्ति में अन्तर होता है। **यदि वृत्ति में अन्तर न हो, सिद्धान्त और व्यवहार दोनों इकट्ठे हो जायें फिर परिणाम सही निकला करता है।** यदि सिद्धान्त और प्रयोग में अन्तर हो फिर परिणाम ठीक नहीं निकला करता। दिखा कर या कुछ बन कर सेवा करना, महाराज जी कहते हैं, इसका महत्व नहीं हुआ करता –

विचि हउमै सेवा थाइ न पाए॥ पृष्ठ – 1070

यदि अभिमान के प्रभावाधीन सेवा करता है तो उसका कोई लाभ नहीं हुआ करता। सेवा करनी है तो–

मुरदे वाँगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/19

उसकी चाहे कोई प्रशंसा करे या अनादर करे या आदर करे, उसे कोई फर्क नहीं पड़ता। हमें आदत पड़ी हुई है कि यदि कोई सेवा करता है, तो हम उसकी प्रशंसा शुरू कर देते हैं कि वह जूते घर की सेवा करता है, देखो, कितनी मेहनत कर रहा है? इसका क्या लाभ हुआ? वह तो गुरू को खुश करने के लिये कर रहे हैं। प्रशंसा करवाने के लिये तो नहीं कर रहा। यदि उसके मन में प्रशंसा करवाने की इच्छा हो तो उसकी सेवा का कोई मूल्य नहीं है। वह तो केवल दिखावा ही होता है, जो प्रशंसा करवाता है। अतः जो मुरीद, मुर्दे की तरह बनकर सेवा करता है, उसके अन्दर कोई भी इच्छा नहीं होती। केवल एक ही इच्छा होती है कि उसका गुरू प्रसन्न हो जाये। साध संगत जी! सेवा करने से बहुत सी प्राप्तियां होती हैं। इस तरह से फ़रमान करते हैं –

धारना – करके कोई वेख लओ, सेवा तों मिलदै मेवा – 2, 2

सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए॥ पृष्ठ - 116

एक-दो-चार चीज़ें नहीं, कहते हैं जितनी भी उसकी इच्छा है, वे सभी मिल जाती हैं -

सतिगुरु सेवे ता सभ किछु पाए।
जेही मनसा करि लागै तेहा फलु पाए।
सतिगुरु दाता सभना वथू का पूरै भागि मिलावणिआ॥ पृष्ठ - 116

पूरे भाग्य जागें, तब गुरू की प्राप्ति हुआ करती है। जिसने गुरू की सेवा कर ली, गुरू को प्रसन्न कर लिया, उसे किसी भी वस्तु की कमी नहीं रहती -

धरती बीउ बीजाइ सहस फलाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 14/20

धरती में एक दाना डाल दो। पहले सेवा की, पाँच, सात बार हल चलाया, नदीन निकाली, मिट्टी बारीक की, पानी दिया फिर उसमें बीज डाल दिया। कहते हैं एक दाना जो है, तब सैकड़ों गुणा फल बन कर बाहर निकला -

धरती बीउ बीजाइ सहस फलाइआ॥
गुरसिख मुखि पवाइ न लेख लिखाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 14/20

कहते हैं यदि कोई गुरसिख को भोजन खिला दे, उसका जो फल मिलेगा, भाई गुरदास जी जिनकी बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब की चाबी का मान प्राप्त है, कहते हैं, वह लिखा नहीं जा सकता अर्थात उसका फल बहुत महान होता है। साथ ही साथ आम फल तो होता ही है। राजा विक्रमजीत जो 2000 साल पहले हिन्दुस्तान में राजा हुए और उनके राज्य को सतयुग का राज्य कहा जाता है। उनके राज्य के बड़े-बड़े शिला लेख मिलते हैं और एक लेख मन्दिर में लिखा हुआ है। उसमें लिखा है कि ताशकन्द से लेकर बर्मा तक उनका राज्य था। अफगानिस्तान आदि सभी जगह उनका राज्य था और कितना बड़ा प्रबन्ध था। कहते हैं, उनके राज्य में कोई चोर नहीं था। इसलिये मैं आज्ञा देता हूँ कि कोई भी व्यक्ति अपने घर को ताला नहीं लगायेगा। जौहरियों को हुक्म था कि सोने की दुकानों को बिल्कुल भी ताला नहीं लगाना। ताला लगाना यह बताता है कि लोगों को सरकार पर विश्वास नहीं है। कितनी बड़ी बात थी यह, उस समय जो 2000 साल पहले की है, फिर लिखते हैं कि मेरे राज्य में कोई 'कलाल खाना' नहीं था। कलाल खाना शराब खाने को कहते हैं और सारे राज्य में कोई भी आदमी शराब नहीं पीता और मेरे राज्य में वैश्याएं नहीं हैं, कोई व्यभिचारी नहीं है, सभी अपने-अपने धर्म कर्म में पक्के हैं।

एक दिन उसने अपना प्रताप देखकर यह जानने की कोशिश की कि वह कौन सा कर्म है, जिसे करने से मुझे इतना बड़ा विशाल राज्य प्राप्त हुआ है? राज तो प्राप्त हो जाता है, परन्तु अमन शान्ति वाला राज्य किसी-किसी भाग्यशाली को प्राप्त होता है। डेढ़ सौ वर्ष की आयु राजा विक्रमजीत की हुई। वह डेढ़ सौ वर्ष का था, जब राजा शल्य से उसका युद्ध हुआ। उसने अपने राज ज्योतिषियों को बुलाया और कहा, ''यह बताओ, मेरा ऐसा कौन सा कर्म है जिसके फलस्वरूप मुझे इतना बड़ा राज्य प्राप्त हुआ है।'' उन्होंने बहुत से हिसाब-किताब लगाये परन्तु कुछ समझ में न आया। साथ ही उसने एक सप्ताह की मोहलत देते हुए कहा, ''यदि तुम इसका उत्तर न दे सके तो तुम्हें सजा मिल सकती है। कठोर से कठोर सजा यहाँ तक कि मृत्यु दण्ड भी दिया जा सकता है।'' यह बात सुनी तो सभी को चिन्ता लग गई। 6 दिन बीत गये और कोई हल न निकला तो राज ज्योतिषी का चेहरा उतर गया। तब उसकी बेटी ने पूछा, ''क्या कारण है, आप इतने उदास रहते हो? दिल की बात बता देनी चाहिये, यदि न बताने वाली हो तो दीवार को ही बता देनी चाहिये। यदि कोई सलाह देने वाला न हो तो दीवार से सलाह ले लेनी चाहिये।'' इसका अर्थ है, सलाह लेकर काम करो। अपने किसी हमदर्दी के पास अपना भेद खोल दो।

कोई न कोई, हल निकल आयेगा। आप बताइये, अपने दिल में बात मत रखो। राज ज्योतिषि बोला, ''बेटी! महाराज विक्रमजीत ने ऐसा प्रश्न किया है और आज तक इसका उत्तर नहीं दे सका।'' बेटी बोली, ''लो, यह तो बहुत आसान है, आप मुझे बताते, मैं इसका उत्तर पहले ही दे देती।'' सातवां दिन शुरू हुआ, दरबार सज गया। लड़की भी दरबार में जाकर बैठ गई। उसके पिता ने कहा, ''महाराज! आपके प्रश्न का उत्तर मेरी बेटी देगी कि आपने ऐसा कौन सा अच्छा कर्म किया था जिसके फलस्वरूप आपको इतना बड़ा राज्य प्राप्त हुआ था।'' लड़की को बुलाया गया। उसने झुक कर प्रणाम किया और कहती है, ''महाराज! बता तो मैं देती हूँ, परन्तु आपको विश्वास नहीं होगा। इसलिये तुम्हें विश्वास दिलाने के लिये, जल्दी करो और यहाँ से 30 मील की दूरी पर एक महात्मा रहते हैं और वे राख घोलकर पीते हैं, उनके पास चले जाओ, वह आपके प्रश्न का उत्तर देंगे।'' राजा ने वैसे ही किया और वहाँ महापुरुष के पास पहुँच कर नमस्कार की। उसके बाद राजा ने वही प्रश्न किया। महात्मा बोले, ''मैं बता तो देता हूँ परन्तु आपको यकीन नहीं होगा, अतः कुछ मील की दूरी पर एक महात्मा रहते हैं वे अंगारे खाते हैं, वह आपके प्रश्न का उत्तर देंगे।'' राजा वहाँ चला गया। उनसे भी प्रणाम करने के पश्चात सवाल किया। महात्मा बोले, ''जवाब तो हम दे देते परन्तु हो सकता है आपको विश्वास न आये, इसलिये तुम्हारे प्रश्न का उत्तर एक बालक ने देना है। उसका कल जन्म होगा। अमुक गाँव में पैदा होगा और कुछ एक पल के लिये जिन्दा रहेगा फिर शरीर त्याग देगा। तेरे प्रश्न का जवाब देने के लिये बार-बार संसार में जन्म लेता है और मर जाता है क्योंकि तुम उससे पूछने नहीं जाते।'' अता-पता ले लिया। गाँव में पहुँच गया, बच्चे के जन्म की इन्तज़ार करता है। थोड़ी देर पश्चात बच्चा उत्पन्न हुआ। विक्रमजीत महाराज के पास लाया गया तब इसने प्रश्न किया। बच्चा खिल खिलाकर हंस पड़ा और बोला, ''राजन! अच्छा हुआ आप आ गये। तुम, मैं, अंगारे खाने वाला और राख घोल कर पीने वाला साधु, हम चारों तप कर रहे थे। कई जन्म बीत गये हमारी भक्ति तथा तप से प्रसन्न होकर विष्णु भगवान ने कसौटी लगाकर परखना शुरू किया कि कौन खरा है और कौन खोटा है? वह पहले महात्मा के पास आये। वह लड़की हमें दो रोटियां लाकर दिया करती थी। यह वही लड़की है जिसने आजकल वज़ीर के घर जन्म लिया है। वह हमारे लिये आठ रोटियां लाया करती थी। हम दो-दो बांट कर खा लिया करते थे। भगवान अतिथि के रूप में हमारे पास आ गये और उन्होंने पहले महात्मा से कहा, ''मैं बहुत भूखा हूँ। मुझे भोजन खिलाओ।'' उसने आधी रोटी दे दी, पर उनकी भूख न उतरी। उसने और मांगी महात्मा ने आधी रोटी फिर दे दी। ऐसे करते-करते जब महात्मा के पास केवल आधी रोटी रह गई और भगवान ने रोटी मांगी तब वह बोला, ''क्या मैं राख घोल कर पीऊंगा।'' भगवान बोले, ''तथा अस्तु'' इसके बाद दूसरे से कहा, ''उसने भी पहले वाले महात्मा की तरह जवाब दिये, जब आधी रोटी रह गई तो बोला, ''क्या मैं अंगारे खाऊंगा?'' भगवान बोले, ''तथा अस्तु'' मेरे पास आए तो मैंने भी ऐसे ही किया, मैंने भी आधी, रोटी अपने लिये रख ली, जब उसने वह मांगी तो मैंने कहा, ''क्या मैं भूखा मरूंगा।'' वह बोले, ''तथा अस्तु'' फिर तुम्हारे पास आए, तुमने दोनों रोटियां उनके सामने रख दीं और अति विनम्रता पूर्वक सेवा भी की। आपने प्रार्थना की, ''महाराज! यदि आज्ञा हो तो और ले आऊं?'' भगवान आपकी सेवा से प्रसन्न हुए और अपना रूप दिखाया और उन दो रोटियों के बदले तुझे इतने बड़े महान भारत वर्ष का राज्य मिल गया केवल अतिथि की सेवा करने के बदले में। जब हमें पता चला कि आप तो स्वंय विष्णु भगवान हैं तो हमने प्रार्थना की, ''हे भगवान! हमारा कल्याण कब होगा?'' भगवान ने कहा, ''तुम्हारा यह श्राप, उस दिन समाप्त होगा जब मैं विक्रमजीत को प्रेरित करूंगा और वह पूछेगा कि उसने कौन सा पुण्य किया है, जिसके फलस्वरूप इतना बड़ा राज्य प्राप्त हुआ। उस समय तुम्हें पूछेगा - जन्म के समय तेरे पास आयेगा। तब आप सभी के शरीर छूट जायेंगे और बैकुण्ठ धाम में चले जाओगे।'' वह बच्चा

बोला, "राजन! केवल दो रोटियां खिलाने का फल, इतना बड़ा राज्य प्राप्त हुआ है।" अतः भाई गुरदास जी कहते हैं -

गुरसिख मुखि पवाइ न लेख लिखाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

विक्रमजीत को तो राज्य प्राप्त हो गया। परन्तु जो गुरसिख को भोजन खिलाता है - ब्रह्मज्ञानी महापुरुष को, कहते हैं, उसका कोई हिसाब किताब ही नहीं है, कितना पुण्य बन जाता है -

धरती देइ फलाइ जोई फलु पाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

धरती में कोई भी बीज डाल दो। वह फल देती ही है। कोई बीज बो दो, गुठली बीजने पर आम का फल मिलता ही है। गेहूं का बीज डालेंगे, गेहूँ मिल जायेगी -

गुरसिख मुखि समाइ सभ फल लाइआ।
बीजे बाझु न खाइ न धरति जमाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

जो बोता ही नहीं, वह खायेगा क्या? आप जरा सोच कर देखो? मैं तो कह रहा हूँ, "भाई, बो सकते हो तो बीज बो लो।" महाराज जी कहते हैं, बिना बोए, कुछ नहीं मिलता। पढ़ो प्यार से-

धारना - किथों भालदैं तूं दाख बिजौरीआं,
किकरां दे बीज बीज के - 2, 2
मेरे पिआरे, किकरां दे बीज बीज के - 2, 2
किथों भालदैं तूं दाख बिजौरीआं .... -2

फरीदा लोड़ै दाख बिजउरीआं किकरि बीजै जटु।
हंढै उंन कताइदा पैधा लोड़ै पटु॥ *पृष्ठ - 1379*

कीकर के बीज डालोगे तो काटों वाली कीकर ही पैदा होगी, फिर दाखें कहाँ ढूँढता फिरता है? आदमी को यह बात आज तक समझ में नहीं आई। महाराज जी कहते हैं -

बीजे बाझु न खाइ न धरति जमाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

जब बोना ही नहीं, तो खायेगा कहाँ से?

एक बार अकबर ने बीरबल से कहा, "मुझे चार आदमी ऐसे लाकर दिखा, जिनमें से एक तो ऐसा हो जो तीन जन्मों का कंगाल हो, एक ऐसा जो तीन जन्मों का अमीर हो, एक ऐसा जो अब दुखी हो आगे सुखी हो और एक ऐसा जो अब सुखी हो और आगे दुखी हो।" एक सप्ताह का समय दे दिया गया। समय पूरा होने पर बीरबल ने चार आदमी लाकर खड़े कर दिये। राजा ने कहा, "मुझे कैसे पता चलेगा कि कौन कैसा आदमी है?" बीरबल ने कहा, "महाराज! पहला आदमी यह एक अमीर सेठ है। इसके यहाँ लंगर चलते हैं, भूखों को भोजन मिलता है। जरूरतमन्दों को कपड़ा मिलता है। बीमार को दवाई मिलती है और बेअन्त धनी है। पहले बोया हुआ अब खा रहा है तथा अब जो बो रहा है उसका अगले जन्म में खायेगा। यह तीन जन्मों का अमीर पुरुष है। महाराज जी! यह दूसरा आदमी एक कंगाल है। गरीबी से मरा हुआ है। पहले जन्म में कुछ दान नहीं कर सका, अब इसे कुछ दान करने के लिये मिला नहीं, अब कुछ बो नहीं रहा, इसलिये अगले जन्म में भूखा मरेगा। यह तीसरी एक वैश्या है जो अपने शरीर को बेचती है, अपने हुस्न को बेचती है, नाचती है, गाती है और बेअन्त धन कमा रही है। परिणाम यह है कि अब तो पैसे का सुख देख रही है परन्तु अगले जन्म में नरक के दुख भोगने पड़ेंगे। कुष्ठी शरीर मिलेगा। बैरंग शरीर होगा, नैन-नक्श बिल्कुल कुरूप होंगे, दुखों से भरी हुई, जन्म से ही दुखों से भरा शरीर मिलेगा और समाज में तिरस्कृत होगी। अतः यह अगले जन्म में दुखी होगी। चौथा

आदमी, महाराज! यह एक तपस्वी है, धूनियां रमाता है, जल धारे कर रहा है, तप का फल राज्य प्राप्ति हुआ करती है -

तपों राज राजों नरक।

यदि राजा अधर्मी बन जाये, फिर वह नरकों में जाता है। अतः महाराज अब तो यह तप कर रहा हूँ क्योंकि इच्छाधारी बन कर कर रहा है इसलिये इसका फल इसे राज्य मिलेगा। भाई गुरदास जी लिखते हैं -

बीजे बाझु न खाइ न धरति जमाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 14/20

धरती कैसे पैदा कर देगी, जब बीज ही नहीं डाला। एक दुख बोने पर हज़ार दुख मिलते हैं। बीजने का भी ठीक समय आया परन्तु बीज बो ही न सका। इस तरह से -

गुरमुखि चिति वसाइ इछि पुजाइआ॥ भाई गुरदास जी वार 14/20

चाहे धन से सेवा करता है या शारीरिक तौर से सेवा करता है, चाहे विद्या पढ़ाता है या डाक्टरी करता है, ये सभी सेवाएं हैं। यदि पुलिस का सिपाही ठीक तरह से अपनी ड्यूटी निभाए तो बहुत बड़ी सेवा है, उसके बराबर सेवा किसी की नहीं है क्योंकि सभी लोग सुख चैन की नींद सो सकते हैं। किसी को भी किसी चीज़ का भय नहीं रहता और उसकी सेवा का फल बहुत महान हो जाता है। फौज का सिपाही अपनी जान हथेली पर रख कर देश की रक्षा कर रहा है। इस प्रकार प्रत्येक क्षेत्र में सेवा ही सेवा है। कहते हैं, कोई भी सेवा करके देख लो, इसका फल जरूर मिलता है। गुरू घर में ऐसी बेअन्त मिसालें हैं -

गुरसिख मुखि पवाइ न लेख लिखाइआ। भाई गुरदास जी, वार 14/20

गुरू पाँचवे पातशाह जी के घर काफी समय तक सन्तान न हुई। माता करमो जी, पृथी चन्द के घर से थीं। एक दिन उन्होंने ताना मारा, जब माता गंगा जी वस्त्र सूखने डालने गईं। दासी कहने लगी, ''देखो, इनके घर में कितने वस्त्र आते हैं।'' वह बोली, ''कोई नहीं ये तो निस्सन्तान हैं, थोड़े दिन की बात है, सभी कुछ हमारे पास ही आ जायेगा।'' यह बात माता गंगा जी के दिल को चुभ गई। उन्होंने आकर महाराज जी के पास प्रार्थना की, ''पातशाह! सारी दुनियां को बख्शीशें प्रदान करते हो अतः दासी की गोद में भी पुत्र की दात डाल दो।'' महाराज जी ने कहा, ''हम तो गुरू नानक पातशाह के ट्रस्टी हैं, श्रद्धा पूर्वक जिज्ञासु आते हैं, वह जो मांगते हैं, उन्हें दिया जाता है परन्तु यह सिद्धान्त अपने घर के लिये नहीं प्रयोग किया जाता कि अपना ही घर भर लें।'' बार-बार बेनती की। महाराज जी ने पूछा, ''सुखमनी साहिब पढ़ती हैं न आप?'' कहती हैं, ''हाँ महाराज!'' महाराज जी कहते हैं, ''जहाँ पर साधुओं की महिमा लिखी गई है वहाँ पर आपने यह भी पढ़ा होगा -

चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ पृष्ठ - 266

अतः आप भी महापुरुषों की सेवा करो।'' माता जी बोली, ''पातशाह! महापुरुष भी आप ही बता दो।'' महाराज जी ने कहा, ''बाबा बुड्ढा जी ब्रह्मज्ञानी हैं अतः तुम उन्हें प्रसन्न करो।'' विधि बता दी कि भोजन आदि ले जाकर उन्हें खिलाकर, प्रसन्न करो। गुरसिख के मुख में यदि भोजन चला जाये और वह प्रसन्न हो जाये, कहते हैं, इतनी दातें, इतने वरदान दे देता है, जिन्हें लिखा नहीं जा सकती-

गुरसिख मुखि पवाइ न लेख लिखाइआ॥ भाई गुरदास जी, वार 14/20

बेअन्त वरदान दे देता है। सो माता जी पहली बार बड़ी शान-ए-शौकत के साथ गईं। वरदान की जगह श्राप ले लिया। बाबा बुड्ढा जी ने कहा गुरू वालों को कौन सी जल्दी पड़ गई? माता जी ने

पुत्र की दात के लिये प्रार्थना की। बाबा जी कहने लगे, ''माता जी! हम तो गरीब सिख हैं। हम तो सभी कुछ गुरू से लेते हैं। गुरू समरथ हैं। समुद्र को छोड़कर आप छोटी सी छपरी के पास क्यों आई हो? जाओ, वहीं से ही सब कुछ मिलेगा।'' उदास होकर वापिस लौट आईं। महाराज जी ने पूछा, ''कैसे गई थीं?'' माता जी बोली, ''हम तो रथ वगैरा ले कर गई थीं। गाड़ियां भी साथ लेकर गईं थीं।'' महाराज जी ने कहा, ''सन्तों के पास कभी ऐसे जाया करते हैं? सन्तों के पास जाना हो तो विनम्रता धारण करके जाना चाहिये। ''

कबीर साधू कउ मिलने जाईऐ साथि न लीजै कोइ।
पाछै पाउ न दीजीऐ आगै होइ सु होइ॥ *पृष्ठ - 1370*

सन्त को यदि मिलने जाना हो तो श्रद्धा पूर्वक घर से चलो। जलूस निकाल कर मत जाओ, फिर सन्त चुप रहते हैं। जो बात आपने पूछनी होती है, वह भी नहीं पूछ सकते। आपने नम्रता के साथ जाना था। माता जी बोली, ''कोई युक्ति बताओ।'' महाराज जी युक्ति बताते हैं, ''अपने हाथों से गेहूँ तथा चने अच्छी तरह से साफ कर लो। अमृत बेला में उठकर जपुजी साहिब का पाठ करना, स्नान करने के पश्चात फिर अपने हाथों से चक्की में आटा पीसना, खुद ही दूध रिड़कना, मक्खन निकालना, लस्सी तथा दही प्याज़ तथा मिस्सी रोटियां बहुत सुन्दर-सुन्दर अच्छी तरह से घी लगाकर, सिर पर लस्सी की मटकी रख कर और उस पर रोटियां रख कर, फिर यहाँ से नंगें पाँव जाओ। एक कदम का एक अश्वमेघ यज्ञ का फल तुम्हें प्राप्त होगा। फिर जब तुम इस प्रकार विनम्रता के साथ जाओगी तो फिर साधु प्रसन्न हो जाते हैं। प्रसन्न होने पर उनके वचन हुआ करते हैं। वचन अपने आप ही कर देते हैं।'' दूसरे दिन माता जी ने ऐसे ही किया। आप नंगे पाँव बड़ी श्रद्धा तथा प्यार के साथ जाती हैं। प्यार का आकर्षण हुआ। बाबा जी को भूख लग गई और अमृतसर शहर की ओर देख रहे हैं। दूर से देखा कि माता जी आ रही हैं। सेवादार ने बताया कि माता जी आ रही हैं। बाबा जी आगे बढ़े। सिर से मटकी उतार ली और बोले, ''माता! पुत्रों के लिये इतना प्यार। मुझे बहुत भूख लगी हुई है माता, आपने तो बहुत बड़ी कृपा की। विनम्रता से भरे वचन कहते चले आ रहे हैं। रास्ते में ही बैठ गये। झक्करा रख लिया, पोणा खोल कर माता जी ने रोटियां हाथ पर रख दीं और एक बड़ी सी प्याज दे दी। बाबा जी ने प्याज ली और उसे घुटने पर रखकर ज़ोर से मुक्का मारा, कहते हैं, ''माता! यह जैसे प्याज को तोड़ा है ना, इस तरह बड़े-बड़े अभिमानी, आकी, खान, मुगलों के सिर तोड़ने वाला शहजादा होगा। दुष्टों को सजा देगा। मीरी तथा पीरी के वस्त्र पहनेगा। मीरों की मीरी तथा पीरों की पीरी खींच लेगा। इतने प्रताप वाला होगा। उसके सामने कोई झांक नहीं सकेगा। उस पर कोई हावी नहीं हो सकेगा। पूर्ण राज जोगी होगा। संसार का उद्धार करेगा, वचन का बली होगा।'' रोटी का एक ग्रास खाते हैं और साथ ही साथ वर देते जाते हैं। माता जी बहुत प्रसन्न होकर लौट आईं। महाराज जी को बताया, ''सच्चे पातशाह! आज तो बाबा जी ने गिनती-विनती से भी अधिक वचन कर दिये'' -

भगत मुखै ते बोलदे से वचन होवंदे॥ *पृष्ठ - 306*

सन्त मुख से जो वचन कहते हैं, वैसे ही पूरे हो जाया करते हैं। जो उसे बदलवाता है कि ऐसे कह दो, वे वचन नहीं होते। वचन वही होता है जो अचानक मुख से निकले। बहुत वचन हुए। महाराज जी कहते हैं नम्रता से जाने पर प्रसन्नता मिलती है -

धरती बीउ बीजाइ सहस फलाइआ॥ *भाई गुरदास जी वार 14/20*

धरती में बीज डाल दो, हज़ारों दाने उग आते हैं। यदि गुरसिख के मुख में दाना चला जाये, कहते हैं उसका कोई हिसाब ही नहीं होता, न हज़ार न लाख। कुछ भी नहीं कह सकते -

धरती देइ फलाइ जोई फलु पाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

जो भी बीज डाल दिया, वह धरती में फल देता ही है –

गुर सिख मुखि समाइ सभ फल लाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

पर गुरमुख के मुख में जो चीज़ समा जाती है, कहते हैं उनके फलों की गिनती नहीं हुआ करती। सभी फल मिल जाते हैं –

बीजे बाझु न खाइ न धरति जमाइआ।
गुरमुखि चिति वसाइ इछि पुजाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 14/20*

इस प्रकार, सेवा के गुरू घर में बेअन्त उदाहरण मिलते हैं।

गुरू पाँचवे पातशाह महाराज जी के पास एक लाहौर वासी भाई बुद्धू जो आवे (ईंटों के भट्ठे) का काम किया करता था। आप महाराज जी की शरण में आए। प्रार्थना की, ''पातशाह! मैं दसवन्ध लेकर हाज़िर हुआ हूँ। गुरसिख का कर्तव्य होता है, दसवन्ध देना। जो दसवन्ध नहीं देता, महाराज जी कहते हैं, वह चोरी का धन खाता है, गुरू का धन खाता है और उसकी कमाई में वृद्धि नहीं हुआ करती। गरीब हो या अमीर, गुरू का दसवन्ध तो देना ही पड़ता है अन्यथा तीन और भाई हैं, वे खा जाते हैं। वे कहते हैं यदि तुम हमारे बड़े भाई को दसवन्ध नहीं देते तो फिर हम जबरदस्ती करके तथा दुखी करते हैं। साथ ही साथ उससे भी दस गुणा निकलवाते हैं। एक तो है बीमारी, रोग लग जाना। दवाईयां लिये जाता है, कहीं से भी ठीक नहीं होता। दूसरा है मुकदमा – सरकार से कोई झगड़ा छिड़ जाना। तीसरा होता है प्राकृतिक प्रकोप (Natural calamity) हो जाना। वे कहते हैं फिर हम लेते हैं, हाँ जो गुरू का दान नहीं देता, गुरू का हिस्सा नहीं देता। अत: वह बोला, ''पातशाह! मैं गरीब हो गया परन्तु गरीबी में भी मुझ से जो दसवन्ध बन पाया – थोड़ा बहुत, मैं आप जी की शरण लेकर आया हूँ। आप कृपा करो, इसे अंगीकार करो और हजूर मेरी बेनती है कि मेरे सिर पर इतना कर्ज़ हो गया है, जिसे उतार पाना मेरी समर्थ से बाहर हो गया है। कृपा करो, मेरे काम में बरकत डाल दो।'' महाराज कहते हैं, ''भाई बुद्धू! सुखमनी साहिब पढ़ता है?'' कहता है, ''हाँ महाराज! विचार भी करता है? अर्थ समझ कर पढ़ता है।'' महाराज जी कहते हैं, ''यदि विचार कर पढ़ते हो, तो फिर तो आपको यह बात कहनी ही नहीं थी क्योंकि हमने तो स्पष्ट रूप से यह फ़रमान कर दिया है –''

धारना – जे तूं चार पदारथ लैणे, सेवा कर लै साधूआं दी – 2, 2
मेरे पिआरे, सेवा कर लै साधूआं दी – 2, 2
जे तैं चार पदारथ लैणे, ... –2

चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ *पृष्ठ – 266*

भाई बुद्धू! गुरू की संगत तन-मन से गुरू के हुक्म का पालन करती है। गुरसिख अमृत बेला में जागता है, जब सारा संसार सोया पड़ा होता है –

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रितसरि नावै।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै सभि किलविख पाप दोख लहि जावै।
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै बहदिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै॥ *पृष्ठ – 305*

सभी गुरसिख जितने भी तुझे दिखाई देते हैं, बन्दगी करते हैं, गुरू के साथ प्यार करते हैं भाई! ये सभी साधु हैं। सिख कहो, साधु कहो, सन्त कहो, एक दर्ज़ा हुआ करता है उन पुरुषों का जो साधना सम्पन्न हुआ करते हैं, ऐसे बातें नहीं बनाते। साधना करके, अपने अनुभव से बात को परख कर फिर

बोलते हैं, अन्यथा बोला नहीं करते। संगत में प्रभु का वास होता है। तुम संगत को बुला कर उन्हें भोजन खिलाओ, फिर संगत अरदास करेगी और तेरा कार्य सिद्ध हो जायेगा। कहने लगा, ''पातशाह! आप भी चरण डालो।'' महाराज जी कहते हैं, ''हमारे जाने से बहुत बड़ा इकट्ठ हो जायेगा।'' बुद्धू शाह कहता है, ''सच्चे पातशाह! सेवा करने का एक मौका तो दो।'' अतः महाराज जी से तारीख निश्चित करवा ली और आपने जाकर अपने भाईचारे को इकट्ठा किया और सारा कार्यक्रम बताया। तैयारियां आरम्भ कर दीं। नियत की गई तिथि को महाराज जी चरण डालने के लिये चले गये और उसने बड़े प्यार के साथ पंगते लगाकर भोजन परोसना शुरू कर दिया। कुछ सिंघ धीरे-धीरे आये, कुछ बाद में आए, वह बाहर इन्तज़ार कर रहे हैं कि पंगत उठे तो फिर हम भोजन करें। उनमें एक गुरसिख आया जिसका नाम भाई लखू था। भाई लखू पहले डाकू था, लेकिन एक गुरसिख के साथ मिलकर उपदेश लिया और उपदेश सुनने के बाद हमारी तरह नहीं किया कि उपदेश भी लेना और साधना भी न करना। ये लोग जो इस प्रकार के चरम-सीमा पर पहुँचे होते हैं, यदि वे उचित मार्ग पर आ जाएं, फिर बहुत महान बन जाते हैं। वाल्मीकि जो लोगों को मारता था, जब ठीक मार्ग पर आ गया तो कितना महान ऋषि बना। सारी दुनियां उसे अब तक भी याद करती है। इसी प्रकार भाई बिधि चन्द जो डाके मारता था, डकैतियां मारा करता था, फिर गुरसिख भी ब्रह्मज्ञानी बना। जो बीच में पड़े रहने वाले अर्थात दुविधा ग्रस्त लोग वो होते हैं किसी काम के नहीं हुआ करते, न आर होते हैं न पार। अतः जब ये सुधर जायें फिर बहुत महान मनुष्य बन जाते हैं। भाई लखू डाके मारता है, उसे गुरसिख का मिलाप हुआ और उसने गुरू पाँचवे पातशाह के पास आकर नाम की दात ली। उनकी संगत मिली और उसका नितनेम इतना दृढ़ हो गया कि 25 पाठ रोज जपुजी साहिब के उसका नितनेम बन गया। अमृत बेला में बन्दगी किया करता था और हर समय गुरू के ध्यान में रहता था। गुरू पाँचवे पातशाह का ध्यान लगाया करता था और सुरत के साथ चरणों में प्यार लगाये रहता था। जब वह आता है तो उसके मन में बहुत प्यार होता है और जल्दी से जल्दी गुरू महाराज जी के दर्शन करना चाहता है। दरवाज़ा खट-खटाया इस आशा से कि मेरे लिये द्वार खोल देंगे और मैं जाकर गुरू महाराज के चरणों में नमस्कार करूंगा। भाई बुद्धू स्वंय आया। कहने लगे, ''दरवाज़ा क्यों खटखटाये जा रहा है?'' कहता है, ''मैंने गुरू महाराज जी के दर्शन करने हैं अभी।'' वह बोला, ''रूक नहीं सकता क्या?'' कहता है, ''नहीं रुक सकता। जैसे मछली जल के बिना नहीं रह सकती गुरमुख प्यारे! इसी तरह से मैं भी गुरू दर्शनों के बिना नहीं रह सकता। जल्दी कर, मुझे दर्शन करा। बड़ी दूर से मैं भाग कर आया हूँ कि कहीं महाराज जी चले न जायें। संगत के उठने से पहले-पहले मैं दर्शन कर लूँ और मुझे भूख भी बड़ी तेज़ लगी हुई है अतः मुझे भोजन भी करवा।'' बुद्धू शाह बोला, ''कुछ कह या न कह। पहले अरदास होगी, उसके पश्चात मैं दरवाज़ा खोलूंगा, इससे पहले नहीं खोलता।'' तकरार किया, थोड़ा सा हउमैं में आ गया। समझा नहीं कि उसके घर गुरसिख आया है, अतः विनम्रता पूर्वक वचन करूं। साथ ही ऐसा हुआ कि गुरू साहिब स्वंय भी आ गये। अब मुझे किस बात की परवाह है। बहुत से प्रेमी होते हैं जो सन्तों के साथ तो बहुत ही निकटता रखते हैं और सन्तों के साथ-साथ घूमते रहेंगे। हमने महाराज जी के साथ देखे थे, साथ-साथ रहते थे, जिधर महाराज जी जाते, उधर साथ-साथ चलते। यदि संगत का आदमी चला जाये, उसे पानी तक भी नहीं पूछते। उसके साथ तो बात तक नहीं करते। इतना ही होता है कि वे संगत को कुछ भी नहीं समझा करते। अपने सम्बन्धों को महत्व देते हैं। सन्तों का ऐसा हाल होता है कि वे संगत में, विनम्रता में उनका वास होता है। यदि किसी का दिल दुख जाये तो उनका दिल दुखी हो जाया करता है -

जे तउ पिरीआ दी सिक हिआउ न ठाहे कही दा॥ *पृष्ठ - 1384*

यदि परमात्मा से मिलना हो तो किसी गरीब का दिल मत तोड़ देना फिर नहीं मिला करता।

अतः भाई लखू का दिल टूट गया। चुप कर गया, ''अच्छा महाराज! तेरी रज़ा।'' अरदास हो रही है। अरदास करने वाला कह रहा है, महाराज तेरी संगत को भोजन खिलाया है और इसके आवे (भट्ठे) पक्के हो जायें, कारोबार में सफलता मिल जाये। भाई लखू ने आवे की बात सुनते ही ऊँचे-ऊँचे ज़ोर से तीन बार कह दिया कि आवे (भट्ठे) पक्के नहीं, कच्चे रहेंगे - कच्चे रहेंगे - कच्चे रहेंगे। पूरे ज़ोर के साथ बोल दिया। अरदास करने वाले तक आवाज़ पहुँच गई। भाई बुद्धू के मन में बड़ा भारी संशय उठा कि यह कच्चे कहने वाला कौन है? सारी संगत गुरू महाराज जी की हजूरी में कह रही है कि पक्के हो जायें, पर यह कच्चे कहने वाला कौन है? उस समय जब अरदास पूरी हो चुकी, दरवाज़ा खोला, भाई बुद्धू ने कहा, ''कौन कहता था कि कच्चे होंगे?'' भाई लखू बोला, ''मैं कहता था। रहेंगे भी कच्चे ही।'' वह बोला, ''प्यारे! संगत ने अरदास की है, तेरे कहने पर कच्चे कैसे रह जायेंगे?'' लखू कहता है, ''जो संगत में बोलता है, मेरे अन्दर भी वही बोलता है।'' क्योंकि ऐसा फ़रमान है -

धारना - प्रभ जी दा वासा है, सन्तां दी रसना उत्ते - 2, 2
सन्तां दी रसना उत्ते - 2, 2
प्रभ जी दा वासा है, ... -2

प्रभ जी बसहि साध की रसना॥ ***पृष्ठ - 263***

कहने लगा, ''मेरी रसना से भी गुरू ही बोला है।'' मन में संशय पैदा हो गया, फिर हिम्मत करता है संगत ने अरदास की है, अकेले सिख की क्या चलेगी? अब महाराज जी के पास चला जाता है क्योंकि साध संगत जी! जो गुरू है। जो गुरसिख हर समय अभेद रहता है गुरू के साथ, उसकी रसना पर स्वंय ऊपर गुरू ही बिराजमान होकर बोलता है।

गुरू छठे पातशाह श्री नगर, कश्मीर में माता भागभरी को दर्शन देने के लिये जाते हैं। संगत को जब पता चलता है तो संगत समूहों के समूह दर्शन करने आ रही है और एक गाँव का जत्था सुन्दर-सुन्दर फल टोकरे में डाल कर तथा शहद लेकर गुरू महाराज जी के दर्शन करने के लिये शब्द पढ़ता आ रहा है। फलों की टोकरी के ऊपर बहुत सुन्दर कपड़ा डाला हुआ है, रंगदार कागज़ के साथ बान्धा हुआ है तथा शबद पढ़ते हुए जब जा रहे होते हैं, तो रास्ते में भाई कट्टू, कश्मीरी संगत को आकर नमस्कार करता है और पूछता है, ''कहाँ जा रहे हों?'' वे बोले, ''हम महाराज जी के दर्शन करने जा रहे हैं।'' उसकी नज़र टोकरे पर पड़ी तथा शहद वाले बर्तन पर भी पड़ी। भाई कट्टू पूछते हैं, ''इस बर्तन में क्या है?'' वे बोले, ''इस टोकरे में गुरू महाराज जी के लिये हम फल ले जा रहे हैं तथा कश्मीरी मेवे, सुन्दर-सुन्दर फल, ताज़ा-ताज़ा तोड़कर लाये हैं और इस बर्तन में फूलों की सुगन्धि वाला ताज़ा तथा शुद्ध शहद है।'' इतना सुनते ही भाई कट्टू ने हाथ आगे बढ़ा दिया और कहा, ''थोड़ा सा मुझे भी दे दो। मेरा बड़ा मन कर रहा है और एक दो फल भी दे दो। वहाँ पर तुमने संगत में जाकर भी बांटने ही हैं।'' जत्थेदार कहता है, ''भाई कट्टू! पवित्र चीज़ ही गुरू महाराज जी को पेश करनी है, क्या रास्ते में ही बांटते हुए लेकर जायें?'' भाई कट्टू बोला, ''अच्छा भाई, तुम्हारी मर्ज़ी'' गुरू छठे पातशाह जी के हजूर में जाकर फलों का टोकरा तथा शहद वाला बर्तन दोनों रख दिये। महाराज जी ने दो बार देखा और कहते हैं, ''भाई गुरमुखो! यह दुर्गन्ध सी कहाँ से आ रही है?''

गुरमुख बोले, ''महाराज! यहाँ पर दुर्गन्ध वाली कोई वस्तु तो है नहीं?''

महाराज जी ने उस फलों वाली टोकरी की ओर संकेत करते हुए कहा, ''इसके नीचे क्या है? खोलो इसे।'' जब खोलकर देखते हैं तो दंग रह गये कि सारे फल गले पड़े हैं।

फिर बर्तन की ओर संकेत करते हुए पूछा, ''इसमें क्या चीज़ है?'' बर्तन का मुँह खोला और महाराज जी के हाथ में पकड़ा दिया। महाराज जी कहते हैं, ''देखो भाई! क्या चीज़ है यह?''

जो संगत लेकर आई थी, उनके जत्थेदार ने कहा, ''महाराज! इसमें शुद्ध शहद है जो अभी-अभी निकाल कर लाए हैं।'' जब वापिस संगत ने देखा तो उसमें छोटे-छोटे कीड़े कुलबुल-कुलबुल करते दिखाई देते हैं।''

महाराज जी कहते हैं, ''ऐसी चीज़ें गुरू को भेंट करने के लिये लाया करते हैं?'' वह संगत जो लाई थी रोने लग पड़ी। कहने लगी, ''पातशाह! पता नहीं क्या हो गया? सारी चीज़ें शुद्ध लेकर चले थे।'' महाराज जी कहते हैं, ''प्यारे जी! अब क्यों अफसोस करते हो। जब हमने हाथ बढ़ाकर मांगा था तब तो तुमने हमें दिया नहीं और अब तुम अफसोस करते हो? रास्ते में तुम्हें कौन मिला था?'' कहने लगे, ''भाई कट्टू'' महाराज कहते हैं, ''फिर भाई कट्टू में तो हम, हर समय विद्यमान रहते हैं। अभेद अवस्था के गुरसिख में, उनमें और हमारे अन्दर कोई फर्क नहीं हुआ करता। वे गुरू जैसे, परमेश्वर जैसे ही होते हैं -''

धारना - सांई ही वरगे ने, विसरे ना नाम जिन्हां नूं - 2, 2
विसरे ना नाम जिन्हां नूं - 2, 2
सांई ही वरगे ने,.......... -2

जिन्हा न विसरै नामु से किनेहिआ।
भेदु न जाणहु मूलि सांई जेहिआ॥ *पृष्ठ - 397*

खालसा मेरो रूप है खास।
खालसे महि हौ करौ निवास॥ *सरब लोह ग्रन्थ में से*

आतम रस जिह जानही सो है खालस देव।
प्रभ महि मो महि तास महि रंचक नाहन भेव॥ *सरब लोह ग्रन्थ में से*

प्यारे! गुरसिख ने यह बात कह दी, कहते हैं, जब मांगता था, उस समय तो दिया नहीं। अतः गुरसिख की जुबान पर प्रभु का वास होता है, जो गुरसिख हर समय प्रभु की याद में रहता है। सो भाई बुद्धू महाराज जी के पास चला गया। कहने लगा, ''पातशाह! विघ्न पड़ गया। संगत ने तो अरदास कर दी, आपने मन्जूर कर ली, परन्तु एक मस्ताना सा सिख बाहर खड़ा था, उसने तीन बार कहा, ''कच्चे, कच्चे, कच्चे।'' महाराज कहते हैं, ''कौन सा गुरसिख था प्यारे।''

कहता है, ''महाराज! वह डाकू लुटेरा।''

महाराज कहते हैं, ''कौन सा? गुरसिख भी लुटेरा होता है? हाँ, परमेश्वर के नाम का लुटेरा होता है। जब दुनियां सो रही होती है, वह उस समय उस नाम को लूट रहा होता है। अमीर आदमी अपनी दौलत को छिपा कर रखता है किसी को पता न चल जाये। इसी तरह जो गुरसिख हैं, अपनी कमाई को छिपा कर रखता है कि कहीं मक्खियां न आ जाएं, मंगते न आ जाएं। ऐसा कौन सा गुरसिख है भाई? गुरसिख तो लुटेरा हो ही नहीं सकता।''

बुद्धू बोला, ''महाराज पहले लुटेरा था।''

महाराज, ''उसका नाम बता गुरमुख प्यारे।''

बुद्धू, ''महाराज! भाई लखू।''

महाराज, ''भाई लखू ने कह दिया।''

बुद्धू, ''हाँ महाराज।''

महाराज जी मौन होकर रह गये।

बुद्धू, ''महाराज! आपने कुछ फरमाया नहीं?''

महाराज, ''फ़रमान क्या करना है बुद्धू! अब तो गुरसिख का वचन ही सफल होगा क्योंकि वह अभेद अवस्था का गुरसिख है। वह हर समय मेरे अन्दर रहता है और मैं उसके अन्दर रहता हूँ। जो कुछ उसने बोल दिया, वचन कर दिया उसे टाला नहीं जा सकता।''

धारना - भावें चन्द्रमा नाश हो जावे,
संतां दा बोल ना टले - 2, 2
पिआरे जी! संतां दा बोल ना टले - 2, 2
भावें चन्द्रमा नाश हो जावे,........-2

निसि बासुर नखिअत्र बिनासी रवि ससीअर बेनाधा।
गिरि बसुधा जल पवन जाइगो इकि साध बचन अटलाधा॥ पृष्ठ - 1204

महाराज कहते हैं, ''भाई बुद्धू! यह तो अभेद अवस्था वाले गुरमुख के मुख से वचन निकल गया। यह तो अब टल नहीं सकता।'' बुद्धू कहता है, ''पातशाह! आप सर्व कला समरथ हैं।'' महाराज जी कहते हैं, ''वह बात भी ठीक है गुरसिख का वचन टालने में समरथ हैं पर यह रीति भी तो आदि जुगादि से चली आ रही है।''

गुरू नानक पातशाह जी यमुना के किनारे ठहरे हुए हैं, बेअन्त संगत दर्शनों के लिये आती है। एक दिन सुबह अमृत बेला में रोने की आवाज़ सुनाई देती है।

उधर वहाँ पर हाथी रखने वाले, महावत लोग अपने-अपने परिवारों के साथ रह रहे हैं। एक-एक हाथी, एक-एक महावत को दिया हुआ है। जिनसे वे अपने परिवार का पालन पोषण करते हैं। आधी रात के समय एक हाथी मर गया। गुरू महाराज जी स्नान करके डेढ़ पहर रात रहते अर्न्तध्यान होकर बैठे हुये हैं और इधर से ज़ोर-ज़ोर से रोने की आवाज़ आने लगती है। सन्त पत्थर दिल नहीं हुआ करते गुरूओं के, सन्तों, महापुरुषों, गुरसिखों के दिलों में दर्द भरा रहता है। हूक-सुनी, मज़बूरी देखी, आवाज़ सुनी कि बहुत ही मज़बूर तथा जरूरतमन्द लोगों की आवाज़ है। भाई मरदाना से कहा कि पता करो क्या बात है? मरदाना पता करके आया, कहता है, ''महाराज! एक महावत की रोज़ी रोटी (रिज़क) हाथी पर निर्भर करती थी, उसका हाथी मर गया और अब वह करुण पुकार कर रहा है और कह रहा है कि बादशाह उसे नौकरी से निकाल देगा और वह रोज़ी रोटी का प्रबन्ध कैसे करेगा?''

गुरू महाराज ने कहा, ''जाओ! उसे कहो कि हाथी मरा नहीं है, वैसे ही लेटा पड़ा है, उठा दो उसे। मरा नहीं है।'' मरदाना ने ऐसे ही किया। महावत ने जाकर हाथी की ओर देखा, हाथी उठकर बैठ गया। जब दिन निकल आया तो इसने जिक्र किया कि एक बहुत बड़े महापुरुष यहाँ आए हुए हैं। हाथी मर चुका था। एक दम ठण्डा हो गया था। उन्होंने कह दिया, ''मरा नहीं है।'' महावत बोला, ''हाथी जीवित हो गया।'' बादशाह के कानों तक यह बात पहुँच गईं। बादशाह ने दिलचस्पी दिखाई और गुरू नानक पातशाह को हाथी खाने में बुलवा लिया।

बादशाह बोला, ''फकीर सांई! मुझे पता चला है कि आप मरे हुओं को ज़िन्दा कर देते हो?''

महाराज कहते हैं, ''नहीं बादशाह! मरे हुओं को ज़िन्दा करने वाला अकाल पुरुष है? जिन्दों को मारने वाला भी अकाल पुरुष है।''

बादशाह बोला, ''पर आपने तो इसे जिन्दा कर दिया है, अब मार कर दिखा।''

महाराज जी ने कहा, ''यह मरा हुआ तो पहले ही है।'' वह हाथी धड़ाम से गिर पड़ा।

महाराज कहते हैं, ''बादशाह! परमात्मा की फैंकी हुई चीज़ को उसके दरवेश, उसके प्यारे उठा लिया करते हैं परन्तु दरवेशों की फैंकी हुई वस्तु को कोई नहीं उठा सकता। देखो आग जल रही हो तो उसके कोयले बन जाते हैं। कोयले को हाथ में उठा लो, पल दो पल हम हाथ में इधर-इधर घुमा सकते हैं। जो फकीर होते हैं, सन्त होते हैं, परमेश्वर के प्यार में रंगे हुए होते हैं, इसी तरह लोहे को आग में फैंक दो, उस लोहे को तो स्पर्श करते ही हाथ जल जायेगा। लोहे को जलती आग में से उठाना हर एक के वश की बात नहीं। अत: सन्तों की मारी हुई, फैंकी हुई वस्तु को कोई नहीं उठा सकता परन्तु परमेश्वर की फैंकी हुई को सन्त उठा सकते हैं।'' इस तरह से बाणी में फ़रमान है -

धारना - मेरी बंनी होई भगत छुडाउंदे ने,
भगतां दी बंनी ना छुटदी - 2, 2
मेरे पिआरे भगतां दी बंनी ना छुटदी - 2, 2
मेरी बंनी होई भगत छुडाउंदे ने,........ -2

मेरी बांधी भगतु छुडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि।
एक समै मोकउ गहि बांधै तउ फुनि मो पै जबाबु न होइ॥ पृष्ठ - 1252

महाराज कहते हैं, ''भाई गुरसिख! यह आदि जुगादि से ही चली आ रही रीत है कि जो अभेद अवस्था का गुरसिख है, वह जो वचन कर देता है, उसे गुरू बदला नहीं करते क्योंकि मर्यादा पुरुषोत्तम ने बान्धी हुई है। कृष्ण महाराज जी के अपने बहुत से पुत्र पौत्र थे। कलयुग का समय आ गया। बच्चों ने एक गुस्ताखी कर डाली। एक लड़का साथ लिया, उसके पेट पर एक बड़ा कटोरा बान्ध कर तथा ऊपर से कपड़ा लपेट दिया ताकि दिखाई न दे। स्त्रियों जैसे कपड़े पहना दिये। पाँच सात लड़कों ने और भी लड़कियों जैसे कपड़े पहन लिये। लड़के और लड़कियों के रूप में इकट्ठे होकर अकेले-अकेले सन्त के पास जाते हैं। उनके पास जाकर कहते हैं, ''बाबा जी प्रणाम! नमस्कार! आर्शीवाद लेते हैं।'' कहते हैं, ''बाबा जी! यह लड़की आपसे शर्माती है। आप पूछ नहीं सकती, कृपा करके यह बता दीजिये कि इसके गर्भ से लड़का होगा या लड़की?'' सन्त चुप कर जाते हैं। जानते सभी कुछ हैं। इस तरह मसखरी करते-करते ऋषि दुर्वासा के पास पहुँच गये जो उनके कुल गुरू थे। जब उनके पास जाकर प्रश्न किया तो साध संगत जी! साधुओं की भी प्रकृति होती है, तत्व होते हैं? कई साधु तमोगुणी वृत्ति के होते हैं, गालियां ही निकालते रहते हैं। अपने पास किसी को नहीं फटकने देते। कुछ सतोगुणी वृत्ति के होते हैं, सभी को अपने पास आने देते हैं, सभी की बात मान लेते हैं। कई रजोगुणी वृत्ति एक होते हैं, परोपकार करते हैं, स्कूल बनवाते हैं, दूसरों की भलाई के कार्य करते हैं, यह सब अपनी-अपनी वृत्तियों के कारण होता है। आन्तरिक ज्ञान का कोई अन्तर नहीं हुआ करता। आन्तरिक ज्ञान तो सभी का एक जैसा ही हुआ करता है। गृहस्थी का भी एक ही होता है, साधु का भी एक होता है, ज्ञान में कोई अन्तर नहीं होता। केवल प्रकृति के गुणों के कारण उसके स्वभाव में अन्तर हुआ करता है और साधु असंग हुआ करते हैं, जो प्रकृति के स्वभाव के अनुसार इनकी इन्द्रियां काम करती हैं। वे इन्द्रियों से परे रहता है। वह अपने आप को त्रिगुणों के स्वभाव से असंग रखता है। स्वंय पूरी तरह से निसंग तथा निर्लेप रहते

हैं।

अत: उनके पास गये। उनकी प्रकृति में तमोगुण अधिक था। गुस्सा आ गया, ''ये बच्चे इतनी गुस्ताखी करते हैं कि साधु सन्तों के पास आकर उनका मान-आदर तो क्या करना उलटा उनके साथ मखौल करते हैं, उनके साथ मज़ाक करते हैं'' -

संतन सेती मसकरी कुल डोबण की रीत।

जिसने डूबना हो वह सन्तों के साथ मसखरी करले -

दुरबासा सिउ करत ठगउरी जादव ए फल पाए॥ *पृष्ठ - 693*

उन बच्चों ने दुर्वासा ऋषि का मखौल उडाया। पहली बार मना किया। उन्होंने कहा, ''नहीं बेटा! ऐसी बातें नहीं किया करते।'' बच्चे बोले, ''नहीं, बाबा जी! हमने तो जरूर पूछना है।'' ऋषि बोले, ''फिर बताऊँ?'' क्रोध से भर गये। नेत्र लाल हो गये। दूसरी बार फिर और तेज़ में आकर कहा, ''बताऊं फिर?'' लड़के भी न माने और बोले, ''बताओ।''

कृष्ण जी के पुत्र थे। थोड़े से गुस्ताख थे कि हमारे तो पितामह 16 कलाएं सम्पूर्ण अवतार हैं। अत: झुके नहीं बल्कि और भी ऊँची आवाज़ में बोले।

तीसरी बार फिर दुर्वासा जी ने गर्ज़ कर कहा, ''फिर बता ही दूँ?'' लड़के भी और तेज़ आवाज़ में गर्ज़ते हुए कहते हैं, ''बता दो, फिर फिर की क्यों रट लगाई हुई है?''

दुर्वासा जी ने कहा, ''जाओ, इसके पेट में से वह पैदा होगा जो तुम्हारे वंश का नाश करेगा।'' श्राप सिर ले लिया। वापिस लौट आये। रोने लग पड़े। कृष्ण महाराज जी के पास आकर सारी व्यथा सुनाते हैं। उधर जब कपड़े उतारे तो कटोरा गायब हो गया, उसके स्थान पर एक मूसल निकल आया। कृष्ण महाराज जी के पास आकर बोले, ''महाराज! दुर्वासा ऋषि ने हमें श्राप दे दिया।''

कृष्ण महाराज कहते हैं, ''बेटे! साधु बिना मतलब के न तो किसी को श्राप देते हैं और न ही वर देते हैं। सेवा कर लो, प्रसन्न कर लो। प्रसन्न होने पर उनके मुख से वर निकल जाता है, वचन निकल जाता है, वही वरदान के रूप में होता है। नाराज़ कर लो, दुखी या तंग कर दो तो फिर श्राप ही हो जाया करता है। क्या श्राप दिया है?'' बच्चे बोले, ''महाराज! एक लड़के के पेट पर लोहे का कटोरा बान्ध कर उसे ऐसे बना लिया जैसे गर्भवती महिला हो। घर से तो पेट पर कटोरा बान्ध कर चले थे, अब उसका यह मूसल बन गया और साथ ही उन्होंने यह ही कहा कि इसके गर्भ से वह पैदा होगा जो तुम्हारे कुल का खातमा करेगा। आप 16 कला सम्पूर्ण अवतार हो, श्राप को बदल सकते हो, उनके वचनों को टाल सकते हों।'' कृष्ण महाराज कहते हैं, ''नहीं! मैं उनके वचनों को नहीं टाल सकता। यह निरंकार का आदि से हुक्म है।''

मेरी बांधी भगतु छुडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि।
एक समै मो कउ गहि बांधै तउ फुनि मो पै जबाबु न होइ॥ *पृष्ठ - 1252*

मुझे बान्ध लें फिर मैं जवाब नहीं दे सकता। नामदेव के देहुरा (मन्दिर) को फेरते हैं, धन्ने की गायें भी चराता फिरता है। वह जो करोड़ों ब्रह्मण्डों का मालिक है जिसका न कोई आदि है न अन्त है। प्यार के वशीभूत होकर चने की रोटियां खाता फिरता है, लस्सी के गिलास भर-भर कर पी रहा होता है क्योंकि प्यार में बन्ध जाता है। परमेश्वर को वश में करने का और कोई तरीका नहीं है। सभी का मालिक है वह, परन्तु सन्तों तथा भक्तों के अन्तसकरण में कैद हो जाया करता है।

सो कृष्ण महाराज कहने लगे, ''मैं नहीं छुडा सकता। मैं अपने प्यारे का वचन नहीं बदल सकता। जाओ, प्रायश्चित कर लो। प्रभास क्षेत्र में चले जाओ। वहाँ पर जाकर इसे रगड़ो और जब छोटा हो जाये तो समुद्र में फैंक देना। साथ ही कृष्ण जी ने यह भी कहा था कि शराब मत पीना।'' प्रभास क्षेत्र में चले गये। वहाँ पर मूसल को रगड़-रगड़ कर समुद्र में फैंक दिया। एक छोटा सा हिस्सा, मामूली सा चोंचदार बच गया, वह उनके हाथों से फिसल गया, नीचे मछली थी, मछली ने उसे निगल लिया फिर गुस्ताखी कर बैठे, वहाँ पर शराब पी ली और आपस में लड़ पड़े तथा एक दूसरे को मार दिया। एक भी न बचा -

दुरबासा सिउ करत ठगउरी जादव ए फल पाए॥ पृष्ठ - 693

कृष्ण महाराज अकेले रह गये। आपने बस्ती छोड़कर, जंगलों में जाकर, एक वृक्ष के साथ आसन लगा लिया तथा पैर घुटने पर रख लिया। इधर एक बधिक, जिसने एक मछली पकड़ी थी। मछली के पेट में से वही छोटी सी मूसल की चोंच निकल आई और उसने उसे अपने तीर की नोंक पर लगा लिया जो बहुत तीखी थी। वही तीर उसने हिरण का भ्रम होने से, कृष्ण जी के पैर पर जो पदम चमक रही थी, ज़ोर से खींच कर मारा, जो कृष्ण जी महाराज की बक्खी में जाकर लगा। भाई गुरदास जी लिखते हैं कि -

जाइ सुता परभास विचि गोडे उते पैर पसारे।
चरण कमल विचि पदमु है, झिलमिल झलकै वांगी तारे॥भाई गुरदास जी, वार 10/23

तारे की तरह झिलमिल-झिलमिल कर रहा है -

बधिकु आइआ भालदा मिरगै जाणि बाणु लै मारे॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/23*

उसने भ्रम से मृग समझा। मृग समझ कर बक्खी में बाण मारा -

दरसन डिठोसु जाइकै करण पलाव करे पूकारे॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/23*

जब पास पहुँचता है, उस समय बहुत विलाप करता है, मैंने तो बहुत बड़ा भारी पापी किया और कृष्ण महाराज जी को बाण मार दिया। इस प्रकार से प्रार्थनाएं करता है -

धारना - मिरग जाण के बाण मैं मारिआ,
भुल्ल मेरी बखशीं मालका - 2, 2
भुल्ल मेरी ओ, बखशीं मालका - 2, 2
मिरग जाण के बाण मैं मारिआ,........ -2

जाइ सुता परभास विचि गोडे उते पैर पसारे।
चरण कमल विचि पदमु है, झिलमिल झलकै वांगी तारे।
बधिकु आइआ भालदा, मिरगै जाणि बाणु लै मारे।
दरसन डिठोसु जाइकै करण पलाव करे पूकारे।
गलि विचि लीता क्रिशन जी अवगुणु कीता हरि न चितारे।
करि किरपा संतोखिआ, पतित उधारणु बिरदु बीचारे।
भले भले करि मंनीअनि बुरिआं दे हरि काज सवारे।
पाप करेंदे पतित उधारे॥ *भाई गुरदास जी, वार 10/23*

इतने वचन समझाने के पश्चात गुरू पांचवे पातशाह कहने लगे, ''देख भाई बुद्धू! द्वापर युग में 16 कला सम्पूर्ण अवतार ने अपनी कुल का नाश करवा लिया पर साधु के वचनों न बदला।'' पातशाह! मैं तो बर्बाद हो जाऊंगा। कर्ज़ा लेकर तो मैंने आवा लगाया है। सुना है, संगत की की गई सेवा कभी

निष्फल नहीं जाया करती। यदि संगत की की गई सेवा निष्फल चली गई तो सारे जितने भी वचन हैं, इसके अन्दर, वे सभी रद्द हो जायेंगे।'' महाराज जी कहते हैं, ''हाँ, तेरे आवे रहेंगे तो पीले ही परन्तु बिकेंगे पक्कों के भाव।'' आवा खोला गया, पीले के पीले पड़े हैं, कोई भी नहीं खरीदता। बरसात इतनी हुई कि किले की दीवार गिर गई, बेअन्त मकान गिर गये। बेअन्त घर गिर गये। किसी भी आवे में ईंट न रही। सारी ईंटे भट्ठों से खरीद ली गईं। इधर किले की दीवार के लिये भी कहीं से भी ईंट नहीं मिलती। जब भाई बुद्धू के आवे (भट्ठे) पर ईंटें खरीदने आए तो भाई बुद्धू कहता है, ''मेरे आवे बेशक पीले हैं पर मैंने बेचने पक्कों के भाव हैं।'' इस प्रकार पक्कों से भी मंहगे बेच दिये। इस तरह से फ़रमान है –

चारि पदारथ जे को मागै। साध जना की सेवा लागै॥ पृष्ठ - 266

फल भी प्राप्त होते हैं और दरगाह में जाकर भी निश्चिन्त रहता है –

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ।
ता दरगह बैसणु पाईऐ।
कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ पृष्ठ - 26

धारना - दरगह मोख दुआर, इथे मिलदीआं ने वडिआईआं - 2, 2
इथे मिलदीआं ने वडिआईआं - 4, 2
दरगह मोख दुआर,................ -2

सतिगुर की सेवा चाकरी..................॥ पृष्ठ - 586

कैसी है? महाराज जी कहते हैं –

.... सुखी हूं सुख सारु॥ पृष्ठ - 586

सुख देने वाली तथा सुखों का खजाना है –

ऐथै मिलनि वडिआईआ दरगह मोख दुआरु॥ पृष्ठ - 586

यहाँ पर बडप्पन मिलता है, जिस चीज़ की इच्छा करता है, वही मिल जाती है और दरगाह में जाकर मोक्ष द्वार मिल जाता है। महाराज जी (सन्त राड़ा साहिब वाले) जब ढक्की साहिब छोड़कर, जहाँ अब वर्तमान गुरूद्वारा राड़ा साहिब है, इसके पीछे की ओर पहले झौपड़ियां हुआ करती थीं और उन्हीं छपरियों में महाराज जी भी रहा करते थे। चौथी झौपड़ी थी, जिसके अन्दर मेरा भी आसन लगा रहता था। भजन बन्दगी में बड़ा आनन्द आता था। अमृत बेला में जाग जाना, कोई भी किसी के साथ बोलता नहीं था, मौन व्रत रखा करते थे। पास ही गाँव हांसा है। वहाँ के निवासी स. मोहन सिंघ जी जिनका कारोबार दिल्ली में चलता था। उस समय उनकी तेल मिल में फरनिशिंग की कम्पनी थी। वे भी आए और आकर महाराज जी के पास प्रार्थना की। कहने लगे, ''यदि आपकी आज्ञा हो तो मैं छोटा सा स्थान आप जी के रहने के लिये बनवा दूँ? आपकी अनुमति चाहिये और आप बताइये कितना बड़ा चाहिये?'' महाराज जी कहते हैं, ''कितना होना चाहिये? अकेले के लिये ही चाहिये। नीचे तपोस्थान हो और ऊपर कोई कमरा या बरसाती हो जाये। इस तरह का बनवा दो, यदि तुम्हारी इच्छा ही है अन्यथा इस छपरी में हमारे दिन बहुत बढ़िया बीत रहे हैं –''

भली सुहावी छापरी जा महि गुन गाए॥ पृष्ठ - 745

महाराज जी कहते हैं, ''हमें तो कोई फर्क नहीं पड़ता, न छप्परी से कोई फर्क पड़ना है और न ही महल बन जाने से कुछ पड़ने वाला है? महल की अपेक्षा झौंपड़ी सतोगुणी अधिक है। आपने

दिल्ली से ओवरसीयर भेज दिया। वहीं से ही नक्शा भी बनवा कर भेज दिया। फिर तपोस्थान बनना शुरू हो गया। पहली मंजिल बनी, दूसरी बनी, तीसरी बनी, चौथी मंजिल पर पहुँचते-पहुँचते एक गुम्बद सी बन गई। एक चारपाई जितनी जगह थी। उसमें थोड़ा सा सामान रखने के लिये थोड़ा सा स्थान था और चारों ओर बरामदा था। जब बनकर तैयार हो गया, अभी ईंटें उसके अन्दर ऐसे ही इधर-उधर टूटी फूटी पड़ी थीं। स. मोहन सिंघ जी भी दिल्ली से आ गये। अन्दर प्रवेश के लिये तैयारी होने वाली थी, मैं भी वहीं बैठा था और वह भी आकर महाराज जी से कहने लगे, ''महाराज! मैं काफी देर से इधर आ न सका। मैंने यह ओवरसीयर तथा सेवादार आदि भेज दिये थे। पता नहीं आपकी मन पसन्द का बना है या नहीं?'' महाराज जी कहते हैं, ''मोहन सिंघ! यह तो बहुत अच्छा बन गया है। बड़ी खुशी हुई।'' मोमबत्ती जल रही थी। इधर-उधर बिखरी हुई ईटों के बीच में कुर्सी पर महाराज जी बैठे हुए थे। हम दोनों ईटों को उधर उधर करके बैठे थे। महाराज जी के मुख से वचन निकले, ''मोहन सिंघ! एक शेर ने साधुओं के लिये, एक रात बिताने के लिये अपनी नाद खाली कर दी थी और इसे इस सेवा का बेअन्त फल प्राप्त हुआ।'' स. मोहन सिंघ जी कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! वह कैसे? कृपा करके बताओ मैं जानता नहीं।'' महाराज जी कहते हैं, ''जिस समय गुरू नौवें पातशाह जी, आनन्दपुर साहिब की तैयारी करवा रहे हैं, इमारतें बन रही हैं तो वहाँ एक पीर मौले शाह, रोपड़ का आ गया। उसने तर्क किया। गुरसिखों से कहा -''

जिनी चलणु जाणिआ से किउ करहि विथार॥ *पृष्ठ - 787*

पीर कहता है, ''बाणी तो आपकी ऐसे कहती है और गुरू बड़े-बड़े महल बनाने में लगे हुए हैं, बड़े-बड़े कमरे बनवा रहे हैं, बावलियां बनवां रहे हैं। इन्होंने यहाँ से नहीं चले जाना?'' गुरसिख मौन होकर रह गये। महाराज जी के पास जाकर प्रार्थना की, ''पातशाह! रोपड़ वाले पीर ऐसे कहते हैं।'' महाराज जी कहते हैं, ''कोई बात नहीं। आसन लगा दो, भोजन, पानी से सेवा करो, उसके बाद उनसे बात करेंगे।'' अतः भोजन खिलाया तथा रिहायश के लिये स्थान दिया और थोड़ी देर विश्राम किया। उसके बाद बेनती की और आप बिराजमान हो गये। जब लेट गये तो उस समय महाराज जी सपने में आए और कहने लगे, ''आओ पीर जी सैर करवायें।'' स्वर्गों में ले गये। स्वर्ग एक नहीं है, शास्त्रों के अनुसार अनेक स्वर्ग है। एक से एक बढकर हैं। उन स्वर्गों में एक बहुत बढ़िया स्वर्ग की सैर करवाने लगे। पीर जी ने कहा, ''यहाँ देवता बड़े प्रसन्न रहते हैं। पता नहीं इन्होंने कौन सा पुण्य किया है जिसके फलस्वरूप इसे इतना सुख प्राप्त हुआ है।'' महाराज जी कहते हैं, ''पूछ ले।'' पीर बोला, ''ऐ फरिश्ते! तूने संसार में कौन सा दान किया जिसके फलस्वरूप तुम इतने सुखी रहते हो।'' फरिश्ता बोला, ''पीर जी! मैंने कोई दान नहीं किया। मैं मनुष्य नहीं था। मैं पिछले जन्म में शेर यौनि में था। तामसी यौनि में मांस खाता था। जो भी चीज़ मिल जाती उसी का मांस खाता था। मेरी बुद्धि बिल्कुल मन्द थी। मैं किसी पर रहम नहीं किया करता था। एक दिन दैव नेत से बरसात हो रही थी। ठण्ड का अवसर था, बाहर ओले पड़ रहे थे, बिजली बहुत तेज़ चमक रही थी। मैं भी ठण्ड से ठिठुरता हुआ, अपनी नांद की ओर भागा। आगे आकर देखा तो मेरी नांद में तीन चार सन्त बैठे हैं। उन सन्तों के दर्शन करते ही मेरी बुद्धि पर ऐसा प्रभाव पड़ा कि मेरे अन्दर सोचने की शक्ति आ गई, मैं तो तामसी यौनि में खूब ताकतवर था, मुझे सर्दी तो लगनी नहीं थी और यदि मैं अन्दर गया तो ये डर जायेंगे और यदि मैंने इनमें से किसी को मारकर खा लिया तो पता नहीं मुझे कौन सा पाप लगेगा? अतः मैं वहीं से ही वापिस लौट आया और मेरी ठण्ड के कारण मौत हो गई। मेरा शरीर ठण्ड के कारण जकड़ा गया और मर गया। मुझ मृतक को एक रात भर के लिये सन्तों को अपना नांद देने के बदले उस स्वर्ग की प्राप्ति हुई है।'' इतनी बात सुनी और तुरन्त ही उसकी आंख खुल गई। महाराज जी ने बुला लिया। कहते हैं, ''आओ पीर जी!

बताइये क्या संशय है?'' पीर बोले, ''पातशाह! संशय तो बहुत गहरा था परन्तु अब नहीं रहा।'' महाराज जी कहते हैं, ''पीर जी! अपने लिये कुछ नहीं बना रहे जो कुछ भी बन रहा है, संगत के लिये बन रहा है। दूर दराज़ से संगत ने आना है, थके मांदे होंगे, उन्हें रोटी कपड़ा मकान, तीन चीज़ों की जरूरत पड़ेगी, झुग्गी झौंपड़ियां, मकान बना रहे हैं, सिर ढकने के लिये। गर्मी, सर्दी, बरसात, ठण्ड से बचने के लिये रिहायश बनवा रहे हैं। बावलियां इसलिये बनवा रहे हैं ताकि उन्हें पीने के लिये, ठण्डा पानी मिल सके और तो हम कुछ भी नहीं कर रहे। हमने अपने लिये तो देख लो यह कच्चा सा कोठा बनाया है।'' पीर जी कहते हैं, ''महाराज! मेरा तो संशय निवृत्त हो गया। अब कोई संशय नहीं रहा क्योंकि यह तो बहुत बड़ा पुण्य है।''

महाराज जी कहते हैं, ''मोहन सिंघ जी! एक रात का कितना महान फल प्राप्त हुआ? अब तुम बताओ तुम्हें गुरू नानक पातशाह से क्या दिलवाये? क्योंकि यहाँ पर बैठकर हमने अकाल पुरुष के साथ एक चित्त होकर बन्दगी करनी है तथा उसका बड़प्पन तुझे भी मिलना चाहिये।'' स. मोहन सिंघ जी कुछ न बोले। दूसरी बार फिर वचन किया। आपने और भी सिर झुका लिया। तीसरी बार महापुरुषों ने फिर वचन किया, ''बोलते नहीं हो?'' फिर भी वे कुछ न बोले, उस समय महापुरुषों के मुख से अपने आप ही सहज वचन निकले, ''जाओ! तुम्हारे घर में गुरू नानक की कृपा से दीन भी होगा और दुनियां भी। प्रभुता पाकर आप भूलेंगे नहीं और गुरू को याद रखेंगे।'' अत: यह बड़प्पन मिलता है और दरगाह में भी मान मिलता है।

कर्नल लाल सिंघ जी पटियाला फौज में थे। आपने यू. पी. में फार्म ले लिया और नानक मत्ते की सेवा भी अपने हाथ में ले ली। रीठा साहिब के लिये 31 बीघे जमीन भी लेकर दी। बगेश्वर का गुरूद्वारा स्थापित करवाया जो सरकारी कागज़ों में तो था परन्तु लोगों ने उस पर कब्ज़ा कर लिया था। अलमोड़े का गुरूद्वारा पूरी तरह से खत्म होने जा रहा था, उनकी वज़ह से बच पाया और भी जहाँ-जहाँ उन्हें पता चलता, वहीं पर जाकर सेवा करते थे। जब अन्त समय आया तो वह दिल्ली में आकर पूरे हो गये। उनके लड़कों स. राजिन्द्र सिंघ बिग्रेडियर जो बाद में मेजर जनरल थे, हरमिन्दर सिंघ ऐयर कमांडर से मैंने पूछा, ''कर्नल साहिब ने शरीर किस तरह छोड़ा? मुझे उनकी आखरी बात चीत बताओ।'' वे कहने लगे, ''जी, अन्त समय में ऐसा हुआ, हम दोनों हस्पताल में इनके पलंग के पास खड़े थे। वालिगंटन हस्पताल में लेटे हुए थे, अचानक बोलते-बोलते चुप हो गये और हमारे चाचा डा. मुंशी सिंघ ने कहा, लाल सिंघ मुझे पहचानता है या नहीं, बता मैं कौन हूँ?'' हम सभी के नाम बताये। हम लगभग 7-8 लोग थे। इतना कहकर चुप हो गये। कर्नल साहिब बोले, ''मुझे छोड़े मत, मुझे इतना आनन्द आ रहा है, जो मैंने सारी ज़िन्दगी में भी नहीं देखा। मन को बहुत ही शान्ति मिल रही है।'' फिर उन्होंने बताया कि काफी देर खड़े रहे। हमने नब्ज़ देखी, ठीक चल रही थी और इस तरह 10-15 मिनट बीत गये। नेत्र खोले देखने लग गये और बड़ी प्रसन्नता के साथ जोर से बोले, ''ले भाई! गुरू नानक साहिब आ गये, वे देखो सामने। बोल गुरू नानक देव की जय! बोल गुरू अंगद साहिब की जय! दसों पातशाहियों की जय बुलाकर, कहते हैं, पातशाह आ गये। दोनों हाथ जोड़ कर ऐसे करने लगे जैसे नमस्कार करते हैं। कहने लगे, अच्छा भाई, मैं तो अब चला वाहिगुरू जी का खालसा, वाहिगुरू जी की फतह।'' एक हाथ इधर रख लिया, एक दूसरी तरफ रख लिया। जब हमने नब्ज देखी तो वहाँ कुछ भी नहीं था। सेवा का फल क्या हुआ कि गुरू नानक पातशाह स्वंय लेने के लिये आये। इसलिये महाराज जी फ़रमान करते हैं -

धारना - दरगह मोख दुआर,
इथे मिलदीआं ने वडिआईआं - 2, 2

मिलदीआं ने वडिआईआं,
इथे मिलदीआं ने वडिआईआं - 2, 2
दरगह मोख दुआर, ... -2

सतिगुर की सेवा चाकरी सुखी हूँ सुख सारु।
ऐथै मिलनि वडिआईआ दरगह मोख दुआरु॥ ***पृष्ठ - 586***

यदि गुरू की सेवा की जाये तो जन्म मरण का दुख खत्म हो जाता है -

चिंता मूलि न होवई अचिंतु वसै मनि आइ॥ ***पृष्ठ - 587***

वाहिगुरू मन में आकर बस जाता है। अचिन्त की अवस्था, जिसमें कोई चिन्ता न रहे, बिना किसी गम की अवस्था सेवादार के अन्दर आकर बस जाती है -

इकि सतिगुर की सेवा करहि चाकरी हरि नामे लगै पिआरु।
नानक जनमु सवारनि आपणा कुल का करनि उधारु।। ***पृष्ठ - 552***

एक तो अपना जन्म संवार लिया फिर दूसरों का भी भला कर लिया। महाराज कहते हैं 21 कुलों का उद्धार कर देता है -

हरि का सेवकु सो हर जेहा। भेदु न जाणहु माणस देहा।
जिउ जल तरंग उठहि बहु भाती फिरि सललै सलल समाइदा॥ ***पृष्ठ - 1076***

कहते हैं, वह तो परमेश्वर का ही रूप हो जाया करता है। जो सेवा नहीं करता, हुक्म दिये जाता है, ऐसे कर लो, वैसे कर लो, खुद दूर खड़ा रहता है, मामूली सी भी गर्द नहीं गिरने देता। साध संगत जी! यह जो गर्द होती है यह चरण धूल कहलाती है। इसके अन्दर अकसीर है। इसके अन्दर दुखियों के दुख दूर करने की समर्थ होती है। इसके अन्दर विघ्नों का नाश करने की समर्थ होती है क्योंकि यहाँ पर परमेश्वर के प्यारों ने हरि यश किया होता है। दरियां नहीं झाड़ता, कपड़ों पर धूल गिर जायेगी? बहुत बड़ी नियामत से वंचित रह जाया करता है और महाराज जी ने यहाँ तक कहा है, ''सेवा न करने वाले आदमी को, आदमी मत कहो, वह तो मरा हुआ आदमी है, मुर्दा है।''

गुरू दसवें पातशाह जी के हजूर संगत बैठी है, हरि यश गाया जा रहा है। उस समय आपके मुख से 'पानी' शब्द निकला। एक बहुत सुन्दर बालक पानी लेकर आता है। महाराज जी ने कटोरा पकड़ लिया और साथ ही साथ उस बच्चे के हाथ देखे, जो बड़े ही कोमल थे।

गुरू महाराज जी ने कहा, ''बेटा! तेरे हाथ बहुत कोमल हैं।'' बालक बोला, ''पातशाह! आपकी दी हुई अमीरी, हमारे घर में बहुत है। कभी कोई काम नहीं किया। इसलिये कोई भी काम न करने के कारण हाथों की कोमलता, सुन्दरता नहीं बिगड़ती।''

महाराज जी कहते हैं, ''प्रेमी! कभी संगत की चरण पादुकाएं साफ की हैं।''

''नहीं महाराज।''

''दरियां झाड़ कर कभी बिछाईं हैं?''

''नहीं पातशाह! हमारे पास बहुत नौकर चाकर हैं, हम नौकरों को इस कार्य में लगा देते हैं।''

''कभी पंखा झुलाया है?''

''नहीं, महाराज।''

''कभी संगत के जूठे बर्तन साफ किये हैं?''

''नहीं पातशाह।''

''कभी झोका (चूल्हे में ईंधन) लगाया है?''

''नहीं पातशाह! मेरा तो आज पहला दिन है कि मैंने आप जी को जल का कटोरा उठा कर दिया है। आज तक तो मैं आप ही मांगता रहा, मैंने किसी को दिया नहीं।'' महाराज जी ने पानी बिखेर दिया। सारी संगत के मन में विचार उठा कि महाराज जी से इस बात का निर्णय करवायें, ऐसा क्यों किया है? महाराज जी जो सर्वज्ञ हैं, कहने लगे, ''क्या संशय है?'' एक सिंघ खड़ा हो गया, कहने लगा, ''पातशाह! यह बालक पानी लेकर आया, आप जी ने कई वचन किये जो हमें सुनाई नहीं दिये, आप जी ने पानी क्यों नहीं पीया, बिखेर क्यों दिया? इसके अन्दर क्या भेद छिपा है? आप समझाने की कृपा करें।''

महाराज जी कहते हैं, ''आप में से कोई ऐसा है जो मुर्दे के हाथ का स्पर्श किया जल पी लेगा?''

सभी कहते हैं, ''महाराज! मुर्दे के स्पर्श की बात तो एक ओर रही, यदि श्मशान भूमि तक मुर्दे के पीछे चले जाएं, जब तक आकर नहाते नहीं, कपड़े नहीं धोते या बदलते नहीं हाथ पाँव नहीं धोते, मुख में कुछ भी नहीं डालते अर्थात खाते ही कुछ नहीं हैं।'' महाराज जी ने कहा, ''फिर हम पानी कैसे पी लेते?'' रमज़ समझ न आई। महाराज जी ने फिर कहा, ''आपको गुरू नानक देव जी महाराज की बाणी भूल गई? उन्होंने मुर्दा किसे कहा है?'' सभी चुप हैं किसी के दिमाग में कुछ नहीं आ रहा फिर आप ही कृपा करके फ़रमान करते हैं –

धारना – मृतक कहीए नानका, मृतक कहीए नानका – 2, 2
जे प्रीत नहीं भगवंत – 4, 2
मृतक कहीए नानका, ... – 2

महाराज जी ने फ़रमान किया, ''प्यारे! दो प्रकार के मुर्दे हुआ करते हैं। एक तो मुर्दा वह होता है जिसके शरीर में से चेतन कला निकल जाये। एक मुर्दा वह होता है जिसके हृदय में प्यार न हो, बेशक उसके अन्दर कितने ही उत्तम गुण क्यों न हों –''

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत॥ पृष्ठ – 253

पाँच खूबियां एक ही व्यक्ति में अति अर्थात बहुत ही उच्च कोटि की क्यों न हों – सुन्दरता का कोई अन्त न हो, उच्च कुल से सम्बन्ध रखने वाला हो, बातचीत में इतना चतुर हो कि कोई बातों में आगे न आ सके, घंटों बोल सकता हो। मुख से ज्ञानी हो, ज्ञान तो देता हो, परन्तु स्वंय करनी से अनुभव हीन हो, भाव मिथ्या ज्ञानी हो। बेअन्त धनी हो। यदि उसके अन्दर प्यार नहीं है तो वह मृत समान है –

मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥ पृष्ठ – 253

प्यार जिन्दगी होती है। यदि प्यार से हीन है तो मुर्दा है –

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ। नानक अवरु न जीवै कोइ।
जे जीवै पति लथी जाइ। सभु हरामु जेता किछु खाइ॥ पृष्ठ – 142

परमेश्वर के प्यार के बिना जो जीता है, महाराज जी कहते हैं, वह हराम का खाता है। उसकी इज्जत

दिन रात लुट रही है। सो प्रेमी! हम इस मुर्दे के हाथों का स्पर्श किया पानी कैसे पी लेते? तथा दूसरी बात भाई गुरदास जी जिनकी बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब जी की कुंजी होने का मान प्राप्त है, आप बहुत ही विस्तार के साथ इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – धिरकार हत्थां पैरां नूं, धिरकार हत्थां पैरां नूं, – 2
बाझ गुरां दी सेवा, धिरकार हत्थां पैरां नूं, ... –2

मानस शरीर के सभी अंगों की गिनती करते हुए आप बताते हैं –

ध्रिगु सिरु जो गुर न निवै गुर लगै न चरणी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/10

धिक्कार है उस सिर को जो गुरू के चरणों में आकर नमस्कार नहीं करता क्योंकि नमस्कार करने से हमारे जो पूर्व कर्म होते हैं, वे दग्ध हो जाया करते हैं। अच्छे कर्म जो अभी फल नहीं देते, वे सामने बाहर आ जाया करते हैं। बहुत से प्रेमी होते हैं, दूर से खड़े-खड़े ही नमस्कार करने की बजाए, थोड़ा सा सिर झुकाकर बैठ जाते हैं। नमस्कार नहीं करते कहते हैं, धिक्कार है। बहुत से तो कभी नमस्कार करते ही नहीं। इष्ट देव के पास जाते ही नहीं –

ध्रिगु लोइणि गुर दरस विणु वेखै पर तरणी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/10

गुरू दर्शन तो करते ही नहीं और नेत्रों से कुछ और ही देखते रहते हैं –

ध्रिग सरवणि उपदेस विणु सुणि सुरति न धरणी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/10

उपदेश के बिना जो कान हैं, जब तक पाँच प्यारों का उपदेश जिसे प्राप्त नहीं हुआ, गुरू मन्त्र की प्राप्ति नहीं हुई, कहते हैं उसके कानों को धिक्कार है। उससे भी ज्यादा धिक्कार है, जिसने सुन लिया, फिर सुरत में नहीं बिठाता –

ध्रिगु जिहबा गुर सबद विणु होर मंत्र सिमरणी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/10

बेकार के ऊट-पटांग मन्त्रों का जप किये जाता है तथा गुरू शब्द का जप नहीं करता, कहते हैं, उस जिभ्या को भी धिक्कार है –

विणु सेवा ध्रिग हथ पैर होर निहफल करणी।
पीर मुरीदां पिरहड़ी सुख सतिगुर सरणी॥ भाई गुरदास जी, वार 27/10

इस प्रकार मानस देही का जो परम कर्तव्य है, नाम जपना तथा सेवा करना –

धारना – तैनूं मानस देही मिल गई,
कर लै सेवा पूरे सतिगुर दी – 2, 2
कर लै सेवा जी, पूरे सतिगुर दी – 2, 2
तैनूं माणस देही मिल गई, ... –2

गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई॥ पृष्ठ – 1159

भक्ति करने के लिये तथा गुरू की सेवा करने के लिये साढ़े तीन हाथ का कारखाना सा मिला हुआ है। इसके अन्दर जो रूह है, उसे इसकी पहचान नहीं है। शरीर को ही 'मैं' कहता है, मैं कह कर अनजानपना, हम प्रकट करते हैं, यह तो हमारा मकान है, इन्जन है, मशीन कह सकते हैं। इस मशीन से काम लेना है। एक भक्ति का और एक सेवा का –

गुर सेवा ते भगति कमाई। तब इह मानस देही पाई।
इस देही कउ सिमरहि देव। सो देही भजु हरि की सेव।

भजहु गोबिंद भूलि मत जाहु। मानस जनम का एही लाहु।
जब लगु जरा रोगु नही आइआ। जब लगु कालि ग्रसी नही काइआ।
जब लगु बिकल भई नही बानी। भजि लेहि रे मन सारिगपानी।। पृष्ठ - 1159

जैसे पपीहा पिऊ-पिऊ करता रहता है, इस तरह कर ले, वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू-वाहिगुरू, दिन रात करता जा और साथ ही सेवा कर, दुगुनी तरक्की होगी तथा सेवा का जो महातम है फ़रमान करते हैं कि -

इन्द्रपुरी लख राज नीर भरावणी॥ भाई गुरदास जी, वार 14/18

इन्द्रपुरी तथा लाख राज्यों से भी अधिक है जो संगत की सेवा के लिये पानी भर कर लाता है-

लख सुरग सिरताज गला पीहावणी॥ भाई गुरदास जी, वार 14/18

जो आटा पीस कर लाता है, स्वर्गों का सिरताज जो बड़ा स्वर्ग है, उससे भी अधिक लाखों का है -

रिधि सिधि निधि लख साज चुलि झुकावणी॥ भाई गुरदास जी, वार 14/18

जो चूल्हे में ईंधन डालता है, वह रिद्धियों-सिद्धियों से भी ऊपर की अवस्था को प्राप्त हो जाता है -

साध गरीब निवाज गरीबी आवणी॥ भाई गुरदास जी, वार 14/18

नम्रता जिसके हृदय में आ जाती है -

अनहदि सबद अगाज बाणी गावणी॥ भाई गुरदास जी, वार 14/18

जब बाणी पढ़ता है तो अनहद शब्दों की सुगन्ध उसे प्रतीत होती है। इस प्रकार सेवा और सिमरण दोनों का गुरू महाराज जी ने बहुत बड़ा गुरसिखी में महातम बताया है। गुरू स्वंय सेवा करते हैं। गुरू पाँचवे पातशाह ने कितनी सेवा की। आप गुरू ग्रन्थ साहिब जी की बाणी कितने समय तक लिखवाते रहे। हरि मन्दिर बनवाया, सभी महात्मा सेवा करते हैं। महाराज जी ने कितने कार्य किये, आश्रम बनवाए। किसके लिये? बन्दगी करने वालों के लिये, स्कूल बनवाये, पढ़ने के लिये - कालिज बनवाये, हस्पताल बनवाए, लंगर चल रहे हैं, स्वंय तो उन्होंने कुछ नहीं करना, वे तो दिन रात घूमते-फिरते हैं। यह सारी गुरू की सेवा है साध संगत जी! विद्या पढ़ाना, साज सिखाने, साज बजाने, गुरमत की पुस्तकें लिखना, सभी सेवा है।

इस तरह से सभी को सेवा प्राप्त नहीं हुआ करती। माता गंगा जी की कितनी सेवा है। संगत दूर दराज़ से दर्शनों के लिये आ रही है। माता जी उन्हें रास्ते में ही लंगर खिलाने के लिये दाल की देग सिर पर रख कर ले जाती हैं। गुरू पाँचवे पातशाह रोटियों का टोकरा सिर पर रखे लिये जा रहे हैं, किसी को साथ नहीं लिया, पिपली साहिब में पहुँच कर सभी को भोजन खिलाते हैं। पंखे झुलाते हैं और जब पूछते हैं, गुरसिख कि महाराज हम सेवा करते हैं। महाराज कहते हैं, ''हमें बड़ी खुशी है, सेवा करके हम प्रसन्न होते हैं -

पाणी पखा पीसु दास कै तब होहि निहालु।
राज मिलख सिकदारीआ अगनी महि जालु॥ पृष्ठ - 811

कहते हैं जो सरदारियां, उपाधियां सेवा नहीं करने देतीं, उन्हें आग में जला दे। सेवा करते समय शर्म आती है। कहता है, ''मैं खास आदमी हूँ। मेरे कपड़ों पर गर्द न गिर जाये।'' साध संगत जी, वह गर्द

नहीं है। यह तो अकसीर है। चरण धूलि कहीं मिलती नहीं है, कितने दुख दूर हो जाते हैं, हमने अजमा कर देख लिया है। कहते हैं, "भाई चरण धूल ले आ, ठीक हो जायेगा।" यहाँ पर परमेश्वर के प्यारे इकट्ठे होकर, बैठकर हरि यश गाते हैं। परमेश्वर का सम्बन्ध सभी के हृदयों के साथ जुड़ा हुआ है। सारी धरती पवित्र हो रही है। इसलिये सेवा तो भाग्यशालियों को मिलती है। इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - भागां वाले बंदे, करदे सेवा साधूआं दी- 2, 2
करदे सेवा साधूआं दी - 4, 2
भागां वाले बंदे, ... -2

भाग्यशाली इसलिये क्योंकि धुर दरगाह से सेवा लिखी जाती है। साध संगत जी! जिसकी किस्मत में सेवा लिखी है, वही सेवा करता है –

जा कै मसतकि भाग सि सेवा लाइआ॥ पृष्ठ - 457

बाकी तो सेवा नहीं करते। वे तो खुदगर्ज़ होते हैं। वे तो कहते हैं, ऐसा कर लेंगे तो हमारा वह अमुक काम हो जायेगा। ऐसे कर लेंगे तो ऐसे हो जायेगा। वे तो सौदा खरीदने जाते हैं, निष्काम सेवा तो कोई-कोई करता है। बाकी तो सभी सकामी लोग होते हैं –

जा कै मसतकि भाग सि सेवा लाइआ।
ताकी पूरन आस जिन्ह साध संगु पाइआ॥ पृष्ठ - 457

ऐसी मांगु गोबिंद ते।
टहल संतन की संगु साधू का हरि नामां जपि परमगते॥ पृष्ठ - 1298

अतः सेवा से जो वंचित रह जाता है, नाम से वंचित रह जाता है, उसके पल्ले कुछ नहीं रहता। महाराज जी कहते हैं, उसके पल्ले केवल पश्चाताप ही रह जाता है –

धारना - जावेंगा पछताउंदा, रहि के गुर सेवा तों हीणा - 2, 2
गुर सेवा तों हीणा, रहि के गुर सेवा तों हीणा - 2, 2
जावेंगा पछताउंदा रहि के, ... -2

सेवा करने से बड़प्पन मिलता है और आगे मुक्ति का द्वार खुलता है; सेवा न करने से पछताना पड़ता है –

बिनु सतिगुर सेवे जगतु मुआ ....॥ पृष्ठ - 591

एक-दो-चार-दस नहीं, सारा ही संसार मर गया –

बिनु सतिगुर सेवे जगतु मुआ बिरथा जनमु गवाइ।। पृष्ठ - 591

किसी के काम आया? रोटियां, खा लीं, पानी पी लिया, चीज़ें खा लीं, कपड़े पहन लिये, साथ तो कुछ भी लेकर नहीं गया, दुनियां से जाते समय खाली हाथ जाता है। यदि सेवा की हो तो फिर तो फल मिलता है, यदि सेवा नहीं की –

दूजै भाइ अति दुखु लगा ....॥ पृष्ठ - 591

महाराज कहते हैं, अति अधिक दुख मिलता है –

.........................मरि जंमै आवै जाइ॥ पृष्ठ - 591

मरता है, पैदा हो जाता है, मरता है, पैदा हो जाता है। संसार में आता है –

विसटा अंदरि वासु फिरि फिरि जूनी पाइ॥ पृष्ठ - 591

विष्ठा, गन्दगी में वास मिलता है। बार-बार यौनियों में आता है –

नानक बिनु नावै जमु मारसी अंति गइआ पछुताइ॥ *पृष्ठ - 591*

इसलिये, साध संगत जी! सेवा परमेश्वर को मिलने का एक साधन है, इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - जे मिलणै राम पिआरे नूं - 2, 2
कर लै हरी दी सेवा, जे मिलणै राम पिआरे नूं, ... -2

प्रभु की सेवा कर। परमेश्वर मिल जायेगा। भारत वर्ष में एक रमन नाम के ऋषि हुए हैं। जब ईसाईयों का युग था, उस समय हुए थे। ईसाई भी सेवा बहुत किया करते थे, लेकिन वह रमन ऋषि इनसे भी अधिक सेवा किया करते थे। लोगों में यह बात मशहूर हो गई थी कि रमन को रोज़ परमेश्वर मिलता है। एक दिन ईसाई पादरी, मिशनरी पूछने लगे, ''रमन! हमने सुना है, तुम्हें रोज़ भगवान मिलते हैं? क्या हमें परमेश्वर दिखा सकते हो? उनके दर्शन करवा सकते हो?'' रमन बोले, ''हाँ! कल 8 बजे अमुक स्थान पर आ जाना।'' जगह बता दी और वे वहाँ पहुँच गये, रमन जी वहाँ पर पहले ही पहुँच चुके थे। उसके पास साबुन, पट्टियां, दवाईयां हैं। अन्दर क्या देखता है कि एक दम्पत्ति लेटी हुई है, दोनों को कोढ़ हो गया है। कोई भी उनके पास नहीं फटकता। कोई भी उन्हें जल पानी नहीं देता, उन्हें कोई वस्त्र नहीं देता। इसने पहले तो अपने हाथों से उन्हें भोजन खिलाया, जल-पान कराया, उसके पश्चात उनके घाव साफ किये, उन पर पट्टियां बान्धी। इन दोनों कामों को करते हुए उसे लगभग दो-आढ़ाई घंटे लग गये और वे बैठे बाहर देखते रहे। जब बाहर आये, कहने लगे, ''खुदा मिला तुम्हें? हमें तो पता ही नहीं चला?'' ऋषि ने कहा, ''भले लोगो! परमेश्वर कहाँ है? परमेश्वर अपने लोगों में रहता है, घट-घट में रहता है, सभी के अन्दर है, कोई जगह ऐसी नहीं है, जहाँ परमेश्वर न हो और इससे भी यदि आगे की बात कहें तो परमेश्वर स्वंय ही अनेक रूप धारण किये बैठा है। मैं तो इन लोगों की सेवा करने नहीं आता, मैं तो अपने प्रभु की सेवा करता हूँ। मुझे तो इनके अन्दर प्रभु दर्शन होते हैं।'' महाराज कहते हैं -

मेरे मन सेवहु सो प्रभ स्रब सुखदाता जितु सेविऐ निज घरि वसीऐ॥ *पृष्ठ - 170*

जब दुनियां की सेवा करेंगे तो प्रभु की सेवा करेंगे। सेवा के लिये सारा मैदान खुला पड़ा है। साध संगत जी! एक दो चार ऐसी जगह नहीं है, सारा संसार जहाँ भी मन करता है, जिस क्षेत्र में चाहो, सेवा कर सकते हो। अध्यापक यदि वेतन लेता है और बच्चों को ठीक तरह से पढ़ाता है, तो उसकी सेवा मानी जाती है। डाक्टर यदि फीस लेता है और तन-मन से रोगी का इलाज़ करता है, उसकी सेवा हो जाती है। इसी तरह जहाँ भी कोई है, जिस डयूटी पर है अपना कर्तव्य पूरी निष्ठा से निभा रहा है, तन्खाह भी ले और साथ में सेवा भी करे पूरी तरह से, यही सच्ची सेवा है। गुरू घर की सेवा और नाम जपने की सेवा सबसे उत्तम सेवा है क्योंकि संसार सुखी होता है। जब बन्दगी करने वाला, बन्दगी करता है, संसार से कष्टों के बादल दूर हो जाया करते हैं और वे बिना बताये, अदृश्य रूप में सभी को सुख पहुँचाते हैं।

इस प्रकार गुरू अंगद साहिब महाराज दिन रात एक करके, हर समय गुरू नानक पातशाह की सेवा करते हैं। गुरू महाराज जी से पहले उठते हैं, जल आदि का प्रबन्ध करते हैं। गुरू नानक पातशाह रावी में स्नान करने जाते हैं, आप साथ जाते हैं। रावी में खड़े हो जाते हैं। आप वस्त्र लेकर बाहर खड़े रहते हैं। जब तक पातशाह बाहर नहीं आते, वहीं पर खड़े-खड़े इन्तज़ार करते रहते हैं। अन्य कई प्रकार से लंगर की सेवा करते हैं। बर्तन मांजते हैं, झाड़ू लगाते हैं, संगतों की देख भाल करते हैं, बहु सेवा में उनकी वृत्ति लीन है और एक सैकिन्ड भी बिना सेवा के नहीं जाने देते। सेवा करते-करते गुरू महाराज जी के साथ इतना प्यार पड़ गया कि बाकी सारा संसार मन से भूल गया। प्रीत, प्यार जो होता है, साध

संगत जी! परमेश्वर का रूप प्यार है –

जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुरागु॥ *जापु साहिब*

महाराज जी कहते हैं, ''प्यार के रूप में परमेश्वर सभी ओर फैला हुआ है। वह किसी भी विधि से वश में नहीं आता, यदि आता है तो केवल प्यार से वश में आता है। प्यार का रूप धारण करके हर जगह फैला हुआ है। पौधों को जिन्दगी दे रहा है। हरियाली दे रहा है। सारी सृष्टि में जिन्दगी का सफर चला रहा है। सभी को अपने प्यार में वश करके, सभी की अपनी-अपनी जगह पर डयूटियां लगाई हुई हैं। प्यार से हीन जो व्यक्ति है कहते हैं मुर्दा हुआ करता है। इस प्रकार उनकी प्रीत लग गई और प्रीत भी ऐसी लगी जिसका कोई अन्त नहीं।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - लग गई प्रीत, जल नाल जिवें मच्छी दी - 2, 2
जल नाल जिवें मच्छी दी - 4, 2
लग गई प्रीत, ... -2

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै।
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै।
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै।
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥ *पृष्ठ - 708*

एक पल के लिये भी गुरू नानक पातशाह के पवित्र दर्शनों से नेत्रों को ओझल नहीं करते। हर समय गुरू महाराज के साथ जुड़े रहते हैं। दिन रात सेवा करते हैं। इतनी सेवा और इतना प्यार किया कि गुरू महाराज का जो चित्त है उसकी सुई इनकी ओर खिंचती चली जाती है क्योंकि प्यार एक तरफा नहीं हुआ करता। दोनों ओर से एक जैसा हुआ करता है। किसी को प्यार करो, वह भी प्यार करेगा। किसी से घृणा करो, दूसरी ओर से भी घृणा ही मिलती है। अत: प्यार वालों की जो ज़िन्दगी होती है, वह अलग ही हुआ करती है क्योंकि प्यार सर्वोत्तम चीज़ है, जिससे वाहिगुरू परमेश्वर वश में होता है। इससे बढ़कर और कुछ नहीं –

सभु को तेरै वसि अगम अगोचरा।
तू भगता कै वसि भगता ताणु तेरा॥ *पृष्ठ - 962*

इस तरह प्यार के साथ गुरू नानक पातशाह के पास रह कर, आप सेवा भी करते हैं और जब खाली समय मिलता है तो एक टक गुरू नानक के पवित्र मुखड़े के दर्शन करते रहते हैं। एक पल भर के लिये भी पलक नहीं झपकते। वह भी ऐसा लगता है कि कई साल बीत गये हों दर्शन किये हुए। इस तीव्रता का सभी को पता नहीं हुआ करता। ऐसा उसे ही मालूम होता है जिसके साथ कभी ऐसी घटना घटी हो। आप चरण दबा रहे हैं, सेवा कर रहे हैं, पंखा झुला रहे हैं। गुरू महाराज बिराजमान हैं। थोड़ी देर बाद महाराज जी का चरण हिल जाता है। आपने बेनती की, ''पातशाह! यह क्या कारण है?'' इस प्यार के बारे में लिखते हैं –

भली प्रीत नहि जाइ बखानी॥

कहते हैं, इतना प्यार लगा कि वर्णन ही नहीं किया जा सकता। कहते हैं, पतंगे की प्रीत देखी गई है कि रोशनी, प्रकाश में आकर जल जाता है। मृग की प्रीत घण्डेहेड़े के शब्द सुनने में देखी जाती है और मरने से भी नहीं डरता, शिकारी के हाथों पकड़ा जाता है। भौरे की प्रीत, फूल के साथ देखी गई है। भंवरे की प्रीत मशहूर है, फूल में बैठ जाता है, फूल बन्द हो जाता है और मरा हुआ फिर बाहर निकलता है –

तिन ते तुरन तां पहिचानी।

कहते हैं, गुरू अंगद साहिब की प्रीत, गुरू नानक देव जी के प्रति इससे कम नहीं है। इनसे भी कहीं अधिक है –

सीस देण की होइ जे रजाइ॥ पलक मातर कबहूं न बिलमाइ॥

कहते हैं, यदि गुरू महाराज कह दें, गुरू नानक पातशाह कह दें, ''भाई लहणा शीश चाहिये।'' कहते हैं, अभी जुबान से बाहर शब्द निकलेगा ही नहीं, शीश दे देंगे। बिल्कुल भी विलम्भ नहीं करेंगे। सो आप जी गुरू महाराज जी के हर वक्त साथ रहते हैं। आराम कर रहे हों, बिराजमान है, महापुरुष सोया नहीं करते, गुरू कभी सोया नहीं करते, वे तो दुनियां के कार्य करते रहते हैं। अत: आप के चरण हिलते हैं। जब महाराज जी ने नेत्र खोले, उस समय आप जी ने प्रार्थना की, ''पातशाह! आपके चरण क्यों हिल रहे थे?'' महाराज कहते हैं, ''लहणा! गुप्त बातें हुआ करती हैं?'' अंगद देव जी फिर प्रार्थना करते हैं, ''पातशाह! कृपा करो, पता चल जाये कि चरण क्यों हिलते थे?'' महाराज जी कहते हैं, ''लहणा! स्वर्ग लोक के देवता आया करते हैं फिर वे नमस्कार करके चले जाते हैं –''

सुर पग दोइ बंदन करे पुंन सदन सिधारे॥

कहते हैं फिर वन्दना करके, घरों को चले जाते हैं। ऐसा फ़रमान है –

धारना – करदे डंडउतां जी, सवरगां तों आ के देवते – 2, 2
सवरगां तों आ के देवते – 4, 2
करदे डंडउतां जी .... – 2

सो भाई लहणा! सन्त जो होते हैं, वह परमेश्वर का साकार रूप हुआ करते हैं। निरंकार के दर्शन तो होते नहीं–

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ पृष्ठ – 7

वाहिगुरू के निराकार रूप को तो देखा नहीं जा सकता और इस संसार के देव लोकों के देवता आकर नमस्कार करते हैं। बाणी में ऐसा लिखा है –

धारना – शिव जी खोजदे फिरदे ब्रहम गिआनी नूं – 2, 4

ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर॥ पृष्ठ – 273

क्यों ढूंढते हैं?

नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ पृष्ठ – 273

सो अब समय इजाजत नहीं देता। यहीं से अगली विचार शुरू की जायेगी। अब सभी गुरू सतोतर में बोलो –

– *आनन्द साहिब* –

– *गुर सतोतर* –

– *अरदास* –

7

शान...।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289

मै नाही कछु हउ नही किछु आहि न मोरा।
अउसर लजा राखि लेहु सधना जनु तोरा॥ पृष्ठ - 858

धारना - प्रभ सभ किछु तेरा जी,
मैं किछु नाही, मैं किछु नाही - 2, 2
मैं किछु नाही, मैं किछु नाही - 2, 2
प्रभ सभ किछु तेरा जी, ... -2

मै नाही प्रभ सभु किछु तेरा।
ईघै निरगुन ऊघै सरगुन केल करत बिचि सुआमी मेरा।
नगर महि आपि बाहरि फुनि आपन प्रभ मेरे को सगल बसेरा।
आपे ही राजन आपे ही राइआ कह कह ठाकुरु कह कह चेरा।
का कउ दुराउ का सिउ बल बंचा जह जह पेखउ तह तह नेरा।
साध मूरति गुरु भेटिओ नानक मिलि सागर बूंद नही अन हेरा॥ पृष्ठ - 827

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतनाम श्री वाहिगुरू! कारोबार संकोचते हुए, आप दूर दराज़ से गुरू महाराज जी की हजूरी में सुशोभित हुए, एक महान महान तपस्या कर रहे हो क्योंकि इस तप में और हठ वाले तप में काफी अन्तर है। हठ वाला तप यदि 100 साल किया जाये और अपने पास ये 2-4 घड़ियाँ हों, यदि मन-चित्त एकाग्र करके, गुरू की बाणी गाकर और उ स पर विश्वास करके यदि हृदय में बसा लें, तो वह 100 वर्षों तक धूनियां लगाकर किया जाने वाला तप, इसके मुकाबले में कुछ भी नहीं है क्योंकि इसका फल बहुत अधिक है -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ पृष्ठ - 546

जो सुनते हैं, फिर गाते हैं और फिर जो गुरू की आज्ञा को सत्य मानते हैं, उन्हें कई करोड़ यज्ञों का फल प्राप्त होता है। कई प्रेमियों के मनों में यह विश्वास ही नहीं आता क्योंकि मन का स्वभाव ही ऐसा है कि यह जल्दी-जल्दी किसी बात को नहीं मानता कि मुझे इतने करोड़ यज्ञों का फल मिल जायेगा? इन बातों का पता दरगाह में जाकर लगता है। महाराज जी की बाणी ऐसी नहीं है कि किसी का मन बहलाने के लिये लिखी गई हो। यह सत का मार्ग बताती है। इसने सत के मार्ग पर चलाना है। जीव के दुखों तथा क्लेशों का खातमा करना है, विघ्नों का नाश करना है, बिमारियों का अन्त करना है, परन्तु पहले हम बाणी को सुनें, फिर समझें, फिर उस पर अमल करें। इस प्रकार ये तीन बातें हैं, जिन पर विचार करना है। अत: इसलिये आप एक बड़ा भारी तप कर रहे हो। थोड़ा सहयोग दो ताकि इस

तप में विघ्न न आ जायें। कानों से गुरू की बाणी श्रवण करो, बुद्धि द्वारा विचार करके हृदय में धारण करो और जब बारी आती है तो रसना के साथ ज़ोर-शोर से शब्दों में बोलो। तब हमें पूरा-पूरा लाभ प्राप्त होना है -

कबीर एक घड़ी आधी घरी आधी हू ते आध॥ *पृष्ठ - 1377*

आधी घड़ी से भी आधी घड़ी सवा 6 मिनट की होती है -

भगतन सेती गोसटे जो कीने सो लाभ॥ *पृष्ठ - 1377*

जो भी गोष्ठी कर ली, वचन सुन लिया, उसमें लाभ ही लाभ होता है, घाटे का सौदा नहीं होता। मनमुख की संगत घाटे का सौदा हुआ करती है। यदि मनमुख के पास से भी गुज़र जाओ तो भी घाटे का सौदा होता है। कहते हैं, मनमुख के पास से भी मत निकलो। मन के पीछे चलने वाले और क्रोधी मनुष्य को हाथ भी मत लगाओ क्योंकि इनके स्पर्श से ही अपवित्र हो जाता है -

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दूरहि जाईऐ भागि॥ *पृष्ठ - 1371*

दूर से ही भाग जाओ, पास भी मत ठहरो -

बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु॥ *पृष्ठ - 1371*

यदि सफेद कपड़ा हवा के साथ उड़कर, थोड़ा सा कभी काले बर्तन के साथ भी छू जाये वहीं, पर ही काला दाग लग जायेगा। इस प्रकार थोड़ा सा समझने का यत्न करो। दूर दराज़ से संगत आती है और आज जो हमने विचार करना है यह थोड़ा सा मुश्किल विषय है। साध संगत जी! आसान भी बहुत है और मुश्किल भी बहुत है। ऐसे समझ लो कि पहली कक्षा से लेकर Ph.D. तक विषय है। पूरे ध्यान के साथ यदि सुनते चलोगे तो फिर बात समझ में आ जायेगी। यदि कहीं भी मन साथ छोड़ गया, तो वहीं पर ही हम विषय से छूट जायेंगे।

एक विचार काफी समय से चली आ रही है। गुरू नानक पातशाह की, गुरू अंगद साहिब ने वह कौन सी सेवा की थी कि जिस पर गुरू नानक पातशाह रीझ गये, क्योंकि सेवा करने वाले तो बाबा बूड्ढा जी भी थे और बचपन से ही गुरू नानक पातशाह के साथ थे, भाई बाला जी, भाई सधारन भी थे, भाई मनसुख, भाई कमलिया भी थे, भाई भगीरथ भी थे तथा अन्य बेअन्त गुरसिख थे, जो बचपन से ही गुरू नानक पातशाह के साथ मोदीखाने के समय से ही साथ लगे हुए थे। ये आगे क्यों न आ सके? गुरू अंगद साहिब केवल 3 साल सेवा करके कैसे परवान हो गये। इस पर विचार बहुत ही विस्तार के साथ चल रही है। एक-एक विषय पर विचार हो रही है।

आज जो वचन करने चले हैं, उन्हें ज़रा ध्यान से श्रवण करो क्योंकि यह एक, दो, चार नहीं, सारी सृष्टि के साथ ऐसा बर्ताव हो रहा है। यह गुरू नानक पातशाह ने हमें बड़े विस्तार पूर्वक बताया है। अब सारे प्रेमी चित्त को एकाग्र करके शब्द में बोलो -

प्रभ की उसतति करहु संत मीत। सावधान एकागर चीत॥ *पृष्ठ - 295*

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 4, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए, ...-2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहमु संगारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

इस प्रकार जो प्रेमी लगातार दीवानों में आते हैं उन्होंने अच्छी तरह से सुना है कि भाई लहणा जी पहले देवी के भक्त थे गुरू की तलाश थी। एक गुरसिख भाई, जोध के साथ सम्पर्क हो गया। वह 'जपुजी साहिब' तथा 'आसा की वार' पढ़ा करता था। आपने वह सुनी और आपके हृदय पर चोट लगी, सीने में छेद हो गया, बाणी ने बाण मार दिया। गुरू नानक पातशाह के दर्शनों के उतावले हो गये। देवी के यहाँ संगत लेकर जाते हैं। आप उस समूह के प्रमुख भी हैं, जब करतारपुर साहिब पहुँचे, उस समय गुरू नानक पातशाह स्वंय ही बाहर चल कर इन्हें लेने आ गये और ये वचन कह दिये, ''आज मेरे राज योग का धनी आ रहा है, लेकर आना है।''

भाई लहणा जी घोड़े पर सवार हैं और गुरू नानक पातशाह से पूछते हैं, ''मैंने नानक तपस्वी के दर्शन करने हैं।'' क्योंकि अधिकतर लोग इसी नाम से ही पुकारा करते थे।

नानक पातशाह कहते हैं, ''आजा भाई! मेरे पीछे-पीछे।''

आगे-आगे आप जाते हैं, पीछे-पीछे लहणा जी चलते हैं। वहाँ पर पहुँच कर आप कहते हैं, ''घोड़ा वहाँ बान्ध दो (संकेत करते हैं) और इधर आ जाओ।'' जब दर्शन किये तो हैरान रह गये कि आप तो वही हैं, जो कभी मेरे घोड़े के साथ-साथ आगे-आगे भागते थे, तो कभी पीछे रह जाते और कभी साथ-साथ चलते। हृदय पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ा और आपका आना जाना खत्म हो गया।

कहने लगे, ''जहाँ मैंने आना था, पहुँच गया।''

चार दिन महाराज जी ने अपने पास रखा, फिर घर भेज दिया। दोबारा फिर आते हैं। सेवा में डट जाते हैं। आपने बहुत से कौतुक देखे और आज आप गुरू नानक पातशाह की सेवा कर रहे हैं। प्यार इतना जबरदस्त है कि एक सैकिण्ड के लिये भी पलक नहीं झपकते कि कहीं मैंने आंख भी झपक लीं तो मैं दर्शनों से वंचित रह जाऊंगा, इतना भी गवारा नहीं करते, इतना अधिक प्यार पड़ गया। दिन-रात प्यार में बन्धे रहते हैं।

सो आप महाराज जी की सेवा कर रहे हैं। गुरू महाराज बिराजमान हैं। थोड़ी देर पश्चात महाराज जी के चरण हिल पड़ते हैं। आप हैरान होते हैं कि महाराज जी के चरण क्यों हिलते हैं? जब महाराज जी ने नेत्र खोले आपने बेनती की, ''पातशाह! आज मैंने एक कौतुक देखा जो पहले कभी मेरे ध्यान में नहीं आया कि आपके चरण क्यों हिल रहे थे?''

सच्चे पातशाह कहते हैं, ''भद्र पुरुष! बहुत से वचन ऐसे हुआ करते हैं कि यह जो दृष्टिमान संसार है, इससे आगे भी बहुत संसार हैं; जो आखों से नहीं दिखाई देते, केवल जब रूह शरीर छोड़ जाती है, उस समय उसे दिखाई देते हैं। उसे देखने के लिये और नेत्र हुआ करते हैं। ये नेत्र प्राकृतिक होने के कारण वे इन से नज़र नहीं आते।''

बेअन्त सूक्ष्म तथा स्थूल सृष्टियाँ हैं और उनमें से बहुत सी सृष्टियाँ उच्च कोटि की हैं, जिनके अन्दर महान-महान सुख हैं, जिन्हें स्वर्ग कहते हैं, देवताओं की दुनियां भी कहते हैं। उन देवताओं की दुनियां में से बहुत से देवता सत्पुरुषों की तलाश में आते हैं, जो प्रभु को परवान होते हैं, उनके पास आते हैं और भाई लहणा! वे आकर नमस्कार करते हैं और फिर वे अपने लोक चले जाते हैं।

सुर पग द्वै बंदन करै पुंन सदन सिधाई।

बन्दना करने आते हैं और फिर वापिस अपने-अपने लोकों को चले जाते हैं - गन्धर्व लोक हैं, देव गन्धर्व लोक हैं, पितृ लोक हैं, इन्द्र लोक हैं, स्वर्ग लोक हैं, कर्म देव लोक हैं, अजान देव लोक

है, प्रजापति लोक, बैकुंठ धाम, यहाँ तक कि दर्शन करने के लिये सचखण्ड से भी रूहें आ जाया करती हैं।

एक बार छठे पातशाह महाराज दिल्ली में यमुना के किनारे बैठे हैं और जहाँगीर ने पीर सिकन्दर औलिया को बुलाया।

कहने लगा, ''देखो! गुरू हरगोबिन्द जी आये हैं। मेरे से कोई गलती न हो जाये क्योंकि मैंने कानूनी दफा के अधीन उन्हें बुलाया है और वे पूरे हों और मुझ से कोई अपराध न हो जाये। आप जाओ और मुझे पूरी जानकारी लाकर दो कि उनके अन्दर कोई रूहानी शक्ति है। क्योंकि इनसे पूर्व जितने गुरू थे, वे सभी साधुओं के लिबास में रहा करते थे और इनका शाही लिबास है। दो किरपानें पहनी हुई हैं और सारा ही राजसी ठाठ-बाठ है। मुझे पता लाकर दो कि वह असल में कुछ हैं भी या बस बाहर-बाहर से ही ऐसे लगते हैं।''

दिल्ली के 12 पीर गुरू छठे पातशाह की परख करने जाते हैं। पहले ने कहा, यदि वे हम 12 के नाम लेकर बिठायेंगे तो मान जायेंगे। दूसरा कहने लगा, यदि हमें गर्म-गर्म कड़ाह प्रसाद खिलायेंगे तब मानेंगे। ऐसा करने से एक तो इनकी अज़मत का पता चलेगा, दूसरा फिर हम रूहानी प्रवचन करेंगे। तब सारा पता चल जायेगा।

जब महाराज जी के पास पहुँचते हैं, महाराज जी कहते हैं, ''आओ सिकन्दर जी!'' सभी के नाम बोल दिये और कहने लगे, ''बैठो।'' पहली बार में ही नमस्कार कर दी। उसके पश्चात एक गुरसिख सिर पर परात लेकर आ गया। महाराज जी के पास कड़ाह प्रसाद भेंट कर दिया।

महाराज जी कहते हैं, ''गर्म है?''

उत्तर मिला, ''महाराज! गर्म-गर्म है, हाथ भी नहीं लगाया जाता।'' महाराज जी ने कहा, ''इन्हें दो, ये गर्म-गर्म चाहते हैं।''

इस प्रकार सभी को प्रसाद दे दिया। दो बातें पूरी हो गईं। अब वचन करने का विचार मन में आता है कि इन्हें वचनों द्वारा हार दी जाये। इतने में क्या देखते हैं कि यमुना में पानी के मध्य एक बिजली सी चमकी। आमतौर पर बिजली चमकने के पश्चात प्रकाश खत्म हो जाया करता है लेकिन वह प्रकाश खत्म न हुआ बल्कि ज्यों का त्यों खड़ा है। जहाँ तक निगाह जाती है, वहाँ तक प्रकाश ही प्रकाश खड़ा दिखाई दे रहा है और देखते ही देखते, वह प्रकाश अलोप हो गया और उसके अन्दर से एक स्त्री की मूर्ति प्रकाश में आई। वह गुरू नानक पातशाह की बाणी पढ़ती आ रही है। वह पानी पर इस तरह से चल रही है जैसे धरती पर चल रही हो। उस समय उसने आकर नमस्कार की।

महाराज जी ने कहा, ''बेटा! आप कैसे आई हो?''

कहने लगी, ''पातशाह! आपकी कृपा है। जब आप का गुरू नानक का स्वरूप था, उस समय मेरे ससुर पिता जी ने आप से सिखी की दात ली थी और मेरे पति भी गुरसिख थे। बन्दगी किया करते थे और मैं पतिव्रता स्त्री थी। मैंने कभी भी उनकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं किया था। कभी उनके साथ कड़वा नहीं बोलती थी, कभी फीका नहीं बोलती थी, सदा ही उन पर भरोसा करती थी और मैं उन्हें परमेश्वर का रूप समझ कर सेवा करती रही थी। बाणी पढ़ती थी, नाम जपती थी। फिर जब पाँचवे पातशाह ने सरोवर बनवाया। तब पातशाह मैंने अपने पति से पूछा, ''मैं सेवा कर आया करूं?'' वे बोले, ''हाँ! चली जाया करो।'' आज्ञा पाकर मैं रोज़ काबुल से आकर कार सेवा करती रही और रात को लौट

जाया करती थी।

सभी गुरसिखों ने यह साखी सुनी हुई थी कि जब सरोवर की कार सेवा चल रही थी, उस समय एक महिला आया करती थी। न तो उसके आने के समय का पता चलता था और न ही यह पता चलता कि वह कब चली जाती थी? जब वह टोकरी भर कर फैंकती थी तो कभी-कभी हाथ हवा में मारती थी और ऐसे चलती थी जैसे किसी चीज़ को झूला दे रही हो। गुरू पांचवे पातशाह के पास यह वचन पहुँचा, ''पातशाह! एक महिला सेवा में आती है और वह आकर ऐसी क्रिया करती है और पता नहीं चलता।'' महाराज ने बुला लिया और पूछा, ''बेटा! कहाँ से आती हो?'' कहती है, ''पातशाह! मैं काबुल से रोज़ आती हूँ।'' महाराज पूछते हैं, ''किस की सवारी करती हो?''

कहने लगी, ''पातशाह! आपके शब्द में इतनी शक्ति है कि 'वाहि' कह कर पैर रखती हूँ और 'गुरू' कहने पर मेरा पैर परिक्रमा में होता है।''

शबद की सवारी गुरू नानक पातशाह किया करते थे। ये जो प्रोफैसर हैं न पढ़े लिखे, ये नास्तिकता की ओर जा रहे हैं। इन्हें पता ही नहीं इन बातों का कि रूहानियत के अन्दर ऐसी बातें हुआ करती हैं, लिखने से डरते हैं कि कोई और कह देगा कि यह बात सम्भव नहीं है। हम नहीं डरते, हम तो जानते हैं कि गुरू नानक पातशाह आप पारब्रह्म परमेश्वर हैं, फिर गुरू नानक पातशाह को हम क्यों याद करते यदि वे समरथ नहीं? आप सभी कुछ कर सकते हैं। जब गुरसिखों में यह ताकत है। इस महिला के पिता जी लाहौर में बीमार थे। इन्हें कहने लगे, ''बाबा लोहगड़िया नहीं आये।'' किशन सिंघ धूपिया को कहते थे, वह नामधारी सिंघ था। उन्होंने अपनी जिन्दगी में 1000 अखण्ड पाठ, अकेले ने ही किये थे। एक ही बार चौकड़ा मार कर पाठ किया करते थे और 25 रू. भेंट लिया करते थे। सारी भेंटे भैणी साहिब बही में लिखी हुई हैं। 25,000/-रु. उन्होंने 1000 अखण्ड पाठों का जमा करवाया। शक्तियों के मालिक थे।

सो आप कहने लगे, ''बाबा जी नहीं आये?''

कहते हैं, ''आये नहीं?''

वे जब हस्पताल से नीचे उतरे तो बाबा जी आ गये। बच्चों ने जाकर बता दिया बोले, ''पिता जी! बाबा जी आ गये।''

बाबा जी कहने लगे, ''आप तो आए ही नहीं?''

वे बोले, ''आपने याद ही अभी किया है।''

कहने लगे, ''आप कहाँ थे?''

बाबा लोहगड़िया बोले, ''हम रावलपिन्डी में लालामूसे में थे।'' कहाँ रावलपिन्डी कहाँ लाहौर? इधर याद करते हैं उधर हस्पताल के दरवाज़े आगे आ जाते हैं।

एक और सन्त मोहन जी हुए हैं। वे भी नामधारी हुए हैं? आपने गुरदासपुर में दीवान लगाया हुआ था और वहाँ पर बाबा प्रताप सिंघ जी गये हुए थे और भैणी साहिब वापिस आ रहे हैं।

सन्त जी बोले, ''महाराज! मुझे भी ले चलो।''

बाबा जी बोले, ''मस्ताना! जगह नहीं है।''

मोहन सिंघ बोले, अच्छा सतगुरो! आपकी मर्जी।''

जब भैणी साहिब आये, देखा, तो दीवान सजा हुआ है। महापुरुषों ने पूछा, ''दीवान सजे हुए कितना समय बीत गया है?''

कहने लगे, ''जी! कीर्तन करते हुए तीन घंटे होने जा रहे हैं।''

बाबा प्रताप सिंघ जी गुरदासपुर से कार में आये हैं और यह तीन घंटे पहले ही दीवान सजा कर बैठे हैं। दीवान समाप्ति के पश्चात वापिस बुला लिया। डण्डा ले लिया।

कहते हैं, ''इतनी शक्तियों को प्रत्यक्ष रूप में दिखाये जा रहा है।''

इस तरह से वह महिला कहती है, ''महाराज! 'वाहि' मैं वहाँ से कहती हूँ और आपके शब्द में इतनी शक्ति है कि 'गुरू' कहते ही परिक्रमा में पहुँच जाती हूँ।'' क्योंकि साधना सम्पन्न जो 'वाहिगुरू' शब्द होता है, उसमें शक्ति होती है, साध संगत जी!

महाराज जी कहते हैं, ''बेटा! फिर तू हवा में इस तरह हाथ क्यों मारती है?''

कहने लगी, ''पातशाह! मैं अपने बच्चे को पालने में सुलाकर आया करती हूँ और मैं यह देखा करती हूँ कि कहीं वह जाग न जाये, इसलिये मैं इसे झूला देकर सुला देती हूँ।''

इस तरह मेरा शरीरान्त हो गया। मैं सचखण्ड गुरू नानक पातशाह जी की दरगाह में चली गई और आज अचानक मेरे मन में विचार उठा कि छठे गुरू नानक के स्वरूप के दर्शन करूं और अपनी श्रद्धा भेंट करूं।'' सो इस तरह सचखण्ड से भी रूहें दर्शनों के लिये आ जाया करती हैं।

महाराज कहने लगे, ''भाई लहणा जी! ये स्वर्ग लोकों के देवता हैं।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – करदे डंडओतां जी! सुरगां तों आ के देवते – 2, 2
सुरगां तों आ के देवते – 2, 2
करदे डंडओतां जी, ... –2

अमर बिंद छ्वै छ्वै जग पाई। बंदन करि करि सदन सिधाई॥
पृष्ठ – 1164 (गुर नानक प्रकाश)

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! देव लोकों में साधु नहीं जाया करते। बन्दगी करने वाले महापुरुष नहीं जाया करते। अत: उनके पास बस एक ही चारा है कि इस मात लोक में आयें, फिर महापुरुषों के दर्शन करें।''

गुरू दसवें पातशाह एक बार वचन कर रहे थे, ''सिंघो! केवल तुम ही यहाँ पर नहीं बैठे हो, गुप्त लोकों से बेअन्त रूहें आकर, यहाँ तक कि शिव जी, ब्रह्मा, विष्णु, आदि जो प्रमुख देवता हैं, वे भी आकर हरि यश श्रवण करते हैं क्योंकि स्वर्ग लोकों में ये चीज़ें नहीं होतीं। हरि का यश वहाँ नहीं है'' यह तो केवल यहीं पर ही है –

कहि कमीर अब कहीऐ काहि। साध संगति बैकुंठै आहि॥ पृष्ठ – 1161

साधु की संगत तथा हरि यश जहाँ होता हो, वही सबसे बड़ा बैकुण्ठ है। यहाँ तक कि भगवान भी साकार रूप धारण करके, संगत में गुप्त रूप में आकर बैठ जाते हैं। पहचाने ही नहीं जाते।

तीर्थों के देवता सबसे पीछे बैठे होंगे।

हरि की कथा होत है जहाँ गंगा भी चल आवत तहाँ॥

अपने-अपने फल खोल कर बैठे होते हैं कि पता नहीं कब कोई मुझ से अपनी मनवाछिन्त वस्तु मांग ले और मैं दौड़कर उसे दे दूँ। सत्संग में सभी आवश्यकताएं पूरी हो जाती हैं क्योंकि यह कोई ऐसे ही आम लोगों का इकट्ठ नहीं हुआ करता। यहाँ की चरण धूलि इतनी पवित्र है कि जो रोग डाक्टरों से दूर नहीं होते हैं, वे भी यहाँ आकर ठीक हो जाते हैं क्योंकि हरि के प्यारे, वाहिगुरू के साथ ध्यान लगाकर, हरि यश करते हैं।'' गुरसिख कहने लगे, ''पातशाह! कभी दर्शन तो करवा दें।''

महाराज जी ने वचन कर दिया -

सरब भूत आपि वरतारा। सरब नैन आपि पेखनहारा॥ पृष्ठ - 294

आसमान के अन्दर ऐसे हाथ घुमाया। एक दम क्या देखते हैं कि चारों ओर रोशनी ही रोशनी फैली हुई है, बेअन्त किस्म के देवता दिखाई देने शुरू हो गये। इतनी देर में एक राजा आया। उसने शीश नवांया। देवता इधर-उधर हिलने लग गये।

महाराज जी कहते हैं, ''भाई! जल्दी-जल्दी किउड़ा (इत्र) आदि सुगन्धित पदार्थ छिड़को।'' लेकिन वे चले गये।

सिख कहते हैं, ''महाराज! सच्चे पातशाह! दर्शन भी हुए, फिर यह क्या बात हुई, देवता चले क्यों गये?''

महाराज कहते हैं, ''अरे भाई! क्यों पर्दा खुलवाते हो? इस राजा ने तीन दिन पहले तम्बाकू पीया था। उस तम्बाकू की दुर्गन्ध इतनी बुरी थी कि देवता सहन न कर सके।''

सो तम्बाकू बहुत बुरी चीज़ है। अब तो सारी दुनियां इसके पीछे हाथ धोकर पड़ गई है। पर हमारा जो देश है, हमारे ही नौजवान, इस छोड़ी हुई चीज़ को फिर से अपना रहे हैं। जब सारी दुनियां इसे छोड़ने को लगी है तो ये कहते हैं, ''हमें दो। हम ज़र्दे में खाकर देखेंगे।'' जब इसे होश आयेगी फिर भागा फिरेगा, जब इलाज ही कोई नहीं रहेगा।

इस प्रकार जहाँ हरि यश हो रहा होता है, वहाँ 68 तीर्थ, देवी देवता आ जाते हैं। एक बार बड़े महाराज जी के दीवान फतहगढ़ साहिब में सजे हुए थे। ऐसा कौतुक हुआ जो सब को दिखाई न दे, केवल एक को ही दिखाई दिया। महाराज जी के सामने, जहाँ पर चादरें बिछी हुई थीं, तीन देवता आकर बैठ गये। पूरा कीर्तन सुनकर, जब वे उठकर चले गये तो आप देखते रहे। जब शामियाने के दूसरे कोने के पास गये, वहाँ छू-मन्तर हो गये। बहुत ही अचम्भे वाली बात लगी।

महाराज जी के पास वचन किया, ''महाराज! ये जो साधु आये थे कौन थे?''

महाराज कहते हैं, ''भाई! ये गुप्त बातें, गुप्त रखनी चाहियें। ये बातें प्रकट करने वाली नहीं हुआ करतीं। जो स्वर्गों के देवता होते हैं, उन्हें वहाँ पर हरि यश सुनने को नहीं मिलता, इसलिये जहाँ परमेश्वर के प्यारे, दत्त-चित्त होकर, लीनता से भरे हुए हरि यश गाते हैं, वे वहाँ पर आकर हरियश सुना करते हैं और गुरबाणी में भी ऐसा ही फ़रमान है।''

धारना - शिव जी खोजदे फिरदे ब्रह्म गिआनी नूं - 2, 4

ब्रह्मगिआनी कउ खोजहि महेसुर। नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ पृष्ठ - 273

यह गुरू परमेश्वर साकार रूप में संसार में आ गये हैं। अब तो देवताओं को भी बहुत ही

आसान हो गया कि चलो चलकर दर्शन करें क्योंकि निरंकार के तो दर्शन होते नहीं क्योंकि –

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ *पृष्ठ - 7*

परमेश्वर देखता है पर इन्हें परमेश्वर नज़र नहीं आता। अब परमेश्वर मनुष्य के जामे में प्रकट हुआ है, गुरू परमेश्वर। वहाँ तो साध संगत जी! नमस्कारें करनी ही थीं, आना ही था–

अत: आपने नमस्कार कर दी। श्रद्धा बढ़ गई कि हैं! गुरू नानक पातशाह कोई साधारण व्यक्ति तो हैं नहीं, कोई मामूली सन्त नहीं है और केवल ब्रह्मज्ञानी भी नहीं हैं, वह तो स्वंय ही संसार में आए हैं। एक दिन गुरू महाराज जी बिराजे हुए हैं और आप पहरे पर खड़े हैं क्योंकि एक अवस्था ऐसी आती है, जहाँ पर नींद और भूख दोनों खत्म हो जाया करती हैं अर्थात न नींद रहती है और न ही भूख रहती है। आप गुरू महाराज जी की 24-24 घंटे भी सेवा किया करते थे। आज क्या देखते हैं कि एक बहुत सुन्दर महिला, अति सुन्दर वस्त्र पहने हुए, अति सुन्दरता (अदब) के साथ झाड़ू लगा रही है। आप बड़े हैरान हुए कि अमृत बेला में इतनी सुबह कौन आ गया और गुरू नानक पातशाह से बेनती करते हैं, ''पातशाह! आज 2 बजे अमृत बेला में एक लड़की आई, बहुत सुन्दर थी तथा बहुत से आभूषण पहने हुई थी। पातशाह! मुझे पता न चल सका, वह कौन थी?''

महाराज जी मुस्कराये और कहते हैं, ''भाई लहणा! यह वह ठगनी थी जिसने सारे संसार को ठगा हुआ है, परमेश्वर से अलग किया हुआ है। वह संसार की प्यारी है पर सन्तों की प्यारी नहीं।''

कहते हैं, ''ऐसी कौन है?''

महाराज जी कहते हैं, ''उसका नाम माया है। उसे माया कहते हैं। उसके कई रूप हैं। उसका एक रूप थोड़ा ही है, बहुत रूप हैं। इसने सारे संसार को मोहित किया हुआ है।''

लहणा जी ने कहा, ''पातशाह! मैंने तो यह बात पहली बार सुनी है। यह कितने रूप बदल लेती है?''

महाराज कहने लगे, ''माया जड़ भी बन जाती है, चेतन भी है, सूक्ष्म भी है और अज्ञान भी है। जड़ शक्ति जो है वह जायदाद बनती है, धन दौलत बनती है, वस्तुएं बनती हैं, सुन्दर मकान, कोठियां, सुन्दर-सुन्दर सवारियां बन जाती हैं। इससे मोह लेती हैं। बन्दगी नहीं करने देती।''

जब यह चेतन बनती है फिर यह स्त्री के रूप में आती है फिर सभी कुछ किये कराये को मिट्टी में मिलाने के लिये तैयार रहती है। मोह लेती है। चेतन माया बच्चे होते हैं, रिश्तेदार होते हैं, कुटुम्ब होता है, मित्र दोस्त होते हैं, यह सारी चेतन माया है। यह भी मोह लिया करती है और परमेश्वर की ओर नहीं जाने दिया करती।

तीसरी हुआ करती है रिद्धि-सिद्धि शक्तियां। उनके लिये साधना, तप करता है, शब्दों का अभ्यास करता है कि मेरे अन्दर शक्ति आ जाये। लोग आया करें और मेरी मान्यता बढ़े। महाराज कहते हैं –

रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ॥ *पृष्ठ - 593*

कहते हैं, ''एक माया का वह रूप है जो सभी रूपों से भयंकर रूप है, उसे माया का अज्ञान रूप कहो। अज्ञान उसे कहते हैं कि वास्तविक रूप में वस्तु नज़र न आये बल्कि नकली रूप में दिखाई

दे।''

इस प्रकार ''भाई लहणा! वह मित्र नहीं है, यह तो साधुओं की बैरिन होती है।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – तिंनां लोकां दी पिआरी माइआ, वैरन साधूआं दी – 2, 2
पिआरिओ! वैरन साधूआं दी – 2, 2
तिंनां लोकां दी पिआरी माइआ, ... –2

कहने लगे, ''भाई लहणा जी! यह जो अज्ञान की माया बताई गई है – रिद्धियों-सिद्धियों की माया, स्त्री माया और जड़ माया, ये साधुओं की वैरिन होती है। साधु इन्हें नहीं पसन्द करते और न ही चाहते हैं।''

एक बार भगवान के पास ऐसे ही वचन वार्ता चल रही थी। भगवान ने पूछा, ''लक्ष्मी! ये तेरे केश आगे से घिसे हुए क्यों हैं और पीछे से कुछ उखड़े हुए से हैं? यह क्या बात है?''

कहने लगी, ''महाराज! मैं क्या करूं? तेरे साधुओं के पास जाकर, मैं नमस्कारें करती हूँ कि मुझे अंगीकार कर लो। मिन्नतें करती हूँ, प्रार्थनाएं करती हूँ, परन्तु वे मुझे अंगीकार नहीं करते और मुझे ऐसा कह देते हैं कि –

रिधि सिधि सभु मोहु है नामु न वसै मनि आइ॥ पृष्ठ – 593

हमें तो नाम चाहिये, बस तू नहीं चाहिये।'' जहाँ नाम आ गया –

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ पृष्ठ – 649

फिर रिद्धियां-सिद्धियां पीछे लगीं फिरती रहती हैं। महाराज जी ने (राड़ा साहिब वाले महापुरुषों ने) एक बार बताया। सहज स्वभाव वचन चल पड़े। मैंने कहा, ''महाराज! अमुक आदमी आपका जीवन वृतान्त लिखना चाहता है।''

कहने लगे, ''सन्तों के जीवन का किसी को क्या पता होता है, जब तक वे स्वंय न लिखें।''

मैंने कहा, ''महाराज! वे कौन सी गुप्त बातें हैं?'' आप जी ने दो-तीन वचन मुझे बताए कि लिखने वाला तो यही लिखेगा कि हम कहाँ रहते थे? लेकिन हमें पता है कि हमने 9 साल धरती पर पीठ नहीं लगाई। 9 साल पूरे, एक, दो चार साल नहीं, पूरे 9 साल।

कहने लगे, ''सारी-सारी रात और सारा-सारा दिन बैठ कर बिताए।''

4 फुट गहरा गड्ढा खोदा हुआ था। 4 फुट वर्ग क्षेत्रफल का, उसमें बिठा देते थे सारे भजन करने वालों को; सोने के लिये जगह ही कहाँ होती थी? आप सभी जानते हो, चार फुट जगह में तो आदमी मुश्किल से बैठ सकता है।''

कहते हैं, ''जो हमारे सेवादार हैं, उन्हें भी नहीं पता। सफ पर ही हम बैठे रहते थे।''

फिर कहने लगे, ''जो आन्तरिक अवस्था है, उसे कोई नहीं जानता।''

मैंने कहा, ''कृपा करके थोड़ा सा बता दीजिये।''

कहने लगे, ''जब साधना की अवस्था हुआ करती है, इसमें जब सहंसरार दल कमल से वृत्ति ऊपर को जाती है, दसवें द्वार के नीचे, रिद्धि-सिद्धि आकर आवाज़ लगाती हैं और एक-एक सिद्धि कहती है, मुझे

अंगीकार करो। मैं तुम्हें सारी दुनियां में जिस भी व्यक्ति को देखना चाहते हो, यहीं पर बैठे-बैठे ही दिखा दिया करूंगी।''

दूसरी सिद्धि आवाज़ लगाती है, ''मुझे अंगीकार करो। अर्न्तात्मा मेरा नाम है। सभी के दिलों की बातें तुझे पहले ही बता दिया करूंगी कि अमुक व्यक्ति के मन में यह बात है। वह कहती है कि मेरा नाम लेकर मुझे आवाज़ लगा। बेअन्त दुनियां सन्तों को परखना चाहती है।''

तीसरी कहती है, ''मैं प्रेरणा शक्ति हूँ। जिसे भी ध्यान में लगाओगे, उसी समय तुम्हारे चरणों में हाज़िर कर दूंगी।''

कहते हैं, ''हमें आवाज़ें लगा रही थीं, पर हमें वैराग इतना था कि हमने सुनना बन्द कर दिया। सुनना ही नहीं, उधर ध्यान ही नहीं देते थे। उसके पश्चात हार गईं। फिर स्त्रियां रूप बनकर सामने आकर प्रार्थनाएं, मिन्नतें करने लग पड़ीं। परन्तु हमने आँख उठाकर ही न देखा और फिर थोड़ा सा और आगे चले जाओ, वहाँ पर फिर पीछे लगकर प्रार्थनाएं करती हैं कि मुझे कोई सेवा बताओ ताकि मेरा भी भला हो जाये।''

लक्ष्मी कहती हैं, ''महाराज! मैं साधुओं की दहलीज़ पर जाकर शीश रगड़ती हूँ, माथे रगड़ती हूँ, इसलिये मेरे ये माथे के आगे के बाल घिस गये हैं। पिछले बाल जो ये मनमुख लोग हैं, ये दिन रात न तो सोते हैं, न टिक कर बैठते हैं। बुरे काम करने के लिए मुझे काबू करना चाहते हैं, पर मैं इनके हाथों में नहीं आती, भाग जाती हूँ। मुझे ये बुरे कामों में लगाते हैं। मुझ से बुरे काम करवाते हैं।

भगवान बोले, ''फिर मेरे भक्त ताकतवर हुए न?''

लक्ष्मी कहने लगी, ''महाराज! मेरे भक्त बहुत ताकतवर हैं। आओ आपको दिखा देती हूँ। मेरा नाम भी माया नहीं, जो आपको धक्के न मरवा कर दिखाऊं?''

भगवान कहते हैं, ''अच्छा!''

एक सेठ के पास गये। वह मेहमानों की बड़ी सेवा किया करता था। लंगर चलाया करता था। रहने के लिये कमरे भी दिया करता था।

लक्ष्मी बोली, ''पहले आप अपना भक्त देखो।''

वहाँ पर भगवान एक वृद्ध का रूप धारण करके चले गये। महात्मा को देखकर सेठ ने नमस्कार की। कहने लगा, ''महाराज! हमारा घर भी पवित्र करो और कुछ दिन के लिये हमारे यहाँ ठहरो।''

भगवान कहते हैं, ''हमने रूकना तो है, पर ठहरेंगे तब जब जहाँ पर हम विश्राम करेंगे, उस स्थान से हमें, निर्धारित अवधि से पहले बाहर नहीं निकालोगे क्योंकि हमने निर्विघ्न जाप करना है।''

सारे कमरे दिखा दिये फिर आपने एक छोटा सा कमरा ले लिया। कमरे में बैठ गये। इतने में लक्ष्मी भी आ गई आकर बोली, ''सेठ जी! मुझे तीन थान कीमती रेशमी वस्त्र चाहियें। जरी-बाजरे के तीन थान चाहिये, क्या आप दे सकते हैं?''

सेठ बोला, ''देखते हैं जी! ढूँढता हूँ। ये तो बहुत कीमती होते हैं।''

लक्ष्मी बोली, ''कीमती का कोई फर्क नहीं पड़ता। जितने दाम बताओगे, मैं उतने ही दे दूंगी पर मुझे पानी पिला दो।''

सेठ ने पानी लाकर दे दिया। फिर कहती है, ''मेरे गिलास में पानी डाल दो।''

आंचल में से गिलास निकाला। सेठ ने देखा कि गिलास तो सोने का है और बहुत बढ़िया है। पानी पीया और पानी पीने के पश्चात गिलास वहीं रख दिया। थोड़ी देर देखती रही।

सेठ बोला, ''हे भद्रे! गिलास कोई उठाकर न ले जाये, बड़ा कीमती गिलास है। इसे सम्भाल लो।''

स्त्री बोली, ''नहीं, सेठ जी! अब यह गिलास मेरे किसी काम का नहीं है। जिस गिलास में एक बार पानी पी लूँ, फिर दोबारा उसे हाथ भी नहीं लगाया करती, न ही मैं मांजती हूँ, मैं तो वहीं पर ही छोड़ देती हूँ।''

सेठ ने सोचा कि यदि दो-चार दिन यह रह गई फिर तो पुश्तों तक के लिये रोटियों का साधन दे जायेगी। इसने रोटियां भी खानी हैं, थाल में लिया करेगी, कटोरियों में दाल सब्जी आदि डलवाया करेगी।

सेठ बोला, ''हे भद्रे! दो थान तो हैं पर एक अभी मंगाया है, वह परसों या तरसों तक आ जायेगा।'' असली मकसद तो सेठ का यह था कि वह दो चार दिन रूक जाये और सोना ही सोना हो जायेगा।

महिला बोली, ''कोई बात नहीं, रहने के लिये जगह दे दो। मैं रूक जाती हूँ। अब जब मैंने सामान लेना ही है तो फिर लेकर ही जाऊंगी।''

अब सेठ कमरे दिखाने लग पड़ा। सारे कमरे दिखाये।

कहती है, ''यह जहाँ बूढ़ा सा बैठा है न, यह कमरा बहुत बढ़िया है। इसे यहाँ से कहीं और भगा दे।''

लड़के आये, कहते हैं, ''बाबा! यह कमरा खाली कर दे।''

महात्मा ''मैंने तो तुम्हें कहा था, जब तक ध्यान में रहूंगा, कमरा खाली नहीं करूंगा।''

लड़के, ''क्या तूने पट्टा लिखवा लिया है कि तू खाली नहीं करेगा?'' वृद्ध, ''मैंने यहाँ से नहीं हिलना।''

दोनों लड़के इकट्ठे हो गये और दोनों बाजू वृद्ध की पकड़ कर, एक लड़का पीछे से धक्के मारता तो दूसरा बाजू से पकड़ कर बाहर खींचता। इस प्रकार कमरे से बाहर फैंक दिया। लड़के कहते हैं, ''लो भई! कोठी पर ही कब्जा करके बैठ गया। भाग जा यहाँ से।'' उसी समय लक्ष्मी भी अलोप हो गई। ये इधर उधर देखते हैं कि कहाँ गई? उधर भगवान भी अलोप हो गये।

लक्ष्मी बोली, ''देख लिया न मेरे भक्तों का हाल? तुम्हें धक्के मरवाये या नहीं?''

कहने लगी, ''कोई तुम्हारा नाम नहीं लेता। कोई तुम्हारा भजन नहीं करता। फिर मैं कोई प्रचार भी नहीं करती। मैं कोई सत्संग नहीं सजाती, मैं कोई गुरूद्वारे, मन्दिर आदि नहीं बनवाती फिरती, कुछ नहीं करती फिर भी मेरे भक्त बहुत हैं। तुम्हारे भक्त तो कहते रहते हैं, शराब मत पीओ। शराब मत पीओ। पर मेरे भक्त कभी मानते हैं। पैसे भी खर्च करते हैं, लुढ़कते पुढ़कते भी हैं, वमन (उलटियां) करते हैं फिर भी शराब पीनी नहीं छोड़ते।''

''हे भगवान! तेरा तो खूब प्रचार हो रहा है, मैं तो कोई प्रचार भी नहीं करती। यदि मैं प्रचार करूं तो तेरा नामों निशां तक मिटा दूँ। तुझे कोई याद भी न करे।''

भगवान कहते हैं, ''इतनी ऊँची-ऊँची बातें मत कर। मेरे भक्त भी कम नहीं हैं। चल काशी चलें।''

कबीर साहिब की ओर संकेत करके कहते हैं, ''यह बैठा, मेरा भक्त।''

लक्ष्मी वहाँ चली गईं। जाकर कहती हैं, ''भक्त जी! यह जो आपने ताना लगाया हुआ है, यह बहुत ही उलझा पड़ा है। पता नहीं कितने दिनों बाद आप इसे उतारें? यह ताना उतार दो और ये रेशम के धागे मुझ से ले लो और इसे बुन दो। मज़दूरी भी मैं आपको दुगुनी-तिगुनी दे दूंगी। जितनी कहोगे दे दूंगी।''

कबीर साहिब ने उस महिला की ओर देखा ही नहीं और कहने लगे, ''हे भद्रे! हमारा तो यह असूल है कि जिसका ताना पहले लगाया हुआ है, उसी का पहले बुनते हैं। चाहे कोई कितने भी पैसे क्यों न दे?''

कहने लगी, ''भक्त जी! मुझे बहुत जरूरी चाहिये। यह जो आपके पास ताना है, यह तो बहुत उलझा पड़ा है। बाद में सुलझाते रहना। मेरा ताना तो छोटा सा ही है चादर ही बनानी है और कुछ नहीं बनाना। आपका तो सारा एक-दो घंटे का काम है। पैसे जितने आपका मन करे ले लो।''

कबीर साहिब अन्तर्ध्यान हुए। कहते हैं, ''अच्छा! तू यहाँ भी हमें छलने आ गई?''

कबीर साहिब बोले, ''बेटा कमाला! छुरी लाना'' खुश हो गई कि अब ताना काटेगें। कबीर साहिब ताने से बाहर निकल आये। छुरी की धार को तेज़ करने लगे। वह छुरी को ताने की ओर तो न ले गये, पर इसे पकड़ लिया, पीछे से इसके केश काट दिये, कान काट दिये और नाक भी काट दी। कहते हैं, ''जा भाग जा, किसी और को छलना -''

नाकहु काटी कानहु काटी काटि कूटि कै डारी।
कहु कबीर संतन की बैरनि तीनि लोक की पिआरी॥ पृष्ठ - 476

धारना - तिंनां लोकां दी पिआरी माइआ, वैरन साधूआं दी - 2, 2
पिआरिओ! वैरन साधूआं दी - 2, 2
तिंनां लोकां दी पिआरी माइआ, ... -2

क्योंकि लोगों को पता नहीं है कि यह कितना नुकसान कर रही है। अज्ञान कितना नुकसान कर रहा है। करोड़ों जन्मों से घूमते फिर रहे हैं, लेकिन फिर भी इससे छुटकारा नहीं पा सकते। यदि किसी के मन में यह संशय हो कि सन्तों का काम भी तो माया से ही चलता है। साध संगत जी! सन्तों का माया से कोई काम नहीं चलता। सन्तों के तो अपने आप ही पीछे लगी रहती है। सन्त तो संसार की माया को सफल करके उसके पुण्य को लाखों गुणा बढ़ाते हैं, सहायता करते हैं, उनकी सेवा कर रहे हैं। उन्हें माया के साथ कोई लगाव नहीं होता क्योंकि उनका विश्वास है -

काहे रे मन चितवहि उदमु जा आहरि हरि जीउ परिआ।
सैल पथर महि जंत उपाए ता का रिजकु आगै करि धरिआ॥ पृष्ठ - 10

वह तो स्वंय ही भागी फिरती है। ऐसी बहुत सी साखियां हैं।

भाई गोदड़िया जी एक सिख छठे पातशाह के समय में हुए और पीर दौले शाह के पास चले गये। कश्मीर में दसवन्ध की उगाही करने गये थे। जब वहाँ पहुँचे तो उसने इन्हें देखकर कह दिया, ''गरीब सा सिख है।''

पीर दौले शाह ने कहा, ''भाई साहिब! आप हमसे कुछ अंगीकार कर लो। आप की जूतियां

भी टूटी फूटी हैं, कपड़े भी फटे हुए हैं और वह सामने जो डली (मिट्टी की) पड़ी है, उठा लो।''

पीर जी ने अपनी दृष्टि करके वह मिट्टी की डली सोना बना दी।

भाई गोदिड़या जी कहते, ''नहीं, हमें ज़रूरत नहीं है।'' उसने बार-बार कहा। गुरसिख ने सोचा कि इसके मन में यह है कि ये सिख गरीब होते हैं, परन्तु उसे आन्तरिक अवस्था का पता नहीं था। भाई साहिब ने जब दृष्टि डाली तो सारा ही खेत सोने का बना दिया। जब पीर ने देखा तो भाई गोदड़िया जी के चरणों में गिर पड़ा।

पीर कहता है, ''गुरसिख! इतनी शक्तियों के मालिक हो, फिर भी फटे हुए कपड़े पहने फिर रहे हो?''

भाई घनईया जी मुगल खान को पानी पिला रहे थे। गुरू दसवें पातशाह के सिंघों ने आकर देख लिया। मुगल खान वह जरनैल था, जिसने यह फैसला किया था कि वह गुरू गोबिन्द सिंघ को पकड़ कर लायेगा। उसे घायल करके सिंघों ने लड़ाई के मैदान में फैंक दिया। भाई घनईया जी ने पानी पिलाकर उसे फिर सुरजीत कर दिया। उसके अन्दर से सारा वैर निकाल दिया। उसके हाथों का जल अमृत समान था।

जब भाई घनईया जी आनन्दपुर साहिब से चले गये तो मुगल खान ने उन्हें ढूंढना शुरू किया। पता चला कि आप बन्नूं-कुहाट की ओर गये हैं। दरिया के किनारे रहते हैं। 200 मटके रोज़ भर कर पहाड़ी पर रखते हैं और जो भी रास्ते में जा रहा होता है, उसे पानी पिलाते हैं।

आज आप दरिया किनारे बैठे समाधि स्थित हैं और यह मुगल खान, इनके पास पहुँचता है। इसने जाकर एक पारस मणि रख कर शीश नवांया। जब आप समाधि से उथान हुए तो मुगल खान ने प्रार्थना की, ''महाराज! मैं वही मुगल खान हूँ, जिसकी आपने जान बचाई थी। मुगल फौजों का जरनैल मुगल खान रोपड़ निवासी और आपने जल क्या पिलाया, मुझे आब-ए-हियात पिला दिया। मेरे अन्दर से सभी बुराईयां दूर कर दीं। अब मैं आपकी चरण शरण में आया हूँ और यह पारस मैं आपके चरणों में भेंट करता हूँ। यह पारस हमारे बुजुर्गों के पास से अमानत के रूप में चला जा रहा है। लोहे से स्पर्श करो, लोहा तुरन्त सोना बन जाता है।''

भाई घनईया जी कहते हैं, ''खान साहिब! यह हमारे किसी काम की चीज़ नहीं है।''

8-10 बार उसने प्रार्थना की। घनईया जी ने अंगीकार न किया। जब उसने बहुत कहा तो इन्होंने पारस हाथ में लेकर पूछा, ''अब तो यह मेरा हो गया न? मैं इसका कुछ भी करूं।''

खान बोले, ''हाँ जी!'' आपने जोर से दरिया में फैंक दिया। मुगलखान रोने लग पड़ा।

कहता है, ''महाराज! यह पारस पत्थर तो मिलता ही नहीं है।'' घनईया जी कहते हैं, ''भाई! जब यह हमारा हो गया, फिर तुम रूदन क्यों करते हो? वापिस लेना चाहते हो?''

खान बोला, ''हाँ जी।''

नदी की ओर दृष्टि की और कहते हैं, ''भाई! इसका पारस वापिस कर दो।'' नदी उसी समय दो धाराओं में बहने लग गई। बीच में से थोड़ी सी धरती ऊपर उठकर बाहर निकल आई।

कहते हैं, ''जाओ! वहाँ टीले पर चले जाओ और अपना पारस उठा लो।''

वहाँ जाकर क्या देखता है। चारों ओर पारस ही पारस पड़े हैं। जिसे हाथ लगाता है, वही पारस, वापिस लौट आया और सोचता है कि यह पत्थर मैं क्या करूंगा? मैं वह पारस क्यों न लूं जो निगाह करते ही सभी को पारस बना दे। चरण पकड़ लिये और कहता है, ''मुझे तो वह चीज़ दे दो, बता दो, वह चीज़ कौन सी है?''

भाई घनईया कहते हैं, ''वह तो परमेश्वर का नाम है भाई।''

साई नामु अमोलु कीम न कोई जाणदो।
जिना भाग मथाहि से नानक हरिरंगु माणदो॥ *पृष्ठ - 81*

खान बोले, ''मुझे वह नाम दे दो।'' क्योंकि नाम में शक्ति है -

नवनिधी अठारह सिधी पिछै लगीआ फिरहि जो हरि हिरदै सदा वसाइ॥ *पृष्ठ - 649*

सन्तों का काम होता है मौन रहना, बन्दगी करना। संसार की भलाई के लिये घूमते फिरते हैं। गुरू नानक का सन्देश देते फिरते हैं। अपना निज आनन्द छोड़ते हैं - फिर माया लेते हैं - माया को सफल करते हैं - कहीं डिस्पैंसरियां चलाते हैं, कहीं लंगर चलते हैं, कहीं गरीबों को आवश्यकतानुसार कपड़े आदि चीज़ें बांटते हैं, उनकी रिहायश के लिये मकानों का प्रबन्ध करते हैं। सन्तों ने क्या करना है? उन्होंने कोई अपने बाल बच्चों को देना होता है? संसार तो इसलिये कमाता है कि उसने बाल बच्चों को देना होता है। सन्तों को कोई जरूरत नहीं होती। सन्त तो केवल कमाई में से विघ्न निकालने के लिये दान करवा देते हैं कि यह तो भोग है, इसे पता नहीं है। इसके हाथों दान करवाओ ताकि इसके विघ्न दूर हो जायें। आगे के लिये इसे बचाओ। यदि जन्म लिया है तो तरलों में न गुज़ारें फिर दोबारा गन्दे अपवित्र स्थानों पर जन्म न ले, जहाँ रोटी भी बड़ी मुश्किल से मिलती हो।

इस प्रकार वह कहने लगा, ''भाई! यह तो साधुओं की बैरिन है। साधु फिर भी इसे किसी अच्छे तरीके से पर्दा रख कर प्रयोग करते हैं। जो बाकी संसार है कहते हैं वह तो बौरा (पगला) हुआ पड़ा है। हलकाया हुआ है। इस तरह फ़रमान करते हैं -''

धारना - हो गिआ जग बउरा ओ, माइआ दा मोहिआ होइआ - 2, 2
माइआ दा मोहिआ होइआ - 2, 2
हो गिआ जग बउरा जी,..........-2

मायिक मूल्य और हुआ करते हैं, रूहानी मूल्य कुछ और हुआ करते हैं। संसार की आदत है कि जब किसी का मूल्य देखना हो तो सोने के गंज़ से मापते हैं कि इसके पास कितनी जायदाद है। कितना पैसा है, कौन-कौन सी सवारी है, कितने पशु इसके घर बन्धे हैं, मनुष्य चाहे कितना भी गुणों से भरपूर हो, अच्छा हो, उसे नहीं पूछती यह दुनियां। बेवकूफ आदमी हो, खूब धन दौलत हो, सभी उसका आदर करते हैं। महाराज कहते हैं -

आथि सैल नीच घरि होइ॥ *पृष्ठ - 931*

बुरे कर्म करने वालों के पास बहुत पैसा होता है -

आथि देखि निवै जिसु दोइ॥ *पृष्ठ - 931*

माया देखकर लोग दोनों हाथ जोड़कर शीश झुकाते हैं -

आथि होइ ता मुगधु सिआना॥ *पृष्ठ - 931*

कहते हैं -

जिहड़े घर दाणे ओहदे कमले वी सिआणे।

परन्तु -

भगति बिहूना जगु बउराना॥ *पृष्ठ - 931*

यदि भक्ति नहीं है, नाम नहीं है, कहते हैं फिर तो बौराया हुआ है, हलकाया हुआ है। हलकाया हुआ अपने आपको ही काट खाता है।

एक दिन कबीर साहिब के पास माया बार-बार आती है। बहुत से सन्त भी आस पास बैठे हैं। कबीर साहिब ने उसकी ओर नज़र उठा कर भी न देखा क्योंकि वह हटती ही नहीं थी, फिर आ जाती है।

सन्तों ने कहा, ''भक्त जी! यह एक गरीब सी महिला आई, इसके साथ तो आप बातें किये जा रहे हो। बाल बच्चों का भी हाल-चाल पूछ रहे हो। वैसे भी काफी देर से आप पूछ रहे हो, ठीक हो गई, काम वगैरा ठीक ठाक चल रहा है। वह इतनी अमीर स्त्री आई, उसकी ओर आपने झांक कर भी नहीं देखा। क्या बात है?''

कबीर साहिब कहते हैं, ''सन्तों! वह ठगनी है, हमें भी ठग लेगी। उसे जाने दो।''

सन्तों ने पूछा, ''महाराज! हमें कैसे पता चलेगा?''

कबीर साहिब ने कहा, ''बुला कर पूछ लो।''

बुला लिया, कहते हैं, ''कौन है तू?''

वह बोली, ''मैं माया हूँ, स्त्री रूप धारण करके यहाँ आई हूँ।''

सन्तों ने कहा, ''कोई कौतुक दिखा सकती है?''

वह बोली, ''चलो, ऐसी सेवा तो मैं बहुत करना जानती हूँ।''

जंगल में ले गई। कहने लगी, ''आप यहाँ पर बैठ जाओ। अब देखना मैं क्या-क्या करती हूँ।''

चार मित्र चले आ रहे हैं। वह वहाँ पर सामने खड़ी है देखते ही देखते गायब हो गई। एक थैली बन गई। वह सोने की मोहरों से भरी पड़ी है। बहुत बड़ी थैली है।

चारों मित्रों ने देखी। एक बोला, ''वह देखो, कुछ पड़ा हुआ है। देखो! ऐसा लगता है जैसे सोना चमक रहा हो।'' दूसरा कहने लगा, ''ले भाई! हम में से भाग कर अकेला मत उठाओ, हम चारों ने ही देखी है, अत: चारों बांट कर बराबर-बराबर हिस्से कर लेंगे।'' जब पास जाकर देखा तो खुश हो गये। फिर कहते हैं, ''इतना तो हमसे सारी ज़िन्दगी में भी नहीं कमाया जायेगा।'' एक तरफ हो गये। जंगल में छिपकर बैठ गये ताकि जिसका धन है कहीं वह देख न ले और घोड़े पर सवार होकर आ ही न जाये। किसी अच्छे अमीर आदमी का पैसा गिरा है। ऐसे ही कोई तलाशी न ले ले। इस तरह वे थैली को लेकर जंगल में एक तरफ छिप कर बैठ गये। फिर कहते हैं, ''अच्छा भाई! अब इसे बांट लेते हैं।'' खुशी के मारे दिल धक-धक कर रहा है।

एक बोला, ''ऐसे करो, आराम से गिनेंगे। अभी तो सांस भी सबकी फूल रही है। सुस्ता लें, रोटी वगैरा खा पी लें। उसमें से एक मोहर निकाल लो और बढ़िया सा भोजन बनवा कर लाओ। हम दो मित्र यहाँ बैठ जाते हैं और बाकी दो मित्र रोटियां लेने चले जाओ। इस प्रकार दो मित्र भोजन लेने चले गये ओर चुप-चाप जा रहे हैं। न तो पहला मित्र उससे बोलता है और न ही दूसरा पहले से बात

करता है।''

पहला मित्र कहता है, ''दोस्त! जब से सोना मिला है तभी से हमारी तो बोलचाल ही बन्द हो गई। सोच में पड़ गये।''

दूसरा मित्र, ''क्या सोच रहा है?''

पहला मित्र, ''तू भी बता क्या सोचता है? हो सकता है, शायद हम दोनों की सोच एक ही हो।''

दूसरा मित्र, ''कसम खा, यदि एक ही सोच न हुई तो आगे बात मत करना।''

पहला मित्र, ''अच्छा! मैं कसम खाता हूँ।''

दूसरा मित्र, ''मैं यह सोच रहा हूँ कि हम दोनों ही क्यों न सारा धन रख लें।''

पहला, ''मैं भी यही सोचता जा रहा हूँ कि इतना धन तो कभी इकट्ठा ही नहीं हो पायेगा। यह तो पुत्र पौत्रों तक भी खत्म नहीं होगा। फिर तरकीब............?''

दूसरा बोला, ''तरकीब! हम दोनों रोटियां खा चलते हैं और उनकी रोटियों में ज़हर डलवा कर ले चलते हैं। जब वे भूख के मारे जल्दी-जल्दी ग्रास मुँह में डालेंगे, वे मर जायेंगे।''

इधर तो इन दोनों मित्रों की बातें हुईं। उधर वे दोनों भी चुप-चाप बैठे हुए हैं।

एक कहता है, ''दोस्त! कोई बात ही नहीं करता। पैसा तो क्या मिला, तूने तो बात चीत ही बन्द कर दी। क्या सोच रहा है?''

दूसरा बोला, ''सोच तो मैं बहुत बढ़िया काम की बात रहा हूँ पर पता नहीं तुझे जचेगी या नहीं।''

वह बोला, ''बता तो सही।''

दूसरा बोला, ''यदि सारा धन हम दोनों ही हड़प लें?''

पहला बोला, ''मैं भी यही सोच रहा था।''

दूसरा बोला, ''फिर कैसे योजना बनाई जाये?''

पहला कहता है, ''उन दोनों को भोजन लेने के लिये भेजा है। यह जंगल है, उसके सामने नदी बहती है। किसी को भी पता नहीं है। जब हम चले थे तो अकेले-अकेले चले थे और यहाँ आकर मिल गये हैं। जब वे रोटियां रखने लगें, तलवार निकाल कर रख लेना। हम गर्दन पर वार करेंगे, बाद में घसीट कर नदी में फैंक देंगे। फिर सोने को आधा-आधा बांट लेंगे।''

इस प्रकार योजनाएं बन गईं। उधर वे दोनों मित्र भोजन लेकर आ जाते हैं। कहते हैं, ''लो भाई! बहुत ही स्वादिष्ट भोजन है।'' वे बोले, ''रख दो यहाँ पर।''

जब वे भोजन रखने लगे, दोनों ने उनकी गर्दनें उड़ा दीं और टांगों से घसीट कर पानी में फैंक दिया।

फिर कहते हैं, ''चलो, अब रोटी खा लें।'' बड़ी मुश्किल से 4-4 ग्रास ही खाये होंगे, उनका जहर इतना तेज़ था कि वहीं लुढ़क गये। माया वहाँ से उठकर सन्तों के पास आ गई।

कहती है, ''देखा, मेरा कौतुक? इस तरह ठगती हूँ मैं, संसार को ऐसे मारती हूँ।''

आथि होइ ता मुगधु सिआना। भगति बिहूना जगु बउराना॥ ***पृष्ठ - 931***

संपै कउ ईसरु धिआईऐ।
संपै पुरबि लिखे की पाईऐ।
संपै कारणि चाकर चोर।। *पृष्ठ - 937*

चाकर बनता है। मनुष्य दूर-दूर जाकर नौकरियां करता है। कहते हैं, "हमने केशों वाला नहीं रखना।" तुरन्त जवाब देता है, मैं केश कटवा देता हूँ, एक मिनट लगता है। किरपाण नहीं चाहिये। कहता है, यह भी उतार देता हूँ। चोरियां करता है -

चोर की हामा भरे न कोइ। चोरु कीआ चंगा किउ होइ॥ *पृष्ठ - 662*

संपै साथि न चालै होर॥ *पृष्ठ - 937*

महाराज गुरू नानक पातशाह फ़रमान करते हैं -

इसु जर कारणि घणी विगुती इनि जर घणी खुआई।
पापा बाझहु होवै नाही मुइआ साथि न जाई॥ *पृष्ठ - 417*

माया बुरी नहीं है। माया का उपयोग बुरा है क्योंकि माया पाकर मनुष्य इतना अन्धा हो जाता है कि उसे पता ही नहीं रहता यदि माया का प्रयोग शुद्ध करे फिर यह काम भी आती है दान कर दिया। अगले जन्म में बना बनाया ठाठ मिल जायेगा। यदि दान नहीं किया तो यह किसी काम नहीं आती। महाराज इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - दान पुंन नहीं संतन सेवा, माइआ कंम ना आई - 2, 2
माइआ कंम न आई - 4, 2
दान पुंन नहीं संतन सेवा, ... -2

धाइ धाइ क्रिपन स्त्रमु कीनो ....॥ *पृष्ठ - 712*

कहते हैं, पैसे के लिये दिन रात भागा फिरता है -

.... इकत्र करी है माइआ॥ *पृष्ठ - 712*

बैंक में जमा किये जाता है। कहता है, अब 10,000 हो गया 20,000 हो गया। 2 लाख हो गया, 10 लाख हो गया। इकट्ठा ही करता चला जाता है। महाराज कहते हैं -

दानु पुंनु नही संतन सेवा कित ही काजि न आइआ॥ *पृष्ठ - 712*

क्या लाभ हुआ? उधर भजन बन्दगी भी छोड़ी और यह पैसा तो बैंक में रखा ही रह जाना है। कोठियां बना लीं, सब यहीं रखी रह जायेंगी। किसी काम तो न आईं।

एक सेठ था, उसने महापुरुषों से ऐसे वचन सुने और उसके मन में विचार आया कि पैसा तो बहुत कमा लिया कि चलो अब थोड़ा बहुत निकाल दें। सन्त कहते हैं, आगे दरगाह में काम आयेगा। दिया हुआ ही आगे मिलता है। जैसा बोओगे वैसा मिलेगा -

जेहा बीजै सो लुणै करमा संदड़ा खेतु॥ *पृष्ठ - 134*

बीज लो जो कुछ बीजना है, वही मिलेगा, बिना बोये नहीं मिलेगा। अच्छे कर्म बोयेगा तो अच्छा मिल जायेगा। बुरे कर्म करेगा तो बुरा मिल जायेगा। दान पुण्य कर ले लाखों गुना होकर मिल जायेगा। उसके चार पुत्र थे। उसने जायदाद के पाँच हिस्से कर लिये। कोठियां आदि भी बहुत थीं। एक-एक कोठी सभी को दे दी। पाँचवी कोठी आप ले ली। सारी जायदाद का पांचवा हिस्सा अपने पास रख लिया। अकेला रहने लग गया और सोचने लग गया कि दान कहाँ करूं? यहाँ पर करूँ या वहाँ पर करूं? दोष निकालने शुरू कर दिये कि वहाँ पर तो ऐसी बात होगी, कोई भी सन्त पसन्द नहीं आया न ही

कोई जगह पसन्द आई। आखिर सोचते-सोचते इस निर्णय पर पहुँचा कि कहीं चोर न ले जायें, उसने दीवार में आला बना लिया और उस पर ईंटें लगाकर बन्द कर दिया और सारा धन उसके अन्दर रख दिया। कुछ दिन बाद वह बीमार हो गया। जब अधिक बीमार हुआ तो सारे सम्बन्धी इकट्ठे हो गये, उन्हें लगा कि अब सेठ का अन्तिम समय आ गया, बस जाने वाला लगता है। कोई बात चीत कर लें। चारों लड़के भी खड़े थे। उस समय वह लड़कों को दीवार की ओर इशारे करने लग गया। लोग कहते हैं कि, ''भाई सेठ कुछ कहना चाहता है, समझो इसकी बात को कि क्या कहना चाहता है?'' लड़के जानते थे, उन्हें पता था कि बापू ने बताया हुआ था कि यहाँ पर मेरा पैसा रखा हुआ है और हमें कहता रहता था कि उसने पुण्य करना है, कहीं अभी भी पुण्य न कर दे।''

लड़के कहते हैं, ''हमारा पिता सेठ यह कहता है कि मैंने बहुत पैसा कमाया। ये देखो, इतनी बड़ी-बड़ी कोठियां बना लीं।''

वह सुनता तो है पर उससे बोला नहीं जाता। खड़ा नहीं हुआ जाता था, फिर उसे गुस्सा सा आ गया और ज़ोर-ज़ोर से खीझ कर दीवार की ओर हाथ मारता है।

भाईचारा कहता है, ''भाई, अब समझो यह क्या कहना चाहता है?'' लड़के बोले, ''अब कहता है कि मैं अब जा रहा हूँ। सभी कोठियां यहीं पर ही रह जायेंगी। मैंने बहुत मेहनत करके बनाई हैं।''

वह बात हो ही न सकी। आखिर श्वांस निकल गये। गुरू महाराज कहते हैं, प्यारे फिर क्या करेगा -

मन की मन ही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी कालि गही॥ *पृष्ठ - 631*

फिर किसी काम नहीं आतीं -

धाइ धाइ क्रिपन स्रमु कीनो इकत्र करी है माइआ।
दानु पुंनु नही संतन सेवा कित ही काजि न आइआ॥ *पृष्ठ - 712*

बल्कि उलटा जो माया से प्यार करता है, उसकी गति बहुत बुरी होती है -

धारना - नरकां नूं लै जाएगा, माया दा प्यार बुरा है - 2, 2
माया दा प्यार बुरा है - 2, 2
नरकां नूं लै जाएगा, ... -2

बहु परपंच करि पर धनु लिआवै। सुत दारा पहि आनि लुटावै।
मन मेरे भूले कपटु न कीजै। अंति निबेरा तेरे जीअ पहि लीजै।
छिनु छिनु तनु छीजै जरा जनावै। तब तेरी ओक कोई पानीओ न पावै।
कहतु कबीरु कोई नही तेरा। हिरदै रामु की न जपहि सवेरा॥ *पृष्ठ - 656*

बेईमानियां करके, छल कपट करके, मिलावटें करके, धोखे देकर, कपट करके, बेअन्त प्रकार के छल करके, पैसे कमा कर लाता है तथा सुत (पुत्र) पर तथा दारा (पत्नी) पर वह धन लुटाता है। कहते हैं, इन्होंने तेरा साथ नहीं देना प्यारे। जहाँ पर लेखा देना होगा, वहाँ पर अकेला ही जायेगा।

गरीब लोगों से तू रिश्वतें लेता है। बैंक से रूपये लो। अपना कमीशन काट लिया और कहता है जी पचास हजार मन्जूर करवा दिया। मैंने कहा, ''मिल गये पैसे?''

कहता है, ''बैंक मैनेज़र पाँच हजार रूपये मांगता है। बीस हजार पास करता है। फिर कहता है, पाँच हजार छोड़ दे, पच्चीस हजार पर दस्तखत कर दे।''

पच्चीस हजार पर हस्ताक्षर कर दिये। पता नहीं है प्यारे, वापिस देना कितना मुश्किल हो जायेगा। व्याज भी लग जाता है, 18ज व्याज दर है। अढ़ाई गुणा हो जाता है, फिर जमीन बेचनी पड़ती है। कहीं भी काम कर लो, कोई एक महकमे (विभाग) की बात नहीं है, सभी महकमे चोरों के हो गये, सभी जगह ठगी ही ठगी हो गई, धोखा ही धोखा, दुनियां दुखी हो चुकी है। कहीं से भी चैन नहीं आती। अमन की सांस नहीं आ रही। जैसे जोंक चिपट जाती है, ऐसे चारों ओर चिपक गई है। कहते हैं, फिर क्या होगा?

फिर बुढ़ापा आने वाला है, तब रोयेगा। जब यमदूतों ने आकर पकड़ कर ले जाना है न? फिर मुश्किल में पड़ जायेगा। महाराज कहते हैं, अब तो तू किये जा रहा है फिर मुश्किल हो जायेगी–

धारना - जिन्दे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी,
फेर तेरा कोई न बणे - 2, 2
फेर तेरा जी, कोई ना बणे - 2, 2
जिन्दे रोवेंगी ते रो-रो पछोतावेंगी, ... -2

आपीन्है भोग भोगि कै होइ भसमड़ि भउरु सिधाइआ।
वडा होआ दुनीदारु गलि संगलु घति चलाइआ।
अगै करणी कीरति वाचीऐ बहि लेखा करि समझाइआ।
थाउ न होवी पउदीई हुणि सुणीऐ किआ रूआइआ।
मनि अंधै जनमु गवाइआ॥ पृष्ठ - 464

जन्म गवाँ कर रोता है, फिर जब कहते हैं, यहाँ जगह नहीं मिलनी जाओ। अब कुत्ते बिल्लों की यौनि में जाकर पड़। कहते हैं तेरी करनी, नरकों में ले जाती है –

तनु धनु आपन थापिओ हरि जपु न निमख जापिओ
अरथु द्रबु देखु कछु संगि नाही चलना॥ पृष्ठ - 678

तेरे साथ तो कुछ जाना ही नहीं है। नरकों में कैसे ले जाती है? जो सारी जिन्दगी पैसा-पैसा, कोठियां-कोठियां, जमीन-जमीन करता मर जायेगा, उसकी गति बहुत बुरी होती है –

अंति कालि जो लछमी सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
सरप जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ - 526

साँप बन जायेगा। गुरू छठे पातशाह महाराज फिरोजपुर जिले के एक गाँव लधाईके के बाहर रोही में खड़े हैं। चारों ओर आस-पास सरकंडे उगे हुए हैं। सरकंडों के बीच में ऐसी आवाज़ आ रही है जैसे दो सांड आपस में लड़ रहे हों। सिख कहते हैं, ''महाराज जी! पता नहीं इधर कहाँ से आवाज़ आ रही है देखें?''

महाराज कहते हैं, ''कोई बात नहीं यह जो आवाज़ आ रही है, यह इधर ही आ जायेगी।''

देखते ही देखते एक बड़ी सराल (अजगर की तरह) निकली। साध संगत जी! जहाँ हमारी जमीनें थीं, वहाँ पर 18 इंच चौड़ी और 22 फुट लम्बी सरालें हुआ करती थीं। उनके पेट में पूरा का पूरा हिरण समा जाता था। तीन-तीन जानवर उनके पेट में से निकाले। सिख कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! आपकी ओर बढ़ती आ रही है।'' महाराज कहते हैं, ''आने दो।'' जब पास पहुँची तो महाराज जी ने चरण स्पर्श कर दिया। चरण स्पर्श करते ही क्या देखते हैं कि धुआं सा निकलना शुरू हो गया। उसमें

से कुछ प्रकाश सा निकला और मनुष्य जैसी शक्ल बन गई।

कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! यह कौन है?''

महाराज जी ने पूछा, ''भाई! कौन है तू? संगत को अपना परिचय दे।''

कहने लगा, ''महाराज! मैं गुरू था। कच्चा गुरू, पाखण्डी गुरू और मैं पैसा ही पैसा चाहता था। सभी को कहता तू भी दसवन्ध दे। तू भी दसवन्ध दे। दसवन्ध इकट्ठा करते-करते मैं कोई नेकी का काम नहीं करता था। अपनी ऐशो-इशरत पर पैसे खर्च करता रहा और मरते समय मेरे पास बेअन्त धन जमा था। मेरी सुरत पैसों में ही फसी रह गई और मैं साँप बन गया। महाराज! मैं बहुत दुखी हुआ। जो मेरे शिष्य थे, वे मेरा ध्यान धरा करते थे। अब वे मेरे शरीर में कीड़े बन कर रहते हैं और महाराज! उन पर भी कृपा करो।''

महाराज जी ने उन पर भी कृपा कर दी। क्या सुख दिया पैसे ने? साँप बना दिया -

अरी बाई गोबिद नामु मति बीसरै॥ पृष्ठ - 526

अंति कालि जो लड़िके सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
सूकर जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ - 526

सूअर बन जाता है, जो अन्त समय में बच्चों का ध्यान धरता है कि मेरे पुत्र नहीं हुआ, जोड़ी बन जाये (बहन भाई की) अकेला है। यदि ऐसा व्यक्ति मर जाये तो सूअरनी बनता है। 12-12 पैदा होते हैं, एक ही बार में और वे भी 6-6 महीने बाद पैदा होते हैं -

अंति कालि जो इसत्री सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
बेसवा जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ - 526

स्त्री में ध्यान रह जाये तो वेश्या बन जाता है -

अंति कालि जो मंदर सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
प्रेत जोनि वलि वलि अउतरै॥ पृष्ठ - 526

जायदाद में यदि सुरत रह जाये, कोठियों में, जमीन जायदाद में तो प्रेत बन जाता है। यदि परमात्मा से प्यार है -

अंति कालि नाराइणु सिमरै ऐसी चिंता महि जे मरै।
बदति तिलोचनु ते नर मुकता पीतंबरु वा के रिदै बसै॥ पृष्ठ - 526

परमेश्वर उसके हृदय में बस जाता है और सीधा ही सचखण्ड में जाता है। महाराज कहते हैं, यह नरकों को ले जाती है यदि इसका प्रयोग गलत किया जाये। इसके साथ प्यार मत कर। यह तो -

दमड़ा तिसीका जो खरचै अर खाए। देवै दिलावै रजावै खुदाइ।
होता न राखै अकेला न खाइ। तहकीक दिलदानी वही भिशत जाइ॥ नसीहतनामा

परमेश्वर ने फालतू दिया है। भलाई के काम कर ले। जो तेरे साथ जायेंगे। अन्यथा यह धन साथ नहीं जाता -

बाबा माइआ साथि न होइ।
इनि माइआ जगु मोहिआ विरला बूझै कोइ॥ पृष्ठ - 595

और माया ही सारे झगड़ों का कारण है। कहते हैं -

माइआ संचि राजे अहंकारी। माइआ साथि न चलै पिआरी॥ पृष्ठ - 1342

प्यारी होने के कारण तो सभी ने रख ली, वह भी सबसे ज्यादा, पर साथ नहीं जाती –

माइआ ममता है बहु रंगी। बिनु नावै को साथि न संगी॥ पृष्ठ - 1342

कहते हैं माया का कोई एक रंग नहीं है। पुत्र भी माया हैं, रिश्तेदार भी माया है, जमीन जायदाद भी माया है, अपनी प्रभुता भी माया है, अपना पद भी माया है, इनमें चित्त लगाता है। तू नाम की ओर चित्त नहीं लगाता ये सभी चीज़ें तेरे साथ नहीं जायेंगी, केवल नाम जायेगा –

माइ बाप पूत हित भ्राता उनि घरि घरि मेलिओ दूआ॥ पृष्ठ - 673

भाई को भाई मार देता है। कहता है मेरा हिस्सा नहीं दिया। एक भाई बड़ा है, सारी जायदाद अपने पास रख ली। छोटे भाई, भागे फिरते हैं। फिर वे भी कसर नहीं छोड़ते वे भी मारने की तैयारियां कर लेते हैं –

किस ही वाधि घाटि किस ही पहि सगले लरि लरि मूआ॥ पृष्ठ - 673

कहते हैं, यह माया लड़ाती है। परमेश्वर का नाम तो नहीं लड़वाता। परमेश्वर का नाम तो स्वंय ही सुख तथा शान्ति प्रदान करता है और जो नाम के पास आ जाये तो उसकी बुद्धि निर्मल कर देता है।

महाराज कहने लगे, ''भाई लहणा! यह आग दिखाई तो देती नहीं पर बहुत गुंझलदार है। यह और तो सभी को जला देती है, सन्त नहीं जलते इससे –''

हउ बलिहारी सतिगुर अपुने जिनि इहु चलतु दिखाइआ।
गूझी भाहि जलै संसारा भगत न बिआपै माइआ॥ पृष्ठ - 673

छल नागनि सिउ मेरी टूटनि होई॥ पृष्ठ - 1347

कहते हैं, सन्त इसके साथ दोस्ती ही नहीं लगाते, तोड़ कर रखते हैं। जब आ जाती है तभी सोचते हैं कि इसका कहाँ प्रयोग करें। यदि अपना सभी कुछ बन गया फिर दूसरी ओर दूसरे कामों में लगाना शुरू कर देते हैं जैसे डिस्पैन्सरी बनवा दी, अमुक गाँव का गुरूद्वारा ठीक नहीं है, इसकी मुरम्मत करवा दो, अमुक गाँव में स्कूल बनवा दो। उसके साथ प्यार नहीं करते कि बैंक में जमा करवा दो –

छल नागनि सिउ मेरी टूटनि होई। गुरि कहिआ इह झूठी धोही॥ पृष्ठ - 1347

मेरे गुरू ने बता दिया कि यह झूठी है। इसके साथ प्यार मत कर बैठना। पास ही नहीं फटकने देते। भक्त रविदास जी कबीर साहिब के गुरू भाई थे। कबीर साहिब का एक सेवक था, उसने रविदास जी के दर्शन नहीं किये थे। तब कबीर साहिब बोले, ''खान साहिब! आप भक्त रविदास जी के दर्शन करने कभी नहीं गये?''

खान बोला, ''नहीं महाराज! मैं तो कभी नहीं गया।''

कबीर साहिब कहते हैं, ''देखो! हमारे गुरू भाई हैं। आप एक बार जरूर दर्शन करके आओ। बहुत अच्छे हैं। बहुत पहुँचे हुए हैं। वे तो परमेश्वर का रूप हैं।''

मन बना लिया और सन्त रविदास जी के दर्शनों के लिये तैयारी करता है। कहते हैं यदि सन्तों के पास जाना हो तो खाली हाथ नहीं जाना चाहिये। यदि खाली हाथ कोई जाता है तो खाली हाथ ही लौट आता है। कुछ न कुछ श्रद्धा रूप में, कोई न कोई चीज़ अवश्य लेकर जानी चाहिये, बेशक फूल ही क्यों न ले जाओ, दातुन ही क्यों न ले जाओ। उस वस्तु से उसकी श्रद्धा जांची जाती है। खान के घर एक बहुत कीमती हीरा पड़ा था। अत: मेरे गुरूदेव कहते हैं इसलिये मैं क्यों न वह हीरा उन्हें भेंट

कर दूँ? अतः हीरा लेकर चला गया और जाकर रविदास जी के चरणों में भेंट कर दिया। आपने ध्यान ही न दिया। खान के मन में ख्याल आया कि यह हीरा बड़ा कीमती है और वह समझ रहे हैं कि शायद यह ऐसे ही कोई कांच का टुकड़ा रख दिया लगता है।

खान कहता है, ''भक्त जी! यह हीरा है। हज़ारों रूपये इसका मूल्य है। बहुत कीमती हैं। हमारे खानदान ने इसे सम्भाल कर रखा हुआ है।''

रविदास जी कहते हैं, ''अच्छा! बहुत कीमती है।''

खान, ''हाँ महाराज!'' उन्होंने फिर कोई ध्यान न दिया। जब 4-5 बार कहा तो रविदास जी ने जहाँ जूतियों के, चमड़े के पच्चर (छोटे-छोटे टुकड़े) उठाकर फैंका करते थे, गडढ़े में, उसके अन्दर, उन पच्चरों के साथ ही उसे भी फैंक दिया। वे सुबह होते ही सारे पच्चर निकाल कर बाहर फैंक दिया करते थे। उसका मन बहुत उदास हुआ। कुछ भी न बोले। नमस्कार की और वापिस लौट आया। कबीर साहिब के पास पहुँचा।

कबीर साहिब कहते हैं, ''खान जी! सन्तों के दर्शन करने के पश्चात तो चित्त प्रसन्न हुआ करता है। आपका चेहरा मुर्झा क्यों गया? असली बात बताओ।''

खान कहता है, ''महाराज! मैंने बहुत कीमती हीरा भेंट किया।''

कबीर साहिब, ''फिर।''

खान, ''उन्होंने पच्चरों में फैंक दिया, जहाँ पर चमड़े की पच्चरें काट कर फैंका करते हैं।''

कबीर साहिब, ''तुमने उन्हें बता देना था।''

खान साहिब, ''महाराज! मैंने बहुत कहा।''

कबीर साहिब, ''फिर।''

खान, ''महाराज! वे तो कल उन पच्चरों को फैंक देंगे पता नहीं, वह हीरा किसके हाथ लग जाये? यदि हमें वापिस मिल जाये तो अच्छा है।''

कबीर साहिब, ''चलो! मैं साथ चलता हूँ। तूने तो शर्म के मारे कुछ कहना नहीं।''

कबीर साहिब खान को साथ लेकर आ गये। दोनों भक्त सन्त आपस में मिले। बहुत प्यार किया, रविदास कहते कबीर साहिब को कि वे सिराहने की ओर बैठें पर कबीर साहिब कहते नहीं, ''आप बैठें।'' एक दूसरे का पूरा-पूरा आदर मान करना चाहते हैं। आखिर कबीर साहिब को गद्दी पर बिठाया और आप नीचे उतर कर बैठ गये।

कबीर साहिब कहते हैं, ''रविदास जी! ये खान साहिब मैंने आपके पास भेजे थे।''

रविदास जी, ''हाँ, आए थे, बहुत ही गुरमुख प्यारे हैं।''

कबीर साहिब, ''इन्होंने हीरा भेंट किया था।''

रविदास जी, ''हाँ, किया था।''

कबीर साहिब, ''बहुत कीमती हैं।''

रविदास जी, ''हाँ, इन्होंने बताया था।''

कबीर साहिब, ''फिर, यदि आपको जरूरत नहीं है तो इन्हें वापिस कर दो। आपने तो फैंक ही देना है।''

रविदास, ''कहाँ फैंका था प्यारे?''

खान बोला, ''इन पच्चरों में फैंका था।''

रविदास जी, ''जाओ अपना हीरा निकाल लो।''

जब खान ने ऊपर-ऊपर से चमड़े की पच्चरें उठाईं तो नीचे क्या देखते हैं कि सारा पच्चर हीरों से भरा पड़ा है। सारे अंजलि भर कर बाहर निकाल लिये। इसका हीरा तो छोटा सा था, बाकी सभी हीरे बड़े-बड़े थे। बहुत शर्मिन्दा हुआ कि मैंने एक छोटा सा हीरा सन्तों को भेंट देकर उन पर एहसान किया है और आप तो मालिक हैं, इनके पास कितने बड़े-बड़े हीरे पड़े हैं।

कहने लगे, ''प्यारे! तू कबीर साहिब की संगत करता है। तुझे बताया नहीं कि कौन सा हीरा बड़ा होता है। सन्तों के पास तो वह हीरा है, यदि एक नज़र कर दें तो सारी धरती हीरों से भर दें -''

हरि सो हीरा छाडि कै करहि आन की आस।
ते नर दोजक जाहिगे सति भाखै रविदास॥ पृष्ठ - 1377

कहते हैं, वे तो दोजखों (नरकों) में जायेंगे।

सन्त इसके साथ नहीं बना कर रखते -

छल नागनि सिउ मेरी टूटनि होई। गुरि कहिआ इह झूठी धोही॥ पृष्ठ - 1347

यह धोखा देने वाली है -

मुखि मीठी खाई कउराइ॥ पृष्ठ - 1347

जब उसे खाते हैं फिर कड़वी हो जाती हैं। जब आ जाती है फिर चिन्ता लग जाती है कि कहीं लड़के को पता न चल जाये, घरवाली को पता न चल जाये, अमुक बैंक के खाते का पता न लग जाये, फिर घर वाले कहते हैं - बूढ़े का गला दबाओ जल्दी। यह मरता ही नहीं, काले कौए खा कर पैदा हुआ है। यह पैसा देता ही नहीं। लड़के कहते हैं, ''बापू! कुछ हमारे नाम करा दो। हम ही मरेंगे? तूं तो मरता ही नहीं।'' जब धन दौलत लड़कों के नाम करवा देता है तो वे उसे रोटी देना भी बन्द कर देते हैं। कहते हैं, झगड़ते हैं, कौड़ी समान हो जाता है -

मुखि मीठी खाई कउराइ।
अंम्रित नामि मनु रहिआ अघाइ।
लोभ मोह सिउ गई विखोटि॥ पृष्ठ - 1347

खोटा हो जाता है लोभ और मोह में आ जाता है। लोभ चाहे छोटा हो या बड़ा एक जैसा होता है। एक बार एक लोभी प्रेमी सन्तों के पास आ गया।

सन्त कहते हैं, ''प्रेमी! भोजन खायेगा।''

कहता है, ''हाँ जी।''

सन्त जी, ''अपना भोजन आने वाला है। बैठ, अभी आ जाता है।''

इतनी देर में एक प्रेमी आया। वह 6 पराठें तथा सब्जी आदि लेकर आया।

सन्त बोले, ''प्यारे! वहाँ पर रख दो।'' उसने वहाँ रख दीं।

सन्त कहने लगे, ''ऐसे करो। अब हम स्नान कर लें। फिर आराम से भोजन करेंगे।''

कहने लगा, ''मैं तो जी घर से जब चला था, तो स्नान करके ही आया हूँ।''

सन्त बोले, ''अच्छा! फिर हम स्नान कर आयें। तुम यहाँ बैठकर भोजन का ध्यान रखोगे न?''

वह बोला, ''जी! पूरा ध्यान रखूंगा। आप बिल्कुल भी चिन्ता न करें।''

मन में लोभ आ गया। लालच छोटी वस्तु का, बड़ी वस्तु से बड़ी का भी और छोटी से छोटी चीज़ का भी हो सकता है। लालच एक आदत होती है। महाराज कहते हैं – लालची आदमी का विश्वास मत करना –

लोभी का वेसाहु न कीजै जे का पारि वसाइ।
अंति कालि तिथै धुहै जिथै हथु न पाइ॥ *पृष्ठ – 1417*

जहाँ हाथ न पहुँचे, लोभ वहाँ फैंक देता है। इसने देखा कि सन्त तो नदी में स्नान कर रहे हैं और अभी समय लगायेंगे। मैं देख तो लूं कि क्या बनाकर लाया है। जब देखा कि वे तो परांठे हैं और बहुत ही बढ़िया। सोचा कि 6 परांठे हैं। हमें चार मिलने चाहिये और सन्तों ने कौन सी गिनती की है, चुपचाप दो परांठे खा लो। अतः दो परांठे खा लिये। इधर सन्त जी भी आ गये। रौब के साथ बैठ गया जैसे कुछ पता ही न हो।

सन्त कहते हैं, ''आ जा प्रेमी! भोजन करते हैं।''

कहता है, ''चलो महाराज! खा लेते हैं।''

सन्तों ने जब पौना खोल कर देखा तो उसमें चार परांठे थे। सन्त पूछते हैं, ''प्यारे! रोज़ाना 6 परांठे आते हैं, आज चार हैं, तूने तो नहीं खाये?''

कहता है, ''नहीं महाराज! मैंने कहाँ खाने थे? मैंने नहीं खाये।''

सन्त बोले, ''नहीं, हो सकता है कहीं तेरा जी कर आया हो?''

वह बोला, ''नहीं नहीं महाराज! मैं ऐसा आदमी नहीं हूँ कि आपके परांठे चोरी करके खा जाऊंगा। आपका और सामान भी तो पड़ा है, मैंने तो उधर झांक कर भी नहीं देखा।''

सन्त जी ने दो उसे दे दिये और दो आप ले लिये। सन्त जी के मन में आया कि चाहे कुछ भी हो इससे सच बुलवा कर ही छुड़वाना है। यह तो लोभी आदमी है।

सन्त कहते हैं, ''कहाँ जाना है?''

कहता है, ''शहर में।''

सन्त जी, ''आगे तो नदी पड़ती है।''

वह बोला, ''जी! वहाँ से किसी तरह से पार कर जायेंगे। कोई किश्ती वगैरा मिल जायेगी, कुछ और साधन ढूँढ लेंगे।''

सन्त बोले, ''मैंने भी चलना है।'' साथ ही चल पड़े। आगे पहुँचे तो नदी उछालें मार रही थी। किश्ती वाले ने कहा, इतनी तेज धार में किश्ती उलट जायेगी।

सन्त कहते हैं, ''आ जा! राम-राम कह कर पार करते हैं।'' सन्त राम-राम कहते हैं। इसने भी पैर रखा और नदी पार कर गया।

सन्त बोले, ''देखा! राम के नाम में कितनी ताकत है?''

कहता है, ''हाँ महाराज।''

सन्त ने पूछा, ''अब तू उस राम को हाज़िर-नाज़िर समझ कर बता कि परांठे खाये थे या नहीं?''

वह बोला, ''महाराज! परांठे? मैंने तो परांठे नहीं खाये। आपको बहम हो गया है। मैंने नहीं खाये।''

आगे चले तो रास्ते में शेर मिल गया।

कहता है, ''महाराज! यह तो खा जायेगा।''

सन्त बोले, ''राम-राम कह।'' राम-राम कहते-कहते पार हो गये। सन्तों ने पीछे मुड़ कर देखा।

सन्त कहते हैं, ''देख प्यारे! परमेश्वर के नाम की शक्ति।''

कहता है, ''हाँ महाराज! यह तो हम मानते हैं। मैं तो पहले से ही मानता हूँ।''

सन्त बोले, ''अब तो बता दे, तूने परांठे खाये थे?''

वह बोला, ''महाराज! आपको तो बहम हो गया। मैंने आपके यहाँ रोटी तो क्या खाई?''

आगे चले तो जंगल में आग लगी हुई है।

वहाँ गये तो सन्त कहते हैं, ''राम-राम कह कर आ जा। निकल चलें, कुछ नहीं होता।''

उसमें से भी पार हो गये। जब सन्त जी लौटकर पीछे देखने लगे तो कहता है, ''आप परांठों की बात फिर करने लगे हो?''

सन्त जी कहते हैं, ''हाँ।''

कहता है, ''आपको तो बहम हो गया है।''

आगे चल कर कुछ गिरा हुआ देखा। सन्त जी कहने लगे, ''प्यारे! वह कुछ पड़ा हुआ है। इसे हम मिलकर बांट लेंगे।''

जब खोल कर देखा तो सोने की मोहरों से भरी एक थैली पड़ी थी। सन्त कहने लगे, ''गिनती क्या करनी है, ऐसे ही अंजुलियां भर-भर कर ढेरियां लगा लेते हैं।''

तीन ढेरियां लगा दीं। कहता, ''महाराज! हम तो दो आदमी हैं, ढेरियां तीन लगाई हैं।''

सन्त कहते हैं, ''यह तो तेरी, यह मेरी और यह उसकी जिसने परांठे खाये थे।''

तुरन्त बोल पड़ा, ''वे तो मैंने ही खाये थे। मुझे तो शर्म आ गई। मैं बताता हूँ महाराज! वे तो मैंने ही खाये थे जब आप स्नान करने गये हुए थे।''

सन्त कहते हैं, ''तूने तो तीन बार कहा कि तूने नहीं खाये।'' कहता है, ''नहीं महाराज! अब मैं सच कहता हूँ। परमेश्वर को हाज़िर-नाज़िर समझ कर कहता हूँ कि मैंने ही खाये थे।'' महाराज कहते हैं लोभ ऐसी चीज़ है -

लोभ मोह सिउ गई विखोटि। गुरि क्रिपालि मोहि कीनी छोटि॥ पृष्ठ - 1347

कहते हैं परमेश्वर ने, गुरू ने, हमें बचा लिया इन बातों से वरना, इससे एक घर थोड़े ही बर्बाद हुआ है, बहुत घर बर्बाद हो गये -

इह ठगवारी बहुतु घर गाले। हम गुरि राखि लीए किरपाले।
काम क्रोध सिउ ठाटु न बनिआ। गुर उपदेसु मोहि कानी सुनिआ॥ पृष्ठ - 1347

जह देखउ तह महा चंडाल। राखि लीए अपुनै गुर गोपाल॥ पृष्ठ - 1347

इस तरह से महाराज जी कहते हैं। सारा संसार इस माया की गुप्त आग में जल रहा है, निकल नहीं सकता। यह ऐसी चीज़ है। यह तो ऐसे समझ लो कि इसने सारा संसार ही खा लिया। ऐसा फ़रमान करते हैं -

धारना - माइआ मोहणी ने खा लिआ जग सारा,
गुरमुखां दे नेड़े ना आवे - 2, 2
मेरे पिआरे, गुरमुखां दे नेड़े ना आवे - 2, 2
माइआ मोहणी ने .... - 2

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ।
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ॥ पृष्ठ - 643

महाराज कहते हैं, ''इसने मनमुख तो सभी खा लिये। दिखाई देते हैं चलते फिरते, परन्तु सभी माया के खाये हुए हैं। कितना बे-अमन संसार में है। सभी माया ने खा लिये। शासकों को भी खा गई। कुर्सियों अर्थात ऊँचे-ऊँचे ओहदों पर बैठने वालों को तो खा गई, जो राज करने वाले थे। संसार को कितना कष्ट उठाना पड़ रहा है? पूछो, उन माताओं से जिनके बच्चे मार दिये जाते हैं? कितनी कठिनाई आ रही है? यह सारा माया का जंजाल डाला हुआ है। कुर्सियों का झगड़ा है, साध संगत जी।

कौन निकलते हैं?''

.... जिनी सचि नामि चितु लाइआ॥ पृष्ठ - 643

बिनु नावै जगु कमला फिरै गुरमुखि नदरी आइआ॥ पृष्ठ - 643

कहते हैं, संसार पागल हो गया है -

धंधा करतिआ निहफलु जनमु गवाइआ सुख दाता मनि न वसाइआ।
नानक नामु तिना कउ मिलिआ जिन कउ धुरि लिखि पाइआ॥ पृष्ठ - 643

महाराज जी ने तो बाणी के अन्दर इसे बहुत गलत खिताब दिया है। महाराज कहते हैं वह तो सर्पणी है सर्पणी।

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ॥ पृष्ठ - 480

इससे अधिक कोई बली पुरुष नहीं है। यह जितना भी संसार है, इसमें केवल गुरमुखों को छोड़कर और किसी को नहीं छोड़ती, न देवियों को और न ही देवताओं को छोड़ती है। न बड़ों को छोड़ती है और न ही छोटों को छोड़ती है-

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ। जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ॥ पृष्ठ - 480

तप करते तपसी भूलाए।। *पृष्ठ - 370*

कहते हैं, तप करते हुए तपस्वी भी भ्रमित कर दिये। एक तपस्वी था। कोई एक प्रेमी आकर उनकी सेवा करने लग गया, यह सोचकर कि वह तो बहुत तप करता है वह तो समाधि लगाये रहता है। एक और प्रेमी आया, यह पहरे पर बैठा था, उसने पाँच मोहरें शीश नवां के अर्पित कर दीं। उन पाँच मोहरों को जब रखा तो उनके खटके की आवाज़ अलग-अलग आई। उसने पहले के ऊपर एक फैंकी, दूसरे के ऊपर तीसरी, फिर चौथी, पाँचवी मोहर फैंकी। सेवादार ने मन ही मन कहा, ''सन्त जी समाधि में हैं, एक मैं अपनी जेब में रख लेता हूँ। काम आयेंगी।'' सन्तों का सेवक था उसने सोचा कि सन्त जी को क्या पता चलना है कि मैंने एक मोहर उठाकर जेब में डाल ली है। सन्त जी ने नेत्र खोले और देखा कि ये तो चार मोहरें हैं।

सन्त जी कहते हैं, ''प्यारे! पाँच मोहरें अर्पित की थीं।''

सेवादार बोला, ''महाराज! आपने तो नेत्र बन्द किये हुए थे।''

सन्त कहते हैं, ''मैंने कान तो बन्द नहीं किये हुए थे। मुझे उन मोहरों का खटका कानों से सुना था।''

सेवादार बोला, ''महाराज! फिर तो आपका ध्यान इसके अन्दर था, परमात्मा में ध्यान नहीं था?''

इसलिये महाराज जी कहते हैं, यह तप कर रहे तपस्वियों को भी भुला देती है -

जिनि लाई प्रीति सोई फिरि खाइआ॥ *पृष्ठ - 370*

जिसने इसके साथ प्यार की गाँठ बान्ध ली, कहते हैं, उसे तो खाया हुआ समझो -

जिनि सुखि बैठाली तिसु भउ बहुतु दिखाइआ। *पृष्ठ - 370*

कहते हैं जो इसकी केवल सम्भाल रक्षा में ही लगा रहता है, इसको खर्च नहीं करता, परमेश्वर के निमित्त नहीं लगाता, उसे फिर बहुत ही डर लगा रहता है। हर समय यही भय खाता रहता है कि कोई लूट कर न ले जाये, आयकर वाले अधिकारी छापा न मार दें, लड़के न लूट कर ले जायें। महाराज कहते हैं छोटे-छोटे लोगों की बातें छोड़ो-

मुनि जोगी सासत्रगि कहावत सभ कीन्हे बसि अपनही॥ *पृष्ठ - 498*

मुनि, योगी, बड़े-बड़े पण्डित शास्त्री -

तीनि देव अरु कोड़ि तेतीसा ....॥ *पृष्ठ - 498*

कहते हैं तीनों देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा 33 करोड़ देवता -

.... तिन की हैरति कछु न रही।। *पृष्ठ - 498*

माया ने सभी को मोह में फैंक दिया -

बलवंति बिआपि रही सभ मही॥ *पृष्ठ - 499*

कहते हैं, ब्रह्मा, विष्णु, महेश, तीन महान देवता हैं तीनों को खा गई माया। कैसे खा गई? भाई गुरदास जी लिखते हैं कि -

चारे वेद वखाणदा चतुरमुखी होइ खरा सिआणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 12/7*

चार वेद जिसे ईश्वरीय बाणी कहते हैं, उसकी व्याख्या करते हैं और चर्तुमुखी कहलाते हैं, भाव उसके चार मुख हैं, उसकी लड़की का नाम सरस्वती था।

लोकां नो समझाइदा देखि सुरसती रूप लोभाणा॥ *भाई गुरदास जी, वार 12/7*

उसकी लड़की सरस्वती सामने आकर बैठ गई। ब्रह्मा के अन्दर ऐसी काम दृष्टि उत्पन्न हुई कि लड़की की ओर बुरी नज़र से देखना शुरू कर देता है। दुनियां की सृष्टि करने वाले देवता का यह हाल है, छोटे मोटे आदमी की बात नहीं कर रहे। लड़की ने भी देख लिया कि वह मुझे कुदृष्टि से देख रहे हैं, वह एक तरफ हट गई। फिर वह उधर वाले सिर से देखने लग गया, फिर दूसरी ओर खिसक गई। वह फिर दूसरे नेत्र से देखने लगा। पीछे की ओर चली गई, वह तीसरे नेत्र से देखने लगा। अन्त वह अपनी शक्ति द्वारा उड़ कर चली गई। इसने अपना पाँचवा सिर लगा लिया। शिव जी पास बैठे थे, वे बोले, ''यह कितना बुरा अपमानित काम हुआ।'' सारे देवता बैठे हैं और वह अपनी लड़की पर ही मोहित हो गया। उन्होंने त्रिशूल उठाई और उसका सिर धड़ से अलग कर दिया। उनके हाथों में उसका सिर चिपक गया। सो महाराज कहते हैं देखो इतना महान देवता –

तीनि देव अरु कोड़ि तेतीसा ....॥ *पृष्ठ - 498*

विष्णु जी सभी देवताओं में सबसे बड़े हैं। एक बार पार्वती हार श्रंगार करके बैठी है और जलन्धर एक असुर हुआ है। उस समय उसका मुकाबला कोई देवता नहीं कर सकता था। वह शिव जी से कहने लगा –

कहि शिव नार श्रृंगार कै मम ग्रहि देइ बिठाइ॥

कहता है, ''हे शिव! तेरी स्त्री ने हार श्रृंगार किया हुआ है, इसे आज मेरे घर भेज दे।''

ना त्रिशूल संभाल कै संगि लरो मोहि आइ॥

कहता है, ''अन्यथा त्रिशूल उठा और मेरे साथ युद्ध कर।'' शिव जी ने विष्णु जी से प्रार्थना की और कहा, ''यह तो बहुत ताकतवर है। इसको मैं वश में नहीं कर सकता। आप कृपा करके मेरी सहायता करो।'' विष्णु जी भी मदद करने चल पड़े। वह किसी की भी पेश न चलने देता। विष्णु जी ने अर्न्तध्यान होकर देखा कि इसमें इतनी ताकत कहाँ से आई है? उसकी जो पत्नी थी वह पतिव्रता थी। पतिव्रता स्त्रियों की ताकत बहुत महान मानी गई है। पहले मैंने प्रार्थना की थी कि एक महिला पतिव्रता के बल पर सचखण्ड में दर्शन करके लौट आई थी।

अत: विष्णु जी ने सोचा, जब तक इसकी पत्नी का सत नहीं टूटता, तब तक यह हारने वाला नहीं। उस समय विष्णु जी ने जलन्धर का रूप धारण कर लिया और उसकी पत्नी के पास पहुँच गये। जलन्धर की पत्नी का नाम वृन्दा था। वहाँ पर पहुँच कर मीठी-मीठी बातें करते हुए, अन्त में उसका सत भंग कर दिया। वृन्दा को भी पता चल गया कि उसके साथ बहुत बड़ा धोखा हुआ है। उसने उसी समय श्राप दे दिया और कहा, ''जाओ, तुम धरती पर पत्थर होकर गिरो और तुम्हारे शरीर पर एक सफेद धारी होगी। जिसे सालिग्राम कहते हैं।''

उस समय पृथ्वी पर गिरते-गिरते विष्णु जी कहते हैं, ''मैं तो गिरूंगा ही पर तुझे भी तुलसी बनाऊंगा। लोग मेरा विवाह तेरे साथ ही किया करेंगे।'' महाराज कहते हैं – ऐसे भुलाती है माया।

अब शिवजी की वार्ता सुनो। जब समुद्र को रिड़का गया तो उसमें से एक मोहिनी स्त्री निकली। उसे देखकर शिव भी लुभायमान हो गये। वह विष्णु ने ही अपना रूप बनाया हुआ था। आगे-आगे विष्णु (स्त्री रूप में) पीछे-पीछे शिव भागे चले जा रहे हैं। महाराज कहते और किसकी बात करें-

तीनि देव अरु कोड़ि तेतीसा तिन की हैरत कछु न रही॥ *पृष्ठ - 498*

कहते हैं यदि यह वश में आती है तो सन्तों के वश में आती है –

धारना - दासी हो के कार कमावे, माइआ साधूआं दी - 2, 2
माइआ साधूआं दी - 4, 2
दासी हो के कार कमावे, ... - 2

वह कहती है मैं औरों की तो बहन–भानजी लगती हूँ पर चेरी (दासी) उसकी हूँ जो मुझे बान्ध लेता है। उसकी तो मैं सेवा करती फिरती हूँ –

माइआ दासी भगता की कार कमावै। चरणी लागै ता महलु पावै॥ पृष्ठ - 231

उसका छुटकारा ही नहीं होता और उसका उद्धार भी नहीं होता जब तक सन्तों के चरणों में नहीं जाती –

सद ही निरमलु सहजि समावै। पृष्ठ - 231

नानक हरिनामु जिनी आराधिआ अनदिनु हरि लिवतार।
माइआ बंदी खसम की तिन अगै कमावै कार।। पृष्ठ - 90

उनके तो आगे–आगे घूमती रहती है –

जिनि लाई प्रीति सोई फिरि खाइआ। जिनि सुखि बैठाली तिसु भउ बहुतु दिखाइआ।
भाई मीत कुटंब देखि बिबादे। हम आई वसगति गुर परसादे॥ पृष्ठ - 370

जिस पर गुरू की कृपा हो कहते हैं, उसके वश में हो जाती है –

ऐसा देखि बिमोहित होए।
साधिक सिध सुर देव मनुखा बिनु साधू सभि ध्रोहनि ध्रोहे॥ पृष्ठ - 370

सन्तों को छोड़कर कहते हैं, बाकी सभी धोखा खा गये। कोई एक–आध नहीं, सारा संसार ही माया के धोखे में भ्रमित है। यहाँ पर है तो परमेश्वर, पर दिखाई क्यों नहीं देता? माया नज़र नहीं आने देती –

इकि फिरहि उदासी तिन्ह कामि विआपै॥
इकि संचहि गिरही तिन्ह होइ न आपै। पृष्ठ - 370

घर बार छोड़ दिया, सब कुछ छोड़ दिया, पर काम उनका पीछा नहीं छोड़ता। कुछ लोग पैसा धन दौलत इकट्ठी करते हैं, बैकों में जमा करते हैं, कहते हैं, उनकी यह बना नहीं करती –

इकि सती कहावहि तिन्ह बहुतु कलपावै। हम हरि राखे लगि सतिगुर पावै।
तपु करते तपसी भूलाए। पंडित मोहे लोभि सबाए॥ पृष्ठ - 370

साध संगत जी! कितने मोहित किये हैं माया ने। कहते हैं, सभी को मोहित किया हुआ है। मुझे एक प्रेमी ने कहा, ''अजी! हमने कीर्तन दरबार सजाया था, आप नहीं आये?'' मैंने कहा, ''मेरा रागियों के बीच क्या काम? हमारा तो सीधा सा काम है, सभी इकट्ठे होकर बोलते हैं।''

फिर कहता है, ''आपको जरूर आना चाहिये था।''

मैंने कहा, ''मैं तो यहाँ पर नहीं था।''

कहने लगा, ''अपने घर गये हुए थे?''

मैंने पूछा, ''तुमने खर्च कितना किया? मैंने सुना है कि कीर्तन दरबार पर तो बहुत खर्च हो जाता है।''

वह बोला, "हम एक रागी के पास गये। उसने कहा कि वह एक घंटे के 3000 रूपये लेता है। दूसरे के पास गये उसने अपना रेट 4000 रूपये प्रति घंटा बताया। तीसरे के पास गये। वह बोला, देख काका! एक घंटे के 3200 रूपये लूंगा। इसके बाद चौथे रागी के पास गये, उसने कहा कि वह एक घंटे के 3000 रूपये लेता है।"

फिर मैंने पूछा, "पैसे कैसे दिये?"

वह बोला, "पैसे की क्या बात है? संगत बहुत आ जाती है, हम चढ़ावे (भेंट) का हिसाब किताब लगाते हैं, सारे पैसों की औसत निकाल लेते हैं, हमने अपनी जेब से तो देने नहीं होते? जब हमने औसत निकाली तो 3000/- वाले की 2000/- बनी, 5000 वाले की 3500/- बनी। हम पैसों की ढेरियां लगाकर रखते गये और कहा, महाराज! इससे ज्यादा अब हमारे पास है, भी नहीं। अब कीर्तन तो हमने करवा लिया था। हमने सोचा, अब ये क्या कर लेंगे हमारा? उन्होंने चुप चाप पैसे उठाये और चले गये। हाँ, पहले वे कहते रहे कि उनका रेट कम नहीं होता, वे पूरे-पूरे पैसे लेंगे।"

सो महाराज कहते हैं, प्रेमियो! यह माया ऐसे भुलाती है कि कथाकार लोगों को धन में से, माया में से निकालने के लिये कथा करेंगे, परन्तु अपना मोल पहले ही निश्चित कर लेते हैं -

त्रै गुण मोहे मोहिआ आकासु। हम सतिगुर राखे दे करि हाथु॥ *पृष्ठ - 370*

कहते हैं, माया ने तो आकाश भी मोह लिया। रजोगुण, सतोगुण, तमोगुण इन तीन गुणों में सभी देवता मोहित हुए पड़े हैं -

गिआनी की होइ वरती दासि। करि जोड़े सेवा करे अरदासि।। *पृष्ठ - 370*

जिन्हें ज्ञान हो गया, उनके साथ तो दासी की तरह बनकर व्यवहार करती है और प्रार्थनाएं करती है -

जो तूं कहहि सु कार कमावा। जन नानक गुरमुख नेड़ि न आवा॥ *पृष्ठ - 370*

कहती है, "जो कुछ भी आप कहेंगे मैं वही काम करूंगी। मैं तुझे धोखा नहीं दूंगी।" इसका यह अर्थ नहीं कि स्त्री माया होती है। स्त्री के लिये पति भी माया होता है यदि वह ठीक न हो। यदि स्त्री साथ दे तो भजन बन्दगी, सेवा सभी कुछ हो सकता है। यदि स्त्री साथ न दे तो सभी कुछ किया कराया बर्बाद कर सकती है।

एक बार एक महात्मा को उसकी पत्नी कहती है, "सन्त जी! यदि मैं आपकी मदद न करूं तो आपको कोई न पूछे? यह तो मेरी मेहरबानी है कि मैंने तुम्हें सन्त बनाया हुआ है।"

महात्मा बोले, "तू क्या कर सकती हैं?"

वह बोली, "मैं क्या कर सकती हूँ, करके दिखा देती हूँ, आप गुस्सा मत करना।"

महात्मा बोले, "जा, मैंने तुझे क्षमा किया।"

फिर कहती है, "आपने गुस्सा करना है। मैं तो करके दिखा देती हूँ। मैंने तो केवल दो बातें कहनी हैं, बस इतने में ही कुछ का कुछ बन जायेगा।"

महात्मा बोले, "करके देख ले।"

वह बोली, "अच्छा! फिर क्रोध मत करना।"

उसने क्या किया? बाज़ार चली गई, वहाँ से एक डण्डा और एक रस्सी खरीद लाई। इतनी देर में एक सन्त आ गये जो जान पहचान वाले थे, वैसे भी रोज़ आया करते थे।

उन्होंने पूछा, ''सन्त जी कहाँ गये हैं?''

वह महिला थोड़ा सा धीमी आवाज़ में बोली।

सन्त जी ने फिर कहा, ''क्या बात है? आज आप कुछ धीमी-धीमी बोल रही हैं?''

कहती है, ''मैं क्या बताऊं? आज कल उनका तो सारा ही व्यवहार बदल गया है।''

सन्त ने पूछा, ''कैसे बदल गया?''

वह बोली, ''देखो! पहले कितनी सेवा किया करते थे। मैं भी सेवा करती थी। अब मुझे कह दिया कि कोई भी सन्त आये, उसे पानी तक मत पूछना, न ही भोजन आदि का पूछना, वरना तुझे पीटूंगा। अब जो भी सन्त आते हैं, यह डण्डा ले लेते हैं और रस्सी से बान्ध कर उसकी पिटाई करते हैं। कई बेचारे सन्तों की तो हड्डियां ही तोड़कर रख दीं। बड़ी मुश्किल से छुड़वाती हूँ और अभी आने ही वाले हैं।''

उधर से वे सन्त जी आ रहे थे। इस सन्त ने देख लिया। वह जल्दी-जल्दी दूसरे रास्ते से भाग लिये। इतनी देर में सन्त जी अपने घर आ पहुँचे और पत्नी से पूछते हैं, ''कोई महात्मा तो नहीं आये थे?''

वह बोली, ''आए थे।''

सन्त ने पूछा, ''कोई जल पान, भोजन आदि किया उन्होंने?''

कहती है, ''वे बोले हमने जलपान आदि तो करना नहीं है, यह डण्डा और रस्सी मांगते थे। मैं लेकर आई हूँ और थोड़ी सी देर हो गई। कहने लगे देर क्यों की? बस फिर हाथों को कुछ थोड़ा सा टेढ़ा-मेढ़ा सा करते हुए, जैसे गुस्सा हो जाते हैं, ऐसे करके चले गये। वो जा रहे हैं।''

सन्त जी ने डण्डा और रस्सा उठाया और दूसरे सन्त जी के पीछे भाग लिये। आवाज़ें लगाये जा रहे हैं, ''सन्त जी! रूक जाओ, रूक जाओ।'' दूसरे महात्मा ने देखा कि इसके हाथ में डण्डा भी है और रस्सा भी है, इसलिये आज तो मेरी खूब धुनाई होगी। इस प्रकार महात्मा जी आगे-आगे और पीछे-पीछे सन्त जी। भागते-भागते थक गये।

महात्मा ने कहा, ''अच्छा भाई! तुम मेरे सिर पर मत मारना देखना, मुझे कहीं रस्सी से बांधना मत। यह तुझे क्या हो गया?''

सन्त जी कहते हैं, ''बात क्या है? आपने ही तो डण्डा और रस्सा मांगा था और अब खुद ही छोड़कर भागे जा रहे हो? यदि देर हो गई थी तो क्या फर्क पड़ गया था। वह ले तो आई, आप ऐसे ही गुस्सा किये जा रहे हो?''

महात्मा बोले, ''मैंने तो कोई गुस्सा नहीं किया। तुम्हारी पत्नी तो कह रही थी कि आजकल आप पहले रस्से से बान्ध लेते हैं फिर डण्डे से पिटाई करते हैं।''

सन्त बोले, ''अच्छा यह बात है। काम तो बहुत बुरा किया।'' दोनों वापिस आ गये।

सन्त ने पूछा, "तूने यह क्या किया?"

पत्नी बोली, "मैंने आपको बता दिया था कि आप मुझे माया-माया कहते रहते हैं। यदि मैं माया बन जाऊं तो तुम्हारा सन्तपना बिल्कुल भी न चले, मैं तुम्हें दो दिन में बदनाम करके रख दूंगी। बातें ही बनानी हैं, जैसे मर्ज़ी बना लूँ।"

ऐसी बात नहीं है साध संगत जी! यह सहायता भी खूब करती है। सन्तों के पास ये गाड़ियाँ हैं, इनसे वे किसी भी स्थान पर जल्दी से जल्दी जा सकते हैं। एक एक दिन में कई-कई दीवान लगा सकते हैं। यदि ये सवारियां न हों तो बाजे उठाकर पैदल चलना ही कठिन हो जाये। अतः ऐसा नहीं है कि यह बुरी है। यदि सही ढंग से खर्च की जाये तो यह सहायता करती है। परमेश्वर से मिला देती है। यदि इसका गलत प्रयोग हो, तो परमेश्वर से अलग कर देती है। पर एक माया और भी है। यह तो धन दौलत की बात है, स्त्री की बात है। इसके अतिरिक्त एक माया और भी है जो आखों से दिखाई नहीं देती, उसे अज्ञान कहते हैं। उसने सबसे बुरा काम यह किया हुआ है कि वह परमेश्वर से प्यार नहीं पड़ने देती, अपने साथ ही रहती है। महाराज जी इस तरह फ़रमान करते हैं -

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे॥ *पृष्ठ - 857*

महाराज जी कहते हैं, यह जो माया है, यह सबसे खतरनाक है। वाहिगुरू हाज़िर-नाज़िर है, मेरे तुम्हारे अन्दर है, हम रहते ही वाहिगुरू के अन्दर हैं।

गुरू नानक पातशाह लाहौर में रावी के किनारे बैठे हैं। काफी संगत आती है। उनमें एक 21 साल का नवयुवक भी आता है। बहुत सेवा करता है। उसका नाम मुलतानी मल है। एक दिन संगत के बाद में ठहर गया।

कहता है, "सच्चे पातशाह! मुझे सभी माया-माया करते दिखाई देते हैं। आप भी माया कहते हो। सन्त भी कहते हैं। आप दिखा तो दो कैसी होती है?"

महाराज कहते हैं, "क्या करना है देख कर? उसमें आदमी भ्रमित हो जाता है, भटक जाता है और क्या है उसमें?' माया का यही लक्षण है -

एह माइआ जितु हरि विसरै मोहु उपजै भाउ दूजा लाइआ॥ *पृष्ठ - 921*

माया के कारण ही इस जीव को पता नहीं कि मैं कौन हूँ, यह शरीर समझे जाता है अपने आपको साढ़े तीन हाथ का, इसे पता नहीं -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥ *पृष्ठ - 441*

बेशक जितना मर्ज़ी समझाये जाओ, समझता ही नहीं। हर रोज़ महाराज जी से यह बात कहता है, "महाराज! माया दिखा तो दीजिये।"

महाराज जी ने कहा, "जाओ, स्नान करके आओ।"

महाराज जी रावी के किनारे बैठे हैं। कपड़े उतार कर रख दिये और बोला, "महाराज जी ये मेरे वस्त्र हैं, और कमण्डल है।" साथ ही और भी साथी स्नान कर रहे थे। मित्र से कहता है, "ले भाई! मेरे कपड़ों की देखभाल रखना।"

वे बोले, "चिन्ता मत कर।"

वह जब पानी में घुसा तो उसी समय एक मगरमच्छ ने निगल लिया। मच्छ रावी के साथ चलता-चलता मुलतान पहुँच गया। वहाँ पर जाकर छोटा सा बालक बनाकर मुँह से बाहर निकाल कर फैंक दिया। वहाँ पर एक सेठ तथा सेठानी स्नान करने के लिये आये हुए थे। उन्होंने देखा कि एक छोटा सा बालक किनारे पर पड़ा रो रहा है। हमारी कोई सन्तान नहीं है इसलिये क्यों न हम इसे अपना पुत्र बना लें। उन्होंने उसे उठाया और घर ले आये। पुत्र की तरह पालना शुरू कर दिया। उसे पढ़ाया लिखाया फिर उन्होंने भी उसका नाम मुलतानी मल ही रख दिया। ब्याह कर दिया और इधर भी ब्याह हुआ था, जहाँ पर यह मरा था, उधर भी ब्याह कर दिया। बच्चे हो गये तथा पिता ने कहा, ''बेटा! अब तुम काम किया करो। बहुत सूझवान था। काफी लम्बा चौड़ा व्यापार चलाया। ईमानदार इतना था कि लोग अमानतें इसके पास रखा करते थे।''

एक हरी राम सन्त था। इन्होंने एक बार इसके पास 100 मोहरें अमानत में लाकर रख दीं। कहने लगे, ''ले भाई मुलतानी मल! मैं तीर्थ यात्रा करने जा रहा हूँ। यदि मैं जीवित लौट आया फिर तो ले लूंगा, यदि मर गया तो इसके पुण्य दान कर देना। अपने पास मत रखना।''

मुलतानी मल ने कहा, ''ठीक है।'' उसने उसे पेटी के नीचे रख दिया। इस प्रकार 21 साल का जब हुआ तो एक दिन स्नान करने जाता है। वहाँ पानी में डूब गया और मच्छ ने इसे निगल लिया और वहाँ से लाकर उसे लाहौर पटक दिया। जब पानी से बाहर निकला तो बड़ा अचंभा हुआ और कहता है कि कहाँ आ गया? उसके साथी बोले, ''क्या बात, तुझे कोई बहम हो गया है? तू तो अभी नहाने के लिये पानी में घुसा था। मुलतानी मल तुझे क्या हो गया?''

वह कहता है, ''नाम तो मेरा मुलतानी मल है पर मैं आ कहाँ गया हूँ?''

साथी बोले, ''लाहौर।''

वह बोला, ''मैं तो मुलतान का हूँ।''

साथी बोले, ''ये कपड़े किसके हैं?''

वह कहता है, ''कपड़े तो मेरे ही दिखाई देते हैं, यह जूतियां भी मेरी ही हैं, सभी कुछ मेरा ही लगता है पर भाई! मैं तो मुलतान निवासी हूँ। अपने बच्चों को याद करके रोने लग पड़ा। माँ-बाप भी आ गये। वे भी महाराज जी के दर्शन करने आए थे।''

माता-पिता कहते हैं, ''बेटा! तुझे क्या हो गया? अभी-अभी तो तू नहाने गया था?''

कहता है, ''मैं तुम्हारा पुत्र नहीं हूँ। मेरे माँ-बाप तो और हैं।'' बहुत शोर मच गया। अन्त में उसे घर ले गये और पूछा, ''यह तेरी पत्नी है?''

कहता है, ''है तो मेरी, पर मेरी पत्नी और है।''

उन्होंने पूछा, ''यह लड़का तेरा है?''

कहता है, ''यह बच्चा भी मेरा है, पर मेरा और भी है। कुछ समझ नहीं आती।'' घर के कहने लगे, यह तो पागल हो गया है। इलाज करते हैं, डाक्टरों को दिखाते हैं, मानते ही नहीं। सभी यह कहते हैं कि इसके दिमाग को कुछ हो गया है।

साथी समझाते हैं, ''तू पानी में नहाने के लिये घुसा था और नहा कर तू बाहर निकला। इतनी जल्दी तेरी

सुरत (होश हवास) कहाँ चली गई?''

वह कहता है, ''मेरे घर वाले तो मुलतान में हैं।''

उधर वह सन्त जी भी लौट आये और आकर मुलतानी मल के घर पहुँचे और उन्हें कहते है, ''मैंने मोहरें अमानत के रूप में रखी थीं, वे मेरी वापिस कर दो।'' पूछता है, ''आपका लड़का कहाँ है?''

माँ-बाप बोले, ''वह तो पानी में डूब गया।''

सन्त कहते हैं, ''मेरी मोहरें कहाँ हैं?''

माँ-बाप कहते हैं, ''हमें नहीं पता।'' सन्त ने बहुत ज़ोर लगाया, पर वे कहते हैं, ''जब हमें पता ही नहीं तो कहाँ से दें?''

अन्त वह सन्त जी भी चलते-चलते लाहौर पहुँच गये। वहाँ पर उन्होंने दुकान पर बैठा हुआ देख लिया।

सन्त कहते हैं, ''मुलतानी मल।''

उसने भी पहचान लिया। वह बोला, ''सन्त जी आप आ गये?'' सन्त कहते हैं, ''हाँ भाई! आ गये। तू यहाँ कैसे बैठा हैं?''

मुलतानी मल कहता है, ''सन्त जी! पता नहीं मुझे क्या हो गया? यहाँ भी मैं हूँ, वहाँ भी मैं हूँ।''

सन्त कहते हैं, ''मैंने तुम्हें मोहरें दी थी।''

कहता है, ''पेटी के नीचे रखी हैं। मैं आपको वहाँ के लिये एक चिट्ठी लिख देता हूँ।'' चिट्ठी लिख दी। सन्त हरी राम जी ने मुलतान में जाकर उसके माँ-बाप को दिखाई।

माँ-बाप बोले, ''यह तो हमारे लड़के के हाथों की लिखी चिट्ठी है।''

मोहरें भी पेटी के नीचे रखी हुई मिल गईं। इधर जब तक मोहरें नहीं मिली थीं, तो हरी राम सन्त ने दावा कर दिया था। जब केस चल पड़ा तो बड़ा हैरान हुआ।

लाहौर के नवाब के पास केस पहुँच गया। नवाब बहुत अच्छा था। वह कहता है, ''मैं क्या करूं?'' यह केस मेरी समझ में नहीं आता। यह आदमी मुलतान का भी है और लाहौर का भी है। यहाँ भी कागज़ों में इसका नाम लिखा हुआ है और वहाँ भी लिखा है। यहाँ भी उम्र 21 साल है और वहाँ भी 21 साल है। लाहौर में भी इसकी पत्नी का नाम वही जो मुलतान में है। माँ-बाप का नाम भी दोनों जगह यही है। मैं क्या फैसला करूं?''

अन्त में वह सन्त भी आ गये। उन्हें देखकर कहता है, ''मुझे ढूँढते फिर रहे हो?''

कहते हैं, ''हाँ जी।''

वह बोले, ''पैसे तो वहीं पड़े हैं।''

आखिर में नवाब गुरू नानक पातशाह के पास आ गया। कहता है, ''महाराज! हमें यह बात समझ में नहीं आती।''

महाराज जी ने कहा, ''यह कोई बात है ही नहीं।'' उसे कहते हैं, ''जा! नदीं में स्नान करके आ फिर

बात का पता चल जायेगा।''

जब स्नान करके बाहर आया तो देखता है कि न तो वहाँ कोई नवाब है, न सन्त, न माँ-बाप। कोई भी नहीं है। केवल गुरू नानक साहिब ही बैठे हैं।

महाराज कहते हैं, ''आ जा, आ जा। आ गया?''

कहता है, ''महाराज! मेरे माता-पिता आदि जो बैठे थे वे कहाँ चले गये?''

महाराज जी ने कहा, ''मुलतानी! यह कुछ भी नहीं था। हमने तुम्हारे ऊपर माया डाल दी थी। इस माया ने तुझे कितना भ्रमित कर दिया। न तो तूने माँ-बाप को याद रखा और न ही तुझे अपना ही पता रहा।'' प्रेमी! यह माया परमेश्वर ने संसार के ऊपर डाली हुई है और इस माया ने सभी को भुला कर रखा हुआ है। ये अपने आपको ही नहीं जानते। अपना स्वरूप क्या है? इसे भूले हुए हैं। महाराज कहते हैं -

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे।
किंचत प्रीति न उपजै जन कउ जन कहा करहि बेचारे॥ *पृष्ठ - 857*

जब भाई लहणा जी ने महाराज जी के वचन सुने, कहते हैं, ''महाराज! फिर इसका स्वरूप क्या हुआ?''

महाराज कहते हैं, ''देख भाई लहणा! यह संसार क्या है? यह सारा संसार वाहिगुरू का रूप है -''

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।
आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ॥ *पृष्ठ - 846*

कहते हैं, ''यहाँ पर वाहिगुरू ही है और कोई है ही नहीं लेकिन इस पर माया पड़ने के कारण, अपने आप को भूल गया और परमेश्वर जो हर समय इसके साथ रहता है, उसे भी भूल गया। इसे पता ही नहीं चलता। जब पूछो तुम कौन हो? तो कहता है, मैं तेरे सामने खड़ा हूँ। यह तो साढ़े तीन हाथ की देह खड़ी है, तू तो है ही नहीं। यह बात तो हमने आज तक सुनी नहीं कि मैं नहीं हूँ। मैं तो आज तक इसे ही कहता हूँ। महाराज जी कहते हैं कि यह जो माया है इसे तरना बहुत कठिन है। कोई बिरला-बिरला है जो इसे तर सकता है। यदि पूर्ण गुरू मिल जाये तब तरा जा सकता है। अन्यथा नहीं तर सकता।'' ऐसे पढ़ लो -

धारना - बिनां गुरूआं तों तरिआ नहीं जाणा,
माइआ वाला सागर अग्ग दा - 2, 2
मेरे पिआरे, माइआ वाला सागर अग्ग दा - 2, 2
बिनां गुरूआं तों तरिआ नहीं जाणा, ...-2

आग का समुद्र हो, कोई तर सकता है? न जहाज़ पार कर सकता है और न ही कोई नाव या बेड़ी निकल सकती है। केवल गुरू है जो इस आग के समुद्र से पार करवा सकता है। महाराज जी फ़रमान करते हैं कि -

महा अगाह अगनि का सागरु। गुरु बोहिथु तारे रतनागरु॥ *पृष्ठ - 377*

केवल गुरू का जहाज इसमें से पार करवा सकता है। बाकी नहीं पार करवा सकते -

दुतर अंध बिखम इह माइआ॥ *पृष्ठ - 377*

जहाँ समुद्र में जहाज चलते हैं, वहाँ पर प्रकाश होता है। तारों की सेध होती है, North pole (उत्तरी ध्रुव) की वहाँ पर सुई लगी होती है जो यह दर्शाती रहती है कि जहाज अब किधर जा रहा है? अत: ये सारी बातें गुरू के पास हुआ करती हैं –

दुतर कहते हैं जिसे पार (तरा) ही न किया जा सके। अन्ध भाव, अन्धेर गुब्बार, विषम भाव कठिन–

गुरि पूरै परगटु मारगु दिखाइआ॥ पृष्ठ - 377

यदि पूरा गुरू मिल जाये तो इन नेत्रों पर जो मोतिया बिन्द पड़ा हुआ है उसको हटा देता है। साध संगत जी! जितने बैठे हैं, कोई विरला होगा जिसके नेत्रों में मोतिया बिन्द न होगा। जिनको मोतिया होता है उसमें क्या होता है? कुछ दिखाई नहीं देता। इस प्रकार नेत्रों में अन्धकार छा गया। वाहिगुरू हाज़िर-नाज़िर है, कहीं भी नहीं गया। सभी के अन्दर बाहर है –

काहे रे बन खोजन जाई।
सरब निवासी सदा अलेपा तोही संगि समाई।
पुहप मधि जिउ बासु बसतु है मुकर माहि जैसे छाई।
तैसे ही हरि बसे निरंतरि घट ही खोजहु भाई।
बाहरि भीतरि एको जानहु इहु गुर गिआनु बताई।
जन नानक बिनु आपा चीनै मिटै न भ्रम की काई॥ पृष्ठ - 684

वाहिगुरू अन्दर भी है, बाहर भी है। महाराज जी तो झूठ नहीं बोलते। गुरू कह रहे हैं फिर क्या बात है, मानता क्यों नहीं? क्योंकि मोतिया हो गया है। कहते हैं गुरू से सुरमा ले ले –

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥ पृष्ठ - 293

पर यह सुरमा लेने के लिये पहले साधन करने पड़ते हैं। पहले तो गुरू धारण करो। बहुत से प्रेमी गुरू धारण करके छुट्टी कर जाते हैं, कहते हैं, ''बस जी, गुरू वाले बन गये। क्या हुआ गुरू वाले बन गये तो आगे नेत्र तो खोल कर देखो, आंखे कैसे खुलेंगी?'' कहते हैं पहले समझो, तीन दोष हैं – 1. मल 2. विक्षेप 3. आवरण।

मल को मैल इसलिये कहते हैं –

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु॥ पृष्ठ - 651

बेअन्त बुरी आदतें हमारे मनों के अन्दर घुसी हुई हैं। चुगली, निन्दा, ईर्ष्या, वैर, आशा-तृष्णा आदि आदि, उनकी मैल लगी हुई है। जो बुरे कर्म करते हैं उनकी तहें की तहें, जमा होती जा रही हैं। उस मैल ने शीशा धुंधला कर दिया। पहले वह मैल दूर कर। वह मैल शुभ कर्मों द्वारा, सेवा से, बाणी पढ़ने से, दान करने से, नेक कर्म करने से यह मैल दूर हो जायेगी –

भरीऐ मति पापा कै संगि। ओहु धोपै नावै कै रंगि॥ पृष्ठ - 4

जब तू प्यार से नाम जपेगा तो तेरी मैल दूर हो जायेगी। फिर अगला दोष क्या है?

प्रेमी, वह है विक्षेपता, मेरे पास अधिकतर शिकायत करते हैं, ''जी हमारा मन नहीं टिकता। जब बाणी पढ़ते हैं तो मन छलांगे लगाता रहता है। पहले तो चुप-चाप होती है।'' ऐसा नहीं है प्यारे, जब तू बाणी पढ़ता है तो तुझे इसकी छलांगों के बारे में पता चल जाता है अन्यथा तू भी पहले इसके साथ ही भागा फिरता था। गुटका हाथ में हो, तुक मुँह में हो फिर पता चल जाता है कि मैंने जपुजी साहिब तो सारा ही पढ़ लिया – कब पढ़ लीं पउड़ियां? तब मन को पता ही नहीं लगता, वह इसलिये

पता नहीं लगता क्योंकि वहाँ पर विक्षेपता है। अनेक पक्षों में मन बिखरा हुआ है –

दूजै बहुते राह मन कीआ मती खिंडीआ॥ पृष्ठ - 145

जैसे पुराने जमाने में कुओं से पानी निकालते थे तो मोटी-मोटी रस्सियों के साथ बाल्टियां बांधकर खींचते थे तो पत्थरों पर निशान पड़ जाते थे, करूव (धारिआं) पड़ जाते थे। सियाने लोग उनमें से रस्सी को नहीं निकालते थे। उससे ऊपर रखा करते थे। दोनों के बीच में रस्सी रखते थे परन्तु रस्सी फिर भी गिर जाती थी और बाल्टी का पानी भी बिखर जाता था। महाराज जी कहते हैं, इसी तरह से तेरे मन के अन्दर करूव पड़े हुए हैं अर्थात धारियां सी पड़ी हुई हैं। जब तू भजन बन्दगी करता है तो तेरा मन नहीं टिकता। धड़ाम से उसमें गिर जाता है। कभी मुकदमे की ओर तो कभी खाद नहीं मिली, खाद की ओर, यदि फसल को पानी नहीं लगाया तो फसल की ओर या पानी की ओर चला जायेगा, यदि किसी लड़के के साथ झगड़ा है तो उधर चला जायेगा, यदि घर में कोई क्लेश है तो उधर चला जायेगा।

फिर बताओ, मन कैसे टिक पायेगा? मन नहीं टिकता। अत: उसे टिकाने के लिये पहले नाम का जाप करना पड़ता है। मैल दूर करने के लिये पाँच प्यारों ने वाहिगुरू मन्त्र दे दिया – वाहिगुरू-वाहिगुरू बैठ कर जपो। फिर श्वांस के साथ जपो, जीभ अपने आप ही बन्द हो जाती है। बहुत जपने से, लाख बार जपने से, करोड़ बार जपने से। इस रास्ते पर चलना है तो बचपन में 75000 बार यदि कोई वाहिगुरू कहे, उसका जवानी में आकर नाम चल पड़ता है। अब कई प्रेमी मुझे आकर कहते हैं, ''जी! नाम चला दो।'' नाम क्या कहीं इतनी जल्दी-जल्दी चलता है? इसके लिये तो मेहनत करनी पड़ती है। मशकत घालणी (कठिन साधना करनी) पड़ती है –

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥ पृष्ठ - 8

जिन्होंने कठोर साधनाएं की हैं, उन्हें इन बातों का पता है। नाम मन में ऐसे ही नहीं बस जाता कि दो घंटे बैठो, आधा घंटा वैसे ही बिता दिया, आधा घंटा मन को इधर उधर भगाने में लगा दिया ऐसे थोड़े ही नाम हृदय में बसता है। नाम को मन में बसाने के लिये पहले सारे शरीर को पवित्र बनाना पड़ता है। मन शुद्ध पवित्र करना पड़ता है। बुद्धि शुद्ध करनी पड़ती है फिर जाकर कहीं नाम मन में टिकता है। वरना मन में नाम नहीं टिका करता। ऐसा नहीं हो सकता कि मन में क्लेश हो और नाम भी मन में बसा लो। नाम कैसे बस जायेगा? सेवा करो, सिमरण करो, जबरदस्ती हठ करके, जैसे पैसे कमाने के लिये मेहनत करता है। इसी तरह मन में नाम बसाने के लिये कर। फिर मन में नाम बस जायेगा। सन्तों के पास जा, सन्त विधि बता देंगे, सन्त युक्ति बता देते हैं –

कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु।
रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु॥ पृष्ठ - 1373

नाम जपाने की सन्तों की जिम्मेवारी है। बिना युक्ति के पार नहीं हो सकता। विक्षेपता को दूर करने के लिये नाम जपो। रसना द्वारा जपो, जितना जप सकते हो, जपो। जल्दी-जल्दी जपते हो, जल्दी-जल्दी जपो। कोशिश करो कि 75000 बार वाहिगुरू सुबह से शाम तक मुख से निकल जाये।

यदि मूल मन्त्र जपता है तो 108 मालाएं मूल मन्त्र की सुबह से शाम तक कर लेनी चाहियें, तब यह रास्ता मिलता है, अन्यथा नहीं मिलता। जब इतने का अभ्यास हो जाता है फिर जीभ हिलने से हट जाती है, फिर नाम श्वांस पर आ जाता है, श्वांस के बाद कंठ पर आ जाता है, फिर हृदय में आ जाता है, फिर नाभि में पहुँच जाता है, फिर आज्ञा चक्र में, फिर त्रिकुटी में पहुँच जाता है। जब आज्ञा

चक्र में पहुँचते हैं, तब अवस्था बदलती है, यहाँ पर ध्यान आता है –

गुर की मूरति मन महि धिआनु॥ पृष्ठ - 864

जब गुरू की मूरत का ध्यान धरेंगे। गुरू की मूरत चार प्रकार की होती है –

1. एक तो जैसा गुरू दिखाई देता है बिल्कुल वैसी।

2. एक होता है गुरू मूरत गुरू शब्द है।

गुरू के शब्द का ध्यान करना। sound (ध्वनि) का जिसे धुन कहते हैं।

3. एक होता है उसे ज्योति स्वरूप जानकर, ज्योति का ध्यान धरना।

4. चौथा होता है उसे परिपूर्ण समझ कर उसके अन्दर ध्यान करना। इसे अहंग्रहि ध्यान कहते हैं।

विक्षेपता के बाद आता है आवरण। आवरण कहते हैं पर्दे को। पर्दा जो है, वह अज्ञान का है, जीव को पता नहीं चलता कि मैं कौन हूँ? पूरा गुरू इसे बता सकता है। गुरू के बिना यह पर्दा नहीं हटा करता –

दुतर अंध बिखम इह माइआ। गुरि पूरै परगटु मारगु दिखाइआ॥ पृष्ठ - 377

गुरू क्या करता है, इसे ज्ञान का सुरमा देता है वह इसे नेत्रों में डालना होता है। जब वह नेत्रों में डालता है –

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥ पृष्ठ - 293

उस समय मन में प्रकाश हो जाता है। जब गुरू ज्ञान का सुरमा देता है, फिर नेत्र खुल जाते हैं –

गुरहि दिखाइओ लोइना।
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना।। पृष्ठ - 407

फिर वह इस तरह पुकार उठता है –

धारना - राम बोले, राम बोले, राम बोलदै
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै - 2, 4

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै। राम बिना को बोले रे॥ पृष्ठ - 988

क्योंकि नेत्र खुल गये –

बिसरि गई सभ ताति पराई। जब ते साधसंगति मोहि पाई।
ना को बैरी नही बिगाना। सगल संगि हम कउ बनि आई॥ पृष्ठ - 1299

फिर कोई भी वैरी नहीं रहा क्योंकि सभी जगह परमेश्वर ही दिखाई देने लग गया। महाराज कहते हैं –

गुरि पूरै परगटु मारगु दिखाइआ॥ पृष्ठ - 377

फिर रास्ता दिखा देता है। इसे माया भी कहते हैं –

माइआ किस नो आखीऐ किआ माइआ करम कमाइ॥ पृष्ठ - 67

प्रश्न यह है कि माया क्या हुई? यह काम क्या करती है? महाराज कहते हैं, काम करती है –

दुखि सुखि एहु जीउ बधु है हउमै करम कमाइ॥ पृष्ठ - 67

इस जीव को बान्ध कर रखती है। जब अन्दर हउमै रखकर काम करता है फिर क्या होता है? जन्मता

और मरता रहता है। क्योंकि कुछ पुण्य करता है, कुछ पाप करता है। फिर उनका फल भोगने के लिये आता है। पापों का फल भोगने के लिये आता है फिर जन्म लेता है फिर मर जाता है -

इह संसार ते तब ही छूटउ जउ माइआ नह लपटावउ॥ पृष्ठ - 793

जब तक माया है, तब तक तो छूट नहीं सकता -

माइआ नामु गरभ जोनि का तिह तजि दरसनु पावउ॥ पृष्ठ - 693

पहले यह छोड़नी पड़ती है जिसे Ego (हउमै) कहते हैं। साध संगत जी! यह परमेश्वर ने खेल की हुई है। यदि इतनी सी ही बात मन में बिठा लें, तो माया का पीछा हमसे अभी ही छूट जायेगा। परमेश्वर ने इतनी बड़ी चीज़ इस खेल के अन्दर डाल दी है -

जिनि रचि रचिआ पुरखि बिधातै नाले हउमै पाई।
जनम मरणु उस ही कउ है रे ओहा आवै जाई॥ पृष्ठ - 999

साथ ही हउमै भी डाल दी। जन्म मरण उसी का होता है जो हउमै के साथ जुड़ा हुआ है।

कहते हैं, छोटों-छोटों के साथ नहीं बल्कि जो वैकुण्ठ के मालिक हैं विष्णु जी, शिव लोक के स्वामी शिव जी, ब्रह्म लोक के मालिक ब्रह्मा जी कहते हैं, उनके ऊपर भी माया ने पर्दा डाला हुआ है -

ब्रहमा बिसनु महादेउ त्रै गुण रोगी विचि हउमै कार कमाई।
जिनि कीए तिसहि न चेतहि बपुड़े हरि गुरमुखि सोझी पाई॥ पृष्ठ - 735

यह तो केवल गुरू ही है जो ज्ञान दे सकता है। महाराज जी से सिद्धों ने पूछा, ''महाराज! हमें तो संसार दिखाई देता है और आप कहते हैं कि यह परमात्मा है। फिर परमेश्वर से यह संसार कैसे बन गया?'' महाराज जी से प्रश्न किया-

कितु कितु बिधि जगु उपजै पुरखा कितु कितु दुखि बिनसि जाई॥ पृष्ठ - 946

महाराज कहते हैं -

हउमै विचि जगु उपजै पुरखा नामि विसरिऐ दुखु पाई॥ पृष्ठ - 946

हउमै के कारण यह संसार दिखाई देता है। जब हउमै दूर हो जाये तो यह परमेश्वर दिखाई देने लग जाता है -

गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए॥ पृष्ठ - 946

यदि पूर्ण गुरू धारण किया जाये और वह कृपा कर दे और फिर ज्ञान तत्व की सूझ दे दे फिर उस पर विचार करे। साध संगत जी! नाम की भी श्रेणियाँ होती हैं। यही नाम नहीं है, जो नाम हम पहले जपते हैं, आगे चलकर नाम बदल जाता है। नाम कुछ और ही बन जाता है। वह नामी ही दिखाई देने लग जाता है जिसका हम नाम लेते थे। अत: ज्ञान के तत्व की विचार शुरू हो जाती है-

गुरमुखि होवै सु गिआनु ततु बीचारै हउमै सबदि जलाए॥ पृष्ठ - 946

यह जो शब्द हमें प्राप्त होता है। नाम जपने के पश्चात वह शब्द जिसे 'औंकार' का शब्द कहते हैं, वह शब्द जब हमें प्राप्त हो जाता है, तब हमारी सुरत वहाँ पहुँच जाती है-

धुनि महि धिआनु धिआन महि जानिआ गुरमुखि अकथ कहानी॥ पृष्ठ - 879

फिर यह हउमै जल जाती है -

तनु मनु निरमलु निरमल बाणी साचै रहै समाए॥ *पृष्ठ - 946*

फिर तन भी निर्मल, मन भी निर्मल और फिर जो कुछ भी दिखाई देता है, वह भी निर्मल। इसलिये महाराज जी हमें फ़रमान करते हैं, प्रेमियों! ऊँचे उठो –

धारना - मन भोलिआ हउमै सुरति विसार - 2, 2
हउमै सुरति विसार - 2, 2
मन भोलिआ, ...-2

भोलिआ हउमै सुरति विसारि॥ *पृष्ठ - 1168*

सुरत दो प्रकार की हुआ करती है। एक तो जो बेहोशी की सुरत है उसके अन्दर तो कुछ पता ही नहीं होता। हमारे एक सिंघ दलजीत सिंघ का हादसा हो गया। P.G.I. ले गये दो दिन तक सुरत न लौटी, तीसरे दिन सुरत (होश) आई। तीसरे दिन जब होश आई तो उसके सामने उसकी पत्नी कमल खड़ी थी। उसे पूछा, ''यह कौन है?'' वह कहता है, ''यह तो मेरी बहन खड़ी है।'' अब पता ही नहीं कि उसकी घरवाली है, क्योंकि सुरत में फर्क पड़ गया। दूसरे दिन फिर पूछा, जब सुरत में कुछ नुक्स पड़ जाये फिर तो कुछ न कुछ और ही दिखाई देता है। दूसरी होती हैं जिसमें असली चीज़ नज़र नहीं आती। महाराज कहते हैं तेरी सुरत में हउमै का, माया का नुक्स पड़ गया इसे भूल जा –

हउमै मारि बीचारि मन गुण विचि गुणु लै सारि॥ *पृष्ठ - 1168*

तू इस हउमै को मार, विचार कर इस बात पर। कहते हैं, सभी यही कहे जाते हैं कि यहाँ पर सारा कुछ परमेश्वर है परमात्मा ही है –

एको एकु कहै सभु कोई हउमै गरबु विआपै॥ *पृष्ठ - 930*

लेकिन हउमै अन्दर धारण करके कहते हैं कि यहाँ पर परमेश्वर है। अपने आपको फिर अलग समझते हैं –

अंतरि बाहरि एकु पछाणै इउ घरु महलु सिञापै।
प्रभु नेड़ै हरि दूरि न जाणहु एको स्रिसटि सबाई।
एकंकारु अवरु नही दूजा नानक एकु समाई।। *पृष्ठ - 930*

साध संगत जी! ये बातें थोड़ी सी मुश्किल हैं। असली बात महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! यह जो माया है, यह सारे संसार को भुला देती है। यह आई थी। हमसे सेवा करने की इजाज़त मांगती है। कहती है सेवा करने की अनुमति दे दो। हम इजाज़त नहीं देते। हमने 12 कोस दूर रखी हुई है, तेरे से यह 6 कोस दूर रहेगी। तीसरे स्वरूप में यह 1 कोस दूर रहेगी, चौथे में इसने अन्दर घुस जाना है फिर सोने के मन्दिर बनेंगे फिर यह बिखर जानी है।''

इस प्रकार कहते हैं, असली बात तो यह है कि यहाँ वाहिगुरू के सिवाय और कुछ है नहीं। ऐसे पढ़ लो –

धारना - आपे सारिआं रंगां दे विच खेडदै,
आपे वेखणहारा हो गिआ - 2, 2
पिआरिओ! आपे वेखणहारा हो गिआ - 2, 2
आपे सारिआं रंगां दे विच खेडदै, ...-2

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखन हारा।
नाना रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥ *पृष्ठ - 537*

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ।

दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ॥ *पृष्ठ - 463*

आपे हरि इक रंगु है आपे बहुरंगी।
जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी॥ *पृष्ठ - 726*

अपने आप ही यह संसार बना हुआ है। पहले कोई चीज़ नहीं थी, न माया थी, न चाँद, न सूर्य, न धरती, न पवन, न पानी, न कोई देवी देवता, अकेला ही निरंकार था और निरंकार ने जब साकार रूप धारण किया ऐकंकार का इसीलिये महाराज जी ने 'ऐका' पहले लिया। ऐकंकार स्वरूप बना -

निरंकारु आकारु होइ ....॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

और जब उस समय आकार धारण किया -

.... एकंकारु अपारु सदाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

पारावार से रहित, जिसकी समझ ही नहीं आ सकती, उसे ऐकंकार कहा। स्वंयमेव ही ऐकंकार होकर उन्हें फुरना किया। **ऐकहु बहु स्यामा** अर्थात एक से बहुत हो जाऊं -

कीता पसाउ एको कवाउ। तिस ते होए लख दरीआउ॥ *पृष्ठ - 3*

सारी सृष्टि फैल गई। क्या कहा? सबसे पहली बोली निरंकार जी ने क्या बोली? कहते हैं, एक ही अक्षर निरंकार ने बोला। उस एक अक्षर से सारी सृष्टि बनती जा रही है। गुरू दसवें पातशाह कहते हैं, सबसे पहला अक्षर जो निरंकार ने बोला, निरंकार से ऐकंकार, साकार रूप हो गया। दसवें पातशाह कहते हैं, उन्होंने एक ही अक्षर बोला था -

प्रथम ओअंकार तिन कहा सो धुन पूर जगत मोह रहा॥

वह औंकार जो कहा, वह मरता नहीं, यह जो 'मैं' बोलता है, यह भी नहीं मरता। यह भी ऊपर ही ऊपर चला जायेगा, कभी नहीं मरता। शब्द कभी मरता नहीं है। शब्द अमर है। सो निरंकार जी ने जो औंकार कहा वह कितने ही खरबों मील दूर एक ही सैकिण्ड में चला गया। इसे कोई नहीं बता सकता और साथ ही साथ इससे आकार बनने शुरू हो गये।

कहते हैं वह जो धुन है वह सारे जगत में परिपूर्ण है -

सुअसति आथि बाणी बरमाउ। सति सुहाणु सदा मनि चाउ॥ *पृष्ठ - 6*

वह धुन हमारे अन्दर भी है। उस धुन को हमने पकड़ना है? जब उस धुन को हम पकड़ लेंगे फिर उस धुन ने हमें ऐकंकार में ले जाना है। ऐकंकार में इसलिये क्योंकि सभी कुछ उसी ने पैदा किया है। कहीं से कोई चीज़ नहीं लाये-

निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ।
एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

बेअन्त आकार बन गये -

ओअंकारि ब्रहमा उतपति॥ *पृष्ठ - 929*

ब्रह्मा, शिव, विष्णु तथा बाकी 33 करोड़ देवता 'औंकार' ही उत्पन्न हो गये -

ओअंकारु कीआ जिनि चिति॥ *पृष्ठ - 929*

यह तो हमें समझ आती है कि यदि कोई हमें नोचे या सुई चुभोये तो हमें पता चल जाता है। इस चित्त को पता चलता है। कोई गाली दे तो हमें पता चल जाता है तब हम बहुत बुरा मनाते हैं,

इसे चित्त कहते हैं। यह इसे अंग्रेजी में consciousness कहते हैं। वह औंकार के शब्द से हुई–

ओअंकारि सैल जुग भए॥ *पृष्ठ - 929*

पत्थर बन गये। Time & Space (समय और ब्रह्मण्ड) बन गये –

ओअंकारि बेद निरमए॥ *पृष्ठ - 929*

कहने के साथ ही सारा ज्ञान आ गया।

औंकार आदि गुरू। गुरू दसवें पातशाह कहते हैं सबसे पहले जो साकार रूप है जो हमारे अन्दर वाहिगुरू रहता है, कहते हैं वह आदि में था। ईसाई भी यही कहते हैं Before the creation of the world, there was logos (शब्द ब्रह्म)। सृष्टि की उत्पत्ति से पहले शब्द ब्रह्म था। मुसलमान कहते हैं, 'कुन कहने से कीआ आलम बरपा।' सारा संसार 'कुन' कहते ही पैदा हो गया। सांईस कहती है कि Big Bang (बड़ा धमाका) हुआ, उससे सारा प्रकाश सारा संसार बन गया। उसी से सारी प्रकृति बन गई। गुरू दसवें पातशाह फ़रमान करते हैं –

ओअंकार आदि कथनी अनादि॥

कहते हैं कि पहले से ही यह बात सुनते हैं कि औंकार शब्द था –

ओअंकार उतपाती कीआ दिनस सभ राती।

अपनी माइआ आपि पसारी आपहि देखनहारा।
नानक रूपु धरे बहुरंगी सभ ते रहै निआरा॥ *पृष्ठ - 537*

गुरू मिल जाये तो यह धुन अन्दर से मिल जाती है –

इस प्रकार गुरू अंगद साहिब को गुरू नानक पातशाह कहने लगे, "भाई लहणा! यह जो तूने लड़की देखी, यह लड़की नहीं है। यह तो छली कपटी है, त्रिगुणी माया है। इसने सारे संसार को देवी, देवताओं को, बड़े-बड़े तपस्वियों को, बड़े-बड़े दानियों को, बड़े-बड़े विद्वानों को, सभी को मोह लिया। उससे कोई भी नहीं बचा। यदि कोई बचा है तो केवल वही बचा है, जिसे गुरू द्वारा ज्ञान प्राप्त हो गया है। गुरू ने जिसके नेत्र ख़ोल दिये। उसे फिर सारी घटाओं में एक ही नज़र आता है। इस तरह से फिर उसके मन का भाव भी एक हो जाता है –"

धारना - तूंही तूंही मोहिना, तूंही तूंही मोहिना - 2, 4

गुरहि दिखाइओ लोइना॥
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना।। *पृष्ठ - 407*

जिधर भी देखता है, परमेश्वर ही नज़र आता है। गुरू नानक पातशाह कहने लगे, "भाई लहणा! ये माया के विभिन्न रूप तुझे बता दिये और सबसे खतरनाक रूप अविद्या का है। इसे अज्ञान illusion (धोखा) भ्रम भी कहते हैं।"

मनुष्य के मन में पाँच भ्रम पड़े हुए हैं। इस प्रकार हमनें माया का विस्तार रूप से वर्णन सुना। आप सभी ने समझने का यत्न किया। रूहानियत में माया का और हउमै का सबसे कठिन विषय है, यदि इसका ज्ञान हो जाये तो –

हउमै बूझै ता दरु सूझै॥ *पृष्ठ - 466*

फिर परमेश्वर का द्वार मिल जाता है। यदि हउमै का ज्ञान हो जाये, हउमै की सूझ हो जाये कि

यह क्या चीज़ है? अब सभी प्रेमी जो अभी तक नहीं बोले, वे भी सभी अपनी रसना पवित्र करें।

- आनन्द साहिब -

- गुर सतोतर -

- अरदास -